गुरु विरजानन्द दण्डी।
सन्दर्भ पुस्तकालय
प परिग्रहण क्रमांक ... 5324 ...
दयानन्द महिला महा...

ईश्वर एवं ईशपूजा का विस्फोटक सत्यता

पवित्र/पाक की हक़ीक़त

बनाम

इस्लाम की हक़ीक़त

द्वितीय संशोधित संस्करण

[ईश सन्तों एवं ईश-योगियों की सत्यासत्य विवेचना]

• अनजाना चिश्ती

Trust Regd. No. ✪ प्रकाशक ✪ F/12787/Thane

खानक़ाह सूफ़ी दीदार शाह चिश्ती

हाजी मलंग वाडी, बी० ओ० वाडी, पो० कल्याण

जिला-ठाणे-421301 (महाराष्ट्र)

फोन - (0251) 2662496 ✪ सहयोग राशि : ईश-प्रेम

मोबाईल- 09969312852 / 9869720880 / 09451563099

पवित्र/पाक की हकीकत बनाम इस्लाम की हकीकत

क्र.	विवरण	पृष्ठ संख्या
●	लेखक के दो शब्द	4-5
●	कुछ शुभ सन्देश	6 से 10
1	इस्लाम या खुदा की हकीकत	11
2	इस्लामी-बुनियाद	15
3	रसूले-पाक ने फरमाया	25
4	ईश-पूजा : औलिया की नज़र में	26
	4-A परिवर्तित इस्लामी नज़रिया	33
	4-B ईशदूत ईश्वर के गैर कैसे ?	35
	4-C हक़परस्ती बुतपरस्ती कैसे ?	39
5	कुरआन की हक़ीक़त	43
	5-A ईश-वार्ता का अनर्थ अनुवाद	46
	5-B अरबी ईश-वचन के शब्दार्थ	50
	5-C काफिर कहां है ?	53
	5-D ईमान लाना किस पर ?	54
	5-E इस्लाम में बुतपरस्ती क्या है?	56
	5-F गैर-मुसलमान कौन है?	58
6	यजीद लानती का जेहाद	62
7	गैर-इस्लामी जेहाद ?	62
8	सच्चे इस्लाम का जेहाद	67
9	ईश-सेवा, इन्द्रिय सेवा नहीं	71
10	कामिल पीर का जेहाद	74
11	मार्फते-इलाही (ईश-सम्पर्क) क्या है?	75
	11-A खुदा के नेकबन्दे वलीअल्लाह	83
12	मज़ारों की हकीकत	85
13	सन्त या फकीर कौन ?	87
14	विस्फोटक जन-प्रश्न ?	88
15	ईश धर्म में धर्मान्तरण	105
16	तब्लीगे-हक़ / सत्य ईश-ज्ञान प्रचार	108
	16-A नबीअल्लाह और गैरुल्लाह	113

17	तब्लीगे-हक़ कान्फ्रेन्स	118
	17-A अज़ान क्या है ?	118
	17-B ईश-पूजा की सत्यता	120
	17-C सद्गुरु से ही ईश-ज्ञान	145
18	नमाज का भावार्थ	148
	18-A नमाजें अदा कैसे करें ?	150
19	मजार और कब्र में भेद	163
	19-A नबूवत सिर्फ नबी अल्लाह को	169
20	हक़ीकत की हक़ीकत	175
	20-A ईश्वर का व्यापार	184
	20-B सलामत और सलामती	202
	20-C ईमान और बेईमान	204
	20-D इस्लाम में सच्चे कौन ?	208
21	बैय्यत : पीरी-मुरीदी	210
22	सच्चे इस्लामी रहनुमा	213
	22-A जिन्दा नबीअल्लाह	216
	22-B पीरे-हक़ में तालीमे-हक़	218
	22-C बशर ने सूरज पलटाया	219
	22-D बशर ने चांद को तोड़ा	221
	22-E कंकड़ियों ने नबी कहा ?	225
	22-F अपने-अपने ईश्वर को सपोर्ट दो	226
	22-G यह निराले बशर और बन्दे	228
	22-H बशर जो कामिल पीर बना	229
	22-I बशर में नेकबन्दे कौन ?	231
	22-J कायम नमाज क्या है ?	235
23	अल्लाह की नबूवत	239
	23-A बैय्यत की हकीकत	260
24	नबूवत और विलायत	265
	24-A कामिल पीर : वलीअल्लाह	268
	24-B ईमान में फ़ितना	280
	24-C बैय्यत क्या है ?	283
25	असत्य गुरु की सत्यता	286
26	शैतान-इब्लीस निर्मूलन दस्ता	289
27	सत्य की खोज	297

ईश्वर की विस्फोटक सत्यता

वह अनन्त सृष्टि का स्वामी क्या हमारे लिए पूज्यनीय नहीं है? जिसके कारण हमारी जिन्दगी कायम है ! हमारी सांसें और दिल की धड़कनें आखिर किसके विज्ञान और तकनीक से कायम है? यही है- इस्लाम की हकीकत, जो वास्तव मे विश्वमानव समाज को उस महापवित्र परमेश्वर की सत्यता का दर्पण दिखा रही है. इस्लाम, सनातन, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैन आदि समस्त धरती के धर्मों का सन्देश तो उसी महापवित्र परमेश्वर की सत्यता का एक स्वरुप है। हम मानव के लिए उस सत्य तक पहुंचना कठिन नहीं है। अगर हम यह हकीकत जान लें-

मिटा दे अपनी हस्ती को अगर कुछ मर्तबा चाहे।
की दाना खाक में मिलकर गुले-गुलजार होता है।।

ईश्वर के प्यारे सन्त-फकीर यही बताते हैं कि उस पवित्र सत्य से मिलन मे हमारी हस्ती रुपी इन्द्रिय पत्थर सरीखा चट्टानें है। जब बीज की भांति मिट्टी में मिल जाओगे, तो वह ईश्वरीय पुष्प खिल उठेंगे, जिस की सुगन्ध सारी दुनियां लेने को आतुर हो उठेगी। यह पुस्तक वास्तव में ईश-सुगन्ध है, क्योंकि इसके अंकुरण मे ईश्वर के पवित्र सन्त-फकीरों ने ईश्वरीय रहस्य के बीज डाले हैं। यह सन्देश है, उस पवित्र दयालु का, जो हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध आदि किसी से भी भेदभाव नहीं रखता। आईए- गम्भीरता से ईश-दर्शन का अवलोकन करें। अपने आपको उस पवित्र के समक्ष संमर्पित करें। उन तत्वों से सावधान हो जाएं, जो ईश्वर-अल्लाह, गॉड के नकली पुजारी हैं। हर धर्मों का सत्य ईश्वर है। और ईश्वर का धर्म सत्य ही सत्य है। उसी एक सत्य की कुछ सत्यता हम सब जान लें, तो मानव जीवन पाना सार्थक हो जाएगा। यह पुस्तक उसी सत्य की सत्यता का इस कलियुग में विस्फोट है। यह उसी ईश-रहस्य की विस्फोटक सत्यता है, जिसके कब्जए-कुदरत में अनन्त सृष्टि का जीवन है। यह सत्य ज्ञान-सन्देश उसी का है, जिसके आदि और अन्त का किसी को ज्ञान नहीं। उस महापवित्र के पवित्र सन्देश पर यदि मानव जीवन निर्भर बने, तो यह पुस्तक उसे आजीवन शाश्वत ईश-प्रकाश देती रहेगी।

- अनजाना चिश्ती

20 मार्च, 2008 ई०
(12 रब्बील अव्वल, 1429 हिजरी)

ईश्वरीय सत्यता दर्पण

मेरे सद्गुरु (कामिल पीर) सूफी दीदार शाह चिश्ती, क़ादरी, निजामी, गोरखपुरी का इक्कीसवां सालाना उर्स आज खानकाह सूफी दीदार शाह चिश्ती (ट्रस्ट) में मनाया जा रहा है। हजरत ख्वाजा मुईनुद्दीन हसन चिश्ती, अजमेरी हुजूर के सद्गुरु-परम्परा में सूफी दीदार शाह बाबा चालीसवें क्रम के एक कामिल पीर हैं। इन्हीं की कृपा से हमें ईश्वर के महान सन्तों के दर्शन मिले तथा उनके सत्संग का भी हमने लाभ उठाया। उत्तर प्रदेश, दिल्ली, अजमेर और महाराष्ट्र में इन सन्तों ने प्रकट हो कर ईश-सत्यता एवं ईश-पूजा की सत्यता सत्संग या सम्मेलन के रुप में उद्घाटित किया। 'इस्लाम की हकीकत' उन्हीं महत्वपूर्ण क्षणों की सन्त अभिव्यक्ति है। प्रथम संस्करण भारत के कोने-कोने में निःशुल्क वितरित की गई। इस द्वितीय संस्करण में 'ईश-सन्त सत्संग' के कुछ मानवकल्याणकारी अध्याय भी जोड़े गए हैं। ईश-सन्तों के सत्य वचनों ने भारतीय समाज में सर्वधर्म समभाव तथा राष्ट्रीय एकता, अखण्डता की जागृति की है। जन सामान्य ने यह महसूस किया कि सच्ची ईश-पूजा के लिए एक ईश-कृपा प्राप्त सद्गुरु (कामिल पीर) जरुरी है। उन्हें यह ज्ञान भी मिला की इस्लाम, सनातन, मसीही, मूसवी आदि धर्म तो एक है, इसमें अनेकता का बीजारोपण करना-कराना ईश-विरुद्ध आचरण है। ईश-सन्तों ने इस्लाम के कल्मे, नमाज, जेहाद, बुतपरस्ती, मुसलमान, मोमिन, कुफ्र-काफिर, शिर्क-मुशरिक आदि के भेद को खोला, वहीं ईशदूत, नबी, ऋषि और वली-औलिया की सत्यता से भी अवाम को परिचित कराया है। ईश-सन्तों के प्रति समाज ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की है।

'इस्लाम की हकीकत' विश्वमानवसमाज की एकता, प्रेम, सौहार्द का प्रतीक है। इसके विपरीत धर्म-आचरण और मजहबी कार्य-प्रणाली जो भी हैं, ईश-सन्तों ने उसे सप्रमाण निरस्त किया है। यह पुस्तक ईश-सन्तों के माध्यम से इस कलियुग में अधर्म का नाश तथा सत्य ईश धर्म का अनश्वर प्रकाश है। ईश-प्रकाश हमारे हृदय में स्थायित्व ग्रहण करे, यही हमारा मूल लक्ष्य है।

आपने ईश-प्रकाश कितना ग्रहण किया? यह तो आपके पत्रों से ज्ञात होगा।

प्रतीक्षा में,

(अनजाना चिश्ती)

अध्यक्ष
खानकाह सूफी दीदार शाह चिश्ती,
हाजीमलंग वाडी, बी0ओ0 वाडी,
पो0-कल्याण 421301
[महाराष्ट्र]

15 सितम्बर, 2008 ई0 सोमवार
(14 रमजान, 1429 हिजरी)

GOVERNOR OF MAHARASHTRA
PUBLIC RELATIONS OFFICER

RAJ BHAVAN
MALABAR HILL
MUMBAI 400035

29 May 2008

Dear shri Anjana Chishty,

I am directed to acknowledge with thanks the receipt of your book **'Islam Ki Haqiquat'** by the **Governor of Maharashtra. Shri S.C.Jamir**. The Governor has conveyed you his compliments for writing the book.

With regards,

Yours sincerely

(Umesh Kashikar)

N.C.Jhigta
Secretary to Shri
Atal Bihari Vajpayee

नई दिल्ली
24 मई, 2008

आदरणीय श्री अनजाना चिश्ती जी,

श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी, पूर्व प्रधानमन्त्री को प्रेषित आपके पत्र के साथ *'इस्लाम की हकीकत'* पुस्तक की प्रति प्राप्त हुई, धन्यवाद। श्री वाजपेयीजी ने आपको अपनी शुभकामनाएं प्रेषित की हैं।

शुभकामनाओं सहित,

भवदीय,

(एन०सी० झींगटा)
सचिव, पूर्व प्रधानमन्त्री

विजय शंकर
निदेशक
केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो
भारत सरकार

केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो
भारत सरकार
D.O. No. 48/DCB1/2008
CENTRAL BUREAU OF INVESTIGATION
GOVERNMENT OF INDIA
C.G.O. COMPLEX, BLOCK NO. 3,
LODHI ROAD, NEW DELHI - 110003
Dated - 29/05/2008

श्री चिश्ती साहब,

पुस्तक *"इस्लाम की हकीकत"* भेजने के लिए धन्यवाद। मैं इस पुस्तक को न केवल पढूंगा, बल्कि समझने की भी कोशिश करुंगा।

सादर,

(विजय शंकर)

DR. A. R. KIDWAI
GOVERNOR OF
HARYANA

HARYANA RAJ BHAVAN
CHANDIGARH - 160019

NO. HRB-PAG-2008
APRIL 2, 2008

Dear Chishty Saheb,

Thank you very much for sending me a copy of your publication **"ISLAM KI HAQIQUAT"**. I would like to congratulate you for doing a valuable service by writing on various aspects of Islam for better understanding of Islam by Muslims and non-Muslims. I hope the book will receive well response among the people.

With kind regards,

Yours sincerely,

(A. R. Kidwai)

श्रीप्रकाश जायसवाल
राज्य मन्त्री

गृह मन्त्रालय
नार्थ ब्लाक, नई दिल्ली- 110001
MINISTER OF STATE
MINISTRY OF HOME AFFAIRS
NORTH BLOCK, NEW DELHI - 110001
09 MAR 2007

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि हजरत ख्वाजा गरीब नवाज हुजूर (अजमेर) के सद्गुरु-परम्परा की 41 वी खानकाह सूफी दीदार शाह चिश्ती (महाराष्ट्र) द्वारा शोधात्मक पुस्तक- "इस्लाम की हकीकत" का प्रकाशन किया जा रहा है। यह एक सराहनीय प्रयास है।

मैं इस अवसर पर अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं और "इस्लाम की हकीकत" पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूं।

(श्रीप्रकाश जायसवाल)

आर० एस० गवई
राज्यपाल, बिहार

राजभवन, पटना
RAJ BHAVAN
PATNA - 800022
6 MARCH, 2007

सन्देश

मुझे जानकर प्रसन्नता हो रही है कि खानकाह सूफी दीदार शाह, थाने द्वारा शोधात्मक पुस्तक "इस्लाम की हकीकत" नामक पुस्तक का प्रकाशन का निर्णय लिया गया है।

आशा है, यह पुस्तक सर्वधर्म समभाव, विश्व मानव जाति की एकता-अखण्डता तथा साम्प्रदायिक सौहार्द कायम रखने में उपयोगी होगी।

पुस्तक के सफल प्रकाशन में मेरी शुभकामनाएं।

(आर० एस० गवई)

नवल किशोर शर्मा
राज्यपाल, गुजरात

राजभवन
गांधीनगर - 382020
दिनांक :- 01/03/2007

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि हजरत ख्वाजा गरीब नवाज हुजूर अजमेर के सद्गुरु परम्परा की 41 वीं खानकाह (आध्यात्मिक आश्रम) खानकाह सूफी दीदार शाह चिश्ती (महाराष्ट्र) द्वारा शोधात्मक पुस्तक "इस्लाम की हकीकत" का प्रकाशन करने का निश्चय किया गया है। मुझे आशा है यह पुस्तक पठनीय, संग्रहणीय, आध्यात्मिक चेतना जगाने वाली, प्रेरणादायी होगी साथ ही सर्वधर्म समभाव, विश्वमानवजाति की एकता-अखण्डता तथा साम्प्रदायिक सौहार्द को कायम रखने में पुस्तक अद्वितीय भूमिका निभायेगी।

धर्मान्धता की कलई खोलने वाली पुस्तक "इस्लाम की हकीकत" विश्वमानव कल्याण के हित में रामबाण साबित होगी।

धार्मिक आध्यात्मिक पुस्तक समाज में संस्कारों का संचार करती है। जो भी इस पुस्तक को पढ़ेगा उसकी ज्ञानवृद्धि होगी, जिससे मनुष्य को अपनी समस्याओं के निराकरण में मदद मिलेगी। धार्मिक ज्ञान में ईश्वरीय प्रेरणा छुपी होती है। जिसके कारण व्यक्ति निडर बनता है और अपने कर्त्तव्यपथ को निष्ठा व प्रमाणिकता से पार करता है।

मैं "इस्लाम की हकीकत" पुस्तक की सफलता हेतु अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

(नवल किशोर शर्मा)

ए० आर० किदवाई
राज्यपाल, हरियाणा

राजभवन, हरियाणा,
चण्डीगढ़।
RAJBHAVAN, HARYANA,
CHANDIGARH

सन्देश

मुझे यह जानकर हर्ष हुआ है कि खानकाह सूफी दीदार शाह चिश्ती, ठाणे (महाराष्ट्र) द्वारा शोधात्मक पुस्तक "इस्लाम की हकीकत" का विमोचन किया जा रहा है।

आजकल के हालात में सभी धर्मों के लोगों को मिलजुल कर देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए कार्य करना चाहिये। सभी जाति के लोगों को उन तत्वों से सावधान रहना चाहिये जो विघटनकारी शक्तियों से मिलकर देश में अराजकता फैलाने की कोशिश करते है। मुझे आशा है कि इस पुस्तक द्वारा इस्लाम की शिक्षा-दीक्षा का मूल उदेश्य प्रकट होगा। यह भी स्पष्ट होगा कि दंगा, फसाद, आतंकवाद, मानव हत्यायें अथवा गो हत्या का आदेश-निर्देश इस्लाम की उपज है या चन्द मजहबी विद्वानों की देन है, इनके बारे में भी जानकारी दी जायेगी। मैं आशा करता हूं यह पुस्तक सर्वधर्म समभाव, विश्वमानवजाति की एकता-अखण्डता तथा साम्प्रदायिक सौहार्द को कायम रखने में लाभदायक सिद्ध होगी।

मैं इस पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिये अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

(ए०आर० किदवाई)

1 – इस्लाम या खुदा की हकीकत

'इस्लाम' क्या है? इस्लाम का वास्तविक सन्देश क्या है? क्या इस्लाम सम्पूर्ण मानवजाति का मजहब है या किसी सुनिश्चित गिरोह या समुदाय का? इस मामले में इस्लाम के बुनियादी नियम एवं क्रिया-विधि तथा कार्य-शैली पर हमें चिन्तन की आवश्यकता है।

'इस्लाम' नाम का अर्थ– सबकी सलामती या सभी की कुशलता चाहने वाला होता है। 'इस्लाम मजहब' का अर्थ हुआ– ऐसा धर्म जो सभी को कुशलता या सलामती प्रदान करे। 'सलामती' शब्द में अमन-अमान, सुख-समृद्धि, शान्ति-चैन, सुकून आदि सभी शामिल हैं। इस्लाम शब्द 'सल्म' से निकला है, जिसका अर्थ होता है– 'शान्ति' या 'अमन'। इस के अनुसार 'इस्लाम' के मानी हुए ईश्वर के समक्ष शान्ति से झुकना अथवा अपने आपको ईश्वर के समक्ष समर्पित कर देना। ईश्वर की समस्त आज्ञाओं को मानना। संस्कृत भाषा में इसी को 'प्रपत्ति' या 'प्रणिधान' कहते हैं। इसका सीधा अर्थ होता है– अपनी खुदी (इन्द्रिय) को मारकर उस खुदी के स्थान पर ईश्वर को बैठाना।

वैदिक नियम भी तो यही है– "न मम किन्तु तब ईता" –अर्थात– "हे ईश्वर! तेरी इच्छा पूरी हो मेरी नहीं।"

'इस्लाम' नामक मजहब की उत्पत्ति वास्तव में ईश्वर के अन्तिम पैगम्बर (नराशंस ऋषि या कल्कि अवतार) हजरत मुहम्मद सलललललाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम हुजूर से मानी जाती है। उनकी आयु जब चालीस वर्ष की हुई, तो उन्होंने ईश्वर के निर्देश पर स्वयं को नबी होने की घोषणा की। 13 वर्ष मक्का शहर में तथा 10 वर्ष मदीना शहर में हुजूर सलललललाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम सरकार ने ईश्वर के सन्देश और ईश्वर की सत्य पूजा-इबादत को जन-जन तक पहुंचाया। ईश्वर-वाणी या ईश्वर-सन्देश उन्हें मिली, जिसका संग्रह पवित्र 'कुरआन के रुप में आज जाना जाता है। जो कुछ ईश्वर ने अपने पैगम्बर हुजूर सलललललाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम को बताया, उन्होंने उसी सच्चे-ज्ञान को लोगों तक पहुंचाया।

इस्लाम के मायनी (अर्थ) मतीअ और फरमाबरदार होने के है। शब्द 'इस्लाम' का भावार्थ है, जुबान से कल्मए-शहादत को अदा करना एवं दिल से उसकी तसदीक (सत्यार्पन) करना और पांचों वक्त की नमाजें (ईशपूजा) अदा करना। कल्मए-शहादत है– "अश्शहदो अन्नअ लाईलाहअ ईल्ललललाह व अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदन अब्दहु व रसूलहू।" (अर्थात : मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह पाक (पवित्र ईश्वर) एक है, उसके सिवा कोई पूज्यनीय या इबादत के योग्य नहीं तथा मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद सलललललाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं।.)

हुजूर पैगम्बरे आजम सरकार (ईशदूत) के पास एक शख्स (व्यक्ति) आया। उस वक्त हुजूर

(ईशदूत) के पास तमामी सहाबा (ईशदूत साथी) मौजूद थे। उस शख्स के सवाल पर हुजूर ने फरमाया– "इस्लाम यह है कि तू कल्मए–शहादत पढ़े। नमाज़ पंजगाना अदा करता रहे। रमजान के रोजे रखे, ताकत हो तो हज भी अदा करे।"

उस शख्स (व्यक्ति) के दूसरे प्रश्न पर हुजूर ने 'ईमान' के बारे में यूं फरमाया– "तू अल्लाह तआला, उसके फरिश्तों, उसकी किताबों, उसके पैगम्बरों और कयामत (प्रलय) पर तथा नेकी–बदी (पाप–पुण्य) की तकदीर पर ईमान लाए।" हुजूर ने आगे फरमाया– "ईमान की 70 से कुछ ज्यादा खसलतें (विशेषताएं) हैं, जिसमें सबसे अफजल कल्मा तौहीद है और सबसे अदना खसलत (छोटी विशेषता) रास्ते से ऐजा (कष्ट) दूर करने वाली चीज़ हटा देना है।"

हुजूर सललललाहो अलैहे व सल्लम हुजूर ने उसी व्यक्ति के सवाल करने पर 'एहसान' के मायनी यह फरमाया– "एहसान यह है कि तुम अल्लाह की इबादत इस तरह करो, गोया तुम उसको देख रहे हो। अगर ऐसा न हो सके तो दिल में यह जरुर यकीन करो कि अल्लाह तआला (ईश्वर) तुमको देख रहा है।" हुजूर पैगम्बर सरकार के पास इन्सानी शक्ल में ईश्वर के विशिष्ठ देवदूत (मुकर्रब फरिश्ते) हजरत जिब्रील आए थे। यह सारे प्रश्न उन्होंने इसलिए किया था ताकि नबी के साथ रहने वाले सहाबा हजरात को ईश्वर का सच्चा ज्ञान मिले।

धर्म एवं अध्यात्म के विद्वानों ने ईमान के सम्बन्ध में कुछ यूं फरमाया है– "हमारा विश्वास है कि जुबान से इकरार और दिल से यकीन और अरकान पर अमल करने का नाम ईमान है। ईमान ताअत (ईबादत) से बढ़ता है और मअसीयत (गुनाह) से कम होता है। ईल्म (ईशज्ञान) से ईमान में कुव्वत (शक्ति) आती है और जेहालत (ईश–ज्ञानहीनता) से ईमान कमजोर होता है।" कुरआन में अल्लाह पाक (पवित्र ईश्वर) का ईर्शाद (कथन) है– "तहकीक जो लोग ईमान लाए तो उनका ईमान ज्यादा होता है और खुश होते हैं।" उर्दू शब्दकोष (लोगात) में– ईमान के मायनी– "दिल से किसी चीज़ के तसदीक (सत्यापन) करने और जिस पर यकीन हो उसे हासिल करने के हैं।" शरीयत में ईमान के मायनी हैं– "अल्लाह तआला के वजूद का यकीन करना, उसके इस्मा (नामे पाक) व सिफ़ात (विभूतिया) को पहचानना और उन पर यकीन रखना।"

उपरी तथ्यों से इस्लाम की हकीकत यह प्रकट हो रही है कि पांच वक्त की नमाज़ें अदा करना तथा रमजान शरीफ के तीस रोजे रखना और अगर तौफ़ीक है तो हज अदा करना, यह अनिवार्य है। इसके पहले अनिवार्य है– कल्मए–शहादत का जुबान और दिल से इकरार करना। यहां कल्मए–शहादत में 'अश्शहदो अन्नअ लाईलाह ईल्लललाह (अर्थात – मैं गवाही देता हूं कि नहीं कोई पूज्यनीय सिवाए अल्लाह के) अश्शहदो अन्नअ मुहम्मदन अबदहु व रसूलहू' (अर्थात : मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद सललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम बन्दे और अल्लाह के रसूल हैं।)

यहां कल्मए-शहादत (गवाही के महामन्त्र) में मैं गवाही देता हूं अथवा जो भी पढ़े वह यह गवाही देता है कि ईश्वर-अल्लाह के सिवा कोई पूजा-इबादत या परस्तिश के लायक नहीं है और वह यह भी गवाही देता है कि मुहम्मद सललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम बन्दे व अल्लाह के रसूल हैं।

अब हमें देखना यह है कि बिना उस अल्लाह और उसके रसूल को देखे गवाही देना कहां तक उचित है? हम अल्लाह के सिवा किसी को पूज्यनीय नहीं मानते, हम अल्लाह के रसूल पर भी यकीन रखते हैं, यह कथन तो हमारे ईमान की मजबूती को दर्शाता है। पर जब हम कल्मअए-शहादत पढ़ते हैं, तो हमें गवाही देनी होती है। गवाही क्या बिना देखे सत्य होगी? क्या सच्ची गवाही की पहचान बिना सत्यता देखे मान्य होती है? यहां यह भी प्रश्न गम्भीर है कि जिस अल्लाह के सिवा कोई पूज्यनीय या ईबादत के लायक नहीं है, उस अल्लाह को अपने यकीन के साथ हम पूज्यनीय मानकर उसकी पूजा-इबादत करते हैं। अगर उस अल्लाह के प्रति हमें गवाही देने का इकरार करना हो, तो हमें उसे देखना पड़ेगा। गवाही उसे देखकर ही देनी होगी, तभी तो हमारी गवाही पक्की और सच्ची होगी। रसूले-पाक सललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हुजूर को जब हम देख लेंगे, तब हमारी गवाही सच्ची और पक्की होगी।

कल्मअए-शहादत को पढ़ लेना तो बजाहिर आसान लगता है, लेकिन उसकी हकीकत को देखकर इकरार करना, यह कार्य सरल नहीं है। इस कलअमे को सही पढ़ने के लिए हम किससे तरीका पूछें? हमें वह तरीका कौन बताएगा, जिससे यह कलअमा पढ़ने वाले सारे इन्सान अल्लाह और रसूल के 'सच्चे गवाह' बन सकें? यही स्थिति कल्मअए-तौहीद पढ़ने की है। हम रोजाना पढ़ते हैं- "ला इलाहअ इल्लललाह, मुहम्मदुर्रसूलललाह।" अर्थात- नहीं कोई पूजा के योग्य, सिवाए अल्लाह के और मुहम्मद सललल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं।

यहां भी उस पाकजात (पवित्र ईश्वर) को देखने तथा उसके रसूले पाक (पवित्र ईश ऋषि) को देखने का मसला खड़ा है। अल्लाह ही जब पूजा के योग्य है, तब तो उसे बिना देखे पूजा करना कहां तक दुरुस्त है? अगर हम हुजूरे अकरम, नूरे मुजस्सिम सललल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हुजूर को अल्लाह का रसूल मानते हुए अपना रसूल कुबूल करते हैं, तो यह जरुरी है कि हम अपने रसूले-पाक को देख लें, उन्हें जान लें और पहचान लें। यहां भी वही बात हमें चिन्ता में डाल देती है कि देखने-जानने-पहचानने का विधि-विधान हम किससे पूछें?

अल्लाह है, इसमें सन्देह या शक किसी को नहीं है। रसूले पाक (पवित्र ईशदूत) भी हैं, क्या इसमें भी शक किसी को है? कुछ काबिल लोग यह फरमाते हैं कि रसूले-पाक थे, आज वे नहीं है? क्या इस बात को कोई सच्चा इस्लामधर्मी आज मानने को तैयार होगा? 12 रबीउल अव्वल 11 हिजरी को 63 साल की उम्र में रसूले पाक सललल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हुजूर ने दुनियां से परदा

फरमाया। आज अरबी के मुताबिक 1429 हिजरी शुरु है। यानी 1418 साल हुजूर को दुनियां से परदा किए हो चुका। लेकिन हम हर रोज कलअमे (ईश मन्त्रों) में यही पढ़ते हैं कि हुजूर अल्लाह के रसूल हैं। हम हुजूर के परदा फरमाने के बाद यह क्यों नहीं पढ़ते कि वे अल्लाह के रसूल थे। इससे प्रकट हो रहा है कि उनके जिस्मानी और नूरानी जिन्दगी के मध्य कोई अति विशिष्ठ ईश्वरीय रहस्य पोशीदा (गुप्त) है।

यही गुप्त भेद इस्लाम की जिन्दगी और सत्यता है। इसी ईश्वर व ईशदूत के रहस्यों की खोज का नाम 'तसव्वुफ' (अध्यात्म) है। जो ईश्वर और उसके ईशदूत के रहस्यों का जानकार है, वही सूफी या ब्रह्मज्ञानी है। जिसने अल्लाह और उसके रसूले पाक को अल्लाह के दिए इल्म (ज्ञान) से देखा, उन्हें जाना-पहचाना, वही आरिफ (ईश ज्ञानी) है। उसे ही खुदा का इरफान (अन्तः ज्ञान) हासिल है। इसी इरफान को पाने के लिए हर बन्दे को अपने नफ्स से जबर्दस्त जेहाद करने की आवश्यकता है।

ईश्वर के बन्दे ने जब अपने प्यारे हबीब सलललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम का यह कौल (वचन) सुना- (अबगजो एलाहिन् औबेदअ फिलअर्जे इन्दललाहे तआला होवल हअवअया) अर्थात- "अल्लाह तआला के नजदीक सबसे बड़ा माबूद (पूज्यनीय) जमीन में जिसकी पूजा की जाती है, वह ख्वाहिशे नफ्स (इन्द्रिय ईच्छाएं) ही है।" इस्लाम के ईशदूत के अनुसार धरती पर मानव यदि अपनी इन्द्रिय-ईच्छा के साथ ईश-पूजा करता है, तो ईश्वर के समक्ष वही ईच्छाएं उसकी ईश्वर हैं। अर्थात- ऐसी पूजा ईश्वर के समक्ष अस्वीकार है।

इस प्रसंग में मेरे कामिल पीर हजरत सूफी दीदार शाह चिश्ती गोरखपुरी बाबा फरमाते हैं- "जो शख्स ख्वाहिश (ईच्छा) व लज्जाते- नफ्सानी (इन्द्रिय स्वाद) और मुहब्बते-दुनियां (सांसारिक मोहमाया) की मुहब्बत में गिरफ्तार है, बस वही उसका माबूद (पूज्यनीय) है।" हुजूर सूफी दीदार शाह गोरखपुरी बाबा ने आगे यूं फरमाया- "तौहीदे-शरीयत में यह फायदा है, अगर मुनाफिक है तो मुजाहेदीन की तलवार से बच जाएगा। अगर उसके दिल में तसदीक है और वह अहकामे-इलाही (ईश पूजा कर्म) पर मुस्तकिल (स्थिर) है, तो बहिश्त (स्वर्ग) की नेएमतों (ईश-उपहार) का मुस्तहक (हकदार) होगा। अगर वह मर्तबए-यकीन पर पहुंचेगा तो सुबहानल्लाह वह दीदारे-ईलाही (ईश दर्शन) से मुशर्रफ होगा। इस अकलीम के मुसाफिर को चाहिए कि हवा व हविस और ख्वाहिश व लज्जाते नफसानी व दुनियां की मुहब्बत तर्क करे। क्योंकि जिस शय की ख्वाहिश या मुहब्बत होती है, वही उसका माबूद (पूज्यनीय) होता है।"

-इस सच्चाई को जिसने दिल से कुबूल किया, वह नफ्सकुशी (इन्द्रिय निग्रह) के लिए जेहाद (ईश प्राप्ति युद्ध) में लग जाता है। **इस्लाम का सच्चा जेहाद है- ख्वाहिशे नफ्स (इन्द्रिय ईच्छाओं) की पैरवी न करना।** इसकी स्पष्ट पहचान बताते हुए सैय्यदना सरकारे गौसे-पाक हुजूर

फरमाते हैं- "तेरा मकसूद (मूल लक्ष्य) वो है, जो तुझे रंज में डाले और तू उसी का बन्दा है, जिसके हाथ में तेरी मिहार है।" (भावार्थ : अगर दुनियां के हाथ में तेरी मिहार है तो तू दुनियां का बन्दा है। खल्क के हाथ है तो तू खल्क का बन्दा है। आखेरत के हाथ है तो तू आखेरत का बन्दा है। अगर खुदा के हाथ है तो तू खुदा का बन्दा है। अब तू देख कि तेरी मिहार किसके हाथ है।)

हुजूर हाफिज सूफी कारी दीदार शाह चिश्ती बाबा फरमाते हैं- "अल्लाह पाक की सही इबादत हम तभी कर सकते हैं, जब हम ख्वाहिशे नफ्स को सचमुच तर्क (परित्याग) कर दें। मार्फते-इलाही (ईश्वरीय सम्पर्क) का जरिया (माध्यम) हुसूले मुहब्बत व ईश्के-ईलाही है। और यह उस वक्त जलवा अफरोज होता है कि हवा व हविस (घमण्ड व ईच्छाए) तथा दुनियां की मुहब्बत दिल से मिट जाए। बल्कि गैरुल्लाह (अल्लाह के सिवा किसी की ईच्छा) की बू भी बाकी न रहे। खुदा ने किसी को दो दिल नहीं दिया कि एक में खुदा की मुहब्बत रखे और दूसरे दिल में गैर की उल्फत भरे। अल्लाह पाक का ईशाद है- (कमा कालललाहो तआला माजअलललाह लेदअजोलिम मिन कल्बैनअ फी जौफेही) यानी- अल्लाह ने किसी मर्द के अन्दर दो दिल नहीं रखे।"

हजरत सूफी दीदार शाह ने आगे कहा- "जिस कदर गैरुल्लाह (ईश्वर के अतिरिक्त) के साथ मशगूल (व्यस्त) रहोगे, उसी कदर अल्लाह से दूरी रहेगी। क्योंकि महबूब (सर्वप्रिय) माबूद (पूज्यनीय) होता है। अब्द के माअनीं हैं 'मोकैय्यद' (ईश्क में कैद रहना) के, और जिसका जो मोकैय्यद है, वही उसका माबूद है। आशिक (प्रेमी) कभी अपने माशूक का मोकईयद होता है तो माशूक माबूद हुआ। पस यही माअनी कल्माए-तैय्यब 'लाईलाहअ ईल्लललाह' के हैं। कोई महबूब (सर्वप्रिय) व माशूक (सर्वप्रेमी) व मकसूद (लक्ष्य) व माबूद बजुज़ जाते-इलाही (पवित्र ईश्वर) के नहीं।" मेरे पीरो-मुर्शिद का यह स्पष्टीकरण है कि ईश्वर के अतिरिक्त यदि दुनियां के किसी वस्तु या व्यक्ति से प्रेम किया गया, तो वही उसका पूज्यनीय है। वह ईश्वर को पूज्यनीय नहीं मानता तथा ईश्वर की वह पूजा भी नहीं करता। जबकि सर्वप्रिय एवं सर्वपूज्यनीय ईश्वर है। सच्ची पूजा या सच्चा प्रेम हमें उसी एक प्रभु से करनी चाहिए।

2 - इस्लामी-बुनियाद

पैगम्बर (ईशदूत) हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के चार विशिष्ट खलीफा (प्रतिनिधि) हैं। हजरत सैय्यदना अबु बकर सिद्दीक, हजरत सैय्यदना उमर फारुके आजम, हजरत सैय्यदना उषमान गनी तथा हजरत सैय्यदना अली करमुल्लाह वजहू। इनको सहाबा और खुल्फाए-राशेदीन भी कहते हैं। मसजिदे नबूवी में जो सहाबा हर वक्त ईश-पूजा में लगे रहते थे, उनको 'असहाबे-सुफ्फा' कहा

जाता है। इनके सम्बन्ध में ईश्वर ने पैगम्बर साहब से विशेष ध्यान देने हेतु कहा है। ईश-वाणी है- "जो सहाबा सुबह व शाम अपने रब की इबादत करते और उसकी रजा (ईश-ईच्छा) चाहते हैं, उन्हें न छोड़िए।" सहाबा वास्तव में पैगम्बर साहब के वफादार और ईमानदार साथी का नाम हैं। सहाबा को पैगम्बर साहब ने 'बैय्यत' किया था। बैय्यत अर्थात- ईश-प्राप्ति हेतु संकल्प लेकर शिष्य (मुरीद) बनाना। इन सहाबा को पैगम्बर साहब द्वारा ईश-प्राप्ति हेतु साधना की दीक्षा भी दी गई। यह ऐसे सहाबा हैं, जो ईश्वर दर्शन और ईश-कृपा के सिवा किसी चीज के ईच्छुक नहीं थे। यह सहाबा ईश-सन्देश कुरआन तथा ईशदूत द्वारा बतायी शरीयत पर भी बाअमल रहे। इनके ईल्म और अमल पर ईश-साधना में लगने वाले लोग बाद में 'सूफी' नाम से पुकारे गए। यह सूफी पैगम्बर साहब के चारो खलीफा की भांति रसूले-पाक के अमली-इबादत (पूजा) पर भी बाअमल रहे। ईश्वर-अल्लाह से जिसकी मुहब्बत पाक-साफ हो, वह साफी है और जो ईश्वर में फना हो, वह सूफी है। सूफी खुद को ईश्वर में फना करके ईश्वर में मिल जाते हैं। यह सूफी इसलिए भी कहलाते हैं, क्योंकि यह मानवीय-अपवित्रता (बशरी-कदुरत) से मुक्त होकर अपने इन्द्रिय (नफ्स) के आफतों से पवित्र-स्वच्छ (पाक-साफ) होते हैं तथा ईश्वर के सिवा कुछ नहीं चाहते।

सहाबा की तरह रसूले-खुदा के तालीम पर बाअमल 'अहले बैत एकराम' रहे। यह वास्तव में हजरत पैगम्बर साहब के घराने वाले पवित्र लोग हैं। जिन्हें कुरआन-ज्ञान तथा शरीयत, तरीकत, मार्फत और हकीकत के ईल्म का पूर्ण ज्ञान था। यह सारे लोग ईश-साक्षात्कार में परिपूर्ण थे। **हजरत अली साहब के बड़े पुत्र हजरत सैय्यदना इमाम हसन रजिअल्लाह तआला अन्हो, छोटे पुत्र हजरत सैय्यदना इमाम हुसैन रजिअल्लाह तआला अन्हो अहले बैत एकराम में हैं। इनके पुत्र वंशावली में हजरत सैय्यदना इमाम जैनुल आब्दीन अलैहिस्सलाम, हजरत सैय्यदना इमाम मुहम्मद बाकर अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम जाफर सादिक अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम मूसा काजिम अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम अली मूसा अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम मुहम्मद तकी अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम मुहम्मद अली नकी अलै0, हजरत सैय्यदना इमाम हसन असकरी अलै0 तथा हजरत सैय्यदना इमाम मुहम्मद मेंहदी अलै0 यह बारेह अहले बैत एकराम, बारह इमाम कहलाते हैं।**

इन इमाम-साहबान की पवित्र वंशज **चौदह मासूमीन** कहलाती है। यह भी अहले-बैत एकराम में हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं :-

1- हजरत मुहम्मद अकबर (भाई हजरत इमाम हसन अलै0 व हजरत इमाम हुसैन अलै0) 2- हजरत अब्दुल्लाह पुत्र इमाम हसन अलै0 3- हजरत अब्दुल्लाह अली असगर पुत्र ह0 इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम 4- हजरत हुसैन पुत्र ह0 इमाम जैनुल आब्दीन अलै0 5- हजरत कासिम पुत्र हजरत

इमाम जैनुल आब्दीन अलैहिस्सलाम 6- हजरत अली असगर पुत्र इमाम मुहम्मद बाकर अलै0 7- हजरत अब्दुर्रहमान पुत्र इमाम जाफर सादिक अलै0 8- हजरत मुहम्मद पुत्र इमाम जाफर सादिक अलै0 9- हजरत सालेह पुत्र इमाम मूसा काजिम अलै0 10- हजरत तैय्यब पुत्र इमाम मूसा काजिम अलै0 11- हजरत हुसैन पुत्र अली पुत्र इमाम मूसा काजिम अलै0 12- हजरत जाफर पुत्र इमाम मुहम्मद तकी अलै0 13- हजरत इमाम हसन असकरी अलै0 14- हजरत जाफर पुत्र इमाम हसन असकरी अलै0।

एक बार हजरत पैगम्बर साहब ने अपने को शामिल करते हुए ईश्वर से कहा कि- "ऐ अल्लाह, यह हैं मेरे पाक पंजतन।" इनमें हजरत अली करमुल्लाह वजहू, हजरत सैय्यदा बीबी फातमा, हजरत इमाम हसन तथा हजरत इमाम हुसैन आते हैं। पाक-पंजतन अर्थात- पवित्र पांच लोग।पवित्र ईश्वर है। पाक-पंजतन अगर ईश्वर के पैगम्बर ने कहा, इससे प्रकट हुआ कि पांचो लोग ईश्वर के कारण पाक (पवित्र) हैं। शरीर, हृदय, जुबान की पवित्रता तथा ईश-पवित्रता में अन्तर है। ईश-पवित्रता तभी सम्भव है, जब बन्दे का आन्तरिक सम्पर्क ईश्वर से हो। वास्तव में ईश-मिलन से ही ईश-पवित्रता सम्भव है। यह चार पवित्र लोग, ईशदूत की दृष्टि से पवित्र इसलिए घोषित किए गए, क्योंकि इन चारों को ईश-मिलन प्राप्त था। पाक-पंजतन में पांचवे स्वयं ईशदूत हजरत पैगम्बर साहब हैं। वह ईशदूत हैं, इसलिए कौन कहेगा की उन्हें ईश-दर्शन प्राप्त नहीं है? इसलिए जो ईश-नूर से ईश्वरमय हैं, वही हैं- पाक पंजतन। हम स्वयं को पाक बन्दे की घोषणा तब तक नहीं कर सकते, जब तक पाक ईश्वर का दर्शन हमें प्राप्त नहीं हो जाए। ईश्वर से पाक होना अर्थात- मानव प्रकृति एवं गुण को त्याग देना है। जब तक मानवीय गुण-अवगुण को 'नहीं कोई पूज्यनीय' (लाईलाहअ) करने की व्यावहारिक क्षमता हममें नहीं आएगी, हम ईश्वर-दर्शन नहीं पा सकते। जब तक ईश-दर्शन नहीं, तब तक हम पाक बन्दे ईश्वर के नहीं हो पाएंगे। इसलिए पाक पंजतन वे, जो ईश्वर द्वारा पाक किए गए हैं।

सैय्यदा बीबी फातमा के पिता पैगम्बर साहब हैं। इनके पति हजरत अली हुजूर हैं। बीबी सैय्यदा फातमा के लाल हजरत इमाम हसन और हजरत इमाम हुसैन हैं। हजरत इमाम हुसैन को ही उनके 72 साथियों के साथ मैदाने-कर्बला (वर्तमान में इराक स्थित कर्बला) में यजीद लईन ने शहीद कराया था। आप ही की औलाद हजरत इमाम जैनुल आब्दीन हैं, जिनसे अहले बैत एकराम की नस्ले-पाक आज तक दुनियां में मौजूद है। कर्बला की नृशंस हत्याकाण्ड के बाद शैतान यजीद की नस्ल मिट्टी में मिल गई। मगर पैगम्बर साहब की नस्ले-पाक अब तक कायम है। जो इस पवित्र घराने के हैं, वही 'सैय्यद' या 'सादात' कहलाने के हकदार हैं। यह उल्लेख इसलिए करना पड़ा कि बिना सत्यता समझे तमाम लोग अपने को सैय्यद या सादात घराने का कहने लगते हैं। यह बहुत बड़ा पाप (गुनाह) है। क्योंकि अल्लाह के पैगम्बर साहब के घराने से जिनकी निस्बत नहीं, वह अगर अपने को सादात

या सैय्यद कहे तो नबीए-पाक के पवित्र घराने के साथ छल करना है।

चारो खलीफा और असहाबे-सुफ्फा के बाद अहले-बैत एकराम इस्लाम की सत्यता पर कायम रहे। इन्होंने इस्लामी अमल को खुद करके जन-जन को अपना मुरीद बनाया। **हुजूर पैगम्बर साहब के सन्निकटवर्ती दौर में जो पैगम्बर साहब की अमली शरीयत को अपना कर चमक उठे, वह 'ताबईन' कहलाए। तमामी ताबईन ऐसे भी हैं, जिन्होंने पैगम्बर साहब के चारों खुल्फा में से किसी की भी पैरवी की है। ताबईन-एकराम में हजरत अवैस करनी रजि०अ०, हजरत हरम बिन हबान रजि०अ०, हजरत ख्वाजा हसन बसरी रजि०अ०, हजरत सईद इब्ने अलमसीब रजि०अ० आदि हैं। इनकी पैरवी जिन्होंने किया, वह 'तब्बे-ताबईन' कहलाते हैं।**

हजरत हबीब अजमी रह०अलै०, हजरत हबीब बिन असलम राई रजि०अ०, हजरत अबू हाजम मदनी रह०अलै०, हजरत मुहम्मद बिन वासेअ रह०अलै० और हजरत इमामे आजम अबु हनीफा नोमान बिन साबित रजि०अन्हो०, हजरत अब्दुल्लाह बिन मुबारक मरुजी रह०अलै०, हजरत फुजैल बिन अयाज रजि०अन्हो०, हजरत जुनून मिसरी रह०अलै०, हजरत इब्राहीम बिन अदहम रहमतुल्लाह अलैह, हजरत बशर बिन हाफी रजि०अ०, हजरत बायजीद बुस्तामी रह०अलै०, हजरत हारिस मोहासबी रह० अलै०, हजरत दाऊद ताई रह०अलै०, हजरत सिर्री सोकती रह०अलै०, हजरत शफीक बिन इब्राहीम अज़दी रह०अलै०, हजरत अर्दुरहमान अतियादारानी रह०अलै०, हजरत मारुफ करखी रह०अलै०, हजरत हातिम बिन असम रह०अलै०, हजरत इमाम मुहम्मद बिन इद्रीस शाफई रह०अलै०, हजरत इमाम अहमद बिन हम्बल रह०अलै०, हजरत अहमद बिन अबिलजवारी रह०अलै०, हजरत अहमद बिन खिजरविया बल्खी रह०अलै०, हजरत अस्कर बिन हुसैन नख्बशी रह०अलै०, हजरत यहीआ बिन मआज राजी रह० अलै०, हजरत हमदून बिन अहमद बिन कसार रह०अलै०, हजरत मन्सूर बिन अम्मार रह०अलै०, हजरत अहमद बिन आसिम रह०अलै०, हजरत अब्दुल्लाह बिन खफीफ रह०अलै०, हजरत जुनैद बगदादी रह०अलै० आदि तब्बे-ताबईन में शुमार हैं।

इनमें सभी इस्लाम के सच्चे पैरवीकार हैं। इस्लाम की सच्ची रौशनी इन्हीं तब्बे-ताबईन और कामिल पीर बुजुर्गों से दुनियां के हर-हर कोने में रौशन हुई। यह सारे रौशन-चेराग इस्लामी कानून के बाअमल मिसाल हैं। इन्होंने बैय्यत ली, क्योंकि इनके जिन्दगी का मकसद अल्लाह को राजी करने के सिवा कुछ नहीं था। यह सारे मशायख अपने कामिल पीर की तालीम में इस दर्जा डूबे की अल्लाह तआला ने इन्हें अपनी 'वेलायत' देकर औलिया अल्लाह में शुमार (सम्मिलित) कर लिया। इनकी अमली जिन्दगी पर गौर करने से यह साबित होता है कि सच्चा इस्लाम यही है कि ईश्वर को प्राप्त किया जाए। हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के दिए कुरआन व हदीस पर यह जमात पूरी तरह

से बाअमल रही। यही वजह है कि इनके इस्लामी अमली रास्ते पर चलकर दुनियां में बेशुमार (अनगिनत) दीनदार, ओलमाए-हक, सूफी एवं कामिल पीर और वली-औलिया जाहिर हुए। लाखों लोगों को इन्होंने ईश-पथ पर चलाया।

इस्लाम की बुनियाद और मजबूती के पीछे नबी सललललल्लाहो अलैहे व सल्लम की दी गई तालीम (शिक्षा) और अमली शरीयत की भूमिका अतिमहत्वपूर्ण है। उनकी शिक्षा-दीक्षा ने अल्लाह की वह सीधी राह बतायी की उम्मती (अनुयायी) अल्लाह के वली बन गए। आईए- हजरत नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम पर हम दरुदो-सलाम लातादाद भेजें, उनका शुक्रिया अदा करें। क्योंकि *अल्लाह तआला की सच्ची इबादत का तरीका अगर वह न बताते, तो आज दुनियां में इस्लाम कायम* नहीं रहता। यह उनकी एनायत है कि अल्लाह के वली-औलिया और कामिल पीर हर तरफ नज़र आ रहे हैं। पाक पंजतन, खोलफाए राशेदीन, अहले-सुफ्फा हजरात, अहले-बैत एकराम, ताबईन-एकराम और सारे तब्बे-ताबईन एकराम के भी हम शुक्रगुजार हैं कि उन्होंने ईल्मे-रसूले पाक को महफूज रखा। वरना आज वह ईल्मे-पाक हमें कौन अता करता?

अल्लाह पाक की बारगाहे-पाक में हम बसजदा शुकराना अदा करते हैं कि उसने अपनी सच्ची इबादत का सलीका, कामिल पीरों के कुलूब (हृदय) में अब भी कायम-दायम रखा है। ऐ पाक परवरदिगार, *तेरा शुक्रिया हम गुनाहगार बन्दे नहीं अदा कर सकते।* तू अपने सीधे रास्ते पर चलने के लिए हमें कामिल पीर (ब्रह्मलीन सद्गुरु) अता फरमा ताकि हम तेरा दीदार पा सकें। तुझे देखकर तेरी नमाजें पढ़ें। तुझे देखकर तेरा हज करें। ऐ मेरे रहमान ! हम सभी को नाकिस पीरों (गलत गुरुओं) और नाकिस दीनी-रहनुमाओं (गलत धर्म-पथ प्रदर्शक) से बचा, जिनके पास तेरी तसदीक नहीं है। तेरा दीदार तेरे तौहीद की तसदीक है और तेरे महबूब नबीए-पाक का दीदार तेरी नबूवत व रेसालत की तसदीक है। ऐ रहीम व करीम! हमें दोनों तसदीक की दौलत अता फरमा ताकि हम तेरे बाईमान बन्दे बनें और तेरे नबीए-पाक के बाईमान उम्मती कहला सकें। आमीन ! सुम्मा आमीन !

इस्लामी-बुनियाद ईश्वर-अल्लाह के ईश-वाणी (संग्रह कुरआन) तथा हज़रत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के वचन (हदीस) एवं पवित्र ईश-क्रिया कर्म (पाक खुदाई काम) पर निर्भर है। ईश-वचन कुरआन, वास्तव में ईश-कानून है। ईशदूत (पैगम्बर साहब) के वचन एवं कर्म के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि ईश-कानून का पालन बन्दे किस प्रकार सम्पन्न करें। ईश-बन्दे और इस्लामी-बन्दे में *अन्तर हम समझते हैं। मगर इस्लामी धर्म, जब उस एक सर्वमहान ईश्वर का है, तो* यह 'ईशधर्म' ही है। ईश धर्म का पालन यदि इस्लाम के अनुयायियों के लिए ही सुनिश्चित होता, तो कुरआन का खुदा अपने को सबका खुदा क्यों कहता? यही भ्रम हमें हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के प्रति भी है? वह ईशदूत हैं। उनके शरीर की परछायी नहीं थी। उनके शरीर पर ईशदूत होने

के ईश्वर द्वारा प्रमाणित चिन्ह थे। जिसे मुसलमान वर्ग 'मोहरे नबूवत' कहते हैं।

पैगम्बर साहब की पुत्री सैय्यदा बीबी फातमा हैं। उन्हें 'फातमुत्तजोहरा' और 'बुतुल' भी कहा जाता है। हुजूर रसूले-पाक उनसे अत्याधिक प्यार करते हैं। वे कहते हैं कि मेरी शहजादी फ़ातिमा, जन्नत की हूर हैं। उनकी बालों (केश) से जन्नत (स्वर्ग) की खुश्बू आती है। ईश्वर ने अपने ईशदूत से एक बार कहा कि हमने फातमा की शादी अली से अर्शे-आज़म (ईश सर्वोच्च स्थान) पर कर दी है। आप (ईशदूत) उस शादी को फर्श पर अदा कर दें। उस समय बीबी फातमा की आयु केवल पन्द्रह वर्ष साढ़े पांच माह थीं। हजरत अली साहब की आयु इक्कीस वर्ष पांच माह थी। ईशदूत या नबी साहब उस समय इक्तालिस वर्ष के थे। शादी धरती पर ईश-निर्देशन में ईशदूत ने कर दीं। शादी में जो दुआएं और ईश्वर की प्रार्थना पढ़ी गयी, उसे 'निकाह' नाम से जाना जाता है।

दो हिजरी में यह निकाह हुई। 'निकाह' हेतु दुल्हे को 'मेहर' अदा करना होता है। हजरत अली करमुल्लाह वज़हू ने मेहर के लिए अपने जिरह को हजरत ऊषमान रजिअल्लाह अन्हो के हाथ चार सौ अस्सी दिरहम में बेच दीं। वह रकम रसूले पाक को उन्होंने दे दीं। रसूलल्लाह सल्ले अला व सल्लम ने उस रकम को हजरत बेलाल को देते हुए कहा- "बाजार से थोड़ा ईत्र और खुश्बू खरीद लाएं।" सामान आ जाने पर ईशदूत ने खुद निकाह पढ़ाई। उन्होंने पति-पत्नी पर अपने वजू का पानी छिड़का फिर उनके लिए खैर (कुशलता) और बरकत (सुख-समृद्धि) हेतु ईश्वर से प्रार्थना (दोआ) की। दहेज में एक पलंग, एक बिस्तर, एक चादर, दो चक्कियां (आटा हाथ से पीसने वाली) और एक मश्कीजा दिया। शादी के बाद वैवाहिक भोज में मेहमानों को जौ की रोटी, खजूर, पनीर और एक खास किस्म का शोरबा (सालन) पेश किया गया।

यहां यह उल्लेख इसलिए की गई कि हम देखें कि ईशदूत ने निकाह और दहेज तथा दावते-वलीमा (वैवाहिक भोज) किस प्रकार की है? ईशदूत को मानने वाले आज शादी में क्या-क्या करते हैं? क्या हमारा वैवाहिक ढ़ंग ईशदूत के अनुसार है? **आज हम शादी-विवाह के नाम पर किस स्तर से ईशदूत विरुद्ध आचरण करते हैं, यह सच्चाई किसी से छिपी नहीं है? फिर हम कैसे कहते हैं कि हम ईशदूत की 'सुन्नत' पर हैं?**

हजरत सैय्यदा फातमा जोहरा हुजूर मासिक ऋतुस्त्राव (हैज) से पाक थीं। उनकी सन्तान नूर से हैं। उनके शहजादे जन्म से पवित्र हैं। जो नूर से उत्पन्न हैं, वहीं सैय्यद हैं। जो इस तरह के पवित्र नूर से नहीं, वह सैय्यद नहीं। हजरत अली हुजूर की माता हजरत असद बिन हाशिम साहब की पुत्री हजरत फातमा हैं। इनके पिता का नाम हजरत अबु तालिब है।

हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम तथा हजरत अली करमुल्लाह वजहू एवं सैय्यदना बीबी फातमा तथा हजरत इमाम हसन अलैहिस्सलाम व हजरत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम को पाक पंजतन

कहा जाता है। हजरत अली साहब की माताश्री बीबी फातमा (पुत्री श्री असद पुत्र श्री हाशिम पुत्र श्री अब्द मुनाफ) को अचानक दर्द शुरु हुआ। वह काबा के तवाफ (परिक्रमा) में हुजूर मुहम्मद साहब सल्ले अला व सल्लम के साथ थीं। हुजूर पैगम्बर साहब ने फरमाया- "काबा के अन्दर जाओ, खुदा मुश्किल आसान फरमा देगा।" फलस्वरुप हुजूर सल्ले अला व सल्लम के मदीना जाने (हिजरत) के तेईस वर्ष पूर्व तेरह रजब, दिन- शुक्रवार, को हजरत अली साहब की पैदाईश हुई। हजरत अली हुजूर काबा में पैदा हुए। हुजूर पैगम्बर साहब ने उन्हें गुसल (स्नान) दिया और हजरत अली साहब ने उनकी पवित्र जुबान को चूसा। आपका नाम 'असद' आपकी मां ने रखा। हजरत 'अली' नाम खुद पैगम्बर साहब ने रखा। हजरत अली हुजूर का रिश्ता पैगम्बर साहब से चचेरे भाई का भी है तथा वे दामाद भी हैं। वह हुजूरे पाक के खास-खलीफा भी हैं। हुजूर पैगम्बर साहब ने काफी पहले हजरत अली से कहा था कि आप पर तलवार से वार अमुक स्थान पर होगा। वही हुआ। सत्रह रमजान, 40 हिजरी को शुक्रवार की रात कूफा की मसजिद में ब्रम्हमूर्त के समय उन पर तलवार से एक व्यक्ति ने वार किया। उसका नाम अब्दुर्रहमान पुत्र मुलजम मुरादी था। वार होते ही उनके मुंह से यह निकला- "फौतो बे रब्बिल काअबा।" (बखुदा, मैं अपने मकसूद (लक्ष्य) को पहुंचा।) हजरत अली हुजूर के इस कौल में नबीए-पाक के पूर्व भविष्यवाणी के प्रति ईमान की जबर्दस्त खुश्बू है। मन्जूरे-खुदा को नबीए-पाक ने पूर्व में उन्हें बताया था। इसलिए वह बाखुशी इस शहादती-हमले को कुबूल कर लिए। यानी जो खुदा को मन्जूर है वही अली का मकसूद है। इब्ने मुलजम पकड़ा गया। हजरत अली शुक्रवार एवं शनिवार तक जख्मी रहे। 21 रमजान, 40 हिजरी को रविवार की रात आप परदा फरमाए। हजरत इमाम हसन, हजरत इमाम हुसैन तथा हजरत अब्दुल्लाह पुत्र जाफर ने उन्हें गुसल (स्नान) कराया। हजरत इमाम हसन ने नमाजे जनाजा पढ़ाई। कूफा इराक में है। आज इराक के नजफ नामक स्थान पर हजरत अली साहब की बेशकीमती मजार स्थित है।

आपकी पत्नी सैय्यदा फातमा बीबी की मजार मदीना शहर में है। आपके बड़े पुत्र हजरत इमाम हसन साहब की सूरत पैगम्बर साहब से काफी मिलती-जुलती है। 22 रमजान, 40 हिजरी, दिन-सोमवार को कूफा में चालीस हजार लोगों ने आपसे 'बैय्यत' की तथा अपना अमीरुल मोमनीन (ईमानवालों का सरदार) स्वीकार किया। उस समय आपकी आयु 38 साल थी। आप 47 वर्ष की आयु में परदा फरमाए। मदीना शरीफ के जन्नतुल बकिया में आप अपनी दादी जान फातमा बिन्ते असद और अब्बास पुत्र अब्दुल मोतल्लिब के मजार के पास दफ्न किए गए।

हजरत इमाम हुसैन की पैदाईश 5 शाबान, चार हिजरी को मदीना में हुई। आपके सम्बन्ध में पैगम्बर साहब ने फरमाया- "मुझे हुसैन के कत्ल होने की खबर पहुंची है और उस जमीन की खाक (मिट्टी) लाकर मुझे दी गई और उनके कातिल का नाम भी बताया गया।" नबीए-पाक ने यह भी

फरमाया– **''पहले पहल जो व्यक्ति मेरे बताए ईश्वरीय नियम एवं ईश–कार्य पद्धति में परिवर्तन और बदलाव करेगा, वह बनी उम्मईया खानदान का एक व्यक्ति होगा, जिसको 'यजीद' कहेंगे।''**

हजरत अली करमुल्लाह वजहू ने भी जंगे–सिफ्फीन के मौके पर हजरत यहिआ हजरी रजि० अ० से नैनवा नामक स्थान पर पहुंच कर कहा था– ''ऐ अब्दुल्लाह ! सब्र करना किनारे फरात (एक नदी) के। मुझे पैगम्बर साहब ने खबर दी है कि फरिश्ता जिब्रील कहते थे कि फरात के किनारे हुसैन मारे जाएंगे और वहां की मिट्टी भी दिखाई थी।'' हजरत अली हुजूर ने यहिआ हजरी को नैनवा (कर्बला) की जमीन दिखाते हुए कहा था– ''यह ऊंटों के बंधने की जगह है। यह खून बहने की जगह है। यह उन अहले–बैते रसूल की जगह है, जो यहां शहीद किए जाएंगे। इस घटना पर आसमान और जमीन रोएंगे।''

सहाबा के पूछने पर रसूले–पाक ने एक बार यह कहा– ''मेरी हिजरत के साठवें साल हुसैन शहीद होंगे।''

सचमुच वही हुआ। यजीद नामक शैतान बनी उमईया खानदान का था। उसके पिता अमीर माविया थे। हजरत इमाम हसन के परदा फरमाने के बाद उन्होंने अपने पुत्र यजीद के पक्ष में जनमत संग्रह जुटाने का प्रयत्न शुरु कर दिया। वे सहाबी रसूल हो कर भी अपने पुत्र की बादशाहत के लिए परेशान थे। इस्लामी–इतिहास में वे ऐसे पहले सहाबी हैं, जिन्होंने तालीमे रसूले पाक के बरखिलाफ नफ्स की पैरवी की। उन्होंने शाम इलाके के लोगों को यजीदी 'बैय्यत' के लिए डरा–धमकाकर आमादा कर लिया। मदीना के हाकिम वलीद बिन उकबा को निर्देशित किया कि यजीद के पक्ष में 'बैय्यत' रुपी समर्थन जुटाएं। मगर मदीना के लोग वलीद के झांसे में नहीं आए। अमीर माविया हज के बहाने एक हजार लश्कर के साथ मदीना आए। अल्लाह तआला के हज के नाम पर उन्हें सिर्फ हज बैतुल्लाह ही करनी चाहिए थी। मगर उन्होंने लोगों से कहा कि यजीद की बैय्यत लो, वरना मेरे फौजी गर्दन उड़ा देंगे। उन्होंने फौजियों को भी हुक्म दिया कि जो यजीद की बैय्यत न माने, उसकी गर्दन उड़ा देना। 52 हिजरी से 60 हिजरी कुल आठ साल अमीर माविया ने यजीद को बादशाह बनाने के लिए जोर–जबर्दस्ती का अभियान खूब चलाया। उन्हें 60 हिजरी में लकवा (पक्षाघात) हुआ और वह मर गए। अब यजीद ने बादशाहत की बागडोर संभाल ली । उसके आतंक और अनाचार, दुराचार की जोरदार तानाशाही आरम्भ हो गई। जनता में खौफ और दहशत का आतंक फैल चुका था। उसने ईश–कानून और ईशदूत के बताए तरीकों के विपरीत कार्य शुरु कर दिया। हजरत इमाम हुसैन ने उसकी ईश–विरोधी कार्य–पद्धति के विरुद्ध जनता में आवाज बुलन्द की। यह खबर जब यजीद को लगी तो वह उनके खून का प्यासा बन गया। नकली इस्लामी प्रसार को हजरत इमाम हुसैन रजि० अ० के

कारण काफी धक्का पहुंचने लगा। अवाम समझने लगी की रसूले-पाक के वारिस इमाम हुसैन हक पर हैं और यजीद नाहक पर है। यजीद ने उनकी जुबान बन्द कराने हेतु धन-दौलत, आधी-अधूरी हुकूमत देने का भी प्रलोभन दिया। किन्तु वे इन्कार करते रहे। उन्होंने साफ शब्दों में यजीद को पैगाम दिया कि दीने-हक में अपने नापाक अकायद को शामिल करके अवाम को गुमराह मत करो। हुसैन नबीए-पाक के हक्की दीन में जर्रा बराबर बदलाव बर्दाश्त नहीं कर सकते। यजीद तिलमिला उठा। उसने धमकी दी- "अगर नहीं माने तो जान से हाथ धोना पड़ेगा?" हजरत इमाम हुसैन ने जवाब भेजा- "जान दे दूंगा, मगर खुदा के पाक दीन को तेरे नापाक हाथों से रुसवा नहीं करुंगा।" यजीद आग-बगूला हो उठा। उसने दीने-मुहम्मदी के आशिकों पर चुन-चुनकर जुल्म ढाना शुरु कर दिया।

इराक के लोगों ने हजरत इमाम हुसैन से 'बैय्यत' की फरियाद की। वह यजीदी जुल्म, अय्याशी, बदकारी और दुष्टाचार से आतंकित थे। लोगों को यह भरोसा था कि अमन-आमान और महाशान्ति का सच्चा इस्लाम, हजरत इमाम हुसैन के पास है। क्योंकि वह हजरत पैगम्बर साहब के सच्चे वारिस हैं। उन्हें यह भी ईल्म था कि 'बैय्यत' उसी की जायज है, जो अल्लाह तआला (ईश्वर) का नेकबन्दा हो। 'बैय्यत' उसी से की जाए, जो सबकी कुशलता तथा सबकी मदद प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष देने में सक्षम हो। यजीद तो शैतान है। उसकी 'बैय्यत' करने का मतलब जहन्नुम में जाना है। कामिल रहनुमा के यह सारे गुण हजरत इमाम हुसैन हुजूर में हैं। यजीद तो मात्र नाम का मुसलमान है। जिसका कल्मा 'लाईलाहअ' (नहीं कोई माल, दौलत, शासन, घमण्ड, लालच, अय्याशी आदि पूज्यनीय) पढ़ना ही दुरुस्त नहीं है। जो दुनियांवी हविश और अहंकार का पुतला हो, वह 'बैय्यत' लेने का हकदार नहीं। यजीद की बदबू से लोग त्रस्त होते रहे। मगर अपनी जान जाने के खौफ से लोग खुलकर उसका विरोध नहीं कर पा रहे थे। यही कारण था कि ईशदूत के सच्चे वारिस की 'बैय्यत' वह चाहते थे। 'बैय्यत' करने की नीयत से हजरत इमाम हुसैन हुजूर 3 या 8 जिलहिज्जा, 60 हिजरी को कूफा के लिए चल पड़े। दो मुहर्रम 61 हिजरी को वह नैनवा नामक स्थान पर पहुंचे। उनके साथ उनका पूरा परिवार था। जिनमें 53 अन्सार, 19 हाशिमी सादात के अहले बैत थे। कुछ इतिहासकारों ने 59 अन्सार तथा 19 अहले-बैत का उल्लेख किया है। यहां यजीदी फौजों ने घेराबन्दी कर ली। 07 मुहर्रम को फरात नदी का पानी आप लोगों पर यजीदी लश्कर ने बन्द कर दिया। 10 मुहर्रम, 61 हिजरी को नैनवा के स्थान पर नृशंस हत्या का खूनी खेल यजीद के निर्देशन में हुआ। 20 अहले बैत एकराम मैदाने कर्बला में शहीद किए गए। बच्चों को कत्ल किया गया। खेमें में आग लगा दी गई। पाक स्त्रियों की बेहुरमती की गई। अहले बैत के जिन्दा मरदों को लोहे की जंजीरों से जकड़ा गया। यजीदी फौज के मुसलमान बजाहिर दाढ़ी-टोपी वाले थे, मगर वह जिस इस्लाम के अनुयायी थे, उसी के संस्थापक के खानदान और नवासे हजरत इमाम हुसैन को बेरहमी से कत्ल किया। समझ में नहीं आता कि

यजीद और यजीदी लश्कर का इस्लाम क्या था? यह जाहिर तो हो रहा है कि वह यजीद के बनाए नवीन इस्लाम की पैरवी करने वाले थे। शहादत के पूर्व हजरत इमाम हुसैन ने जख्मी हालत में नमाज अदा की। यजीदी-कुत्तों ने उनके गर्दन पर तब वार किया, जब वह पाकजात के सजदे में थे। उस समय उनकी आयु 56 साल पांच माह, पांच दिन थी। आज हिजरी के अनुसार इस नृशंस काण्ड के गुजरे 1368 साल हो गए। मगर हुसैन जिन्दा हैं और यजीद हमेशा के लिए मुर्दा हो गया। **कर्बला की घटना गवाह है कि मुसलमान ऐसे भी हैं, जो नमाज, रोजा, हज, जकात, तौहीद के पैरवीकार होंगे, मगर उनके दिलों में हजरत पैगम्बर साहब और उनके पवित्र घराने के प्रति मुहब्बत और वफादारी न होंगी। ऐसे मुसलमान केवल दिखावे के मुसलमान होंगे। उनमें लालच, हिर्स, तकब्बुर, झूठ, छल-प्रपंच, दगाबाजी, स्वार्थ-प्रेम आदि गन्दे आचरण पाए जाएंगे। आजका विश्वचर्चित खूनी-जेहाद इसी यजीदी-अनुकरण वाले मुसलमानों की पैदावार है। इस्लाम का सच्चा जेहाद, हुसैनी-जेहाद है। 'ईल्लल्लाह' के लिए उन्होंने अपने जिस्मो-जान तक को 'ला-ईलाहअ' कर दिया। क्या कोई मुसलमान सारे आलम में अब तक ऐसा हो सका, जो कल्मा 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' को हजरत इमाम हुसैन की तरह अमली सूरत में अदा किया हो?** वही मुहर्रम की 7 से दसवीं तारीख आज तक ताजिया के रुप में दुनियां के कोने-कोने में मनायी जाती है। इसी गमे-हुसैन में दुनियां मातम भी करती है।

यहां हजरत नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम के उस कथन पर गम्भीरता से ध्यान दें। आपने कहा की- "पहले पहल जो शख्स मेरे तरीक व शरअ में तबद्दुल व तगईयुर करेगा, वह बनी उम्मईया से एक शख्स होगा, जिसको यजीद कहेंगे।" अर्थात- ईश-धर्म इस्लाम तथा ईशदूत के तरीके और शरीयत में बदलाव और परिवर्तन करने वाला 'यजीद' कहलाएगा। इससे यह प्रकट हो रहा है कि कोई व्यक्ति सत्य ईश-धर्म या इस्लाम तथा उसके ईशदूत (नबी, रसूल) के नियम एवं व्यावहारिक कार्य-पद्धति में, यदि कुछ भी परिवर्तन एवं बदलाव करे तो, वही 'यजीद' है। वाकेयाते कर्बला से प्रलय तक दुनियां 'यजीद' की पहचान कर सकती है। उस पर लानत-मलामत कर सकती है। हमारे ईशदूत के कथन में यह स्पष्ट है कि यजीद कौन है? ऐसा व्यक्ति, जो खुदा और रसूल के कानून को अपने निजी लाभ के लिए परिवर्तित तथा विकृत करे, वही यजीद कहलाएगा। ईश-कानून और ईशदूत नियमों को बदलने और विकृत करने का कार्य तो इब्लीस का है। मालूम हुआ की यजीद का दूसरा नाम इब्लीस है। ऐसे यजीद इब्लीस पर दुनियां उसी तरह लाहौल पढ़ कर थूक सकती है, जिस तरह प्रथम यजीद पर आज तक थूकती आ रही है। कर्बला-काण्ड ने यह भी बताया की जो यजीद इब्लीस

गुरु विरजानन्द ...
सन्दर्भ पुस...
पु. परिग्रहण क्रमांक 5321

होगा, उस के दिल में ईशदूत के प्रति अपमान होगा तथा वह ईशदूत के उत्तराधिकारी पुत्रों के खून का प्यासा होगा। वह प्रत्यक्ष में मुसलमान या मुसलमान बादशाह नज़र आ सकता है, लेकिन उसकी निजी मान्यताएं ईशदूत विरोधी होंगी। ऐसे यजीद इब्लीस को हर दौर में पहचान कर 'लाहौल' पढ़िए और अपना ईमान और इस्लाम नबीअल्लाह और आले–नबी पर मजबूत रखिए।

3 – रसूले–पाक ने फरमाया

(1) मैं और अली एक ही नूर से हैं। (2) अली मुझसे हैं, मैं अली से हूं। (3) शबे–मेराज अल्लाह तआला ने हमें अली के तीन अल्काब (सम्मानित नाम) अता किए– सैय्यदुल मोमेनीन (ईमान वालों के सरदार), इमामुल मुत्तकीन (मुत्तकीयों के रहनुमा), इमाम कायदुल गुर्रुलमोजल्लीन। (4) मैं जिसका मौला, अली उसके मौला हैं। (5) अली की मुहब्बत, गुनाहों को इस तरह खा जाती है जैसे सूखी लकड़ी को आग। (6) मेरी बेटी (सैय्यदा फातमा जोहरा) ताहिर और मुतहरा (सरापा पवित्र) है, उसको न हैज (मासिक ऋतुस्त्राव) होता था और न नफास। (7) हुसैन मुझसे हैं और मैं हुसैन से हूं। (8) मेरा बेटा (हजरत इमाम हसन) दो बड़े गिरोहों में सुलह कराएगा। (9) ईमान कल्ब (हृदय) की मार्फत (सम्पर्क) हासिल होने और जुबान के साथ इकरार करने और अरकान के साथ अमल करने का नाम है। (10) वह मोमिन नहीं, जो पेट भर खाए और उसका पड़ोसी उसके पहलू में भूखा रहे। (11) एक जमाना ऐसा होगा, जिसमें लोग मेरी सुन्नत और तरीके को छोड़कर दूसरे तरीके एख्तियार कर लेंगे। वह दौर होगा कि लोग जहन्नुम के दरवाजे पर खड़े, औरों को दावत देते होंगे। जो उनकी दावत कुबूल करेगा, उसे वह जहन्नुम के अन्दर धकेल रहे होंगे। (12) जिना (बलात्कार) और सूदखोरी की कसरत (अधिकता) अजाबे–इलाही (ईश–प्रकोप) को दावत (आमन्त्रंण) देतीं है। जिंना से जलजला आता है। जालिम हाकिम से बारिश का कहत (सूखा) होता है। (13) ऐ अली, तेरे लिए जन्नत में वह चीज है कि तमाम रुए–जमीन (सम्पूर्ण धरती) के लोगों पर तकसीम (वितरित) की जाए तो बची रहे। (14) मैं ईल्म का शहर हूं, अली उसके दरवाजा हैं। (15) ऐ अली, तुम्हें मुझसे वही मर्तबा हासिल है जो हजरत हारुन अलै0 को हजरत मूसा अलै0 से था। (16) अली कुरआन के साथ हैं और कुरआन अली के साथ। यह दोनों हरगिज जुदा न होंगे। (17) अली मेरे लिए ऐसे हैं जैसे मेरा सिर मेरे बदन के लिए। (18) अल्लाह तआला हर रोज व शब (रात) मलाएका (फरिश्ते) पर हजरत अली के जरिए (द्वारा) फख्र व मुहाबात करता है। (19) मेरे बाद उम्मत में सबसे बढ़कर आलिम हजरत अली इब्ने अबी तालिब हैं। (20) तीन बातें जिस किसी में होगी, वह न मुझसे है और न मैं उससे हूं। अली की दुश्मनी, अहले–बैत की अदावत (शत्रुता) और यह कहना की ईमान महज (केवल) जुबानी इकरार है।

(21) अली मेरे लिए हुए वायदों को पूरा करेंगे और मेरे कर्जों को अदा करेंगे। (22) अली की हड्डियों तक में ईमान भरा हुआ है। (23) जिसने अपने नफ्स को पहचाना, उसने अपने रब को पहचाना। (24) दुनियां उस वक्त तक खत्म न होगी, जब तक कि लोगों पर ऐसा वक्त न आ जाए कि कातिल को यह खबर न होगी कि उसने क्यों कत्ल किया और न मकतूल (कत्ल होने वाला) यह समझ सकेगा कि उसे क्यों कत्ल किया जा रहा है?

---ईशदूत के इन कथनों में कोई इन्सान ईश्वर की सत्यता देख सकता है। उनके वचन में वर्तमान की सच्चाई भी नजर आ रही है।

4 - ईश-पूजा : औलिया की नज़र में

वली-औलिया के शहंशाह तथा समस्त सद्‌गुरुओं के सद्‌गुरु हजरत शाह सैय्यद शैख अब्दुल कादिर जिलानी, इस्लाम मजहब के प्रकाण्ड विद्वान तथा आध्यात्मिक जगत के सर्वश्रेष्ठ ईश-ज्ञानी हैं। आपने अपने आध्यात्मिक आश्रम (खानकाह गौसिया) में एक बार यह फरमाया- "तेरे 'ला ईलाहअ ईल्लल्लाह' कहने से कुछ फायदा नहीं, इसलिए की तेरे दिल में अल्लाह के अलावा और भी माबूद (ईश्वर) भरे हैं। खुदा के सिवा, हर वह चीज जिस पर तू भरोसा करता है, वह तेरा बुत (मुर्ति) है। अगर तेरा दिल मुशरिक है तो तेरी जुबान से कल्मे का इकरार कुछ भी फायदा न देगा। इसी तरह दिल की गन्दगी के साथ, बदन की पाकी तुझको कुछ भी फायदा न देगी।"

हुजूर पीराने-पीर दस्तगीर के इस कथन में इस्लाम की हकीकत स्पष्ट रुप से प्रकट है। आपने साफ शब्दों में ईश्वरीय सत्य पूजा कैसे की जाए, उसका भेद खोला है। आपने अपने कथन में यह भी स्पष्ट किया है कि ईश्वर की दृष्टि में बुत या मूर्ति का वास्तविक अर्थ क्या है? आपने ईश्वर पूजा के साथ यदि कुछ भी शरीक किया जाए, उसे शिर्क कहा तथा जो ऐसा करते हैं, उन्हें मुशरिक कहा है। हुजूर गौसे पाक के इस कथन में यह भी भेद खुला है कि अगर दिल में ईश्वर के सिवा कुछ भी है, तो वह मनुष्य कितना शरीर को साफ-सुथरा रखे, वह ईश-पूजा से लाभ नहीं पाएगा।

बड़े पीर सरकार, वह हैं, जिन्हें ईश्वर की अपार और असीमित कृपा हासिल है। उन्होंने चन्द शब्दों में ईश-वचन (कुरआन) की सत्यता प्रकट कर डाली। इस्लाम का कल्मा 'ला ईलाहअ ईल्लल्लाह' अर्थात- नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के। इसे पढ़ने के पूर्व इन्सान को अपने ह्रदय से हर सांसारिक बातें निकाल कर, तब पढ़नी चाहिए। यदि ईश्वर की पूजा-इबादत करते समय ह्रदय में दुनियां की आशा-अभिलाषा, चिन्ता, दुःख आदि मौजूद है, तो वहां सांसारिक बातें उस व्यक्ति का मूर्ति या बुत रुपी ईश्वर है। दिल में बैठा ऐसा बुतरुपी ईश्वर अगर है, तो जुबान से 'ला ईलाहअ

ईल्लल्लाह' या नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के, पढ़ना लाभदायक नहीं होगा। हृदय में पल रही या बैठी ईच्छाएं वास्तव में बुत हैं। यही ईश्वर की नजर में बुत या मूर्ति है, जो इस हाल में ईश-पूजा करे, वह ईश-पूजक नहीं, वही बुतपरस्त या मूर्तिपूजक है। ईश्वर ने हिन्दू, ईसाई, पारसी, बौद्ध या सिख आदि को मूर्तिपूजक या बुतपरस्त नहीं कहा है। उसका यह निर्देश अपने समस्त बन्दों के लिए है। बुतपरस्ती या मूर्तिपूजा की सच्ची पहचान इस्लाम ने यही ग्रहण किया है। अब बुत या मूर्ति शब्द के संकेतों का अर्थ कोई चित्र, पेन्टिंग, पत्थर या मिट्टी की मूर्ति से लगावे, तो यह उसका अपना बुद्धि-ज्ञान है। ईश्वर वचन या इस्लाम अथवा कुरआन से ऐसे निरर्थक अर्थ का कोई लेना-देना नहीं है। जगत के अनेंको शास्त्र एवं विद्या को जानने-समझने में हम कितना श्रम-साधना करते हैं, परन्तु ईश्वर महान के शास्त्र या कथन को मात्र शब्दों से पकड़ने का प्रयत्न क्यों करते हैं? यह शास्त्र, समस्त जगत शास्त्रों या विद्याओं से इतना सरल कैसे होगा, जिसका सत्य अर्थ, भावार्थ हर सांसारिक ज्ञानी या उच्च शिक्षित विद्वान जैसे चाहे निकालता रहे। ईश-वचन, जो भी हैं, उसे सत्यासत्य रुप में समझने-समझाने की योग्यता, उसी में होगी, जो ईश्वर के सन्निकट हो। सन्निकट वही है, जो ईश्वर कृपा प्राप्त है। ईश-कृपा उसे हासिल है, जो ईश्वर का वली-औलिया, आध्यात्मिक योगी या योगीराज आदि हो।

ईश-वचन या वेद वचन या बाईबिल, तौरेत आदि का सत्य एवं शुद्ध भावार्थ वही कर पाने में सक्षम है, जो ईश-सम्पर्क में हो। आज कुरआन, वेद, बाईबिल, गीता आदि के अनुवाद या भावार्थ अधिकतम ऐसे लोगों द्वारा किए गए या किए जा रहे हैं, जो ईश-सेवा में तो हैं, परन्तु ईश-सम्पर्क उन्हें प्राप्त नहीं। निश्चित रुप से ऐसे अनुवादकों या व्याख्याकारों के विचार उनके सत्य ज्ञान की जगह, शब्द ज्ञान पर आधारित होगा। जो ईश-वचन के सत्य अर्थ को अपनी ज्ञान परिसीमा अनुसार ईश्वर-निर्देश से विपरीत प्रकट करेंगे। यही स्थिति आज ईश-वचन को असत्य रुप में समाज को बांट रहीं है।

हुजूर गौसे पाक एक ईशकृपा प्राप्त सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक योगीराज हैं। वे इस्लाम के पैगम्बर साहब के नस्ले-पाक के अतिश्रेष्ठ धार्मिक विद्वान भी हैं। ईश्वर के कथन-वचन की सत्यता उनसे जाना जाए तो निस्सन्देह वह प्रमाणिक होगा। अरबी भाषा में इस्लाम का कल्मा 'ला ईलाहअ इल्लल्लाह' है। अर्थात- ईश्वर ही पूज्यनीय है का कथन उसी का सच्चा है, जिसके हृदय, मन, विचार में ईश्वर के अतिरिक्त अन्य कोई बात न हो। ईश्वर के सिवा अन्य किसी बात, विचार का मन-हृदय में रहना, ईश्वर की सत्य पूजा नहीं है। जो जुबान से ईश्वर के इस कलमे को पढ़े, मगर वह मन, हृदय में एक या अनेक विचारों को रखता हो, वही बुतपरस्त है या वही मूर्तिपूजक है। उसके मन, हृदय में आए या रहने वाले विचार ही बुत हैं। वही व्यक्ति ईश्वर पूजा में अपने मन व हृदय रुपी विचारों

का बुत या मूर्ति रखकर 'शिर्क' करता है। ईश्वर-अल्लाह के जिक्र-अजकार या नमाज-पूजा में हृदय व मन के विचार बुत हैं। और इस परिस्थिति में पूजा-इबादत करने वाला ईश्वर के साथ अपने बुतों को भी पूज रहा है, इसलिए वह 'शिर्क' कर रहा है, उसे ही इस्लाम की भाषा में 'मुशरिक' कहा गया।

कल्मा- 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' में सर्वप्रथम 'ला' अरबी शब्द 'नहीं' को बताता है। अर्थात- नहीं कोई इबादत या पूजा के लायक। 'नहीं कोई' शब्द का संकेत है, पूजा करने वाले के हृदय, मन, विचार में उत्पन्न कोई भी सांसारिक बातें। हृदय से सांसारिक बातों को जिसने निकाल दिया, उसने 'ईल्लल्लाह' को ठीक ढंग से पढ़ लिया। ऐसा व्यक्ति जब 'ईल्लल्लाह' कहेगा, अर्थात- ईश्वर ही है पूज्यनीय, तो उसने ईश्वर-अल्लाह की पूजा-इबादत सही की। वह बुतपरस्ती करने वाला या मूर्तिपूजक नहीं है। वह 'शिर्क' करने वाला या 'मुशरिक' नहीं है। हजरत सरकारे गौसे पाक के कथन का आशय यही है। उनका यह कहना कि 'लाईलाह ईल्लल्लाह' कहने वाला यदि दिल में ईश्वर के सिवा कुछ भी विचार या वस्तु रखता है, तो वह उसका 'माबूद' है। यानी वही उसका पूज्यनीय है। 'माबूद' का अर्थ यह भी है, जिसकी पूजा की जाए। अर्थात- हृदय में उत्पन्न या मौजूद चीजें अगर हैं, तो वही उस बन्दे का माबूद या ईश्वर है। फिर केवल जुबान से 'ईल्लल्लाह' या ऐ ईश्वर तू ही पूज्यनीय है, यह कहना लाभकारी नहीं होगा। क्योंकि हृदय में उसकी ईच्छाएं या सांसारिक वस्तुएं ईश्वर बनी हुई पूर्व-से उपस्थित हैं। जुबानी कथन का ईश्वर और हृदय में बसा ईश्वर, यह तो दो ईश्वर हो गए। इसलिए ऐसे बन्दे ने ईश्वर के साथ हृदय की वस्तु रुपी ईश्वर की भी पूजा की। इसी तरह के पूजकों को इस्लाम में ईश्वर की पूजा में दूसरे ईश्वर को शरीक करना कहते हैं। ऐसे ईश-पूजक को इस्लाम ने 'मुशरिक' कहके सम्बोधित किया। ईश्वर के अतिरिक्त हर वह चीज, जिस पर बन्दा भरोसा करे, वही उसका बुत है। बुत या मूर्ति की सूरत-शक्ल होती है, मगर यहां ईश-वचन के रहस्यमय भेद को अनावृत करते हुए हुजूर गौसे पाक फरमाते हैं कि मनुष्य को ईश्वर के सिवा, जिस चीज पर भरोसा हो, वह भरोसे वाली चीज ही उसका बुत है। हृदय में तमाम प्रकार की ईच्छाएं, कामनाएं, बुत हैं। यह वो बुत हैं, जिनसे मुक्ति पाए बिना दुनियां का कोई व्यक्ति ईश्वर-अल्लाह की सत्य पूजा-इबादत नहीं कर सकता है। शरीर के गुसल या स्नान से बाहरी शरीर तो पवित्र हो जाएगा, किन्तु यदि दिल में गन्दगी है, तो पवित्र बाह्य शरीर से ईश-पूजा का लाभ प्राप्त नहीं होगा।

अब हमें देखना है कि हमारी पूजा-इबादत के पवित्र कर्म क्या इन सच्चाईयों के अनुसार है। यदि नहीं, तो हमें सत्य पूजा-विधान के अनुसार ईश्वर की पूजा हेतु तैयारी करनी चाहिए।

सैय्यदना हुजूर पीराने-पीर दस्तगीर ने मुसलमान के सन्दर्भ में यह कहा- "ऐ इन्सान तुझ पर अफसोस है कि तेरी जुबान तो मुसलमान है, मगर तेरा दिल मुसलमान नहीं। तेरी बात मुसलमानों की सी है, मगर तेरा काम मुसलमानों का सा नहीं। तू जाहिर में मुसलमान दिखाई देता है, मगर बातिन

में मुसलमान नहीं। ऐ बन्दे ! याद रख अगर तू नमाज पढ़े, रोजा रखे, जकात दे और सारे नेक काम करे मगर अल्लाह की खुश्नूदी मकसद न हो तो मुनाफिक है।"

हुजूर बड़े पीर साहब के इस कथन में विश्वमानव जाति के लिए 'मुसलमान' नामक शब्द का सम्बोधन हुआ है। अन्यथा वह प्रारम्भ में यह न कहते कि ऐ इन्सान तुझ पर अफसोस है। अगर मुसलमान को ही उनका सम्बोधन माना जाए, तो शाब्दिक अर्थानुसार मुसलमान, वह जो इन्सान हो। इन्सान वहीं है, जिसमें सबके साथ या सभी के लिए प्रेम-हमदर्दी हो तथा वह सब इन्सानों का दोस्त हो।

इन्सान शब्द भी अरबी भाषा का है, जो 'उन्स' यानी प्रेम या हमदर्दी से निकला है। हुजूर बड़े पीर साहब के कथन का भावार्थ यह प्रतीत होता है कि 'मुसलमान' वह व्यक्ति है, जिसके कथन-वचन में जुबान व दिल एक जैसा हो। उसकी कथनी-करनी में अन्तर न हो। मुख से कुछ और कहे तथा हृदय में कुछ और हो, वह व्यक्ति वास्तविक मुसलमान नहीं। जो व्यक्ति ईश-पूजा करे (नमाज पढ़े), रोजा यानी व्रत रखे व जकात यानी दान दे तथा सारे पुण्य कर्म करता हो, उसके इन कर्मों के पीछे उसकी नीयत ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए है, तो वह मुसलमान है। यदि वह यह कर्म दुनियां के दिखावे या धार्मिक कहलाने की मंशा से करता है तो वह मुनाफिक है। मुनाफिक उसे कहते हैं, जो ईश-नबी के निर्देशों में उसी का परिपालन करे, जिसे उसका दिल चाहे।

हजरत सैय्यदना गौसे पाक के इस कथन में भी पूर्व की भांति किसी एक वर्ग विशेष या किसी एक समुदाय के लिए 'मुसलमान' नामक सम्बोधन का प्रयोग नहीं है। प्रथम कथन में ईश-पूजा, ईश-पूजक, बुत एवं बुतपरस्ती तथा शिर्क व मुशरिक शब्दों का वास्तविक भेद उन्होंने खोला है। यह प्रथम कथन भी सर्वमानवजाति के लिए है। न कि किसी एक धर्म या समुदाय के लिए। मुनाफिक, मुसलमान, मोमिन, कुफ्र, काफिर, बुत, बुतपरस्ती या मूर्तिपूजा तथा शिर्क एवं मुशरिक एवं इन्सान जैसे अरबी-उर्दू शब्दों का प्रयोग ईश्वर के समस्त प्राणियों के लिए है। धर्म, मजहब की भाषा और संज्ञा, सर्वनाम को समझना कठिन नहीं है। हमारा दिल और जुबान उस एक परमेश्वर को वास्तविक आत्मिक श्रद्धा से जब जग-विधाता एवं जग-स्वामी स्वीकार करेगा, तो ऐसे इन्सान को विश्व में केवल मानव मानव ही दिखेंगे, वह हिन्दू, मुसलमान, पारसी, बौद्ध, ईसाई आदि के धार्मिक चश्मे को तोड़ चुका होगा।

विवाद मानव या ईश-पूजकों में नहीं है। उदण्डता, क्रूरता, कट्टरवादिता, हठधर्मी, अपराध, दंगा-फसाद, फिदाईनी हमला, बम ब्लास्ट और उपद्रव-आतंक आदि नामों के घिनौने खेल सच्चा ईश्वर पूजक नहीं खेल सकता है। नमाज पढ़ने या-पूजा करने वाले में अन्तर क्या है? यदि सभी उसी एक ईश्वर, उसी एक अल्लाह की इबादत अपने मन व हृदय के बुतों को निकालकर करते हैं, तो वह

सभी ईश्वर के पूजक या खुदा के सच्चे बन्दे हुए। ऐसे सभी मुसलमान हैं, वे सभी सनातनधर्मी हैं। उन्हें ही हम सच्चा इन्सान, सही आर्य और सच्चा इस्लामधर्मी कहेंगे। यदि ईश्वर की विभिन्न भाषा और शब्दों की सत्यता हम जान लें, फिर तो मानसिक उत्तेजना काफूर हो जाएगी। आज हर जगह शब्द व नाम के धर्म-मजहब को मानव के शक्ल-सूरत और नाम पर रंगाई-पुताई करने के तथाकथित पुण्यकर्म या ईश्वर-अल्लाह सेवाकर्म के अनेक कार्यक्रम तेज है। ईश-धर्म इस्लाम यानी ईश्वर के समक्ष आत्मसमर्पण करने वाला धर्म भी आज संगठन बनाने के दांव-पेंच में उलझता जा रहा है। मैदाने-कर्बला में एक तरफ ईश के सर्वप्रिय पैगम्बर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम के सच्चे वारिस हजरत इमाम हुसैन थे, दूसरी तरफ यजीदी संगठन था, जो जुबान और शक्ल से इस्लाम वाला था। यह संगठन दिल में सत्ता, अहंकार, जुल्म, कत्ल और गुण्डागर्दी जैसे अपराधों का बुत पाले हुए था। वे नमाज, रोजा, हज, जकात, इस्लाम, इन्सानियत सभी की कथनी तो करते थे, मगर खुदा के सच्चे निर्देश के अनुसार नहीं चलते थे। वह प्रत्यक्ष रुप में ईश-पूजा के सच्चे दावेदार बनते थे, मगर करते थे अपने दिल में छुपे बुतों की परस्तिश। वह मुशरिक थे। वही मुनाफिक भी थे। यजीदी संगठन ईश्वर-वचन (कुरआन) एवं पैगम्बर साहब के कथन (हदीस) को भी अपने हार्दिक बुतों के ईच्छानुसार समाज में झूठे कथन या झूठे अनुवाद करके पेश करते थे। समस्त विश्वमानव समाज का उपयोगी ईश-पथ इस्लाम को यजीद ने अपनी नफ्सपरस्ती का मजहब बना लिया था। जिसके नाना जान ईश्वर के परमप्रिय रसूल हों, उनका नवासा (बेटी का पुत्र) यजीदी इस्लाम की पैरवी कैसे करता। हजरत इमाम हुसैन ने यजीदी प्रथा का जनता में विरोध किया। यजीद के अनेक प्रलोभन उन्हें मिले, पर वह मन्जूर नहीं किए।

यजीद के ईश-विपरीत एवं पैगम्बर विरोधी मजहब के विरुद्ध आवाज बुलन्द करने से जनता यजीद का नकली इस्लाम पहचानने लगी। हजरत इमाम हुसैन का यह जेहाद, बिना तेग-तलवार के शान्तिपूर्ण और वैचारिक युद्ध था। यजीद ने ईश्वर सच्चाई कहने के जुर्म में हजरत इमाम हुसैन व उनके 72 साथियों का कत्ल किया। इराक राष्ट्र स्थित कल के नैनवा और आज के करबला नामक स्थान पर यह क्रूरतम सामूहिक हत्याकाण्ड यजीद के हुक्म से हुआ था। हजरत इमाम हुसैन के पास ईश्वर और उनके पैगम्बर साहब का सच्चा इस्लाम था। वह वास्तव में सच्चे इन्सान, कामिल मुसलमान तथा ईश्वरप्रिय मोमिन थे। वह कच्चे इन्सान होते, तो केवल ईश-धर्म के रक्षार्थ गर्दन न कटाते। वह यजीदी हां में हां मिलाते तो वह उन्हें न जाने क्या-क्या प्रदान करता। पर सच्चा ईश-पूजक अपने निजी-लाभ को बुत समझता है। ईश्वर परस्त को बुत परस्त बनाना यजीद के वश की बात नहीं थी। उसे ईश्वर के सच्चे भक्त और अल्लाह के सच्चे आशिक की गर्दन तो मिल गई, मगर दुनियां में यह सन्देश गया कि नबी-ए-अकरम हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम के सर्वोच्च उत्तराधिकारी ने यजीदी

धर्म को ईश्वरीय धर्म सत्यापित नहीं किया है। ईश्वरीय सत्यता के रक्षार्थ ईश्वर के पैगम्बर साहब के नस्ले-पाक ने ही बलिदान दिया। यजीद ने जुल्म-अत्याचार से शहजादए रसूल और उनके 72 साथियों का कत्ल कराया, वह और उसके फौजी संगठन इस सामूहिक नृशंस हत्याकाण्ड को 'जंग' जीतना कहते रहे। जबकि हजरत इमाम हुसैन, शहर मदीना से यजीद के विरुद्ध जंग करने नहीं गए थे। बल्कि यजीद ने उन्हें अपने निर्मम अत्याचार की साजिश में फंसाकर जंगी-माहौल बनाया। सेना और फौजी यजीद के पास थे। हजरत इमाम हुसैन यदि उससे जंग करने जाते, तो हमारा अकीदा है कि मदीना शहर का हर सच्चा इन्सान, हर सच्चा मोमिन और हर सच्चा मुसलमान हुसैन के साथ होता। मगर इमाम हुसैन ने संगठन या फौज, मानवता की हत्या हेतु नहीं बनाई। वे आध्यात्मिक जगत के एक महान कामिल पीर भी थे। उनके सद्गुरु उनके पिता हजरत अली हुजूर थे। अपने जीवन को हर पल ईश-उपासना एवं ईश-दर्शन में मशगूल रखने वाले ईश्वर के ईश-दूत के शहजादे ने संसार को ईश-मार्ग पर चलने-चलाने का ही प्रयत्न किया। वह उग्रवादी जेहाद क्या जाने? उस ईश-दूत के शहजादे ने नफ्स, इन्द्रिय का जेहाद किया था। दिल के बुतों को हमेशा के लिए तोड़ कर दिल में ईश्वर को बसाया था। जिसके दिल, जुबान, रुह पर ईश्वर ही ईश्वर हो, वह ईश्वर के बन्दों के साथ प्रेम करता है, वह खून-खराबा नहीं कर सकता।

इसी सत्य स्थिति में हजरत इमाम हुसैन और उनके समस्त साथी थे। यजीद ने उन्हें अपने समर्थन की बदनीयती से फौज द्वारा घेराबन्दी करायी। लालच दिया और न मानने पर प्राण लेने की धमकी दी। जब वे किसी भी तरह ईश्वरीय सत्यता और नियम को भंग करने के लिए राजी न हुए, तो यजीद ने पूरे हुसैनी साथियों को कत्ल कराना शुरु किया। यह न जंग है और न युद्ध। यह तो पूरी तरह ईश्वर प्राप्त हुसैन को अपने समर्थन में लाने की खूनी साजिश थी। हजरत इमाम हुसैन ने ईश्वरी धर्म को अपने गला बचाने के उपलक्ष्य में यजीद के हाथों नहीं बेचा। उन्होंने सिर का बलिदान दे दिया, मगर यजीदी मजहब के समर्थन में ईश-धर्म की मान-प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाए रखा। इमाम हुसैन से जंग यजीद ने की। यजीदी जंग वही था, जो आज के आतंकवादी कर रहे हैं। यजीद को अपनी नफ्सीयाती शैतान की पूजा के लिए हजरत इमाम हुसैन का खून चाहिए था। हुसैन का जिस्मो-जान ईश्वर के लिए समर्पित था, इसलिए उन्हें ईश्वर की सच्चाई को कायम-दायम रखने हेतु अपना ही नहीं, अपने 72 प्रियजनों के सिर देने में झिझक न हुई। वह खुश थे कि उस पवित्र ईश्वर के काम में उनका शरीर भी अर्पित हुआ।

कर्बला का यह अमानुषिक बर्बर हत्याकाण्ड, विश्वस्तर पर यह सन्देश छोड़ा कि ईश्वर की सच्ची पूजा में यदि प्राणों की आहूति भी देनी पड़े, तो हजरत इमाम हुसैन की भांति दे देना। यजीद की भांति सत्यता का निर्मम शत्रु भी हो, तो जान दे देना, मगर असत्य का समर्थन न करना। इसी का नाम

सच्चा ईमान है। यह प्रकरण सच्चे मुसलमान की पहचान है। यह घटना ही ईश्वर के समक्ष बन्दे का सर्वस्व समर्पण है, यही सच्चा इस्लाम है।

हजरत इमाम हुसैन चाहते तो यजीद की हामी भरकर बाद में जंगी लश्कर लेकर यजीद की मिट्टी पलीद कर सकते थे। मगर यह दगा–फरेब की साजिश हजरत मुहम्मद रसूलल्लाह सल्ले अला व सल्लम के पंजतन पाक से सम्भव कैसे होती? ऐसी साजिश इन्सान या सच्चे मुसलमान या सत्य इस्लामधर्मी के स्वभाव में नहीं होती। कुरआन और हदीस के सच्चे अनुयायी अपनी जान तो दे देते हैं, वह असत्य के सहारे किसी की जान नहीं ले सकते।

हजरत इमाम हुसैन पहले की तरह आज भी विश्वस्तर पर जिन्दा हैं। मगर यजीद ऐसा मुर्दा हुआ कि आज तक यजीद नाम दुनियां के लोगों ने अपने कुत्ते, बिल्ली का भी नहीं रखा। यजीद, करबला की घटना के बाद जिन्दा रह कर भी मर चुका था। हुसैन प्रत्यक्षतः मर कर भी ईश्वर द्वारा अमर जीवन पा गए। नकली इस्लाम के पोषक यजीद, इब्ने जेयाद, शिमिर, इब्ने मुलजिम जैसे खूंखार दरिन्दे बनने में आज गौरान्वित हो रहे हैं। वे हजरत इमाम हुसैन की भांति सच्चे इस्लाम का परिपालन करने में क्यों नहीं लग पा रहे हैं। क्या उन्हें इस्लामी धैर्यवान एवं एक ईश–पूजक तथा सत्य मुसलमान बनने में शर्म आती है। अपने दिलों में छिपे बुतों के साथ, जो मानव ईश्वर–पूजा केवल जुबान से करते हैं, वे यजीद की भांति क्रूर और अत्याचारी तथा अधमी कब बन जाएंगे, यह बता पाना कठिन है।

ईश्वर के समक्ष आत्म–समर्पण का अरबी भाषा में महामन्त्र 'ला ईलाहअ ईल्लल्लाह' है तथा ईश्वर के समक्ष यह स्वीकार करना कि मुहम्मद साहब अल्लाह के रसूल हैं। यह ईश–नबी का ईश्वर की सेवा में सम्मान है। इसी कारण अरबी में पूरा महामन्त्र– 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह, मुहंम्मदुर्रसूलल्लाह' पढ़ा जाता है। जुबान और दिल दोनों में पक्का यकीन यदि हमें है, तभी इस कल्मे का जप–तप या पाठ हमें हैवान से इन्सान बना देगी। ईश्वर और उसके नबी पर पक्का यकीन तब तक नहीं आ सकता, जब तक हमें ईश्वर व नबी का स्वयं अनुभव–ज्ञान न मिले। हम गला फाड़कर चिल्लाते रहें कि मुझे प्रभु पर तथा प्रभु के सन्देशवाहकों पर सुदृण विश्वास है, यह कथन के सिवा सच्ची नहीं कहला सकती। क्योंकि पूर्ण आस्था या परिपूर्ण विश्वास तभी सम्भव है, जब हम ईश्वर और उसके पवित्र ईशदूतों को देखें या आत्मिक अनुभव करें। इस दिशा में जो परिपूर्णता की मन्जिलें पाता है, वह ईश्वर और नबी दोनों से वार्ता भी करने लगता है। इस श्रेणी की हमारी पूजा–नमाज अगर हो जाए, तभी हम सचमुच ईश्वर व ईश दूत के प्रति पूर्ण विश्वासी हैं। इसी का नाम कामिल ईमान है। वही व्यक्ति मोमिन या कामिल इन्सान है। इन्सान और आर्य की परिभाषाए जो व्यक्ति में होनी चाहिए, ऐसे इन्सान में होगी। यदि इस महामन्त्र जाप का सम्बन्ध केवल जुबान से हो तथा दिल में कुछ और चीजें आती–जाती

रहें तो यही है, ईश्वर के साथ दिल के बुतों को पूजना। हम समझते रहेंगे कि ईश्वर पूजा में हैं, परन्तु हम बुतपरस्ती में मशगूल होंगे। ऐसी पूजा-इबादत, नमाज, पढ़कर भी हम ईश्वर से काफी दूर होंगे। हमारी यह बुतपरस्ती हमें गैर-मुसलमान बना देगी। हम अपने आप को शब्द मुसलमान या इबादतगुजार या परहेजगार का वस्त्र पहनाते रहेंगे, परन्तु हम पर गैर-मुसलमान का वस्त्र चढ़ा होगा। हम झूठ, फरेब में जीते रहेंगे। नफ्सपरस्ती में हम अपनी स्वार्थ साधना के लिए किसी का भी गला काटने से परहेज नहीं करेंगे। आज इसी निजी धर्म का व्यावहारिक स्वरुप हर धर्मों में फल-फूल रहा है। जो ईश्वर और उसके पैगम्बर का दिल और जुबान से हर पल और हर हाल में इकरार करे और उनसे प्यार करे, वह मुसलमान है। जो जुबान से कहे तथा दिल से न कहे, वही गैर-मुसलमान है। ईश्वर की दृष्टि में सच्चा मुसलमान कौन है? हमारे पीर, वली, दरवेश, मलंग, कलन्दर, औलिया, साधु, महात्मा आदि प्रथम श्रेणी के प्रमाणित मुसलमान हैं और मोमिन भी हैं। सन्त-फकीर तो अपने जन्मकाल से ही मुसलमान और मोमिन दोनों हैं। शिरडी के श्री साईबाबा, सन्त श्री गजानन महाराज, श्री साधु बाबा, श्री झरना शाह, श्री निर्मल महाराज, श्री हजारी बाबा, श्री इकबाल अली अहमद आदि ईश्वर के ऐसे सन्त-फकीर हैं, जो अपने प्रकट काल से परिपूर्ण हैं तथा ईश-प्रेम में सम्पूर्ण हैं।

[4-A] परिवर्तित इस्लामी नज़रिया

इस्लाम में अल्लाह और रसूल के इरफान से खाली हमारे कुछ ओलमा, मुफ्ती, अल्लामा मौलाना और मौलवी भी हैं। इनके अकीदे में प्यारे हबीब सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम अल्लाह के पैगम्बर जरुर हैं, मगर बशर हैं। उनकी निस्बत यदि अल्लाह के नूर से की जाती है तो वे बुरा मानते हैं। ऐसे लोग यह अकीदा भी रखते हैं कि जो अल्लाह के रसूल ने लोगों को खुदा की इबादत का गुर सिखाया है, वह ज्ञान-गुर तो वह भी सिखाते हैं। जो रसूले-पाक ने किया, उसी काम को वह पूरी तरह लोगों को करने-कराने में मशगूल रहते हैं। ऐसे दीनी रहबरों की संख्या आज दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। यह जनसंख्या वृद्धि किसी सच्चे खुदापरस्त के लिए न तो चिन्ताजनक है और न ही विशेष प्रशंसनीय? लोग समझ रहे हैं कि वे नबीए-पाक की प्रतिस्पर्धा में अपने आपको नकली नबी साबित करने की अन्दरुनी हविश के शिकार हैं। इन्हें कौन बताए कि जनसंख्या प्रदर्शन से उत्तम है कि लोगों को वह नमाज बतायी जाए, जिसमें खुदा की मेराज होती है। ऐसी इबादत सिखाई जाए जिससे बन्दा अल्लाह का वली बन जाता है। अगर ऐसी इबादत का ईल्म उन्हें नहीं है, फिर यह दीनी मिशन किस काम का।

जिन्हें अल्लाह पाक की सच्ची इबादत का फिक्र होगा, वह उस कामिल बुजुर्ग की तलाश में रहेगा, जो खुदा की सच्ची बन्दगी करना सिखाए। उन्हें उस नमाज का ढंग बताए, जिसके पढ़ने से

ईश-मिलन (मेराज) होता है। वह इबादत हमें बताए, जिससे खुदा राजी होता है। नमाज में हम खड़े हैं, जुबान अल्लाह की हम्दो-सना कर रही है, मगर दिल हमारा नफ्स की पैरवी में फंसा है। हम दिल के ख्यालों में उलझे हैं सिर्फ जुबान से अल्लाह पाक का कलाम (ईशवाणी या सन्देश) पढ़ रहे हैं। क्या इसी तरह की नमाज या इबादत पर अल्लाह की खुशनूदी (ईश-कृपा) पाने के हम दावेदार हैं। दिल और दिमाग में दुनियां की बातें लिए, हम जुबानी इबादत में मशगूल हैं। उस पर यह तुर्रा की अल्लाह देख रहा है, वह रहीम व करीम है, हमें माफ करके हमारी इबादत को कुबूल फरमाएगा।

ऐसी इबादत के प्रचार-प्रसार में जनसंख्या वृद्धि आज खूब हो रही है। जुबानी कल्मा, जुबानी इबादत, जुबानी परहेजगारी और जुबानी दीनदारी का परचम (झण्डा) हम लहराने में मग्न हैं। आज के कुछ इस्लामी रहनुमा नमाजियों की संख्या देखकर खुश होते रहते हैं। उनकी खुशी तब और काबिले-दीद होती है, जब वे खालिस अल्लाह और रसूल के नाम पर मसजिद दर मसजिद मुसलमानों का जत्था लिए प्रवेश करते हैं। गांव, शहर में इस्लाम के यह मुजाहिद जब-जब पहुंचते हैं, वहां के मुसलमानों का कुफ्र, शिर्क और बिदअत फौरन खत्म हो जाती है? नमाज में क्या-क्या पढ़ा जाए। कैसे पढ़ा जाए। अरबी कुरआन के पढ़ने में क्या सावधानियां हैं। तसबीह के दानों को क्या-क्या पढ़कर गिनना चाहिए। यह समुदाय इस दिशा में दिन-रात अनथक परिश्रम करता रहता है। वह मुसलमानों को बताते है कि अल्लाह के सिवा, किसी भी शय की इबादत करना शिर्क है। नबी-रसूल, वली-औलिया, फकीर कोई भी हो, उनकी जुबानी ताजीम की जाए, मगर उनकी सच्ची निस्बत या दिली मुहब्बत से बचिए। क्योंकि हो सकता है कि चादर, फूल, मिठाई के साथ-साथ आप उन्हें खुदा मान कर उनकी नमाज या इबादत न करने लगें। खुदा की इबादत में नबी, वली, फकीर को शरीक करने वाला मुशरिक है। उसे खुदा सख्त अजाब देगा। इसलिए की यह गैरुल्लाह हैं यानी खुदा के गैर हैं, इनसे बचिए।

हैरत यह है कि जब सुन्नत नमाजें भी कोई रसूलल्लाह के लिए नहीं पढ़ता, फिर वली अल्लाह के लिए नमाजें कौन पढ़ेगा? ऐसे झूठे प्रचार से वे अवाम को गुमराह करते रहते हैं। आज का ऐसा इस्लामी मिशन दुनियां के कोने-कोने में अल्लाह का सच्चा इस्लाम फैलाने में मसरुफ है? खुदा का दीन इन्हें नबीअल्लाह से नहीं मिला है? यह मुर्दा नबी का इस्लाम नहीं बनाते। इनके पास जिन्दा खुदा का इस्लाम है। इनके साहित्य और दीनी मेहनत के कारनामे देखकर आज हर मुसलमान का ईमान ताजा हो रहा है? ऐसे मुसलमान बहुत मजबूरी में मजारों पर जाते हैं। उन्हें यह खौफ भी सताता है कि मजार-वाले के चक्कर में कहीं अल्लाह का दामन न छूट जाए। फिर तो दीन खराब होगा। हम मुशरिक या मजार परस्त या कब्र परस्त या बुतपरस्त भी कहला सकते हैं। अच्छे-खासे मुसलमान आज वलियों की तालीम से और उनके मजारों से दूर रहते हैं। दूर रहना भी चाहिए, क्योंकि वली-औलिया

कोई खुदाई फरिश्ते तो नहीं हैं। वे भी औलादे-आदम हैं, हम भी औलादे आदम हैं। वह भी इन्सान थे, हम भी इन्सान हैं। नमाज, रोजा, तसबीह वह भी करते थे, हम भी करते ही हैं। कुरआन, हदीस के वह भी मानने वाले थे, हम भी उसे ही मानते हैं। फिर मजार वालों और हम इबादत गुजारों में फर्क क्या है? यह अलग बात है कि हमें कोई वली-औलिया नहीं कहता, वरना हमारी इबादत किसी वली-औलिया से कम कहां है? हम वली-औलिया खुद को कहलाने भी लगें तो डर है कि लोग अल्लाह को छोड़कर हमारी पूजा-इबादत में मशगूल न हो जाएं। इसलिए सिर्फ अपने खुदा के वास्ते हमें वली-औलिया बनने में रुचि नहीं है।

वे मन ही मन यह महसूस करते हैं कि अल्लाह के वली तो हम यूं भी हैं, क्योंकि अल्लाह के हुक्म को हम जमात के साथ दुनियां के कोने-कोने में पहुंचाते हैं। नमाज, रोजा, जकात, हज के फायदे बताते हैं और अपनी समझ की हदीसे पाक हर मुसलमान को बारम्बार सुनाते हैं। अब खुदा की मर्जी, जिसे चाहे हिदायत दे, जिस मुसलमान को चाहे गुमराह कर दे। **आज के जुबानी और सच्चे अमल से खाली परिवर्तित इस्लामी दौर का यहां एक संक्षिप्त नमूना हमने पेश किया।**

[4-B] ईशदूत ईश्वर के गैर कैसे ?

इस बदले गए इस्लाम में नबी की प्रशंसा करना एवं वली के प्रति श्रद्धा रखना जुर्म है। इस तबदीली इस्लाम के अनुसार ईशदूत एवं ईशकृपा प्राप्त ईशदूत की सन्तानें तथा ईश-योगियों (वली-औलिया) से श्रद्धा एवं प्रेम रखना ईश्वर के गैर को सम्मान देना है। इस नवनिर्मित इस्लाम में यह सारी ईश-विभूतियां 'गैरुल्लाह' हैं। यही खुदा के गैर हैं। बाकी ऐसे इस्लाम के सारे अफराद खुदा के खास हैं। शायद ऐसे नवीन इस्लाम वालों को हुजूर नबीए अकरम सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम के बाद हजरत जिब्रील ने खुद आकर इस्लामी मान्यता एवं श्रद्धा में परिवर्तन करने का खुदाई आदेश दिया है? शायद ईश्वर के हुक्म में इन्हें यह निर्देश भी दिया गया है कि इस्लाम की जिन्दगी मुर्दा हो जाएगी, इसलिए इसे जमात के माध्यम से दुनियां में गश्त करके जिन्दा करो? उन्हें अल्लाह तआला ने शायद यह हुक्म भी दिया है कि अल्लाह का इस्लाम लावारिस हो चुका है। क्योंकि नबी, सहाबा हैं नहीं, अल्लाह के वली-फकीर सब मुर्दा हो चुके, ऐसे में इस्लाम की जिन्दगी इसी जमात से कायम रह सकती है। खुदा का दीन खुदाई-जमात ही महफूज रख सकती है। खुदा की दूसरी कुव्वत का नाम मुसलमानों की जमात है। वरना खुदा के इस्लाम की हिफाजत कौन करेगा? नबी, रसूल, सहाबा, खुल्फाए राशेदीन सभी तो मर गए, हाय! अल्लाह का इस्लाम लावारिस हो गया है, इसे हम गांव-मुहल्ले में मुसलमानों की जमात दिखाकर बताएंगे कि खुदा के सच्चे दीन के मुहाफिज अभी जिन्दा हैं। दुनियां में कोई यह न समझे कि इस्लाम की कुव्वत खत्म हो गई है। हमारी तादाद देखो, अगर

शक है तो हमारे इस्तमा के जलसे देख लो। जहां लाखों-करोड़ों मुसलमान एक साथ नमाजें अदा करते हैं। सभी के हाथों में अल्लाह के जिक्र-अजकार की तसबीह है। हम वो मुसलमान हैं, जिसके दम पर इस्लाम अभी जिन्दा है। यह वही इस्लाम है, जो गैर-खुदा की शिरकत को पसन्द नहीं करता। **यही वह सच्चा इस्लाम है, जो नबी, सहाबा और इमाम हुसैन के खत्म हो जाने के बाद भी खत्म नहीं हो सका।** यही वो ईमान वालों की जमात है, जो हकपरस्ती के लिए चिल्ला पेश करती है। अपना घर-बार सिर्फ चिल्ला के वक्त तक के लिए कुर्बान करती हैं। है कोई अल्लाह का बन्दा, जो अल्लाह और रसूल के लिए हमारे साथ तीन दिन से तीन माहों तक का चिल्ला में वक्त लगाए। हम बता देंगे कि इस्लाम हर कर्बला के बाद जिन्दा नहीं होता, बल्कि इस्लाम जिन्दा होता है हर इस्तमा के बाद। हम यह भी बता देंगे कि अल्लाह के सिवा सारे नबी, पैगम्बर, रसूल, वली-पीर, फकीर गैरुल्लाह हैं। बस खुदा से मांगो, किसी गैर-खुदा से मांगना कुफ्र है, शिर्क है। कुरआन का हुक्म मानो, हदीसें पढ़ते रहो। किसी गैर की बातों पर अमल मत करो, खुदा तेरे लिए काफी है। खुदा ही हमेशा से है, हमेशा रहेगा। नबी, अहले-बैत, सहाबा वगैरह कभी थे, अब उनसे तुम्हें कुछ मिलने वाला नहीं। मिलादुन्नबी, ग्यारहवीं शरीफ, ख्वाजा गरीब नवाज की छठी शरीफ, वलियों के उर्स मनाने में तुम अल्लाह के गैर की तरफ मुखातिब हो गए। गैर से तौबा करो, खुदा की रस्सी को मजबूती से पकड़ो। सूफियों से बचो। मसजिदें आबाद करो। खानकाहें शिर्क व बिदअत का कारखाना हैं, इनसे दूर हटो। अगर तुमने यह काम कर लिया, तो खुदा के सच्चे मोमिन बन्दे हो गए।

आज इस तरह के नए अकीदे और अकायद वाले इस्लाम की तूती बोल रही है। मुसलमान भी महसूस कर रहे हैं कि सचमुच इतने सीधे-साधे रास्ते पर चलना मुश्किल कहां है। पांच वक्त की नमाज, जुमा, व ईद-बकराईद की नमाजें हम पढ़ते हैं। नफिल नमाजें भी खुदा के नाम पर अदा करते हैं। तीस दिन का रोजा, तरावीह भी करते हैं। जकात, फितरा भी देते हैं। रकम है तो हज भी अदा कर लेते हैं। यही तो इस्लाम है। वली-औलिया बनने से क्या होगा? मुझे खुद को पूजवाकर खुदा के साथ कुफ्र नहीं करना है। मैं अगर वली बन गया तो मुझे डर है कि लोग नमाज की नीयत में यह कहने लगेंगे कि नीयत की मैंने दो रेकात नमाज फर्ज की वास्ते इस वली के। फिर तो मेरे वली बनने से इस्लाम की नमाज बदल जाएगी। मुझे इस्लाम प्यारा है, मुझे वली बनना गवारा नहीं। आज हर मुश्किल, परेशानी का इलाज पैसा है। अल्लाह का नाम लेते रहो, पैसा कमाओ। चाहे जिस तरकीब से हासिल हो। आखिर कोई वली ही है तो क्या किया। वह भूखे रहा और अपना घर-मकान भी तामीर न कर सका। यह कौन सा इस्लाम है जो भूखों को पेट भर खाना खिलाए, मगर खुद फाका करे। अल्लाह ने दुनियां में हमें भेजा है तो दुनियावी लज्जात तर्क करना, खुदा की ना शुकरी है। अपने फायदे के लिए झूठ बोलना, दुनियां का चलन है। जहां रोजा-नमाज का मामला हो, बस वहीं झूठ

लना गुनाह है। बाकी हर काम में अगर सच बोला जाए तो भारी नुकसान है। सिर्फ खुदा के इबादत में झूठ मत बोलो। बाकी सब चलता है।

ऐसे नए इस्लाम की पैरवी में कसीर तादाद में मुसलमानों का होना हैरत की बात नहीं है। इन्सान को अगर हर काम की छूट मिले और वह अल्लाह वाला भी कहलाता रहे, तो ऐसे खुदा की पैरवी कौन नहीं चाहेगा। इस तरह के तमाम रियायत वाले नये इस्लामी कानून आज दुनियां में उभरते जा रहे हैं। सच्चे इस्लाम की शरीयत इतनी सस्ती शायद यजीद के दौर में रही होगी? **गुसल, वजू से लेकर नमाज तक हम जुबानी अमल में मुबतला हैं। कमबख्त दिल ना तो गुसल करता है और ना वजू। वह खुदा की नमाज में भी शिरकत नहीं करता।** दिल, दिमाग और जुबान के साथ खुदा के सामने आत्म-समर्पण करने वाला इस्लाम, आज कहां खो गया है? क्या यही तो कयामत के आसार नहीं हैं? कयामत के आमद की अलामत बताते हुए हजरत रसूले खुदा सल्ले अला व सल्लम का फरमान है- "मसजिदें खूब सजायी जाएंगी, मगर खुशू खुजू दिलों से निकल चुका होगा। इस्लाम का नाम रह जाएगा और ओलमाए-सू पैदा होंगे। मुसलमानों की कसरत होगी मगर वह दीनदार न होंगे। मुसलमान मालदार होगा, मगर दीनदार न होगा। सच्चाई पर चलना हथेली पर आग लेकर चलने के बराबर होगा। झूठे नबी और पैगम्बर पैदा होंगे...।"

इस चौदह सौ साल पहले के कथन की वास्तविक तस्वीर आज हमारे सामने है। प्रलय-कयामत आने के प्रमुख लक्षणों के सन्दर्भ में हजरत पैगम्बर साहब ने भविष्यवाणी की है। यह उसी कयामत के लक्षणों में से एक लक्षण है। आज मसजिदें अर्थात- ईश पूजा स्थली की सजावट-बनावट चारो तरफ जारी है। परन्तु हमारा ध्यान ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा-इबादत दिल से कैसे करें, इस ओर नहीं है। इस्लाम अगर उस एक खुदा-परमेश्वर का मजहब है, तो वह किसी समुदाय विशेष का ही नहीं होगा। अगर इस्लाम मानने वाले को खुदा ने मुसलमान शब्द से इंगित किया है, तो मुसलमान शब्द भी किसी एक वर्ग या कौम के लिए नहीं हो सकता है। इसलिए ईश-वाणी कुरआन भी किसी एक व्यक्ति या समुदाय के लिए नहीं मानी जा सकती।

अरबी के ईश-वचन के शब्दों को देख-सुनकर हमने स्वयं यह निर्णय कर लिया कि कुरान का खुदा और बाईबिल या गीता-रामायण या वेदों के खुदा अलग-अलग हैं। खुदा सभी का एक है। हम यह जुबान से तो कुबूल करते हैं, मगर दिल-दिमाग से मानते नहीं है। ईश्वर की पूजा-पद्धतियां प्रत्यक्ष रुप में धर्म आधार पर अनेक अवश्य दिखाई पड़ती हैं, पर उस एक की ही पूजा की जाए यह मूल सिद्धान्त तो ईश्वर का एक ही है। इन्द्रिय भावना का समापन करके नमाज या पूजा-प्रार्थना में ईश्वर-अल्लाह के समक्ष समर्पित हो जाना, ईश्वर की पूजा का यही मूल सिद्धान्त हैं। हमारी पूजा अगर ऐसी है, तब तो हम सच्चे मुसलमान, सच्चे सनातनी, सच्चे ईसाई, सच्चे बौद्ध, सच्चे पारसी हैं।

हम ऐसे सच्चे पूजकों की एक जमात क्यों नहीं बनाते? इस्लामी खुदा, अगर ईश्वर नहीं है, फिर वह कौनसा परमेश्वर है, जो इस्लाम-धर्मियों के साथ- साथ अन्य धर्मियों को जिलाता और मारता है?

यह आश्चर्य की बात है कि असल मुसलमानों की जमात न बना कर हम शाब्दिक मुसलमानों की जमात बनाने में प्रसन्नचित्त हैं। क्या यह उस जग-पूज्यनीय अल्लाह की शान और महानता को घटाने वाला कर्म नहीं है? पैगम्बरे खुदा ने साफ कहा कि इस्लाम का नाम रह जाएगा और ओलमाए-सू पैदा होंगे। उनसे पूछा गया कि हुजूर ओलमाए-सू कौन? आपने उत्तर दिया- 'ओलमाए-सू वही जिनसे फितने जाहिर होंगे।' इस्लाम धर्म या अन्य किसी भी धर्म के विद्वान या मुफ्ती, आलिम या धर्माचार्य से जब वाद-विवाद, खुराफात और धार्मिक झगड़े का श्री गणेश होने लगे तो वही ओलमाए-सू हैं। आज इनकी पहचान दुनियां के सामने है। हम कल और आज की घटनाओं को सूक्ष्मता से जांच लें। ओलमाए-सू अर्थात- जन अशान्ति उत्पन्न करने वाले धर्म विद्वान को हम पा जाएंगे।

हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अगर ईश्वर के नबी, रसूल या संदेशवाहक हैं तो उनकी बोली भी विश्वमानव समाज के प्रति होगी। मुसलमान अर्थात ईश पूजक मालदार होंगे, मगर दीनदार न होंगे। नबीए-पाक कहते हैं कि एक ईश्वर के पूजकों की रुचि धन -संग्रह करने में होगी तथा वे दीनदार न होंगे- अर्थात ईश्वर के सत्य धर्म से विमुख हो जाएंगे। क्या आज हम सबकी दशा ऐसी नहीं है। हृदय की एकाग्रता और ईश-प्रेम में तड़प का नाम खुशू व खुजू है। क्या हम खुशू व खुजू से आज ईश-पूजा कर रहे हैं। अपने आपसे पूछें। नमाज, रोजा, पूजा, प्रार्थना, व्रत, यज्ञ और हज आदि का सम्पादन क्या ईश्वरीय प्रेम की तड़प और हृदय की एकाग्रता से हम कर रहे हैं। हम ईश-पूजा में हैं तो क्या हमारा दिल-मस्तिष्क भी ईश-पूजा में सक्रिय है। अगर नहीं, तो इसी को कहते हैं, ईश-पूजा खुशू और खुजू के साथ न करना।

हम सब अकेले पूजा-नमाज में हों या करोड़ों के साथ मगर हम में खुशू व खुजू नहीं है, तो फिर सारी पूजा-नमाज एक दिखावे के सिवा क्या कहलाएगी। ईश पूजा प्रदर्शन या प्रदर्शनी नहीं है। इसे करते समय ईश-प्रेम की गर्मी हमारे दिल-दिमाग में भी होनी चाहिए। ईश-पूजा में इन्द्रिय या नफ्स का दखल कण-मात्र भी ईश्वर को प्रिय नहीं है। अगर हम इन्द्रिय या नफ्स की किसी भी हविश के साथ ईश-पूजा में संलग्न हैं, तो यही है गैर की पूजा, इसी को इस्लाम ने 'गैरुल्लाह' कहा है। इसी को खुदा में गैर को शरीक करना कहते हैं। जो ऐसा करता है, वही मुशरिक है, वही अपने नफ्स के बुतों का उपासक है। यही कुफ्र है और ऐसी स्थिति में नमाज-पूजा करने वाला अपने नफ्सीयाती बुतों का पूजक है, इसलिए वह काफिर है।

ओलमाए-सू ने बुत, कुफ्र, शिर्क, काफिर, मुशरिक की हकीकत को समाज में गलत ढ़ंग से पेश किया। लोगों के दिलों में यह फिला डाला कि इस्लाम का खुदा अलग है और सनातन व ईसाई का खुदा अलग। तरह-तरह के फिरके इसी करतूत से जन्म लेते जा रहे हैं। रस्म-रिवाज की पूजा-इबादत को हम ईश्वर की सत्य पूजा मानने लगे। शर्म तो इस बात की है कि ईश-पूजा का दिखावा भी हम करने लगे हैं। ईश-प्रेम के बिना ईश्वर की पूजा दिल-दिमाग के साथ सम्भव नहीं है। जब हृदय में ईश-प्रेम का अंकुरण होगा, तो अन्दर के बुत अपने आप धाराशायी हो जाएंगे। सवाल यह है कि ईश-प्रेम की चिंगारी हम हृदय में प्रज्वलित कैसे करें? यह पुस्तक, ग्रन्थ पढ़ने या सुनने से समझ में नहीं आएगा। हृदय मनुष्य के अन्दर है, इसलिए अन्तःकरण में ईश-प्रेम ज्वाला दहकाने के लिए हमें सत्य श्रद्धाओं से प्रेम करना होगा। सत्य श्रद्धाएं कौन हैं तथा कहां हैं? श्रद्धाएं- हृदय व आत्मिक प्रेम की उपज हैं। ईश्वर और ईशदूत के प्रति हार्दिक व आत्मिक प्रेम जिसमें है, वहीं सत्य श्रद्धाएं हैं। उन्हीं सत्य श्रद्धाओं का नाम कामिल पीर, फकीर, सन्त, सूफी, सद्गुरु, वली-औलिया, गौस-कुतुब, मलंग, कलन्दर, साधु, महात्मा आदि है। इनमें ईश्वर का निःस्वार्थ, निश्चल और पवित्र प्रेम संचित है। इन्हीं में ईश्वर की ज्योति या नूरे खुदा प्रकाशमान है। इनकी कार्य-शैली और दिनचर्या में खुदा के सिफात (ईश प्रकृति) जाहिर होते हैं। खुदा से प्रेम और खुदा की सच्ची पूजा के यही असल मार्गदर्शक हैं। इन्हें गैर-खुदा की झूठी परिभाषा में ओलमाए-सू ने इसलिए फंसाया ताकि इस्लाम की सच्चाई और खुदा की सच्ची इबादत अवाम तक न पहुंचे। इसकी वजह सिर्फ इतनी है कि ओलमाए-सू खुद नफ्सपरस्ती को कामिल इबादत जानते हैं और पीर, वली, औलिया, फकीर आदि द्वारा की जाने वाली इबादत को बुतपरस्ती बताकर अवाम को इनसे बचने की सलाह देते हैं। दूसरी सच्चाई यह भी है कि वली-पीर, औलिया, कुतुब आदि की खालिस इबादत अल्लाह के वास्ते है। वे दिल, मन, विचार, ख्याल में पलने वाले बुतों को 'ला' (नहीं) की तलवार से काटते हैं। 'ईलाहअ'- यानी दुनियां उनके जाहिर-बातिन (व्यक्त-अव्यक्त) से जब मिटती है, तब वे 'ईल्ललल्लाह' के इकरार के साथ खुदा की पूजा करते हैं। यह तरीका, इस्लाम की तरीकत है। शरीअत की सच्ची पैरवी बिना ईल्मे-तरीकत की पैरवी के नहीं हो सकती।

[4-C] हकपरस्ती बुतपरस्ती कैसे ?

सूफी पीर बुजुर्गों को गैरुल्लाह या खुदा के गैर बताने में यही राज (भेद) है, ताकि अवाम ओलमाए-सू की पैरवी करे। माल, गर्व, धन, दौलत, जमीन, मकान, कारोबार, हसद, हविश या ख्वाहिशें अगर नमाज-पूजा के वक्त दिल-दिमाग में कायम है, वह इबादत ही 'शिर्क' है या 'बुतपरस्ती' की अलामत (लक्षण) है। बन्दा अगर ऐसी इबादत में लगा रहा तो वह 'कुफ्र' की

चरमसीमा पार कर जाएगा। यही वो शिर्क या बुतपरस्ती की इबादत थी, जो यजीद, शिमिर, इब्ने जेयाद, हुरमला, इब्ने मुलजम आदि की जमातें करती थी। यह काबा में रखे गए 360 बुतों से भी खतरनाक बुत है। क्योंकि ये बुत हमारे हृदय, मस्तिष्क और विचारों के अन्दर रहते हैं। ये ऐसे शातिर बुत हैं, जो हमारे साथ ही रहते हैं। हजरत इमाम हुसैन, हजरत अब्बास और उनके 72 साथियों की पूजा, शिर्क, कुफ्र और बुतों से पाक थी, इसलिए पाकजात ने उन्हें दुनियां में ईज्जत, शोहरत और दायमी जिन्दगी अता फरमा दी।

यजीदी पूजा के प्रवर्तक और प्रचारक आज ओलमाए-सू बने हुए हैं। वह हकपरस्ती को फिरकापरस्ती और खुदा की परस्तिश को बुतपरस्ती का नकाब पहना कर दुनियां को खुदा की हकीकत से दूर करते जा रहे हैं। इनकी भाषा में नबी, रसूल, पैगम्बर और वली, पीर, फकीर की तौहीन जायज है। इन्हें यदि वे बहिष्कृत न करें तो समाज उनकी सत्यता को जान जाएगी। फिर अवाम उन से उस इस्लाम को पूछेगी जिसने हजरत उमर के जलाल को ठण्डा किया। हजरत उमर तलवार लिए हजरत पैगम्बरे-खुदा की गर्दन मारने आए थे, मगर वे फौरन बदल गए और बेसाख्ता कहा- "ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं और मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के पैगम्बर हैं।" लोग उनसे यह सवाल भी करेंगे कि असहाबे-सुफ्फा की जमात इबादते-इलाही के साथ-साथ प्यारे नबी सल्ले अला व सल्लम के दीदार में भी क्यों मस्त रहती थीं? हम देखें कि फजिर की नमाज में प्यारे हबीब ने अल्लाह के हुक्म पर अपने असहाबे-सुफ्फा की तरफ रुखे अनवर क्यों किया था? वह असहाबे-सुफ्फा, खुदा के कौन थे? जिन्होंने नबीए-पाक का रुख पश्चिम से पूरब की तरफ करा दी थीं? नबीए-पाक से बजाहिर असहाबे-सुफ्फा मुहब्बत करते थे, वह ईश्के-नबी में इस तरह फना थे कि दुनियां-जहान की मुहब्बत उनके दिलों से मिट चुकी थीं। उन्होंने ईश्क किया तो नबी से, मगर उनकी यह अदा अल्लाह को इतनी भा गई कि उसने प्यारे नबी से फरमा दिया कि आप अपना रुखे अनवर उनकी तरफ फेर दें, जो आपके दीदार के लिए रात भर तड़पते रहे हैं। अहले-सुफ्फा की वही जमात आज सूफी, पीर, वली-औलिया की शक्ल में मौजूद हैं। राह हकपरस्ती में मशगूल हैं, मगर इनके दिलों में यदि खुदा के साथ नबीए-अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व सल्लम की नूरानी शक्ले पाक रौशन है।

यह हर पल, हर सांस में अल्लाह की इबादत में मसरुफ हैं और इन्हें राहत हुजूरे अकरम सल्ले अला व सल्लम के दीदार से हासिल होती रहती है। अल्लामा बने ओलमाए-सू कहते हैं कि नमाज में नबी का ख्याल आना, नमाज को खराब करती है। अस्सहाबे सुफ्फा तो फजिर की नमाज ही हुजूरे-अकरम सल्ले अला व सल्लम की इमामत में पढ़ रहे थे। उनकी इबादत में नबी की सूरते पाक की चाहत अगर खुदा की नजर में शिर्क होती, तो खुदा अहले सुफ्फा की ओर अपने नबी-ए-पाक

को रुख फेरने के लिए क्यों कहता? यह सत्य घटना कुरआन में नाजिल आयते-करीमा से भी प्रमाणित है। हम यह गौर क्यों नहीं करते हैं कि तब से आज तक हर फजिर की नमाज में सलाम फेरने के बाद इमाम अपना रुख नमाजियों की तरफ फेरते आ रहे हैं। असहाबे सुफ्फा न खुदा थे और न रसूल। वह सिर्फ आशिके रसूल थे। उनकी दिली मुहब्बत और महबूब के ईश्क को देख कर ही अल्लाह खुशी से मचल उठा। उसने असहाबे सुफ्फा की ओर अपने महबूब को रुख करने का ईशारा किया। आशिके- रसूल की चाहत को खुदा ने तबसे हर फजिर की नमाज के बाद हर इमाम के लिए पैरवी का कारण बना दिया। अब जरा सोंचे कि रसूले पाक से जो सच्ची मुहब्बत करे, वह खुदा का गैर है या खुदा का प्यारा?

यह पता चला कि नबी-ए-पाक से मुहब्बत जो भी करे, ऐसी आशिकी अल्लाह को प्यारी भी है और मन्जूर भी। *अगर हम नबीए अकरम से बुग्ज-कीना रखें, उन्हें अपनी तरह समझें, तो खुदा कत्तई ऐसे शख्स को पसन्द नहीं करेगा। ओलमाए-सू ने खुदा की खुश्नूदी जिनसे हासिल होती है, उसी पैगम्बरे आजम से दुनियां को दूर करने में मशगूल हो गए।* इस तरह के बेशुमार मामले हजरत बिलाल एवं हजरत अवैस करनी आदि के साथ हुए है।

हजरत बिलाल नमाज के लिए अजान देते थे। उनकी जुबान से अरबी के शब्द स्पष्ट नहीं निकलते थे। लोगों ने आपत्ति की तो एक दिन दूसरे व्यक्ति ने फजिर की अजान दे दी। आश्चर्य यह हुआ कि उस दिन सुबह की रौशनी न हुई। नगरवासियों में दहशत फैल गई। उस वक्त ईश्वर का पैगाम यह आया कि ऐ मेरे महबूब, बिलाल आशिके मुस्तफा हैं, जब वह अजान देंगे, तभी सुबह होगी। हजरत बिलाल ने अजान दी। सवेरा नमूदार हुआ। आज हममें सिफते-बेलाली क्यों नहीं है?

यहां देखें हम कि बिलाल के सिवा जिसने अजान दी, उसने वही अजान के शब्द पढ़े थे, जो बिलाल पढ़ते थे। फिर खुदा ने अपने नबी के आशिक को ही क्यों पसन्द किया? खुदा की मुहब्बत बिलाल को इसलिए हासिल थी, क्योंकि वह नबीए अकरम हुजूर सल्ले अला व सल्लम से बेइन्तहां प्यार करते थे। उनकी जुबान पर खुदा का नाम था, *मगर दिल में खुदा के हबीब की मुहब्बत थी।* खुदा ने बिलाल को *मकबूले-बारगाह बना दिया। अजान जिस दूसरे व्यक्ति ने दी थी, उसकी मुहब्बत बिलाल के ईश्के-नबी के मुकाबले में कम थी। शायद इसी कारण दूसरे की अजान को वह अहमियत* खुदा ने नहीं दी। **अब नबी की मुहब्बत छोड़कर कोई अल्लाह की इबादत में पूरी उम्र खर्च कर दे, क्या गारन्टी है कि खुदा उसे कुबूल करेगा या नहीं?** अगर हमारे दिलों में नबीए पाक की तड़पती मुहब्बत कायम हो, तो असहाबे-सुफ्फा या हजरत बिलाल की भांति यह गारन्टी है कि खुदा हमें मकबूल करेगा। ओलमाए-सू कहते हैं कि नबी की मुहब्बत खुदा की इबादत में शिर्क है। अल्लाह की इबादत में अपना रोजगार, कारोबार और रोजमर्रा की चीजें लायी जा सकती हैं, क्या यह

शिर्क नहीं है? क्या शिर्क यह है कि जिस नबीए पाक के माध्यम से खुदा का पता चला, खुदा की बन्दगी सीखी, उस नबीए-पाक का ख्याल या उनसे मुहब्बत करना शिर्क है? जो रसूले पाक खुदा के कल्मे में शरीक हैं। 'लाईलाहअ इल्लललाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' (नहीं कोई पूज्यनीय सिवाए ईश्वर के और मुहम्मद (सल्ले अला व सल्लम) अल्लाह के रसूल हैं।) उनको खुदा से जुदा करके हम खुदा की सच्ची बन्दगी कहां से पाएंगे? रसूले-खुदा ने ही नमाज पढ़ने का ढ़ंग बताया। उनके मुख से ही ईश्वर का वचन या कुरआन, हमें मिला। ऐसे ईश-सर्वप्रिय पैगम्बर को कोई ईश्वर का गैर माने, तो वह खुद ईश्वर का खास कैसे बन सकेगा?

नबीए अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व सल्लम से बेपनाह मुहब्बत करने के कारण असहाबे सुफ्फा, हजरत बिलाल, हजरत अबु बकर, हजरत उमर, हजरत उषमान गनी, हजरत अली, सैय्यदा बीबी फातमा, हजरत इमाम हसन, हजरत इमाम हुसैन और 72 शहीदाने कर्बला आदि को अल्लाह ने मकबूल कर दिया। आज पीर-फकीर, वली-औलिया आदि का ईश्क, ईश्के रसूल है तो यह किस अल्लाह के प्रति शिर्क है? ईश्के रसूल क्या नमाजे-खुदा है? रसूलल्लाह का बारह रब्बील अव्वल (योमे पैदाईश या ईश दूत का जन्म दिन) अथवा मिलादुन्नवी या ईश-दूत की प्रशंसा करना, खुदा की इबादत या नमाज है? जब ऐसे काम अल्लाह तआला की नमाज या इबादत करना नहीं है, तो शिर्क किस दरवाजे पर उन्हें खड़ा नजर आता है? क्या नबी से ईश्क रखने वाला बन्दा, उन्हें खुदा कहता है? क्या कोई नमाज की नीयत में यह कहता है कि मेरी फजिर या ईशा की नमाज रसूलल्लाह के वास्ते। नमाज फर्ज हो या सुन्नत या नफिल, सभी नमाजों की अदायगी तो खुदा के लिए है। फिर रसूले पाक से ईश्क रखना किस इस्लाम का शिर्क, कुफ्र है? ओलमाए-सू के मजहब में आज भी कल्मा तैय्यब, कल्मा तौहीद वगैरह वही है। आज तक दुनियां का हर आलिम, मुफ्ती, मौलाना, मौलवी वही कल्मा पढ़ता है, जिसमें कहा जाता है कि अल्लाह के सिवा इबादत के कोई लायक नहीं और मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं। हिजरी 1429 साल से अब तक 'रसूल हैं' का रोजाना इकरार हम कर रहे हैं। फिर हम यह कैसे कहते हैं कि रसूल थे, या रसूल मर चुके। वह तो अल्लाह के कल्मे के साथ जिन्दा हैं। अल्लाह के कुरआन में जिन्दा हैं। नमाज में जो भी कुरआन की आयतें हम तिलावत करते हैं, वह कलामे खुदा, हमें कलामे रसूल से ही तो मिलीं। अल्लाह के हबीब और महबूब, रसूले पाक हैं। अल्लाह की पूजा-नमाज करके हमें सिखाई रसूले पाक ने। अल्लाह के कलाम (वार्तालाप) को इन्सान पर सर्वप्रथम जाहिर किया रसूले पाक ने। कुफ्र, शिर्क, काफिर, मुशरिक, मुनाफिक की सच्ची पहचान हमें करायी रसूले पाक ने। फिर उसी रसूले-पाक की प्रशंसा करना, उनके ईश्क में उनके नाम की महफिल सजाकर दरुदो-सलाम पढ़ना, उनका जिक्र करना, यह 'शिर्क' किस इस्लाम ने बताया है? मेरी समझ यह बता रही है कि जो अल्लाह के रसूल से दिली

ईश्क न करे, वह खुदा के मजहब में मुसलमान नहीं। जो रसूले खुदा का दीदार न करे, वह मोमिन नहीं। यही इस्लाम की हकीकत है। वरना हर मुसलमान को हम मोमिन कह सकते थे। अल्लाह ने भी अपने कलाम में कई अवसरों पर ऐ मुसलमानों, ऐ मोमिनों या ईमानवालों अथवा ऐ लोगों कहके सम्बोधित किया है।

5 – कुरआन की हकीकत

'इस्लाम' प्रत्यक्ष रुप से ईश्वर के एक धर्म या मजहब का नाम है, परन्तु वास्तव में 'इस्लाम' का सन्देश और सिद्धान्त विश्वबन्धुत्व का एक व्यावहारिक जीवन है। इस्लाम, ईश–सन्देश का एक सम्पूर्ण जीवन है, उनके लिए जो इसके विधि–विधान पर जीवन का हर पल गुजारते हैं। सम्पूर्ण सृष्टि का सृजक, संचालक और संहारक वही एक अल्लाह, प्रभु, ईश्वर है। उसी सर्वमहाश्रेष्ठ तथा सर्वपूज्यनीय ईश्वर के पैगम्बर, नबी जेसस व मोजेस (हजरत मूसा अलैहिस्सलाम) तथा जोसेफ (हजरत युसुफ अलैहिस्सलाम) आदि हैं। उसी एक ईश्वर–अल्लाह ने नबी–रसूल हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम को बनाया है तथा समस्त जगत के जीवों के लिए रहमत बनाकर भेजा है। कुरआन सद्ग्रन्थ में ईश्वर ने उन्हें अरबी भाषा में 'रहमतुललिलआलमीन' अर्थात – समस्त सृष्टि के लिए रहमत कहा है। उस एक जग विधाता ने उन्हें 'नूरुन अला नूर' भी कहा है। अर्थात– ईश्वर के समस्त ज्योतियों में सबसे श्रेष्ठ व महान ज्योति उन्हें कहके सम्बोधित किया है। उस पवित्र ईश्वर ने संसार को यह निर्देश भी दिया है कि जो 'रसूल' दें, उसे ले लो। मेरे रसूल (ऋषि) का अनुकरण करोगे तो वह अनुकरण ईश्वर का अनुकरण होगा।

कुरआन ग्रन्थ के माध्यम से ईश्वर के सन्देश–निर्देश समस्त अनन्त मानव समाज एवं अन्य अदृश्य जीवों के लिए प्राप्त हुआ हैं। ईश–वचन संग्रह 'कुरआन' आज हिजरी के अनुसार 1429 वर्षों से एक है। इसमें परिवर्तन, संशोधन या किसी भी मानवकृत वचन का समावेश नहीं है। अरबी भाषा का यह पवित्र ईश्वर–सन्देश ग्रन्थ अपरिवर्तनीय है। क्योंकि इसमें संकलित ईश–वाणी की सुरक्षा स्वयं ईश्वर के अधीन है। कुरआन की ईश–वाणी में तथा उस के पठन–पाठन या उच्चारण में किसी भी प्रकार का परिवर्तन इसके अवतरण काल से आज 1429 हिजरी (2008 ई0) तक कुछ नहीं हुआ। कुरआन की प्रमाणिकता इसी से स्पष्ट है। यह कुरआन रुपी ग्रन्थ, वास्तव में ईश्वर व ईशदूत के मध्य आपसी वार्तालाप है। जो वार्ता अनुसार आता रहा है।

लखनऊ (उ0प्र0) से प्रकाशित उर्दू मासिक 'बांगे हेरा' पत्रिका ने अपने जून, 2005 ई0 के अंक में एक जाली कुरआन प्रकाशित होने की खबर छापी है। उर्दू पत्रिका के अनुसार जाली कुरआन

का नाम 'फुरकानुल हक' रखा गया है। यह नकली कुरआन सन् 2004 ई0 में अमेरिका और ईस्त्राईल द्वारा प्रकाशित करायी गई है। यहूदी और ईसाई संस्थानों ने इस नकली कुरआन को बारह खण्डों में बांटा है। जिसका एक खण्ड प्रकाशित हुआ है। पत्रिका के अनुसार इस नकली और झूठे 'फुरकानुल हक' नामक कुरआन को ईसाई और यहूदियों द्वारा फिलीस्तीन और अन्य देशों में तेजी से फैलाया जा रहा है। पत्रिका ने इस बारे में सविस्तार समाचार दिया है। आप गौर करें कि ईश-वाणी कुरआन को बदलने और परिवर्तन करने के पीछे मूल उद्देश्य क्या है? ऐसे कुकर्म के पीछे क्या यह मंशा नहीं झलक रही है कि ईश्वर-अल्लाह के मूल वचन को धरती से विलुप्त कर दिया जाए? यह साजिश कोई ऐसा व्यक्ति ही कर सकता है, जो ईश्वर के प्रति नास्तिक हो? ईशदूत और ईश-वचन को ईसाई, यहूदी के चश्मे से देखने का यह प्रमाणिक उदाहरण है। यह गतिविधियां बता रहीं हैं कि मुसलमान का अल्लाह और ईसाई के गॉड दो अलग सर्वमहान ईश्वर हैं। कुरआन परिवर्तन करने वाले शायद नहीं जानते कि सत्य ईश-वचन कुरआन के कण्ठस्थ करने वाले हाफिज दुनियां में आज करोंड़ो नहीं अरबों की संख्या में हैं। नकली कुरआन की साजिश ऐसे में सफलता कैसे पाएगी? विश्वसमाज के समक्ष अमेरिका और इस्त्राईल को यह खुलासा करनी चाहिए कि उसने ईश्वर के कथन को किस ईश्वर के आदेश-निर्देश पर परिवर्तित करने की ईश-विरोधी साजिश की है?

ईश्वर द्वारा कुरआन का थोड़ा-थोड़ा अंश समयानुसार पैगम्बर साहब तक मक्का और मदीना शहर के समय, काल में पहुंचता रहा है। वही ईश-वाणी आज पुस्तकाकार रुप में संग्रहित है। अधिकतम लोग इसे ईश-वाणी के कारण पढ़ते हैं। कुछ लोग ईश-वाणी को समझने के लिए इसके उर्दू, हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी आदि अनुवाद को भी पढ़ते हैं। अनुवाद का सत्य तथ्य भाव अनुवादक की अपनी विद्वता और ज्ञान पर आधारित होती है। यह आवश्यक भी नहीं है कि हर अनुवादक का अनुवाद शत-प्रतिशत वही हो, जो ईश-वाणी की मंशा है? क्योंकि ईश-वाणी का सत्य अर्थ ईश्वर या ईशदूत जानते हैं। दोनों के मध्य वार्तालाप जो हुए, उसका शाब्दिक अर्थ बिना इन दोनों से सम्पर्क रखे या इनमें किसी एक से सम्पर्क रखे, समझ पाना असम्भव है।

इसी ईश-मंशा की अज्ञानता और भ्रामक शब्द अनुवाद के कारण आज कुछ लोग पवित्र ईश-वाणी पर अपनी विद्वता और ज्ञानानुसार आरोप-प्रत्यारोप के विषैले तीर हवा में चलाने लगते हैं। कुछ पुस्तकें लिखते हैं, कुछ भाषण में ईश-वचन के विपरीत अर्थ निकालकर अनर्थ प्रसारित-प्रचारित करने में गौरान्वित होते रहते हैं। अपने निन्दा मद में वे यह भी भूल जाते हैं कि 'कुरआन' में संकलित वाणी-वचन किसी व्यक्ति या पैगम्बर, नबी, रसूल के नहीं है। ऐसे निन्दक यह भी नहीं समझ पाते कि वे निन्दा या आक्षेप-कर्म उसी एक ईश्वर का कर रहे हैं, जिसने समस्त सृष्टि के लिए सन्देश-निर्देश या आदेश दिए हैं।

अल्लाह को ईश्वर, प्रभु, निरंजन, अहुरमज्द, सत् श्रीअकाल आदि मानने में आपत्ति क्या है? भाषा, शब्द, देश काल से क्या ईश्वर-अल्लाह की गुणवत्ता एवं उसके महान शक्ति में अन्तर पड़ता है? ईश्वर वही अल्लाह, खुदा या रब है। वही सर्वशक्तिमान है, वही महान है। उसका ही नूर (ज्योति) कण-कण में है। वही नूर हम सबकी जीवनदायिनी है। वही नूर जीवन क्रिया की सत्यता है। उसी के जाने के बाद हमारा शारीरिक जीवन दफनाने या जलाने का पात्र बन जाता है। इस्लाम, सनातन, यहूदी, ईसाई आदि धर्मों के पीछे वही परमेश्वर मूल रुप से है। उसकी ही चर्चा, आदेश-निर्देश, सन्देश हर धर्म के अनेकों पूज्यनीय ग्रन्थों में है, फिर हम अपने कथित प्रकाण्ड बुद्धिवादी ज्ञान का प्रयोग ईश-वचन या ईश-वाणी के विरुद्ध क्यों करते हैं?

ईश-वाणी या ईश-वचन को समझने के लिए हम में ईश-सम्पर्क का ज्ञान-ध्यान परम आवश्यक है। जिसे हम जानते-पहचानते नहीं, उसके शब्द, संकेत और भाव को शत-प्रतिशत सत्य हम कैसे समझ पाएंगे? किसी भी ईश-ग्रन्थ के वचन-कथन को समझने के लिए उस वचन के समय, काल, परिस्थिति का भी अवलोकन करना होगा। ईश वाणी आज हमारे समक्ष एक ग्रन्थ या पुस्तक के रुप में है, किन्तु यह समय-समय पर ईश्वर द्वारा अपने पैगम्बर, तीर्थकर, ऋषि को ईश-वचन वार्ता के रुप में प्राप्त हुआ। जब-जब और जिस-जिस समय पर ईश-वाणी आयी, वह समयकाल, परिस्थिति क्या थीं? यह समझने के बाद ही अंशतः ईश-वाणी का कुछ अर्थ हम सत्य पा सकेंगे।

कुरआन में ईश-वाणी की स्थितियां भी समय-काल के अन्तर्गत हैं। कुछ ईश-वाणी मक्का शहर में तथा कुछ ईशवाणी मदीना शहर में पैगम्बर साहब को प्राप्त हुई। कुरआन के तमाम वाणी में ईश्वर ने परिस्थितियों के अनुसार अपने आदेश-निर्देश को दिया है। ईश-अवतार श्रीकृष्ण जी जिस प्रकार महाभारत जैसे युद्ध में सत्यता की रक्षा हेतु सहभागी बनें, उसी प्रकार ईश-पैगम्बर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम भी जंग में भाग लिए। नबी, रसूल, पैगम्बर, अवतार, ऋषि आदि ईश-ईच्छा और ईश-निर्देशन पर ही जीवन को व्यतीत किए हैं। वे पवित्र हैं और सर्वदा पवित्र रहेंगे। उनके भौतिक या ब्रह्मलीन जीवन में कोई अन्तर नहीं है। अन्तर हमारी दृष्टि और दृष्टिकोण का है। ईश-मार्ग पर चलने का सत्य विधि-विधान किसी सत्य आध्यात्मिक सद्गुरु से पाने वाला व्यक्ति यदि आध्यात्मिक नेत्र पा जाए, तो वह चुनौतीपूर्ण शब्दों में बताएगा कि ईश्वर के सारे नबी, रसूल, पैगम्बर, ऋषि, अवतार आदि आज भी अदृश्य रुप से जीवित हैं। वही यह भी दावा कर सकता है कि ईश्वर सर्व महान है।

ऐसे अध्यात्म-ज्ञान से परिपूर्ण आध्यात्मिक प्रतिनिधि (मुरीद या शिष्य) के लिए ईश-ग्रन्थ की सत्यता समझना कठिन नहीं है। वह जहां नहीं समझ सकता, वहां उक्त पैगम्बर, नबी, रसूल, अवतार आदि से पूछ कर सत्यता समझ लेता है। यह प्रक्रिया या साक्षात्कार विधि ही अन्तर्दृष्टि या दिव्य दृष्टि

अथवा कश्फ है। जिसे यह प्राप्त है, वह ईशग्रन्थ या ईश वाणी की सत्यता को प्रकट कर सकता है। यह अतिन्द्रीय ज्ञान शक्ति यदि हममें नहीं है तो हम शब्द-वाक्य के अर्थ-भावार्थ में उलझते रहेंगे, मूल ईश-वाणी का सत्य भावार्थ हम नहीं समझ पाएंगे। इसलिए ईश ग्रन्थों के ईश-वचन या ईश-वाणी की सच्ची व्याख्या करने से पूर्व हमें स्वयं की जांच-परख करनी चाहिए। कुरआन ग्रन्थ के सन्दर्भ में भी कुछ विद्वानों ने इसी प्रकार की गम्भीर भूलें की हैं। वे शब्दों के महाजाल में उलझकर सत्य अर्थ या भावार्थ से काफी दूर चले गए। धार्मिक -वैमनस्यता बढ़ाने में ऐसे लोगों ने काफी समय गवांया।

[5-A] ईश-वार्ता का अनर्थ अनुवाद

जो ईश्वर के ग्रन्थ, वचन, कथन की सत्यता वास्तव में जानने के ईच्छुक हैं, वह सच्चे सन्त, पीर, फ़कीर, वली-औलिया, साधु, महात्मा से जान सकते है। ब्रह्म वचन का सत्य ज्ञान ब्रह्मज्ञानी को या सूफी को ही होगा, क्योंकि वे ईश्वर के निरन्तर सम्पर्क में रहते हैं। हम सामान्य मनुष्य शब्दकोष ज्ञान तथा अपनी बुद्धि-विवेक के प्रयोग से ईश-वाणी अथवा किसी भी ईश-ग्रन्थ का सत्यासत्य अनुवाद या भावार्थ यदि करते हैं तो निस्सन्देह वह अनुवाद पूर्ण सत्य नहीं हो सकता। आज धर्म ग्रन्थों और ईश-वचनों के अनुवाद और उन पर स्वविचार देने की प्रथाएं जोर पकड़ती जा रही हैं।

फलस्वरुप मनुष्यजाति में नाना-नाना प्रकार के विवाद सिर उठाते जा रहे हैं। किसी भी धर्म या मजहब को छूने से पूर्व यदि हमारे हृदय-आत्मा में ईश्वर-अल्लाह के प्रति सम्मान नहीं है, तो उस विषय-वस्तु को नहीं छूना चाहिए। क्योंकि ईशग्रन्थ तो ईश्वर-अल्लाह का है। अगर ईश-वचन पर अपनी अक्ल से हमने निन्दात्मक विचार अथवा ईश-विरुद्ध लेखन आरम्भ किया, तो निस्सन्देह यह सर्वपूज्यनीय परमेश्वर की अवमानना और अपमान का ही सूचक बनेगा। शब्दज्ञानी विद्वानों को इस तरह के अदृश्य मानसिक पाप से सावधान रहना चाहिए। शब्दों से किसी भी ईश-धर्म को अधर्म कह देना अत्यन्त ही सरल कार्य है, परन्तु उसका दुष्परिणाम सामाजिक सौहार्द के लिए कितना घातक बनता है, इस तथ्य पर भी दूरदृष्टि ऐसे धर्मग्रन्थ अनुवादक या विचारक की होनी चाहिए। परन्तु धर्मग्रन्थों का जो अनुवाद हमारी दृष्टि से अब तक गुजरा है, उसमें इसी अनर्थ अनुवाद का परिपालन किया गया है। ऐसे भ्रामक अनुवाद क्या राष्ट्रहित में हैं? इन अनुवादों से क्या हिन्दू-मुस्लिम के मध्य बैर, वैमनस्य तथा प्रतिशोध की ज्वाला नहीं भड़केगी? साम्प्रदायिक सौहार्द बिगाड़ने में क्या ऐसे अनर्थकारी अनुवाद सक्षम नहीं हैं? यदि इन अर्थों को संकलित करने वाला व्यक्ति यह सफाई दे कि हमने यह अनुवाद स्वयं नहीं किया है, बल्कि उक्त अनुवाद की प्रस्तुती कुरआन के अमुक अनुवादक ने की है, तो यह कथन सन्तोषप्रद कैसे मान ली जाएगी? कुरआन के तर्जुमे (अनुवाद) तमाम अनुवादकों ने किए हैं, कौन सा अनुवाद कितना सही है? यह परीक्षण क्या प्रस्तुत इन अनुवादों के

सन्दर्भ में प्रकाशन से पूर्व लेखक या विचारक द्वारा की गई? यदि नहीं, तो प्रस्तुत अनुवाद का महत्व या सत्य होने का प्रश्न ही नहीं है। कथा, कविता या साहित्यिक कृतियों के सन्दर्भ में हम आलोचना, समीक्षा जो भी लिखते-पढ़ते रहें, वह जनता के निर्णय के लिए 'वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता' के अन्तर्गत मान्य है। परन्तु ईश-वचनों से युक्त ईश ग्रन्थों की आलोचना या निन्दात्मक समीक्षा लिखना-छापना दोनों कर्म ईश्वर और ईश्वर के मानने वालों का जानबूझ कर अपमान करने की साजिश है। ईश्वर वाणी या ईशग्रन्थ कुरआन, वेद, उपनिषद, बाईबिल, तौरेत, जब्र आदि जो भी हैं, उनमें विद्वान लेखक या समीक्षक बनकर हम निन्दात्मक लेखन प्रस्तुत करते हैं, तो यह कुकर्म है और ईश-श्रद्धा विरोधी कुचक्र है। ईश-ग्रन्थ अपने अवतरित काल से ही एक जन-आदेश के रुप में ईश्वर ने प्रस्तुत किया है। विश्वसमाज ईश-सन्देश को माने या न माने। समझना है तो ईश-ज्ञानी या ईश-सम्पर्की से समझ ले।

कुरआन के अनुवादकों द्वारा ईश-वाणी के गलत अर्थ काफी लगाए गए हैं। कुछ अनुवादकों ने बिना भाव, आशय समझे, अरबी भाषा के शब्दकोष आधार पर अथवा किसी गलत किए अनुवाद की नकल प्रकाशित करते रहते हैं। कुछ अन्य भाषा विद्वानों ने ऐसे-ऐसे अर्थ और भावाभिव्यक्ति कर डाली है, जिसका ईश-वाणी या ईश-वचन से कोई वास्ता-सरोकार नहीं है। सलमान रुश्दी जैसे अनगिनत विद्वान नित्य-प्रति पैदा होते रहते हैं। वे ईश-वाणी का अपमान निडरता से करते रहते हैं ताकि दुनियां के समक्ष वे ईश्वर से भी महान कहला सकें। कुछ अनुवादक धार्मिक कट्टरवादिता से पीड़ित रहते हैं। उन्हें ईश्वर, अल्लाह में शाब्दिक मतभेद दिखता है। वे अपने स्वभाव और परिवेश से पीड़ित होकर ईश्वर-अल्लाह की दो पार्टियां बना लेते हैं। प्रकट है प्रतिस्पर्धा-रोग उन्हें विवश करेगी कि अपनी पार्टी का बहुमत वह बनाएं। इसी इन्द्रिय तुष्टिकरण नीति के कारण धार्मिक उन्माद की ज्वाला भड़कायी जाती है। ऐसे वातावरण में तरह-तरह के ईश्वर और भिन्न-भिन्न धर्मों की उपज प्रारम्भ होती रहती है, जिससे देश ही नहीं विश्वमानव समाज में प्रदूषण फैलने लगता है। धार्मिक भावनाओं का शोषण एवं मजहबी वसूलों की धज्जियां उड़ाने वाले कार्यक्रम हम आज जो देख-सुन रहे हैं, इसी इन्द्रिय राक्षस (नफ्सीयाती शैतान) का कार्य है।

हम यदि ईश-सन्देश में गल्तियां तलाश करते हैं, तो निस्सन्देह हम अपने को ईश्वर-अल्लाह से भी बड़ा एवं महान ईश्वर समझ रहे हैं। यही ईश-विरोधी गम्भीर मानसिकता है, जो हमें ईश्वर को पूज्यनीय न मानकर स्वयं को पूज्यनीय बनाने की मंशा प्रकट कर रही है। यही नास्तिकता है, इसी को कुफ्र कहते हैं। यही काफिर या नास्तिक की पहचान है। जो ईश-वचन को न माने, वास्तव में उसने ईश्वर से इन्कार किया। ईश-वचन यदि उसे नहीं समझ में आ रहे थे, तो उसे उक्त वचन को

ईश-ज्ञानी या किसी सूफी से समझना चाहिए था। उसे इतनी तेजी क्यों थी, जो बिना सत्य जाने; लेखन-प्रकाशन करे।

कुरआन ग्रन्थ अरबी भाषा में है, इसके अनुवाद उर्दू या हिन्दी या अंग्रेजी अथवा किसी भी भाषा में आए हैं, तो पढ़ने वाले का प्रथम यह कर्तव्य है कि वह उस अनुवाद का मिलान अरबी भाषा के किसी विद्वान से अवश्य करे। कुरआन की वाणी को यदि वास्तव में समझने की उत्कण्ठा है तब तो किसी कामिल पीर से सम्पर्क करे, वह सत्यासत्य भावार्थ समझा देगा।

एक छोटा उदाहरण अपने कथन की पुष्टि में प्रस्तुत हैं। एक कुरआन के अनुवादक ने 'बिस्मिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम' का अर्थ लिखा - "शुरु करता हूं अल्लाह के नाम से जो रहमान और रहीम है।" एक दूसरे अनुवादक ने लिखा- "अल्लाह के नाम से शुरु करता हूं जो रहमान और रहीम है।" एक फकीर (सन्त) सैय्यद फैजल शाह उर्फ श्री साधु बाबा ने हमसे इस सन्दर्भ में यूं कहा - "अल्लाह के नाम से दुनियां के लोग शुरु करते हैं, मगर हम फकीर अल्लाह को देखकर ही हर काम शुरु करते हैं।"

अरबी कुरआन ग्रन्थ का यह आरम्भिक वाक्य 'बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' है। इसके तीन अनुवादों को देखने पर सामान्य दृष्टिकोण से विशेष अन्तर नहीं दिखता। पर गम्भीरता से चिन्तन-मनन करें तो पता चलेगा कि 'शुरु करता हूं अल्लाह के नाम से जो रहमान और रहीम है' और 'अल्लाह के नाम से शुरु करता हूं जो रहमान और रहीम है' में काफी अन्तर है। जब ईश्वर के नाम से आरम्भ करना है तो प्रारम्भ में 'ईश्वर-अल्लाह' का ही नाम आना या लेना सटीक लगता है। प्रारम्भ करता हूं ईश्वर या अल्लाह के नाम से तो 'ईश्वर' के नाम से प्रारम्भ हमने कहां किया?

कुरआन ग्रन्थ के इस प्रारम्भिक आयत (वाक्य) का अनुवाद समझने में जब अनुवादकों की बुद्धि-विचार एक नहीं है, फिर ईश-वाणी से भरपूर 30 पारा के कुरआन के अर्थ में कितनी भिन्नता होगी? यह अनुमान लगाना कठिन है। अरबी भाषा में लिखित कुरआन विश्वस्तर पर एक ही है। उसमें मात्रा, विराम, अर्द्ध विराम का भी अन्तर हिजरी के अनुसार 1429 वर्ष से आज जर्रा बराबर भी नहीं है। भिन्नता भावार्थ या अनुवाद में है, वह उस अनुवादक के व्यक्तिगत ज्ञान या भाषा-ज्ञान के कारण है।

यह प्रमाणित सत्य है कि कुरआन एक ही है, चाहे दुनियां के किसी कोने में हो। रहा अनुवाद या अनुवादक की लेखन-प्रस्तुती तो उसे इस भाव से समझ लें-

जाकी रही भावना जैसी
प्रभु मूरत देखी, तिन तैसी

(गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं कि जिस व्यक्ति की भावना जैसी रहती है, वह प्रभु, ईश्वर, अल्लाह को उसी भावना से देखता है।)

कुरआन के अनुवाद में भी यही सत्य है। जो ईश्वर में लीन है उसे ईश्वर के सन्देश का अर्थ अलग समझ में आया, जो ईश्वर के केवल नाम से परिचित था, उसने ईश-वाणी का अर्थ अपने सीमित ज्ञान-बुद्धि से प्रस्तुत किया। यह निजी बुद्धिवादी व्याख्या या अनुवाद ही शंका-कुशंका और गलत सन्देश का कारण बनी। अन्यथा उसी कुरआन के ईश-वचन को पढ़ते-पढ़ते कोई ईश्वर का वली-औलिया, योगी, साधु, महात्मा बन जाता है, कोई सलमान रुश्दी या यजीद बनता है। कुरआन तो वही है, इसके लेखक भी भिन्न-भिन्न नहीं हैं, फिर इसके पढ़ने वाले पर कुप्रभाव पड़ने का प्रश्न ही नहीं उठता। गहराई से विचार करें तो स्पष्ट हो जाएगा कि जिसने कुरआन के भावार्थ को ठीक से समझा, वह ईश-कृपा पा गया, जिसने भ्रामक अर्थ लगाने में वक्त गुजारा वह पथ-भ्रष्ट बन गया।

कुरआन ही नहीं, हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम के कथन-वचन को, जिसे 'हदीस' नाम से इंगित किया जाता है, उसके अर्थ भी चन्द तथाकथित विद्वानों ने असत्य निकाले। पैगम्बर साहब के वचन भी मूलरुप से अरबी में हैं। उनके तमाम वचन वह हैं, जिसे समय-समय पर ईश्वर ने कहा और वे वही बोले। ऐसे ईश-वचन, जो हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सललम ने दोहराए हैं, उन्हें 'हदीसे कुदसी' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। कुरआन और हदीस में आए शब्दों या कथनों के अनेक अर्थ निकाल कर कुछ लोगों ने सच्चे इस्लाम में भिन्न-भिन्न विचारों के समुदाय उत्पन्न किए। सभी यह दावा करते हैं कि वह सच्चे हैं। वे सत्य ईश मार्ग पर हैं, आश्चर्य है कि इन्हें यह सुझाई नहीं देता कि ईश्वर के सिवा सब झूठ है। इन्हें यह भी दिखाई नहीं देता कि **ईश्वर और उसके पैगम्बर साहब की सच्ची पैरवी करने वाला तो ईश्वर का वली या औलिया अथवा दोस्त बन जाता है। सच्चे इस्लाम की पहचान बताने वाले तो हमारे वली-दरवेश हैं।' हम इनसे क्यों नहीं पूछते कि वह नमाज कौन सी है, जिसे उन्होंने पढ़ी तो ईश्वर उनसे खुश हो गया। वह जिक्र-अजकार (जप-तप) कौन सी है, जिसके कारण उन्हें ईश-दर्शन सुलभ हो गए? उनका इस्लाम कौन सा है, जो उन्हें विश्वबन्धुत्व, प्रेम, सौहार्द की प्रतिमूर्ति बना डाला? इस्लाम के कुरआन और हदीस में क्या है, जिसे जानने-समझने के बाद हमारे पीर, फकीर, वली, औलिया हर इन्सान से प्यार करते हैं। उनमें मजहब या धर्म का कोई विवाद नहीं होता?** यह स्थल विश्वमानव समाज के लिए चिन्तनीय है। स्पष्ट तथ्य है कि वली-औलिया प्रत्यक्ष में तो इस्लाम वाले हैं। वह रोजा, नमाज, कुरआन-पाठ, तप-जप सभी कुछ इस्लामी नियम के अनुसार करते हैं, फिर उनमें हिन्दू, ईसाई, पारसी, बौद्ध आदि के प्रति नफरत, द्वेष, ईर्ष्या क्यों नहीं आती? उसी इस्लामी कानून के परिपालन से वह मानव समाज के हर वर्ग, धर्म, जाति वाले व्यक्ति से स्नेह-सम्मान पाते हैं। सभी के काम आते हैं। वे केवल मुसलमानों के ही काम आएं,

मुसलमानों की ही रक्षा करें, ऐसा कट्टरवादी स्वभाव इस्लाम के वली, दरवेश, फकीर में क्यों नहीं पायी जाती? वास्तव में सच्चा इस्लाम यही है, जो धर्म, जाति, रुप-रंग के भिन्नता के सांचे में नहीं ढ़ला है। **इस्लाम की सत्य छवि का दर्शन यदि किसी को करने का शौक है तो वह इस्लाम के वली-औलिया, सूफी, पीर, फकीरों की लौकिक-पारलौकिक जीवन शैली को देख लें।** भारत में ख्वाजा मुईनद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी, हजरत कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी (मेहरौली, दिल्ली), हजरत निजामद्दीन चिश्ती, हजरत अलाऊद्दीन साबिर कलियरी, हाजी वारिस अली शाह (देवा, जिला बाराबंकी), हजरत शाह सैय्यद बदीउद्दीन उर्फ जिन्दा शाह मदार, हजरत सैय्यद जमाल शाह 'मजलूम' (रामपुर), शाह सैय्यद शमशुद्दीन शाह (रक्शहां, गाजीपुर), सैय्यद जलालद्दीन शाह मीर सूर्ख (नागपुर), सैय्यद बाबा ताजुद्दीन औलिया (नागपुर), सैय्यद चांद शाह वली (नागपुर), सैय्यद ईरशाद हुसैन जाफरी (शीशगढ़, बरेली), सैय्यद हाजी अब्दुर्रहमान शाह उर्फ बाबा हाजी मलंग (कल्याण), सैय्यद हाजी अली (मुम्बई), सैय्यद शाह कयामुद्दीन मदनी उर्फ खम्मन पीर बाबा (लखनऊ), हजरत हाफिज, सूफी, कारी जनाब जमीर अहमद शाह उर्फ सूफी दीदार शाह चिश्ती (गोरखपुर), सूफी अब्दुर्रहीम शाह चिश्ती (गोरखपुर) आदि बेशुमार वली, पीर, औलिया अल्लाह हैं, इन्होंने कुरआन पढ़ी, कुरआन के ईश-सन्देश को बखूबी समझा, मगर इनकी जुबान या हाथों से किसी भी अन्य मजहब या धर्म के लोगों की कोई क्षति नहीं हुई। बल्कि इस्लामी सन्देश और अमल को देख कर दुनियां के दिल झुके और वे इस्लाम के तौर-तरीके को अपनाने लगे।

ईश्वर ने कुरआन के रुप में अपने सन्देश, उपदेश, आदेश-निर्देश दिए। हजरत मुहम्मद *सल्लल्लाहो व अलैहे व आलेही व सल्लम ने समाज को ईश्वर की सत्यता एवं पूजा-अर्चना का* विधि-विधान बताया। ऐसे सन्देश और ईश शिक्षा-दीक्षा का नाम सम्बोधन के लिए 'इस्लाम' है। **इस्लाम, उस एक पवित्र ईश्वर के बताए ज्ञान-ध्यान का नाम है, जो अनश्वर और अनन्त है। फिर इस सर्वमंगलकारी ईश-मार्ग पर विश्व का कोई समूह या व्यक्ति चले, इसे कौन रोकेगा? शब्द 'इस्लाम' तो सम्बोधन का मात्र एक प्रतीक है।** इसमें किसी सांसारिक व्यक्ति के सन्देश, उपदेश या निर्देश नहीं हैं। यदि 'इस्लाम' नाम पर कोई चिढ़ता है, तो उसका यह कार्य ईश्वर के विरुद्ध ही होगा।

[5-B] अरबी ईश-वचन के शब्दार्थ

कुरआन की दृष्टि में मुसलमान, काफिर, बुतपरस्त, ईमानवाले या मोमिन की परिभाषा भी अलग है। मगर सामान्य तौर पर कुछ लोग इन शब्दों को हिन्दू, ईसाई या अन्य धर्मों के मानने वालों से जोड़कर देखते हैं। तमाम विद्वानों ने आज के दौर में धर्म मान्यता के आधार पर समाज को विभाजित

करने का बीड़ा भी उठा लिया है। वे मुसलमान और हिन्दू के मध्य मजहबी प्रेम की जगह मौत का कुआं खोदने में संलग्न रहते है। ऐसे चिन्तक समाज को बताते हैं कि मुसलमान एक नृशंस हत्यारे पशु का नाम है। उनका अल्लाह अलग है, जो गैर-मुसलमान (यानी हिन्दू आदि) की क्रूरतम हत्या करने का हुक्म कुरआन में देता है। वह यह भी प्रचारित करते हैं कि वर्तमान समय का 'जेहाद' रुपी नृशंस हत्याकाण्ड का निर्देशक कुरआन रुपी अल्लाह है। वे कहते हैं कि कुरआन का अल्लाह केवल मुसलमानों का रक्षक और ईश्वर है। वहीं अल्लाह गैर-धर्मावलम्बिया को मुसलमान बनने पर विवश करता है। जो मुसलमान न बने, उन्हें कत्ल करने को निर्देशित करता है। ऐसे समझदार विद्वानों ने वास्तव में न कुरआन की बोली समझी और ना मुसलमान, गैर-मुसलमान, कुफ्र व काफिर तथा मुशरिक की सत्यता जानने का प्रयास किया।

वह शाब्दिक धर्मान्धता में इस तरह डूबे कि उन्हें यह याद भी न रहा कि वर्तमान 'जेहाद' अधिकतम बीस वर्ष पुराना है तथा कुरआन में संकलित जेहाद 1366 वर्ष हिजरी के अनुसार पुराना है। वर्तमान जेहाद 1340 सालों से दुनियां के अन्दर खामोश क्यों था? यदि आज का प्रकट जेहाद अल्लाह का आदेश है, फिर इस आदेश का पालन 20 वर्षों से ही क्यों हो रहा है? इसी प्रकार की नासमझी कुरआन की हकीकत न समझ पाने वालों ने समझी है। ईश्वर क्या अपने ही बन्दों को कत्ल करने का आदेश दे सकता है?

अब देखें कि मुसलमान कौन हैं? जो व्यक्ति ईश्वर के वचन और ईश्वर के सन्देशवाहक के कथन पर पूर्ण विश्वास करे तथा ईश्वर और ईश्वर के सन्देशवाहक नबी, तीर्थंकर, ऋषि, पैगम्बर को माने और पूजा-इबादत एक परम ईश्वर की करे, वह मुसलमान है। शब्द मुसलमान को अर्से से इस्लाम नामक ईश-प्रदत्त मजहब से जोड़कर देखने का प्रचलन जारी है। जबकि हर व्यक्ति ईश्वर को मानता है तथा उसकी ही पूजा करता है। पूजा करने के विधि-विधान जो भी हों, यह तो उस ईश्वर के आदेश तथा उसके पैगम्बर, नबी, रसूल आदि के निर्देशों पर निर्भर है। कोई ईश्वर को माने और उसके घोषित नबी-पैगम्बर को न माने यह सम्भव नहीं है। आज के कुछ आधुनिक मानव ईश्वर, धर्म, अध्यात्म, स्वर्ग-नर्क, प्रलय, ईश-दूत या फरिश्ते को भ्रामक कल्पना कहकर नहीं मानते हैं। यह उनकी समझ है। इससे ईश्वर या ईश्वर के प्रतिनिधियों का हानि-लाभ क्या है? जो ईश्वर और ईश्वर के पैगम्बर को माने, वही 'मुसलमान' है। मगर हम मुसलमान केवल अब्दुल्लाह या अब्दुल कादिर को ही समझते हैं। जबकि रामदास या दीनदयाल भी मुसलमान हैं। गैर-मुसलमान, वो हैं जो ईश-पूजा न करें, ईश्वर व उसके नबी, पैगम्बर को न मानें तथा किसी भी ईश-वाणी को सलमान रुश्दी की तरह 'शैतान वाणी' समझें। इन्हीं को गैर-मुसलमान ईश्वर बताता है। ईश्वर का यह कथन कि हर मुसलमान आपस में भाई-भाई हैं। यह अर्थ भी हम केवल इस्लामधर्मियों के लिए लगाते हैं। यह इस्लाम वालों के लिए ही

होता तो ईश्वर कुरआन में यह कहता कि केवल मुसलमान आपस में भाई हैं, मगर ईश्वर कहता है कि हर मुसलमान आपस में भाई-भाई हैं। मुसलमान तो एक ही है, फिर ईश्वर को हर मुसलमान कहने की जरुरत क्या थी? **वास्तव में ईश्वर की दृष्टि में उसे और उसके सारे नबी को मानने वाला बन्दा, अरबी भाषा में मुसलमान है।** मोजेस (मूसा अलैहिस्सलाम पैगम्बर) को मानने वाला मुसलमान, जेसस (हजरत ईसा अलैहिस्सलाम) को मानने वाला मुसलमान, श्री कृष्ण एवं श्री राम को मानने वाला मुसलमान तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को मानने वाला मुसलमान, इस तरह का हर मुसलमान आपस में भाई-भाई हैं। ईश्वर-कथन की सत्यता यही है। क्योंकि ईश-कुरआन, सारे दुनियां के ईश्वर का है और उसका सन्देश सारे मानव समाज के लिए है।

ईश्वर ने एक लाख चौबीस हजार कम या ज्यादा अपने पैगम्बर, नबी, ऋषि, रसूल, तीर्थकर आदि सन्देशवाहकों को भेजा है। इनके मानने वाले और ईश-निर्देशन के अनुकूल चलने वालों में भी मुसलमान हैं। मगर हमारी समझ यह है कि जो इस्लाम को माने, बस वही मुसलमान है। यह धारणा ही हमें ईश्वर की सत्यता से दूर करती है।

आश्चर्य है, हम यह भी नहीं देखते कि ईश्वर एक है, फिर उसके सन्देश में भिन्नता आएगी कहां से? ईश्वर के नबी, पैगम्बर, रसूल आदि समय-समय पर आते रहे, वह उन्हीं बातों को बताते रहे, जो ईश्वर पूर्व से कहता आ रहा था। भाषा कोई भी थी, पर उस एक ईश्वर का सन्देश तो वही था। गल्ती हमने ईश-वचन के समझने में तब की, जब हमने ईश-वाणी या ईश-कथन को हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध और ईसाई, पारसी के चश्मे से देखना शुरु किया। यहीं से हम आदम-हव्वा या मनु-श्रद्धा अथवा एडम-ईव्स को भूल गए। यह विकृति हमने अपनी अल्प-बुद्धि और इन्द्रिय निर्देशन में पाली। हम शनैः शनैः धर्म-मजहब की सत्यता जाने बिना, मजहबी अपमान के कार्यक्रम संचालित करने लगे। ईश्वर तो हमसे तभी दूर हो गया था, जब हम हिन्दू-मुसलमान के नाम-विभाजन में दीवारें खींचने लगे। जब हम धर्म-मजहब की ईर्ष्या में फंसे तो ईश्वर रुठने लगा। मानव बनाया ईश्वर ने, धर्म-ज्ञान दिया ईश्वर ने, पैगम्बर, तीर्थकर, नबी-रसूल, ऋषि आदि को भेजा ईश्वर ने। विभिन्न अवतार, पैगम्बर के माध्यम से सन्देश जो आया, वह ईश्वर का था। फिर- हम किस ईश-प्रेम में ईश्वर के ही विधि-विधान को सत्य-असत्य कहने में आनन्दित होने लगे? ईश-प्रेमी या ईश-पूजक यदि हम सच्चे होते तो ईश्वर के विशाल सत्ता की अवमानना कभी न करते। सच्चाई तो यह है कि ईश-वचन या ईश-धर्म के हम केवल पालनकर्ता हैं, मगर आज हम ईश्वर की व्यवस्था में हस्तक्षेप करने की कुप्रवृति में फंसते जा रहे हैं। प्रत्यक्षतः हम इसे धर्म सेवा, ईश्वर सेवा या पुण्य कर्म का नाम देते हैं, मगर हमारी यह प्रवृति वास्तव में ईश्वर के विरुद्ध बगावत करने की ही होती है। हम ईश्वर के प्रिय बन्दे बनकर जीना नहीं चाहते, बल्कि ईश्वर के बागी बनकर ईश्वर को ही चुनौती देने में लगे रहते हैं।

आज के रामनारायण को अल्लाह और उसके पैगम्बर नहीं भाते। इस दौर में फजलूर्रहमान को ईश्वर, प्रभू और हरे राम, हरे कृष्ण नाम सुनने पर खुजली होती है। वर्तमान समय में जार्ज फर्नाडिज को अल्लाह- या जय श्रीराम किसी के कहने पर गुस्सा आता है। ऐसी तमाम बीमारियां आज के समाज में पनपती जा रही हैं। ईश-वचन, कुरआन के रुप में संकलित हो या वेद या बाईबिल में, आज इनके प्रति भी हम नफरत और द्वेष की चिंगारी लिए घूम रहे हैं। जाहिर हैं कि हम में विघ्न-बाधा का संचार हमारी भाषा-ज्ञान प्रणाली और स्वज्ञान अर्थ निकालने के कारण हो रही है। हम अपनी कमियां नहीं ढूंढते। अगर हम श्रम करते हैं तो यही की ईश-वाणी में ईश्वर ने कहां-कहां गलत सन्देश दिया है, उसे शोध करके निकालें। बाह्य रुप से हम ईश्वर पूजक हैं, पर ईश-वचन की सत्यता न समझने से हम ईश्वर-विरोधी आचरण स्वयं करने लगते हैं। ऐसे मानव को तनिक भी ईश्वर से भय होता तो वह अपनी बुद्धि-विवेक की अपूर्ण तराजू में ईश-वचन को नहीं तौलता। ऐसे गम्भीर ईश-विरोधी अपराध से हमें बचना चाहिए।

[5-C] काफिर कहां है?

काफिर कौन है? जो एक खुदा के अतिरिक्त दूसरा या अनेक खुदा की पूजा करे। ईश-वचन के अनुसार यह 'कुफ्र' है, जो करता है, वह काफिर है। क्या हिन्दू, ईसाई, पारसी आदि काफिर हैं? यह कैसे समझा जाए? सभी तो एक ही ईश्वर के पूजक हैं। सनातनधर्मी देवी-देवता को ईश्वर मानकर उनकी पूजा नहीं करते। वे उनका सम्मान करते हैं, उनसे श्रद्धा रखते हैं। कारण मात्र यह है कि उनकी ईश-वाणी से संकलित ग्रन्थों में देवी-देवता के गुणगान आदि के प्रसंग मौजूद हैं। ईश-वचन जब धर्मग्रन्था के रुप में हैं, फिर उनके क्रिया-विधान ईश-विरोधी कैसे माने जाएंगे? इसलिए सनातनधर्मी 'काफिर' की ईश-परिभाषा में नहीं आते। वे श्रद्धा और आत्मिक प्रेम से देवी-देवताओं के समक्ष शीश झुकाते हैं, यह विनम्रतापूर्ण श्रद्धा की संस्कृति है, इसे 'सजदा' करना नहीं कहते। अब हमें कोई बताए कि कुरआन के ईश-वचन के आधार पर हिन्दू काफिर कैसे हुए? ईसाई, पारसी, बौद्ध आदि जो भी हैं, सभी अपने पैगम्बर को मानते हैं तथा उस एक ईश्वर की ही पूजा करते हैं। इन्हें 'काफिर' कैसे कहा जाए? वास्तव में काफिर और कुफ्र की बात हम बिना सच्चाई की पहचान किए करते रहते हैं। यह शब्द या सम्बोधन यदि नास्तिक या ईश्वर पूजाहीन व्यक्ति के लिए किया जाए, तो भी भय है कि वह कहीं मृत्यु के पहले ईश-पूजा न करने लगे। यह भी खतरा है कि हम जिसे नास्तिक के रुप में देख रहे हैं, वह लुक-छिपकर ईश्वर का पूजक न हो?

[5-D] ईमान लाना किस पर?

ईमान लाना, इस शब्द पर भी हिन्दू-मुस्लिम को बांटने का कार्य किया जाता है। ईमान क्या है? प्रत्यक्षरुप से दृण विश्वास या ईश्वर व उसके घोषित पैगम्बर, नबी या ऋषि आदि पर सुदृण श्रद्धा का नाम 'ईमान' है। पहले ईमान को हम मजबूत करें। हम ईश्वर-अल्लाह पर पूर्ण एवं दृण श्रद्धा रखें। उसके पैगम्बर, नबी, रसूल पर भी दृण विश्वास करें। यदि हमारा ऐसा विश्वास है, तो हम 'ईमान वाले' हैं। जैसे हमारा पूर्ण विश्वास श्री राम, श्री कृष्ण, श्री बुद्ध, श्री ईसा और हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम पर है तथा उस एक परमेश्वर पर भी है, तो हम 'ईमानवाले' हैं। हमने उन पर ईमान लाया। अगर हम ऐसे नहीं हैं, फ़िर तो हम 'बेईमान' हैं। ध्यान से विश्वमानव समाज पर नज़र डालें तो हमें 'ईमान वाले' ही मानव मिलेंगे। किंचित लोग ही इस परिभाषा पर बेईमान मिलेंगे। ईमान जब हममें है, तो हमारा जीवन ईश्वर और उसके नबी, रसूल या ऋषि के निर्देशानुसार होगा। केवल ईश्वर, नबी या उसके पैगम्बर आदि के प्रति सुदृण विश्वास रखने से ही हम 'ईमान वाले' या 'मोमिन' नहीं बन सकते। कुरआन की ईश-वाणी में अनेकों स्थान पर ईश्वर अरबी भाषा में 'या अईहोहल्लजीनअ आमनू' अर्थात – ऐ ईमान वालों या ऐ मोमिनों कह कर सम्बोधित करता है। अरबी विद्वान या धार्मिक पण्डित इसका अर्थ भी मुसलमान नाम के समुदाय से लगाने लगते हैं। ज़बकि ईमानवाले यानी मोमिन और मुसलमान में फर्क है।

सर विलियम जे0 थामस उर्फ श्री झरना शाह बाबा इस सन्दर्भ में कहते हैं– "ईमान का सम्बन्ध हमारे हार्दिक विश्वास एवं आत्मिक श्रद्धा से है। हार्दिक विश्वास की उपज हमारे आन्तरिक अनुभव ज्ञान से होती है। ईश्वर-अल्लाह से कोई याचना करेगा और उसके हृदय को शान्ति मिले, तो यह ईश्वर के प्रति श्रद्धा की जागृति है। किसी नबी, पैगम्बर या रसूल की स्तुति गान या प्रशंसा उपरान्त मन-मस्तिष्क और हृदय को शान्ति मिलती है, तो यह उनके प्रति श्रद्धा-विश्वास का जागरण है। यही दोनों श्रद्धाएं जिनके दिलों में पायी जाती हैं, उन्हें ही शब्दरुप में 'ईमान वाला' या सच्चा ईश श्रद्धालु कहा जाता है। ऐसे सच्चे श्रद्धालु यदि ईश-पूजा में उन्नत्ति करते जाते हैं, तो उन्हें ईश्वर व नबी के दर्शन भी प्राप्त होने लगाते हैं। जिन्हें दोनों का दर्शन साक्षात्कार मिल गया, वही वास्तव में पक्का और परिपूर्ण ईमानवाला या मोमिन उर्दू भाषा में कहा जाता है। मोमिन या ईमान वाला किसे कहते हैं, यह विवाद का विषय कहां है?"

इसी सत्यता को विश्वप्रतिष्ठित सद्गुरु हाजी वारिस अली शाह यूं बयान करते हैं। वे कहते हैं– "जिसको तसदीक नहीं, उसका ईमान नहीं।" अर्थात– जिसने ईश्वर-अल्लाह और उसके ईश-दूत का आत्म साक्षात्कार (तसदीक) नहीं किया, वह ईमान वाला या मोमिन नहीं है।

आत्म-साक्षात्कार का ज्ञान तो अध्यात्म ज्ञानी के पास है। उन्हें ही कामिल पीर या सूफी अथवा ब्रह्म ज्ञानी कहा जाता है। अध्यात्म ज्ञान ही ब्रह्मज्ञान है। और जो इस पथ पर चले वही आध्यात्मिक शिष्य या मुरीद है। जब उसे दर्शन साक्षात्कार प्राप्त होने लगे, तो वही मोमिन या ईमानवाला बन जाता है। जो ईश्वर और उसके दूतों पर विश्वास रखे, वह मुसलमान है। चाहे वह किसी भी धर्म का पालनकर्ता हो, वह मुसलमान है। वही मुसलमान जब ईश्वर और उसके नबी, रसूल को देखने की दृष्टि पा जाता है, तो वह मोमिन या ईमानवाला बन जाता है। मुसलमान तो सभी हो जाते हैं, पर मोमिन होने के लिए ईश-पूजा में कठोर परिश्रम करनी होती है।

इस्लामधर्मी, सनातनधर्मी अथवा ईसाई, पारसी, बौद्ध, सिख आदि हम कुछ भी हों, अगर मोमिन बनने की योग्यता हम में प्रवेश कर गई है, तभी हम ईमान वाले हैं। कुरआन की ईश-वाणी- "ऐ ईमानवालों।" जहां-जहां है वह ऐसे ही व्यक्ति को इंगित कर रही है। यह ईश-वचन केवल एक समुदाय या किसी खास समाज के लिए नहीं है। यह सभी मनुष्यजाति के लिए है। क्योंकि ईश्वर सभी का है। वह हिन्दू, मुसलमान, ईसाई जैसे पहचान-चिन्हों में भेद नहीं रखता है। मानव कृति या मानव रचित पुस्तक में धर्म, जाति का भेद या अन्तर पायी जा सकती है। ईश-वचन या ईश-वाणी संग्रह में सन्देश किसी एक वर्ग विशेष के लिए नहीं हो सकता। ईश-वचनयुक्त कुरआन अरबी भाषा में है, क्योंकि ईश-दूत अरब के हैं। वही ईश-दूत यदि भारत में होते तो आज ईश-वचन का संग्रह कुरआन भारतीय भाषा में होता।

अब हम सभी को स्वयं यह आत्म-निर्णय करना है कि भाषा, शब्द के महाजाल में उलझे रहें या उससे निकल कर उस एक ईश्वर, प्रभु, निरंजन, अहुरमज्द, अल्लाह या खुदा, खालिक, गॉड, सत् श्री अकाल की पूजा-इबादत में तल्लीन हो जाएं। हकीकत में भाषा और शब्दों के खेल में हमने ईश-वचन या ईश-वाणी में अन्तर की गहरी खाई खोद लिया है। हम दया और दयालु को तो सहज ही समझ लेते हैं, फिर अरबी के रहमान व रहीम के समझने में भूल क्यों करते हैं। ईश्वर दया का सागर है, इसलिए वह रहमान भी है और रहीम भी। हर पैगम्बर, नबी, रसूल, ऋषि, के दौर में ईश्वर ने उस काल-समय पर अपने आदेश-निर्देश को दिया है। ईश वचन कहीं आकाशवाणी के रुप में इंगित है, कहीं जिब्रील नामक ईश-फरिश्ते के माध्यम से प्राप्त हुई। आज ईश ग्रन्थ, जो भी हैं, यदि उनमें कहीं गई बातें हमें समझ में नहीं आतीं, तो शब्दकोष से उसके शब्द का अर्थ तो निकाल लेंगे, किन्तु उसका आशय या भाव समझ पाना कठिन होगा। आज अरबी भाषा में अवतरित कुरआन के सन्दर्भ में भी शब्द अनुवाद के आधार पर यही असत्य अनुवाद भाव देखने में आते हैं। इस्लाम को केवल मुसलमान का मजहब समझ कर यदि हम जानने का प्रयत्न करेंगे, तो भाषा दोष की अज्ञानता

हमें ईश्वर से दूर कर देगी। जब हम मुसलमान की सच्ची परिभाषा के अनुसार इस्लाम का ज्ञान लेंगे तो वेद, उपनिषद, पुराण, बाईबिल, तौरेत, जब्बूर आदि पवित्र पुस्तकों के सन्देश में एकरुपता मिलेगी। भाव और सन्देश की एकरुपता पाया जाना, इसलिए सम्भव है, क्योंकि ईश्वर एक है, उसके वचन-कथन की भाषा अनेक हो सकती है, पर आशय भाव एक ही होगा।

ईश्वर के पावन वचन-कथन आज जो भी हम तक पहुंचे हैं। उन्हें यदि मनन करें तो लाभ हमें ही होगा। यदि मनन, अनुशीलन की जगह हम ईश-वचन के दोष निकालने में सक्रिय हैं, तो निश्चित रुप से हम ईश्वर से भी सर्वश्रेष्ठ ईश्वर स्वयं को बनाने में जुटे हैं। यह इन्द्रिय दोष सम्भव है कि हमें मानव से दानव बनाने में सफल कर दे। दानवता का परिचालक इब्लीस रुपी राक्षस है। उसने ईश-पूजा में लाखों वर्ष लगाए थे। परन्तु ईश्वर की एक आज्ञा न मानने से शैतान करार दे दिया गया। हमारे पास ईश्वर की सच्ची पूजा भी नहीं है, हम ईश्वरीय आदेश-निर्देश के विपरीत जीवन गुजार रहे हैं। उस पर ईश-वचनों के साथ यदि खिलवाड़ करते हैं, तो हमारा अन्जाम क्या होगा?

[5-E] इस्लाम में बुतपरस्ती क्या है?

'इस्लाम' नाम से इंगित मज़हब में बुतपरस्ती, गैर-मुसलमान, ईमानवाले, मोमिन, काफिर और मुसलमान जैसे अनेक शब्दों का प्रचलन है। इन शब्दों के भी सत्य अर्थ समझने में हम सबने काफी गम्भीर भूलें की हैं। बुत का सामान्य शाब्दिक अर्थ किसी मूर्ति या शक्ल-सूरत वाले वस्तु से लगाया जाता है। संसार की सामान्य भाषा में बुतपरस्ती अर्थात मूर्ति पूजा का भावार्थ लिया जाता है। किन्तु ईश्वरीय अध्यात्म या इस्लाम के तसव्वुफ में अपनी इन्द्रिय तुष्टिकरण (नफ्सपरस्ती) को 'बुतपरस्ती' माना गया है। हमारी ईच्छाएं, दुनियां की हविश, अहंकार जैसी इन्द्रिय से जुड़ी समस्त वस्तुएं बुत हैं। ईश-पूजा या नमाज-इबादत में यदि दुनियां की कोई चिन्ता, कष्ट, उलझन के विचार आ-जा रहे हैं, तो ऐसे विचार 'बुत' है। यदि उन विचारों का पूर्ण परित्याग करके ईश-पूजा नहीं की गई, तो हमने 'बुतपरस्ती' की। अथवा हम बुतपरस्ती करते हैं। सनातनधर्मी यदि मूर्तिपूजा करते हैं, तो ध्यान से विचार करें, वे किसी भी मूर्ति की संज्ञा ईश्वर, परमेश्वर, गॉड से नहीं देते। अगर वे किसी भी मूर्ति या बुत को 'ईश्वर' कहते, तब तो यह माना जाता कि वे 'बुतपरस्ती' करते हैं। मूर्ति के समक्ष जो भी पढ़ा जाता है, वह स्तुति है, न कि ईश्वर की पूजा-इबादत। इस सत्यता के आधार पर सनातनधर्मी लोगों के यह कार्य 'बुतपरस्ती' या 'मूर्ति को ईश्वर समझकर पूजा करना' नहीं होता। तमाम हिन्दू बन्धु तो बिना किसी मूर्ति के ईश-पूजा में लगे रहते हैं। काबे के बुत लात, मनात, सअद आदि को उनके मानने वाले ईश्वर मानकर पूजते थे। वे ईश्वर मानकर पूजते थे। इसलिए उन्हें रोका गया कि तुम्हारे बुत, ईश्वर नहीं हैं। प्रत्यक्ष और मन के अप्रत्यक्ष बुतों को ईश्वर मत मानो। यह पूजा-कार्य उस एक

ईश्वर की पूजा नहीं है। इस्लाम के ईल्मे तरीकत (आध्यात्मिक योग मार्ग) में मुरीद को ईश-जाप के विभिन्न श्रेणियों से गुजरने के बाद अपने 'सद्गुरु' या 'कामिल पीर' के चेहरे का ध्यान करने के लिए नियम बताए गए हैं। वह जुबान से जाप, हृदय से जाप तथा आत्मा से जाप करने के बाद अपने 'पीर' का मुराकबा या ध्यान करते हैं। क्या इस नियम में 'पीर की सूरत का ध्यान' बुतपरस्ती है? शिष्य या मुरीद ने ईश्वर की पूजा-इबादत किया, उसके बाद वह 'ईश्वर' की जगह 'पीर' के चेहरे का ध्यान क्यों करता है? प्रत्यक्षरुप में तो यह प्रक्रिया 'बुतपरस्ती' दिखाई दे रही है, परन्तु इस कार्य-पद्धति में पीर को ख़ुदा मानकर या ख़ुदा कहके कोई इबादत नहीं की जाती, इसलिए यह प्रणाली 'बुतपरस्ती' या गैर-ख़ुदा को पूजना अथवा ख़ुदा में पीर को शरीक करना नहीं हुआ।

किसी भी धर्म या आंध्यात्मिक कर्म के पीछे वास्तविकता क्या है? बिना सूक्ष्म दृष्टि से जांच-परख किए यदि हम कोई धारणा बनाते हैं, तो यह धारणा हमारी अपनी समझ का परिचायक है, न कि किसी भी धर्म-मजहब के कथन या निर्देश का सत्य आशय है। ईश्वर के सिवा किसी भी व्यक्ति, महापुरुष, सन्त, वली, औलिया या साधु, महात्मा, दरवेश, पीर, सद्गुरु, फकीर को ईश्वर मान कर उसकी पूजा करना ही 'कुफ़्र' कहलाता है। जो ऐसा करेगा, उसी को 'काफ़िर' कहते हैं।

यह स्पष्ट हो रहा है कि काफिर की परिभाषा में हमारे हिन्दू बन्धु या सनातन धर्मी नहीं आते। क्योंकि वे एक ईश्वर को मानते हैं तथा उसी की पूजा करते हैं। नाम और भाषा के अन्तर के कारण उर्दू, अरबी, फारसी भाषा के जानकार यह नहीं समझ पाते कि सनातन धर्म के हिन्दू भाई किसकी पूजा करते हैं या किसकी स्तुति। स्तुति और पूजा में भारी अन्तर है। सामान्य स्तर पर हर धार्मिक क्रिया-कर्म को हम 'पूजा' कहके ही सम्बोधित करते हैं। जबकि पूजा वास्तव में उसी एक पवित्र ईश्वर की ही की जाती है।

मिलाद शरीफ या ईद मिलादुन्नबी के कार्यक्रम में ईश-ग्रन्थ का पढ़ना, ईश्वर की प्रशंसा करना तथा ईश्वर के पैगम्बर हजरत मुहम्मद सललललाहो अलैहे व सल्लम पर दरुदो-सलाम का नज़राना पेश करना, यह ईश्वर की पूजा नहीं है। यह तो ईश-नबी की प्रशंसा और सम्मान है। ईश्वर के विभिन्न नामों में से किसी भी नाम जैसे अल्लाह, ईल्लल्लाह, लाईलाहअ ईल्लल्लाह, या हईयो या कईयूम, या रहमान, या रहीम, या वहाबो अथवा ओम्, हरिओम्, नारायण, ओम नमः शिवाय आदि का जप-तप करना ईश-पूजा में ही सम्मिलित है। इस्लामधर्मी नमाज और जिक्र-अजकार को 'इबादत' शब्द से भी इंगित करते हैं।

[5-F] गैर–मुसलमान कौन है?

हम कुरआन के हाफिज हैं। हम मुफ्ती हैं और आलिम हैं। हम मौलाना या अल्लामा हैं। मगर हमें स्वयं यह जांच करनी होगी कि हम मुसलमान हैं या गैर–मुसलमान हैं। हमें अपने को मोमिन कहने के पूर्व भी अपना आत्म–परीक्षण करना होगा। यही दशा वेदान्ती, धर्माचार्य, शंकराचार्य, धर्म गुरु, सद्गुरु आदि की है। वे अपने आपको परखें क्या वे पहले सच्चे मुसलमान हैं? क्या वे मोमिन हैं? हमारे फादर, विशप भी परखें अपने आपको। अरबी भाषा में ईश्वर–वाणी है– "ला ईलाहअ ईल्लल्लाह, ईसा रुहुल्लाह।" अर्थात– नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के और हजरत ईसा अलैहिस्सलाम ईश्वर की रुह हैं। क्या इसी अर्थ–भाव की ईश–पूजा किसी भी भाषा में जुबान एवं दिल से हमारे जेसस क्राईस्ट पैगम्बर के अनुयायी पढ़ते हैं। अगर हां, तो वह मुसलमान हैं। मसीही यदि वे अपने को बताते हैं, तो इसका मतलब मात्र यह है कि वे हजरत ईसा पैगम्बर के अनुयायी हैं। अगर उन्हें मुसलमान शब्द से इंगित किया जाए तो यह अर्थ निकलता है कि वे एक ईश्वर के दिल, जुबान से पूजक हैं तथा हजरत ईसा को ईश्वर का पैगम्बर दिल–जुबान से कुबूल करते हैं। मुसलमान शब्द ईश्वर और ईश–नबी के प्रसंग में सार्थक है। केवल मसीही या मूसवी या श्रीराम मार्गी अथवा श्रीकृष्ण मार्गी आदि कहने से मात्र ईश्वर के उक्त पैगम्बर का अनुयायी होने का बोध होता है।

पैगम्बर हजरत मूसा अलैहिस्सलाम के दौर में उनके अनुयायी अरबी भाषा में अगर ईश–पूजा करते थे, तो यह पढ़ा करते थे– "ला ईलाहअ ईल्लल्लाह, मूसा कलीमुल्लाह।" अर्थात– नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के। हजरत मूसा अलैहिस्सलाम (मोजेस) ईश्वर से वार्तालाप करते हैं।

हजरत मूसा पैगम्बर के अनुयायी इसी ईश–वाणी को जिस भाषा–शब्द में पढ़े, मगर उन्हें हृदय और जुबान दोनों से पढ़ना होगा। इसी प्रकार ईश्वर ने अपने हर पैगम्बर, नबी, रसूल, तीर्थंकर, ऋषि आदि को अपनी पूजा–इबादत का मूल महामन्त्र (कल्मा)– "ला ईलाहअ ईल्लल्लाह' (नहीं कोई पूज्यनीय, ईश्वर के सिवा) ही बताया। भाषा, शब्द कुछ भी रहा, पर सारतत्व यही था कि ईश्वर एक है तथा वही पूज्यनीय है। ईश्वर के सिवा शेष जो कुछ भी है, वह पूज्यनीय नहीं है। ईश–दूतों ने संसार को उसी एक महान तथा सर्वशक्तिमान ईश्वर की पूजा–इबादत का गुर सिखाया।

हमारे 'मुसलमान' शब्द कहने से शायद धर्म–विद्वानों में यह मतभेद उठे कि सब लोग या भिन्न–भिन्न धर्म के मानने वाले 'मुसलमान' नहीं कहला सकते हैं। वह यह भी कह सकते हैं कि 'मुसलमान' शब्द का सम्बोधन हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को पैगम्बर मानने वालों के लिए है। यह शब्द हजरत ईसा, हजरत मूसा, हजरत नूह या श्री राम या श्री कृष्ण आदि नबी, पैगम्बर, अवतार के मानने वालों के लिए गलत है।

एक ईश्वर की पूजा के साथ जो श्री राम, श्री कृष्ण आदि को माने, वह सनातनी, जो हजरत ईसा को माने वह ईसाई, जो हजरत मूसा को माने वह पारसी है। यही मान्यता प्राचीन काल से विश्वसमाज ने ग्रहण किया है। वह पागल ही होगा, जो हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के मानने वाले 'मुसलमान' को सभी धर्म वालों के साथ 'मुसलमान' कहे। अगर सभी 'मुसलमान' हैं, तो फिर हमारे विभिन्न धर्मों की मान्यताएं दुष्प्रभावित होती है। सनातनी, ईसाई, पारसी, बौद्ध आदि सारे धर्म मानने वालों को 'मुसलमान' बताना, यह तो सरासर हमें अपने-अपने धर्मों से वंचित करने की साजिश लगती है।

आईए- इस शब्द 'मुसलमान' पर हम एक बार फिर विचार कर लें। हम यह भी विचार कर लें कि जिसे परमेश्वर, अल्लाह, प्रभु, निरन्जन आदि अनगिनत नामों से हम मानते और पूजते हैं, उसके धर्म-मजहब का वास्तविक नाम क्या है? हमें यह चिन्तन भी करना होगा कि श्री राम, श्री कृष्ण, श्री आदम, श्री ईसा, श्री मूसा और श्री मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम आदि यदि ईश-दूत हैं, तो इन ईश-दूतों का धर्म- मजहब वास्तव में क्या है? हमें यह भी कोई बताए कि ईश्वर का वास्तविक धर्म इस्लाम है या सनातन अथवा बौद्ध या ईसाई? हमें यह भी जानना होगा कि सारे ईश-दूतों का सर्वप्रिय धर्म क्या है? क्या ईश्वर-अल्लाह अलग-अलग हैं, जो ईश-दूतों के माध्यम से अलग-अलग अपना धर्म या मजहब भेजते हैं? क्या एक ईश्वर द्वारा अनेक पूजा अथवा अनेकानेक ईश-सिद्धान्त या ईश-आदेश की सम्भावना है? ईश-दूतों के आगमन काल में जो परिस्थितियां रही है, ईश्वर के वचन उन अवसरों पर उक्त परिस्थिति के निवारणार्थ भिन्न-भिन्न तो हो सकती हैं, परन्तु ईश्वर-अल्लाह एक है, वही पूज्यनीय है। ईश-दूतों ने हमेशा उसी एक ईश्वर को पूजने का ढ़ंग, अपने प्रकट काल के लोगों में बताया है।

प्रमाणित हो रहा है कि ईश्वर जब एक ही है, तो ईश-धर्म एक ही होगा। हम सम्बोधन के लिए सनातन, ईसाई, पारसी, बौद्ध कहें या इस्लाम। ईश-दूत भी सभी एक ही हैं, क्योंकि उन्हें उसी एक ईश्वर-अल्लाह ने भेजा है। केवल समय, काल के अनुसार उनके नाम हमें अनेक दिखाई देते हैं। उस एक खुदा-रब ने अपनी सत्यता मानव समाज को बताने के लिए बारम्बार अपने अनेक दूतों को अनेक स्थानों पर भेजा। समयानुसार ईश-दूत अनेक नामों से आए, पर वे उसी एक ईश्वर का सन्देश, आदेश व निर्देश लाए। जो ईश-दूत जिस स्थान पर आए, वह वहां की वेशभूषा और भाषा, संस्कृति के अनुसार ईश-सेवा कार्य में लगे रहे। जब वे ईश्वर की सत्यता मानव समाज तक पूरी तरह पहुंचा दिए, फिर ईश्वर ने उन्हें अपने पास बुला लिया। यह ध्यान रखें कि ईश-दूत पैदा नहीं होते, उन्हें ईश्वर ने भेजा है। भेजनेवाला ईश्वर है और वही उन्हें अपने पास भी बुला लेता है।

मनुष्य रुप में आए ईश-दूतों की पैदाईश या मृत्यु का प्रसंग, हमें सामान्य मनुष्यों के जीवन-मृत्यु के समान दिखता है, पर वास्तव में वे सारे ईशदूत साधारण मानव से अतिसाधारण एवं अतिविशिष्ट हैं। वे मनुष्य योनि में मात्र मनुष्यों को ईश-पूजा एवं ईश-निर्देश देने आते रहे, ताकि मनुष्य समाज उन्हें देखकर उनके सम्पर्क में आ-जा सके। वह पूजा, नमाज, ईश-प्रार्थना किए ताकि लोगों को ईश-पूजा करना समझा सकें। जो उन्हें ईश-दूत न मानें, उनसे कह दें कि मैं भी तुम्हारी तरह मानव या बशर हूं। आओ, हम तुम एक साथ मिल कर उस पवित्र ईश्वर की पूजा करें। वे जब चिल्लाएं कि मैं ईश्वर, गॉड या निरंजन का बन्दा हूं तो ईश-दूत ऐसे लोगों को अपना बनाने के लिए कहते रहे कि मैं भी तो ईश्वर का बन्दा हूं। तुम सभी उसी एक मालिक के बन्दे हो। आओ जब हम सब उसके बन्दे हैं, तो उसकी बन्दगी भी ठीक तरह से करना सीख लें।

मनुष्य रुप में अवतरित ईश-दूतों ने कभी अपने आपको ईश-बन्दों के समक्ष अपनी ईश-पहुंच या ईश-सम्बन्धों की चर्चा गर्व या अहंकार से नहीं की। वे ईश-बन्दों के तिरस्कार, जुल्म, जफा, क्रोध, चुनौती सभी कुछ झेलने के बाद यही कहते रहे- "ऐ ईश्वर, तू इन पर दया करना। हमने इन्हें क्षमा किया, तू भी इन्हें क्षमा कर देना। यह तेरे ईश दूत को नहीं पहचानते हैं ---।"

एक ईश-दूत आए, चले गए। दूसरे आए, तीसरे आए। इस प्रकार युग, वर्ष के अन्तराल ने कहीं उनके सन्देश को भुला दिया गया तो कहीं कुछ याद रखा गया। कहीं कुछ अपनी बुद्धि से ईश-सन्देश में मानव रुपी विद्वानों ने मनमानी फेर-बदल भी किया। ईश्वर को अपने सत्यधर्म की सत्यता मानव में पुनःस्थापित करने हेतु बारम्बार नए-नए ईश दूतों को भेजते रहना पड़ा।

इस तरह ईश्वर ने अपने लोकों में एक लाख चौबीस हजार कम या ज्यादा अपने ईश-दूतों को भेजा। ध्यान रहे, ईश्वर ने ईश-दूतों को पैदा नहीं किया, बल्कि वह अपने दूतों को दुनियां में अपनी सत्यता बताने के लिए भेजा। मानव समाज में प्रत्यक्ष रुप से प्रथम ईश दूत हजरत आदम हैं, जो बिना मां-बाप के दुनियां में आए। तमाम ईश-दूत दुनियां के लोगों को अपने सन्निकट रखने के लिए माता-पिता के माध्यम से प्रकट हुए। ऐसे ईश दूत प्रकट होने के बाद नवजात शिशु दिखें या किशोर अथवा युवा या वृद्ध, परन्तु उनमें ईश-शक्ति तथा ईश-बुद्धि-ज्ञान प्रकट काल से ही रहती है। श्री कृष्ण जी का बाल्य जीवन हो या हजरत ईसा या हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम का, इनमें आम शिशुओं या किशोरों का बचपन नहीं मिलता। जहां हम मनुष्य रुपी ईश दूतों को ईश्वर द्वारा भेजा जान जाते हैं, वहीं आश्चर्य भरी हमारी शंकाएं समाप्त हो जाती हैं।

ईश-दूत को ईश्वर ने भेजा। ईश्वर का सन्देश फिर समस्त मानवजाति के लिए अलग-अलग कैसे होगा? सन्देशदाता एक है, उसके सन्देशवाहक अनेक हैं, मगर सारे तो उसके ही हैं। फिर सन्देशदाता के सन्देश में पूर्व के सन्देशवाहकों के ईश-कथन में अन्तर का प्रश्न कहां है? ईश्वर का

मूल पूजा-प्रार्थना, इबादत के सन्दर्भ में मूल सन्देश एक ही होगा। ईश दूतों के समय, काल में जो जन-प्रश्न या जन-परिस्थितियां आती रहीं, उस काल में ईश-सन्देश या उस समय की सन्देश-वार्ता निश्चित रुप से भिन्न-भिन्न होगी। यह ईश सन्देश में भिन्नता, ईश दूतों के कार्यकाल की सत्यता प्रमाणित करती है।

अगर हम ईश-वचन संग्रह कुरआन को केवल अरब या अरबी भाषियों के लिए मानें, तो उस परमेश्वर के वचन से समझना होगा कि ईश्वर ने अपना निर्देश मात्र अरबी भाषियों के लिए ही दिया है या समस्त मानवजाति के लिए। पर कुरआन में अनेक स्थानों पर ईश्वर अपने को सारे आलम (सृष्टि) का रब कहता है। सारी दुनियां के लोगों और अदृश्य प्राणी जिन्नात को भी कहता है कि यह कुरआन सभी के लिए है। मेरी पूजा करो तथा मेरे आदेश-निर्देश पर चलो। इसी कारण ईश-वाणी को जिसने भी समझा, वह ईश-पूजा में उसी अनुरुप लगा। जब कुरआन का अल्लाह, वही सर्वशक्तिमान परमेश्वर ही है, फिर 'मुसलमान' या 'मोमिन' शब्द किसी एक समुदाय या मात्र कुरआन के मानने वालों के लिए ही सीमित नहीं हो सकता। हम ध्यान नहीं देते हैं कि वेद या रामायण या गीता या उपनिषद या बाईबिल, तौरेत, जब्बर आदि में जो भी ईश-वचन हैं, मात्र हिन्दू, सनातनी, ईसाई, पारसी या किसी भी वर्ग विशेष के लिए ही अधिकृत नहीं है। अगर ईश्वर का सन्देश है, तो सम्पूर्ण मानवजाति के लिए होगा। सच्चाई है यही, मगर हम इसे स्वीकार नहीं कर पाते हैं। हम अगर ईश्वर को सारे सृष्टि का मालिक मानते हैं, तो ईश-वचन जहां या जिस रुप में प्रमाणिक ढ़ंग से मिलता है, उसका समस्त मानव समाज को सम्मान करना पड़ेगा। क्या अब भी हम यही कहेंगे कि कुरआन का 'मुसलमान' अन्य खुदा के बन्दे में नहीं हो सकता? कुरआन के अनुसार ईश्वर के नबी, पैगम्बर पर यकीन रखना तथा उस एक रब की ही पूजा करना, ईश्वर-पूजा में बुतपरस्ती या शिर्क न करना, क्या किसी भी ईश्वर के बन्दे को शब्द 'मुसलमान' से सम्बोधित करने हेतु पर्याप्त नहीं है।

शायद 'मुसलमान' के लिए कल्मा तैय्यब और अन्य पांच कल्मे पढ़ना व मानना, नमाज, रोजा, जकात, हज भी जरुरी है। कल्मए तैय्यब को ही 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह', अरबी भाषा में कहा गया। अरब के लोगों को उनकी मातृभाषा होने से यह कल्मा समझ में आसानी से आ गया। मगर सचमुच पढ़ा कैसे जाएगा, जब तक ईश-दूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने नहीं बताया, वे जुबानी पढ़ते रहे, दिल से न पढ़ सके। पता यह चला कि ईश-वाणी, हर मानव जुबान से तो पढ़ लेगा, मगर जिस तरह पढ़नें से लाभ मिलेगा, वह सत्यता ईश-दूत ही समझा सकते हैं।

कल्मा तैय्यब को यदि हिन्दी भाषा में समझने के ऐतबार से लिखा जाए तो यह होगा- "नहीं कोई माबूद या पूज्यनीय सिवाए उस एक ईश्वर के। हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के रसूल या ऋषि या सन्देशवाहक हैं।" इसको जो पढ़े उसे मुसलमान कहा जाता है।

6 - यजीद लानती का जेहाद

इस्लाम मजहब की सच्चाई हजरत इमाम हुसैन पुत्र हजरत अली उर्फ सरकारे शेरे खुदा के चरित्र एवं उनकी जीवन-शैली में देखी जा सकती है। इस्लाम मजहब का नकली स्वरुप यजीद, इब्ने जियाद, शिमिर, इब्ने मुलजम आदि नामों के नकली मुसलमानों में आप पा जाएंगे। महाभारत और लंका-दहन के सत्य रक्षार्थ युद्ध में, ईशदूतों के विरुद्ध कोई इस्लामधर्मी शामिल नहीं था, उसी तरह करबो-बला के जंग में हजरत इमाम हुसैन हुजूर के विरुद्ध नकली मुसलमान थे। उनमें कोई सनातनधर्मी अथवा ईसाई, पारसी नहीं था। यजीद का जेहाद था, उसके द्वारा निर्देशित असत्य इस्लाम को जो न माने उनका कत्ल करना और कराना। सच्चे इस्लाम का जेहाद था, अपनी इन्द्रिय और ईच्छाओं का परित्याग करके सच्चे ईश्वर या सत्य इस्लाम को पाना। यही सत्य जेहाद, सूफी-सन्त, पीर, वली, दरवेश को जन्म देते हैं। जो इस्लाम के सच्चे जेहाद से दूर हटकर खून-खराबा के आमानवीय कुकृत्य में संलग्न हैं, वे तो यजीदी जेहाद के अनुयायी हैं। उनका सच्चे इस्लाम से यजीद की भांति कोई रिश्ता-नाता नहीं है। यजीद लईन मर चुका, पर उसके अनुयायी नकली मुसलमान के रुप में आज आतंकवादी बनकर ईश्वर-विरोधी कुकर्म में लगे हैं।

7 - गैर-इस्लामी जेहाद ?

ईश-सन्देश रुपी संग्रह कुरआन में एक उसी ईश्वर, गॉड का नाम अल्लाह, रब, रहमान, रहीम जैसे अनेक नाम अरबी भाषा में आए हैं। अब यदि कोई उसी एक सर्वमहान ईश्वर, गॉड का पूजक है, तो अरबी भाषा के अल्लाह या रब से बैर क्यों रखेगा? अरबी भाषा का अल्लाह या हिन्दी भाषा का ईश्वर अथवा अंग्रेजी भाषा का गॉड कहे कि मुझ तक पहुंचने के लिए या मेरे वास्ते जेहाद करो। तो इसका अर्थ यह कौन बताता है कि इस्लामधर्मी के सिवा समस्त मानवजाति का कत्ल करो, यही जेहाद है। यदि यह ईश वचन है कि ईश्वर या अल्लाह के वास्ते जेहाद करो। इसका अर्थ यह तो नहीं होता कि अल्लाह किसी धर्म सूचक का नाम है तथा उस धर्म-सूचक के अतिरिक्त जो भी ईश्वर, प्रभू, निरन्जन, गॉड कहते हैं, उन्हें अल्लाह के वास्ते या उन्हें अल्लाह के लिए हत्या करो। इस कुकर्म से तुम्हें अल्लाह मिल जाएगा।

क्या कोई तथाकथित जेहादी यह बताएगा कि गैर-इस्लामधर्मी के कत्ल करने से उसे अल्लाह की प्राप्ति हुई है? फिर जेहाद के वास्तविक सन्देश का दुरुपयोग या ईश सन्देश की छवि धूमिल करने-कराने की योजना में वे कौन से तत्व शामिल हैं। यह निस्सन्देह विश्वस्तर पर चिन्तनीय विषय

है। ईश्वर या अल्लाह के रास्ते में जेहाद करो। ईश्वर को यदि पाने की ईच्छा है तो उस तक पहुंचने वाला रास्ता तुम्हें जेहाद करने से मिलेगा। ईश्वर तक पहुंचने का जेहाद है, अपने अन्दर के शैतानों का सफाया। इन शैतानों के मारने का राईफल या ए0 के0 47 अथवा आत्मघाती बम का नाम है– 'लाईलाह ईल्लल्लाह' (नहीं कोई पूज्यनीय, ईश्वर के सिवा) जब इस हथियार से कोई बन्दा अपने दिल, मन, विचार और मस्तिष्क के गैर–मुसलमानों को मारेगा, तो वह जेहाद में है। वहीं जेहादी है। गैर–मुसलमान, उसके नफ्स या इन्द्रिय के शैतान हैं। फिदाईनी हमले का यह जेहाद है कि दिल की जुबान से 'लाईलाहअ' के शत्रुओं को 'ईल्लल्लाह' के बम ब्लास्टिंग से मार गिराओ। मगर हम तो फिदायनी जेहाद, खुदा के बन्दों की निर्मम हत्या के लिए कर रहे हैं। इस जेहाद की पढ़ाई यजीदी–इस्लाम का इब्लीस ही कराता होगा। **खुदा को पाने वाला जेहाद आज दुनियां में नृशंस हत्या के खून में डूब चुका है।** अल्लाह ने हमें अपने इन्द्रिय के शैतानों को खत्म करने के लिए जेहाद का हुक्म दिया। उसने यह भी बताया कि 'ईल्लल्लाह' पैट्रियाट मिसाईल है। अगर दुनियां की स्कड मिसाईलें मन–विचारों से छूटती रहती हैं, तो उन्हें 'ला ईलाहअ' के रिमोट से पैट्रियाट मिसाईल (ईल्लल्लाह) चालू करके खूब फायरिंग करो। मगर हाय रे, मेरे खुदा के पागल दुश्मन, तुमने तो अपने नफ्सी शैतान का बारुद, खुदा के बन्दों पर ही डालना शुरु कर दिया। उस एक अल्लाह को पाने की जगह, तुमने अल्लाह के नाम पर यह जहन्नुमी–जेहाद जरुर किसी यजीदी ओलमा या ओलमाए–सू से सीखा है।

आश्चर्य है कि वह कौन सा अरबी या नकली इस्लामी विद्वान है, जिसने 'ईलाहअ' को 'ला' नहीं करके यह पढ़ाई आरम्भ की 'है सभी पूज्यनीय, मगर ईश्वर नहीं।' वह कौन सा आलिम या इस्लामी धर्माचार्य है, जिसने जेहाद का भावार्थ यूं लगाया कि 'कत्ल करो सभी को, जो अल्लाह नहीं कहते।' और 'मारो उन सभी को, जो नमाज नहीं पढ़ते।' अगर जेहाद का स्वरुप सचमुच यही है, तो इसका संचालक निश्चित रुप से इस्लाम या ईश्वर रुपी अल्लाह का बन्दा नहीं है। क्योंकि ईश्वर–अल्लाह को पाने के लिए किसी भी मानव की हत्या नहीं की जाती। हर मानव को जेहाद तो अपने नफ्स या इन्द्रिय से करना है। हम जेहाद अपने अन्दर के बुतों से करते हैं। वही बुत तो गैर–मुसलमान हैं। वही बुत ईश्वर के गैर हैं। इन्द्रिय या नफ्स की ईच्छाएं इसलिए गैरुल्लाह हैं, क्योंकि ईश्वर इन गैरों के साथ नहीं है। इन गैरों के साथ जो नहीं, वही पवित्र है। जो इनके साथ है, वही अपवित्र है। इसलिए अपने अपवित्र गैरों के निमूर्लन के लिए जेहाद करो। यही ईश्वर–अल्लाह को पाने का रास्ता है।

मगर इब्लीसी अनुवादक जेहाद का अर्थ यह बताता है कि जो ईश्वर, गॉड को माने, परन्तु अल्लाह को न माने, वह गैरुल्लाह है। यानी वही अल्लाह का गैर है। जो अल्लाह न कहे और ईश्वर,

गॉड चिल्लाए, वह गैर-मुसलमान है। जो ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं, कहता हो, मगर 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' न कहे, वही काफिर है। ऐसे सभी लोगों से जेहाद करो। अपने अन्दर के गैर, बुत, कुफ्र को खूब ताकतवर बनाओ ताकि वह शैतानियत का नग्न ताण्डव करते रहें। अल्लाह शब्द को जेहाद से कायम रखने के लिए उनकी हत्याएं करो, जो ईश्वर, प्रभु, निरन्जन, गॉड या जय श्री राम या जेसस क्राईस्ट को याद करते हैं। यही है शैतानी जेहाद, जिसे इब्लीस का हर स्तर पर समर्थन हासिल है। शैतान हमारे पास है, वह जब ताकतवर बन जाता है तो इब्लीस के निर्देशन में पुण्यकर्म समझकर भयंकर पापाचार में संलिप्त हो जाता है। असली जेहाद या सत्य कुफ्र, शिर्क या गैर-मुसलमान या बुतपरस्त की सही परिभाषाएं हमारे दिल-दिमाग का शैतान हमें उल्टी पढ़ाता है। इब्लीस इसी गलत-समझदारी का लाभ उठाता है।

पवित्र जेहाद को खूनी-खेल बनाने में किस धर्म-शिक्षा का हाथ है? आखिर ऐसे दरिन्दों को किसी इस्लामी सेवा,संगठन ने आज तक इन्सान क्यों नहीं बनाया? यह प्रश्न आज विश्वमानव समाज की ओर से पूछे जा रहे हैं? निन्दा, भर्त्सना, प्रदर्शन और विरोध से खूनी-जेहाद क्या रुक सकता है? कत्तई नहीं। जो ऐसे कार्यों में लिप्त हैं, उन्हें बखूबी पता है कि हत्या या खून एक निर्मम गम्भीर अपराध है। इस अपराध को वह जानबूझ कर आतंक फैलाने के लिए करते हैं। जब तक उनका हृदय परिवर्तन नहीं होगा, जेहाद या विवाद के किसी भी नाम से वह ऐसी नृशंस हत्याएं करते रहेंगे? क्या यह सत्य नहीं है कि ऐसे कुकर्मों के लिए उन्हें मनचाही दौलत भी मिलती है? दौलत का रिश्ता ईश-धर्म या ईश-सेवा से तो नहीं होता? कामिल पीर लोभ, माया, ईच्छा आदि को ही 'नफ्स' कहते हैं। नफ्स का दूसरा नाम ही शैतान है।

इस प्रसंग में मशहूर सन्त सर विलियम जे0 थामस ने कहा- "हत्यारे जेहादी जिनकी हत्या कर रहे हैं, क्या वे निर्दोष लोग ईश्वर के बन्दे नहीं है? क्या उनके जीवन की ज्योति किसी मनुष्य के कारण प्रकाशमान है? मुसलमान अगर हिन्दू को मारे या हिन्दू मुसलमान को, इसमें मौत ईश्वर के बन्दे की होती है या हिन्दू-मुसलमान नामक नाम के सम्बोधनों की? यह उत्तर तथाकथित उन्मादी (जेहादी) क्या दे सकते हैं? हिन्दू या मुसलमान या ईसाई, पारसी आदि को मारा जाना हमने कैसे मान लिया जबकि ईश बन्दा ही ईश बन्दे को मौत के घाट उतार रहा है? शैतान जहां है, वहां इन्सानियत की कायमी क्या सम्भव है? शैतान की उपस्थिति शैतानियत की जननी है। शैतान की मौजूदगी में ईश-सेवा या धर्म-सेवा कार्य क्या हम सही कर सकते हैं? ईश्वर की शरण में यदि हम हैं, तो हम शैतान से पवित्र हैं। ईश्वर की शरण क्या है? हम नमाज, पूजापाठ या प्रेयर करने के समय को ईश्वर की शरण में होना मानते हैं। हम प्रवचन, तकरीर सुनने या धर्म ग्रन्थों के पढ़ने को ईश्वर की शरण में रहना समझते हैं। हम तीर्थ-यात्रा, हज, श्रद्धास्थली दर्शन को ईश कार्य अथवा पुण्य ईशकर्म मानते हैं।

क्या हमारी मान्यताएं इस प्रसंग में सत्य हैं? यह हमें विचारना होगा। सक्रिय इस्लामी सेवा संगठन अथवा कोई भी धार्मिक संगठन यह क्यों नहीं स्वीकार करता कि आतंकवाद में हिन्दू, मुसलमान या ईसाई नहीं मरते, मरता है तो ईश्वर का बन्दा? ईश-बन्दे, ईश-बन्दों के खून से अपने दामन को लाल न करें, इसके लिए क्या मजहब या धर्म के सेवा संगठनों या जमात के पास कोई हृदय-परिवर्तन उपाय है? संगठन या जमात की आधारशिला यदि पवित्र एक ईश्वर पर कायम होतीं, तो हर एक संगठन में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैनी, बौद्ध या पारसी आदि उपनामों की भरमार न होती। ईश्वर है, इसलिए ईश-बन्दा है। यह ईश-बन्दा, ईश-प्रदत्त सत्य मानव का नाम है। मगर हम उप-नामों के विवाद में ग्रसित हैं। इसीलिए ईश-सेवा कार्य के नाम पर केवल उपनाम संगठन या जमात सेवा आज चरम शिखर पर है। ऐसी ईश-अनाधिकृत सेवाएं भी दंगा-फसाद, मारकाट, बम-विस्फोट आदि आतंक को समय-समय पर जन्म दे सकती हैं? कारण केवल इतना है कि हमारा संगठन ईश अधिकृत नहीं है। हम जब ईश सेवा के नाम जमात या संगठन चलाते हैं, तो उसमें कहीं न कहीं स्वनाम सेवा या स्व अहंकार अथवा अन्तः इन्द्रिय सेवा लाभ शामिल होती है। यही अन्तः भावनाएं तो कामिल पीरों के बताए हुए प्रमाणित शैतान हैं। आखिर मानव-मानव जंग में इब्लीस को रुचि क्यों रहती है? उसे मानवता का खून होते देखने में मजा क्यों आता है? यह समझना कठिन नहीं है। ईश्वर ने जब प्रथम मानव की उत्पत्ति की थी, तो इब्लीस को यह आदेश दिया की तुम सजदा करो। ध्यान रहे, ईश्वर ने अपने बनाए प्रथम मानव हजरत आदम या एडम या श्री मनु के समक्ष झुकने के लिए उससे नहीं कहा था। ईश्वर ने उसे सजदा करने को कहा। इब्लीस अपने दम्भ में आया। वह ईश्वर के नूर से उत्पन्न फरिश्तों का उस्ताद था। उसे यह अभिमान हो गया था कि आग से उत्पन्न वह है। वह मिट्टी के मानव से शक्तिशाली है। उसने तत्काल ईश्वर के आदेश से इन्कार किया।

ईश आदेश की अवमानना में इब्लीस की सारी ईश पूजा निरस्त हो गई। वह मकबूले-बारगाह था। अब गैर-मकबूल हो गया। इब्लीस की यह दुर्गति मिट्टी से निर्मित प्रथम मानव के कारण हुई। इसलिए वह मानव और मानवता का तभी से दुश्मन बन गया। इब्लीस को यह महसूस होता है कि मानव निर्माण के कारण उसका मान-सम्मान, ईश्वर के सम्मुख कलंकित हुई है। इसलिए जिस मानव के सजदा न करने के कारण वह निष्कासित हुआ, वह ऐसे मानव को ईश्वर का प्रिय बनने नहीं देगा। इब्लीस इसी कारण ईश्वर की सत्यता से हर मानव को दूर करने का कार्य करता रहता है। वह ईश्वर के सत्य पथ पर चलने वालों को गुमराह भी करता रहता है।

जेहाद, कुफ्र, काफिर, शिर्क, बिदअत, बुतपरस्ती आदि की सत्यता से भी मानव को दूर कराने में इब्लीस की ही प्रमुख भूमिका है। लोग ईल्म लेते हैं, मगर अपने नफ्स के शैतानी फन्दे में फंसे होने के कारण इब्लीस के सुझाव पर चलने लगते हैं। मजहबी दंगा-फसाद, मस्जिद-मन्दिर उत्पात, धार्मिक

विवाद, धर्म-धर्म के मध्य मतभेद तथा कथित जेहादी आतंकवाद, धर्म-मजहब का जूनून, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि की अलग-अलग पहचान कराने में हमारे आन्तरिक शैतानों के साथ इब्लीस की भी रहनुमाई शामिल होती है। अगर हमारे अन्दरुनी शैतान मुर्दा हो गए, तो इब्लीसी-साजिश का वीभत्स रुप मानव समाज से समाप्त हो जाएगा।

इसलिए पहले अनिवार्य है कि हम अपने आन्तरिक राक्षसों की बलि चढ़ाएं। आन्तरिक राक्षस या शैतान की बलि चाकू, बम, बन्दूक या तलवार या लाठी-डन्डे से नहीं होगी। यह आन्तरिक राक्षस हैं, इनका बलिदान आन्तरिक शस्त्रं से ही सम्भव है। यह भूत-प्रेत, जिन-जिन्नात या भटकती आत्माएं भी नहीं है, जो यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र से इन्हें निष्क्रीय बनाया जाए। यह हमारे काफी बुद्धिमान और तर्कशाली बुत रुपी शैतान हैं। दिल के यह चतुर बुत हमें सुझाते हैं कि ईश्वर पूजा में लगे रहने से रुपए-पैसे कहां से आएंगे। यदि इन्द्रिय त्याग किया जाए तो समाज में मेरी नाक कट जाएगी। धन-सम्पदा नहीं, तो ईश्वर के भजन-कीर्तन से कार, फ्लैट, बंगला, सोफा क्या कोई आसमान से पाएगा। ह्रदय से परिवार का प्रेम निकाल दो, मोहमाया को फेंक दो, बस एकान्त में ईश्वर का नाम-जप करते रहो, *इस मूर्खतापूर्ण कार्य से तो हम अपने घर-संसार को भिखारी बना डालेंगे।* ऐसी नमाज, पूजा किस काम की जिसमें रिश्वत हराम, शराब-अय्याशी निषेद, छल-प्रपंच पाप हो। संसार में जीना है तो हमें चालू संस्कारों में जीना पड़ेगा। इन्द्रिय ईच्छा या मन की भावनाएं यदि मानव से समाप्त हो जाएं, तो फिर वह मानव भी क्या मानव रहेगा। ऐसे व्यक्ति तो इन्द्रिय शून्य हो जाते हैं, फिर वह समाज के लिए तो मुर्दा है। वह आदमी कैसा, जो धरती पर आए, मगर सुख-सुविधा का तिरस्कार करे। ह्रदय कहे कि ईश्वर की पूजा करो, नमाज पढ़ो, तो हम करते नहीं हैं। ह्रदय कहे कि थोड़ा मनोरन्जन कर लो, फिर सीरियल देख लेते हैं तो इसमें बुराई क्या है। जीवन को सुखमय बनाने के लिए इन्द्रिय त्याग तथा ईश पूजा दोनों के मध्य रहना चाहिए। ***अगर मानव बने रहना है तो फूर्सत के समय में ईश-पूजा के बारे में सोचो। यदि हर घड़ी ईश पूजा के चक्कर में रहे तो बीवी-बच्चे क्या घास खाएंगे?***

—देखा आपने यह है चतुर इन्द्रिय चिन्तन। यही है नफ्स का शैतान। इसके तर्क और बुद्धिवादी ज्ञान के सामने आज के दौर में क्या हम 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' (नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के) को जैसा ईश्वर चाहता है, क्या पढ़ पाएंगे? यदि ऐसे शैतानों को पाले हुए हम जी रहे हैं तो मेरा जुबान से कहना कि ईश्वर सर्वमहान है, ईश्वर सर्व पूज्यनीय है या ईश्वर सर्व प्रशंसनीय है, ये सारे कथन झूठे हैं या नहीं। इन्द्रिय रुपी शैतान अस्पष्ट भाषा में हमसे साफ कह रहे हैं कि ऐ मानव, ईश्वर पूज्यनीय है, तो पूज लो, मगर मन की ईच्छा का पूजन मत छोड़ना। धन, सम्पत्ति ही जीवन का मूलाधार है। ईश्वर पूजा त्यागने से कोई हानि नहीं है, अपने उक्त समय का धन संग्रह में सदुपयोग

करो। ईश्वर सर्वमहान है, सर्व प्रशंसित है, इसका इन्कार किसे है, मगर समाज में यदि मैं सर्वमहान नहीं हूं तो मेरा सर्वप्रशंसित होना सम्भव नहीं है। इसलिए सर्वप्रशंसा के कार्य करो इसी से सर्वमहान कहलाओगे।''

8 – सच्चे इस्लाम का जेहाद

जेहाद का अर्थ धर्म-युद्ध या ईश्वरीय सत्यता की रक्षा में युद्ध होता है। ऐसे युद्ध इस्लाम में जेहादे असगर (धर्म रक्षार्थ छोटा युद्ध) तथा जेहादे- अकबर (धर्म रक्षार्थ सबसे बड़ा युद्ध) नाम से दो प्रकार के हैं। ईश्वर के आदेश-निर्देश व ईश-सन्देशवाहक या पैगम्बर, ऋषि के बताए मार्ग पर चलने का नाम धर्म या मजहब है। धर्म का दूसरा नाम यदि ईश्वर की सत्यता कहें, तो गलत नहीं होगा। ईश मार्ग पर ईश-विरोधी को चलाने के लिए विषम परिस्थितियों में यदि युद्ध की जाती है, तो यह युद्ध जेहादे असगर है। मुसलमान नाम के आतंकवादी जब सत्य ईश धर्म पर ही कायम नहीं, तो उनका तथाकथित जेहादी कार्य, ईश्वर के प्रति या ईश्वर के लिए है ही नहीं। ऐसे में उनका ईश्वर के नाम पर जेहाद झूठा और पाखण्डी दुष्ट रीति है। उनके जेहाद का रिश्ता न कुरआन से है और न हदीस से। यह शुद्ध रुप से क्रूरतम हत्यारे हैं, जो ईश्वर-विरोधी कार्य करने में अपने शैतानी-नफ्स के नियन्त्रण में सक्रिय हैं।

हजरत पैगम्बर सल्ले अला व सल्लम हुजूर ने ईश्वर को पाने वाले के लिए अपने इन्द्रियों से युद्ध करने को जेहादे अकबर कहा है। ईश्वर को पाने हेतु जो अपने नफ्स से जंग करता रहे, वह सबसे बड़ा जेहाद करता है। ईश्वर के आदेश-निर्देश के विरुद्ध चलनेवाला यदि जंग करने पर आमादा हो तो उससे जंग करना, यह सबसे छोटा जेहाद है। आत्मघाती हमले, फिदाईनी हमले, बम-विस्फोट जो हुए या हो रहे हैं, उसमें मरने वाले न ईश्वर-विरोधी हैं और न पैगम्बर (ईशदूत) विरोधी हैं, फिर यह कोई जेहाद भी नहीं है और वे जेहादी भी नहीं है। उन्हें अपराधी भी कहा जाए तो यह सम्बोधन उनके कुकर्मों के लिए पर्याप्त नहीं है। यह इस्लाम के वह दुश्मन हैं, जो मुसलमान के रुप में ईश्वर के निर्देशन के विरुद्ध कुकर्म करते हैं तथा ईश्वर के सन्देश को दुनियां में अपमानित करते हैं।

'जेहाद' का वर्तमान स्वरुप इस्लाम विरोधी है। मुसलमान नाम के व्यक्ति यदि इस कार्य को पुण्य कर्म समझ रहे हैं, तो यह गम्भीर पापकर्म है। इस्लाम के विद्वान इस दिशा में आवाज बुलन्द करें। अवाम को वह बताएं कि अल्लाह ने जो जेहाद का हुक्म किया है, वह सच्चा जेहाद क्या है? बुतपरस्ती के जो मायनी और मतलब आज हम बना चुके हैं, उसे भी कुरआन और हदीसे-पाक की रौशनी में सही तरीके से दुनियां को समझानी होगी। कुरआन का जेहाद अगर उस एक पवित्र ईश्वर की तरफ

से है, तो ईश्वर अपने पूजक बन्दों को ही कत्ल करने का आदेश-निर्देश कैसे देगा? ईश-पूजा करने वाले समस्त बन्दे, ईश्वर के बन्दे हैं। जो भी ईश्वर, खुदा की पूजा-परस्तिश और इबादत में मशगूल है, वह खुदा की हुक्म की फरमाबरदारी कर रहा है। वह बन्दा ईश-आज्ञा पालन में है। जो ईश-आज्ञा का पालक है, उससे जेहाद (ईश हेतु युद्ध) कौन करेगा? हर जीव किसी न किसी ढ़ंग से खुदा की इबादत करते हैं, फिर जेहाद का हुक्म यदि अल्लाह के लिए जंग या ईश हेतु युद्ध ही मान लिया जाए तो ऐसे में किसी ईश-पूजक के साथ तथाकथित नृशंस हत्या रुपी जेहाद का कुकृत्य ईश्वरीय सत्यता के रक्षार्थ जेहाद नहीं है। महसूस हो रहा है कि जेहाद के आवरण में अपने निजी उद्देश्यों की पूर्ति हेतु नकली मुसलमान भयंकर पाप करने में संलग्न है। जिन इन्द्रियों को शमन करने हेतु हमें 'जेहादे अकबर' का निर्देश ईश्वर ने दिया था, वह कार्य हम भूल गए। हम यह भी भूल गए कि 'जेहादे अकबर' की शिक्षा-दीक्षा कहां से प्राप्त होगी? हमने यह भी जानने का प्रयत्न नहीं किया कि इस्लाम की वह शिक्षा क्या है, जिसके परिपालन करने से एक मामूली इन्सान, खुदा का वली और दोस्त बन जाता है। वह जेहाद क्या है, जिससे इन्सान मुसलमान से मोमिन बन जाता है? नमाज, रोजा में भी जेहाद है, मगर किससे? हज में भी जेहाद है, मगर किस के साथ? जिक्र-अज़कार या ईश नाम-जप में भी जेहाद की जरुरत है, मगर कहां और कैसे?

शब्द 'जेहाद' अगर सबका मालिक एक ने कहा है, तो यह किसी एक व्यक्ति या समुदाय के लिए नहीं होगा। सच्चाई यही है कि 'जेहाद' का परिपालन विश्व मानव जाति के लिए है। इस सन्दर्भ में विश्वचर्चित सन्त सर एडम्स स्मिथ के विचार अनुकरणीय हैं। आप कहते हैं- "जब हम नमाज के लिए खड़े होते हैं, तो हमें अपने दिल-दिमाग से दुनियावी ख्यालात और उलझनें निकाल फेंकनी होंगी। खुदा के सिवा गैर-ख्यालात का निकाल फेंकना, नमाजी बन्दे के लिए जेहाद है। जब हमने उस पाक परवरदिगार के लिए इबादत की नीयत बनायी है, तो उस इबादत के मध्य खुदा के सिवा दूसरे विचारों का रहना ही कुफ्र है। **इसी कुफ्र को हटाने या मिटाने या नष्ट करने का नाम जेहाद है।** ईश्वर नाम-जप या जिक्र-अजकार के वक्त भी ईश्वर-अल्लाह के सिवा किसी भी शय का ख्याल पहले हटाना अनिवार्य है। यह हटाने या दूर करने की प्रक्रिया ही जेहाद है। इसीलिए इसे सर्वमहान जेहाद कहा गया। **दुनियां का कोई भी व्यक्ति हो, अगर वह अपने नफ्स या इन्द्रिय के साथ जेहाद नहीं करता, तो उसकी पूजा, नमाज और इबादत सही कैसे मानी जाएगी। नफ्सकुशी या इन्द्रिय त्याग कराने वाली तलवार का नाम जेहाद है। यह वह गुप्त तलवार है, जिससे अपने इन्द्रिय की लालच, द्वेष-राग, ईच्छा आदि की बलि चढ़ाई जाती है।** जो इस कार्य में सफल हुआ, वही ईश-पूजक, ईश-योद्धा या मुजाहिद है। ईश-धर्म कोई हो, अगर इस ईश्वरी कानून का

परिपालन में रहकर हम ईश-पूजा या नमाज या इबादत में लगे हैं, तो हम मुजाहिद हैं, हम सचमुच ईश-योद्धा हैं।"

सर एडम्स स्मिथ ने रोजा-व्रत के सन्दर्भ में भी कहा- "रोजा, जिसे निर्जल व्रत भी कहते हैं, वह ईश्वर के लिए है। रोजा रहने की नीयत हमारी बन गई तो सिर्फ भूखे रहने से रोजा का लक्ष्य पूर्ण नहीं होगा। हमें रोजे में भी जेहाद की जरुरत है। जुबान को झूठ, फरेब, दगा, अश्लीलता आदि से जेहाद करके बचाना होगा। नजर को गन्दी चीजों से रोकना होगा। पैर को ऐसे स्थानों से दूर रखना होगा, जहां ईश-विरोधी कार्य होते हैं। रोजे के दौर में नफ्स तरह-तरह की ख्वाहिशें जरुर करता है, इसे जेहादी तलवार चलाकर नष्ट करना होगा। तब हमारा रोजा, रोजे की ईश-मंशा के अनुकूल होगा। **ईश्वर की पूजा-इबादत सही करने-कराने में जेहाद एक महामन्त्र है।** जिसकी पहचान खुदा ने अरबी भाषा में 'लाईलाहअ इल्ललल्लाह' कह के की है। अरबी में 'ला' के माअनी 'नहीं' के होते हैं। नफ्सकुशी या इन्द्रिय त्याग यदि जेहाद से हम में आ गई तो- 'इल्ललल्लाह' यानी- ईश्वर-अल्लाह ही पूज्यनीय है, यह सत्यता हममें आने लगेगी। खुदा ने अपनी अरबी-वाणी में 'ला-ईलाहअ' कहा। यही प्रारम्भ की वाणी है। यानी- नहीं कोई पूज्यनीय। ईश्वर के सिवा अन्य विचार या कार्य अगर इस ईश-वाणी के पढ़ने में मौजूद है, तो आगे 'ईललल्लाह' का पढ़ना हमें लाभप्रद नहीं होगा। यह 'ईलाहअ' ही दुनियां है, वही बुत है, यही हमारी ईच्छाएं, कामनाएं नाना-नाना प्रकार की मूर्तियां हैं, इन्हें 'ला' करने के बाद ही 'इल्लल्लाह' तक पहुंचा जा सकता है। 'ला' (नहीं) करने के लिए 'ईलाहअ' (कोई पूज्यनीय या ईश्वर के सिवा अन्य) के साथ जेहाद करना होगा। जहां मन, विचार, दिल और दिमाग से ईश्वर के सिवा अन्य की छवि हटाई गई, तो आगे- 'ईल्लल्लाह' ही बचता है। यानी हमने उस एक अल्लाह की ही पूजा की। अल्लाह को पूजने के लिए जेहाद अनिवार्य है। 'लाईलाहअ इल्लल्लाह' यानी- नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए अल्लाह के, पढ़ने के लिए जेहाद हमें करनी होगी, यही वो जेहाद है, जिसे करने के बाद सूफी, वली, पीर, दरवेश, मलंग, कलन्दर बनते हैं। इसी जेहाद को अवाम सीखे, जिसके लिए खानकाह या आध्यात्मिक आश्रम कायम हैं। अफसोस उस व्यक्ति पर है, जिसने ईश-पूजा तो की, मगर 'ला ईलाहअ' को पूजा में कायम रखा। काश ! हम ईश-पूजा में अपनी दुनियां को 'ला' (नहीं) करके ईश्वर की पूजा करते।"

सर एडम्स स्मिथ ने स्पष्ट कहा- "हमारी पूजा, नमाज, इबादत अगर खुदा या परमेश्वर के लिए है, तो परमेश्वर के लिए किए जाने वाले रोजा, व्रत, यज्ञ, हज, तीर्थ आदि सभी कार्य में अपने नफ्स या इन्द्रिय से जेहाद करनी होगी। **यह जेहाद वह पवित्र अस्त्र है, जो हमें खुदी से हटा कर खुदा से मिलाता है।** ईश्वर के हर धर्मो में यह जेहाद किसी न किसी रुप, शब्द या वाणी में मौजूद है। इसीलिए ईश-वाणी या ईश-कथनों को समझने के लिए ईश-ग्रन्थों के विद्वान की जगह ईश कृपा

प्राप्त सद्गुरु या कामिल पीर की जरुरत है। जिन्हें ईश दर्शन या ईश-साक्षात्कार की अनुभूति नही है, वह ईश-वचन की सत्यता कैसे बताएंगे? कुरआन, ईश वचनों का संग्रह है, वह ईश-पुस्तक के रुप में ईश्वर द्वारा दी गई होती, तो उसका सत्य भावार्थ कोई भी विद्वान बता सकता था। हम आज जब 'लाईलाहअ इल्लल्लाह' को समझ कर सही ढ़ंग से नहीं पढ़ पाते, फिर विशाल कुरआन की वाणी को क्या समझ पाएंगे।"

सर्वप्रिय सन्त श्री साधुबाबा ने इस प्रसंग में यूं कहा- "आज मजहबी टकराव देखकर मन दुखित होता है। मनुष्य को ईश्वर ने बनाया, हर मजहब ईश्वर के निर्देश पर कायम है। पर आज हर मजहब के लोग अपने-अपने मजहब के रक्षक बनने में मशगूल हैं। कोई ईश्वर का सेवक या बन्दा बनने को राजी नहीं है। ईश्वर के नियम-कानून तोड़ने का नाम हमने आज मजहब बना लिया है। क्या खुदा ने किसी मनुष्य को अपना निजी मजहब बनाने का अधिकार दिया है? अगर नहीं तो हिन्दू-मुस्लिम तकरार या ईसाई-पारसी घृणा के दलदल में फंसने-फंसाने का कार्यक्रम कौन संचालित करता है? वह कौन सा ईश्वर है, जो सैटेनिक वर्सेज, कुरआन की छानबीन, मौलवी हार गया, कुरआन खुदाई कैसे?, सच्ची रामायण, हिन्दू समाज के पथ भ्रष्टक तुलसी दास, सुन्नी इस्लाम की तस्वीर आदि पुस्तकें लिखने को प्रेरित करता है? क्या ईश्वर, अल्लाह नामों के अन्तर से ईश्वर महान में अन्तर पड़ता है?

अपने-अपने धर्म-मज़हब को श्रेष्ठ या सर्वश्रेष्ठ बताने के शैतानी-चाल में हम भूलते जा रहे है कि खुदा एक है, सारे मजहब उसके हैं, हम ईश-आदेश के पालक हैं। हम ईश्वर के नबी, रसूल या ऋषि नहीं, फिर भी हम अपने आपको स्वंयभू ईश्वर घोषित करने की चेष्टा करते रहते हैं। ऐसे कुकर्म में लिप्त व्यक्ति न राम का होगा और ना रहीम का। किसी भी धर्म-मजहब की अवमानना, वास्तव में उसी एक परमेश्वर की अवमानना करना है। आज दुनियां के हर कोन-कोने में धर्म-मजहब के नाम की दिवारें ऊंची होती जा रही हैं। मनुष्य की तबाही, बर्बादी के पीछे यह धार्मिक-प्रतिस्पर्धा भी एक कारण है।"

सन्त श्री साधु बाबा ने गम्भीरता से कहा- "मन्दिर, मसजिद, गिरजा जो भी हैं, वह उस एक ईश्वर की पूजा स्थली तो हैं। फिर उन्हें तोड़ने या नष्ट करने वाला व्यक्ति किस ईश्वर को पूजता है? यह तो चिन्तनीय है। धार्मिक उन्माद या धर्म कट्टरवादियों या उन्मादियों का नकली खुदा, उन्हें धर्म रक्षक या मजहबी रहनुमा का प्रमाण-पत्र देता है। वह गर्व से इतराते हैं कि मजहबी उन्माद फैलाना सर्वश्रेष्ठ ईश्वर सेवा है। पर वे तनिक भी नहीं सोचते कि वह ईश्वर-विरोधी सेवा कार्य में उन्नतिशील हैं। ऐसे पापों से डरने की बजाए आदमी दिन-ब-दिन ईश्वर से निडर बनता जा रहा है। आदमी की बेचैनी, अशान्ति, अकाल मृत्यु आदि के पीछे ऐसे कर्म भी एक कारण हैं।"

सन्त श्री साधुबाबा ने आगे कहा- "ईश्वर की पूजा, नमाज से की जाए या अन्य विधि-विधान से। हमें तो यह देखना चाहिए कि हम पूजा क्या सचमुच सही कर रहे हैं। सही पूजा हमें आत्मिक शान्ति देती है। गलत पूजा से मन में क्षणिक शान्ति आती है, पर हृदय अतृप्त रहता है। खुदा-ईश्वर की सच्ची पूजा का ढ़ंग आज के दौर में वही बताएगा, जो अपने पूजा क्रिया-विधान से ईश्वर तक पहुंचा हो। हम केवल क्रिया-विधान जानने वालों के चक्कर में पड़कर तरह-तरह की पूजा-इबादत सीखते रहते हैं, अभीष्ट फल जब नहीं मिलता तो धर्म-मजहब में दोष गिनाने लगते है। जबकि ईश्वर की सही पूजा, आध्यात्मिक सद्‌गुरु या कामिल पीर जानते हैं। आज के दौर में सच्चे पीर या सच्चे गुरु की तलाश भी हम नहीं करते। तमाम लोग पुस्तक गुरु और धार्मिक गुरु के ज्ञान से ईश-पूजा में लगे रहते हैं। उन्माद, कट्टरवादिता, धर्मान्धता का बीजारोपण इसी ज्ञान ग्रहण की उपज है। **अब यह आपके विवेक पर निर्भर है कि उस एक ईश्वर की हम पूज्यनीय खेती करें या उन्माद और धर्मान्धता की।"**

9 - ईश-सेवा, इन्द्रिय सेवा नहीं

विश्वविख्यात सन्त सर डेविड ने कहा- "आज हम इन्द्रिय सेवा में लीन रह कर ईश सेवा भी कर रहे हैं। ऐसी दोहरी सेवाएं हमें संकट, विपत्ति में डालती रहती हैं। हम जब ईश-सहयोग की याचना करते हैं, तो हमारे कष्ट शीघ्र दूर नहीं होते। हृदय इन शैतानों के ऊथल-पुथल से अशान्त बना रहता है। वह बन्दा प्रेमी ईश्वर अपने बन्दे की याचना पर मदद के लिए व्यग्र रहता है, मगर बन्दे का हृदय स्थल इन्द्रिय राक्षसों से रिक्त नहीं है, वह कैसे वहां आए? वह पवित्र ईश्वर, हमारे हृदय के अपवित्र बुतों के कारण सन्निकट रहके भी हृदय में प्रवेश नहीं करता। हम चिल्लाते हैं कि ईश्वर हमारी नहीं सुनता। ईश्वर सबकी सुनता है, पर हम ईश्वर की नहीं सुनते। ईश्वर हमारे हर गुप्त-प्रकट कार्यों से परिचित है। लेकिन हम उससे परिचित होना नहीं चाहते। ईश्वर हमें अपने पनाह मे लेना चाहता है, किन्तु हम ईश्वर के गैर की पनाह में आनन्दित रहते हैं। ईश्वर हमें मदद देना चाहता है, मगर हमारा विश्वास ईश्वर के गैरों पर होता है। यही हमारी सत्यता है और इसी कारण हम असत्य जीवन की भूल भुलैया में परमानन्द की खोज करते रहते हैं। जो ईश्वर बहुमूल्य शरीर, बेशकीमती आत्मा प्रदान कर सकता है, क्या वह ज़ीवन के साधन उपलब्ध कराने में सक्षम नहीं है। जो ईश्वर स्वाती की बूंद से सीप में मोती दे सकता है, वह हमें धनवान, बलवान, महान बनाने में लाचार है? प्रथम उस परमसत्य पर हमारा सुदृण हार्दिक-आत्मिक विश्वास चाहिए। पर हमारे अविश्वास और अज्ञानता की आन्तरिक स्थितियां हमें उपर से तो ईश्वर वादी बताती हैं, लेकिन अन्दर से हम होते हैं नफ्सपरस्त या इन्द्रिय

पूजक। यही पूजा बुतपरस्ती, मूर्तिपूजा, गैर-पूजा, गैर-माबूद, गैरुल्लाह की पूजा है। आश्चर्य है, हम ईश्वर के सिवा गैर को भी पूजते हैं, फिर भी वह ईश्वर हमारा पालन करता है। हमें वह खिलाता-जिलाता है। हम से वह सदा प्यार ही करता है, पर हम उससे प्यार नहीं करते। वह नफरत भी नहीं करता है, पर हम उसके प्रति वफादार नहीं रहते।

-पर वह पवित्र ईश्वर अपने वचन-कथन पर कायम है। वह रब है, वह रहमान है, वही कृपालु है, वही दयालु है। वही सर्वमहान है। अन्यथा उसकी उपेक्षा करके क्या कोई मानव एक पल की सांसे भी ले सकता है? सचमुच, वह हमारा प्यारा ईश्वर अब भी हमें दयालु-कृपालु नहीं दिखाई देता?"

सर विलियम जे0 थामस ने एक हार्दिक कष्ट के साथ कहा- "आज हर जगह हर आदमी किसी न किसी वजह से परेशान है। कोई किसी रोग में पीड़ित है। कोई रोजी-रोजगार में तंग है। किसी की पुत्री की शादी नहीं हो रही है। कोई कर्ज के ऋण चुकाने में सन्त्रस्त है। किसी को यह दुःख है कि वह पूजा-नमाज में नियमित है, मगर दिन-प्रति-दिन उसकी भौतिक एवं आर्थिक स्थितियां गिरती जा रही है। उसने तमाम तीर्थ दर्शन कर लिए। वह हर श्रद्धा केन्द्रों पर माथा टेक चुका। कई जानकारों ने उसके जाप-तप के मन्त्र बताए हैं, वह उसे भी ठीक से पढ़ रहा है। परन्तु परिणाम में मामूली अन्तर या वो भी नहीं है।

आज इस प्रकार के तमाम मामले मनुष्य समाज के समक्ष हैं। लेकिन इसका सत्य निदान कैसे होगा? इसका कोई प्रमाणित सूत्र हमें नहीं देता। मनुष्य की समस्या या परेशानी क्यों है? उसका मुख्य कारण क्या है? क्या उस नर-नारी की पूजा-नमाज दुरुस्त है? क्या उसने व्यक्त-अव्यक्त कोई पाप किया है? पाप के तुरन्त बाद उसने उस महान दयालु ईश्वर के सम्मुख अपनी गुनाहों से तौबा किया है। तौबा के बाद उसने ईश्वर से माफी मांग ली है। आप सोच रहे होंगे कि इन्सानी उलझन या समस्या में यह पाप या गुनाह कहां से आ गए? समस्या या परेशानी के अनेक भौतिक कारण हैं। इस मामले में ईश्वर या ईश्वर की पूजा-नमाज का सम्बन्ध कुछ भी तो नहीं है। मानव से जुड़ी समस्त कष्ट या चिन्ताएं तो स्पष्ट हैं। उसके कारण स्पष्ट हैं, केवल निवारण या समाधान के मार्ग सुझाई नहीं देते। ऐसी बातें हमें अक्सर सुनने को मिलती रहती हैं। मुझे इन्सान की नासमझी पर दुःख होता है। आप पूछेंगे क्यों? खूब दिल लगाकर समझने की कोशिश करें। आप पहले यह देखें कि आपको मानव के रूप में किसने जीवन-कृपा दी है। जीवन-कृपा का दाता कौन है। यदि आप उस सर्वमहान को ईश्वर, अल्लाह या गॉड कहते हैं, तो यह बताना चाहेंगे की आप जीवन-दाता को अपना जीवनदाता मानते हैं या उसे केवल ईश्वर या रब कहते हैं। अगर आप सचमुच उसे अपना जीवनदाता हृदय से स्वीकार करते हैं, तो आप की जुबान हमेशा यह कहेगी- मेरे ईश्वर या मेरे अल्लाह। हम सभी को अपने ईश्वर, खुदा से क्या यह करीबी रिश्ता जोड़ना नहीं चाहिए। अगर इन्सान को सचमुच यह एहसास है

कि उसके जीवन-दाता का नाम ईश्वर, रब, गॉड, प्रभू है, तो वह किसी के भी सामने स्पष्ट कहेगा कि मेरे ईश्वर की दया-कृपा मुझ पर है। मेरा ईश्वर सर्वश्रेष्ठ और सर्वमहान है। क्योंकि उसने हमें बनाया तथा हमें जीवन-दान दिया है। ऐसा निःस्वार्थी एवं ऐसे महादानी की दया-कृपा की वजह से ही तो मैं जीवित हूं।

हमने जीवनदाता को अपना ईश्वर, परमात्मा, अल्लाह, रब और रज्जाक अगर कुबूल किया हो, तो हम हुए उसके बन्दे। अब हमें यह देखना है कि उस अपने मालिक के हम कितने आज्ञाकारी और वफादार हैं। मालिक ने हमें जीवन, बिना हमारे किसी मांग के दिया है। उसी द्वारा निर्मित अपने शरीर का हम स्वतन्त्रता पूर्वक उपयोग भी करते हैं। हमें उसने पैर दिए, जिससे मैं जहां चाहूं, जाता हूं। उसने दो हाथ दिए हैं, जिससे मनचाही वस्तुएं खाता हूं। जुबान दिया, जिससे मैं हर एक से बातें कर लेता हूं। आंखें दी है, जिससे दुनियां के सुन्दर-सुन्दर दृश्य देखकर खुश होता हूं। मेरे ईश्वर ने मेरे शरीर के हर-हर अंग को कितना परिपूर्ण बनाया है, मैं उसकी कारीगरी को देखकर अवाक् रह जाता हूं। सांसे नाक से, भोजन मुख से, दांत चबाने के लिए, जुबान जायका बताने के लिए। कान, हर चीजों को सुनने के लिए। सात प्रकार की मिट्टी से बने इस असाधारण शरीर की संरचना करने वाला मेरा प्रभू सचमुच महान है। सचमुच वह प्रशंसनीय शब्द से भी अत्याधिक प्रशंसनीय है।

ऐसे अद्भुत, अकल्पनीय तथा अवर्णनीय ईश्वर के यदि हम बन्दे हैं, तो निस्सन्देह यह हमारे लिए सर्वाधिक प्रसन्नता एवं नसीब की बात है। बन्दा जब उस प्रभु की कृतियों का अवलोकन करके हत्प्रभ हो जाए, तो इसका अर्थ यह होता है कि उसने अपने रब को रब के गुणों के साथ पहचाना। जिस मेरे परमेश्वर ने मुझे बिना किसी अपने स्वार्थ और लाभ के इतना सर्वोत्तम जीवन प्रदान किया है, उसके प्रति उसकी जितनी पूजा, नमाज, नाम-जप हम किया करें, उसकी कृपा-दया का कण मात्र भी शुक्रिया अदा करना इन्सान के बुते की बात नहीं है।

ऐसे ईश-बन्दे यदि हम बन जाएं तो हमारे समक्ष समस्या, परेशानी, कष्ट, दुःख आएगीं कैसे। हम उस पालनहार के बन्दे हैं, जो न जाने कितने बन्दों की परवरिश करता रहता है। मुझे कष्ट है, ऐसे सर्वमहान शक्तिशाली ईश्वर द्वारा इसका समाधान क्या सम्भव नहीं है। वास्तव में समस्त सृष्टि के समक्ष मेरे जैसे बन्दे की कोई गिनती नहीं है। फिर तो दोष कुछ मुझमें है, जिससे हम परेशान हैं। हम सर्वप्रथम अपने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष कार्यों की गहराई से छानबीन करें। हमें पता चल जाएगा कि किन पापों के कारण हमें कष्ट को भोगना पड़ रहा है। उसी का सरल उपाय है, ईश्वर के समक्ष हर जाने-अनजाने पापों की तौबा करना, फिर उससे क्षमा मांगना। अरबी भाषा में कल्मा अस्तगफार व रद्दे-कुफ्र पढ़ने का मार्ग यही अचूक औषधि है। इसीसे हर बन्दा तौबा-क्षमा के माध्यम से ईश-दया पाता है। ईश दया होते ही हम अपनी समस्या से छुटकारा पाने लगते हैं। इसके बाद हर बन्दे के लिए जरुरी

है कि वह अब ईश्वर की सत्य पूजा-नमाज में लग जाए। यह कार्य नित्य-प्रति करते रहने से हर बन्दे का दु:ख, कष्ट, समस्या आदि का निवारण सुगमता से हो जाता है।

हम उस महान एवं सच्चे ईश्वर के बन्दे हैं, तो हमें बन्दगी उसकी सच्ची करनी चाहिए। सच्ची बन्दगी हृदय से हो, फिर हम अपने लोक-व्यवहार में भी सच्चे रहें। ईश्वर हर जगह मौजूद है, इसलिए गलत कार्यों से नाता तोड़ दें। आपका यह ईश्वरीय-भय, आपको ईश्वर के सन्निकट रखेगी।"

10 - कामिल पीर का जेहाद

कामिल पीर या आध्यात्मिक सद्गुरु इसी इन्द्रिय राक्षस का निर्मूलन मार्ग बताने के लिए हैं। पर हम उनके सम्पर्क और शिक्षा-दीक्षा को आत्मसात् करने से कतराते हैं। कामिल पीर इसी को जेहाद कहते हैं। अपने इन्द्रिय या नफ्स से ईश्वर के लिए ईश-जाप से युद्ध करके ईश्वर दर्शन पाना, जेहाद है। जिन्हें सत्य जेहाद का ज्ञान है, वे हिन्दू-मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध, पारसी आदि सम्बोधनों की भूल-भुलैया में नहीं फंसते। इन नामों से ईर्ष्या, द्वेष, नफरत, आक्रोश की चिंगारी आध्यात्मिक सद्गुरुओं या उनके अनुयायियों में नहीं आती। वे ईश्वर-अल्लाह, निरंजन, सतश्री अकाल, अहुरमज्द जैसे सम्बोधनों का मूल अर्थ जानते हैं। वह जानते हैं कि इन नामों के अतिरिक्त भी न जाने कितने नाम उस एक पवित्र सृष्टि संचालक के हैं।

किसी भी मजहब, धर्म की सत्यता के मूल में यदि हम आध्यात्मिक साधना-ज्ञान से प्रवेश करके देखें, तो वह पवित्र ईश्वर एक ही नज़र आएगा। उसके ही जलवे तो हर दिशाओं में हैं। उसके ही नूर से हर वस्तु प्रकाशमान है। उसकी ही प्रशंसा, स्तुति, पूजा, प्रार्थना, इबादत में हर-वस्तुएं नत्मस्तक है। इसीलिए ईश्वर सान्निध्य और दर्शन में जीने वाले हमारे सूफी-सन्त, साधु-महात्मा कहा करते है- 'सत्य एक ही है, जिसे ज्ञानी लोग भिन्न-भिन्न तरह से बयान करते हैं।' सत्य नाम भी उसी एक ईश्वर का है। जो सरल हैं, वही सत्य है और परिपूर्ण एवं परम शुद्ध सत्यता ईश्वर के ही साथ है। जो असत्य के साथ जीवन जीए, निस्सन्देह वह ईश्वर से खुद दूर हो जाता है। हम विचार करें कि ईश्वर की पूजा-प्रार्थना और इबादत का मूल उद्देश्य हमारा क्या है? हम तो ईश्वर को प्रसन्न करना तथा ईश्वर की दया-कृपा पाना चाहते हैं। पर आध्यात्मिक जिज्ञासु (शिष्य या मुरीद) की पल-पल की आराधना-साधना ईश्वर को ही पाने के लिए होती है। इसी विशिष्ट उद्देश्य के कारण सद्गुरु या कामिल पीर की शिक्षा-दीक्षा स्थली को खानकाह, मठ, कुटी या आध्यात्मिक आश्रम के नाम से इंगित किया जाता है। वरना उसे धार्मिक या आध्यात्मिक पाठशाला या विद्यालय अथवा दारुल ऊलूम या मदर्सा या मकतब भी हम कह सकते थे।

ईश्वर, अल्लाह, खुदा, रब, परमात्मा, प्रभु जैसे नाम जब उसी एक महान लोक-परलोकों के स्वामी का है, फिर हम उस अनन्त प्रभु के वचन, कथन, वाणी के अर्थ और आशय का अनर्थ अपनी सीमित बुद्धि ज्ञान से क्यों करने लगते हैं? हर धर्म-मजहब के पथ पर चल कर साधक आध्यात्मिक योगी, साधु, महात्मा, पीर, वली, औलिया हुए हैं। उनके नाम और शक्लो-सूरत अगर हिन्दु, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध या पारसी के रुप में हमें दिखते हैं तो हमें अपने अल्प-ज्ञान के आधार पर उन्हें धर्म विभाजन की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। वे तो विभाजित हैं ही नहीं, जिस ईश्वर-अल्लाह के वे याचक हैं, वह तो उसीके साथ हैं। उस एक में रमे हैं, उस एक ही में डूबे हैं। हम अपनी निजी भौतिक ज्ञान दृष्टि से उन्हें जाति, धर्म के अनुसार बांटकर देखते हैं। एक से मिलकर वे एकाकार हो गए। परम से मिलकर वे परम सम्माननीय बन गए हैं। इसी मूल कारण से संसार उनका सम्मान करती है। यह सम्मान या श्रद्धा बाहय् नहीं, हार्दिक होती है। पीर, वली, सन्त, फकीर, साधु, महात्मा के प्रति दुनियां के हृदय में प्रेम का संचार वह ईश्वर ही करता है, क्योंकि ये प्रेम पुजारी तो ईश्वर के ही हैं।

11 - मार्फते-इलाही (ईश-सम्पर्क) क्या है?

रसूलल्लाह के आले-पाक और कामिल पीर हजरत दातागंज बक्श रहमतुल्लाह-अलैह फरमाते हैं- "बन्दे के लिए तौहीदे इलाही, ऐसी मख्फी हकीकत (रहस्यमय सत्यता) है, जिसे बयान (वचन) व इबारत (लेखन) से जाहिर नहीं किया जा सकता।"

कुरआने-पाक में अल्लाह तआला का इर्शाद है- "वमा कद्रे वल्लाह हक् कद्रेही" यानी- उन्होंने अल्लाह तआला की कद्र न जानी, जैसा की उसकी कद्र का हक है।

यह आयते-करीमा स्पष्ट कर रही है कि बन्दे को अल्लाह पाक के कद्र को जानने की जरुरत है। यह कद्र कैसे जाना जा सकेगा? बिना इल्मे मार्फत के अल्लाह तआला का कद्र जानना मुहाल है। कल्मए-तौहीद को सिर्फ जुबानी पढ़ लेने से तौहिदे-इलाही की जानकारी सम्भव नहीं है। प्यारे हबीब सललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हुजूर का इर्शाद है- (लौ अरफतुम अल्लाह हक मार्फत लमशैतुम अललजौरे वजालत बदआकुमुल जेबाल) अर्थात- "अगर तुम्हें अल्लाह तआला की मार्फत कमा हक्का हासिल होती तो तुम दरियाओं पर खुश्क कदम चलते और तुम्हारी दुआवों से पहाड़ अपनी जगह से टल जाते।"

हजरत दातागंज बक्श हुजूर फरमाते हैं- "मार्फते-इलाही (ईश्वर मिलन सम्पर्क) दो प्रकार की हैं। एक इल्मी, दूसरी हाली। मार्फते इल्मी दुनियां व आखेरत (कयामत) की तमाम नेकियों (पुण्यकर्मों) की जड़ है।"

अल्लाह पाक ने मार्फते इल्मी के सन्दर्भ में कुरआन में यूं इर्शाद फरमाया है- (वमा खलकतुला जिन्नअ वल इन्स इल्ला लेयअबोदुने ऐ लेयरेफुन) यानी- 'हमने जिन व इन्स (जिन्नात व इन्सान) को अपनी मार्फत ही के लिए पैदा किया है। मगर अक्सर लोग इससे नावाकिफ (अज्ञान) और रुगिर्दा हैं।'' अपने इस इर्शाद के मुताबिक अल्लाह तआला ने हजरत उमर बिन खत्ताब रजिअल्लाह तआला अन्हा के बारे में कहा- (व जअलना लहू नूरन यमशी बेही फिन्नास) यानी- ''और हमने उनके लिए नूर मुकर्रर किया जिसके साथ वह लोगों में चलते हैं।''

इस इर्शाद (कथन) से यह जाहिर हुआ कि अल्लाह तआला ने जिन हजरात (लोगों) को बर्गुजीदा फरमा कर दुनियावी तारीकीयों (जग के अन्धेरे) से महफूज रखा और उनके दिलों को जिन्दा व ताबन्दा बनाया, उनमें से एक हजरत उमर खताब हैं। अल्लाह तआला ने जिनके दिलों पर मोहर लगाई और दुनियावी अन्धेरों में मुब्तला किया, उनमें एक अबु जेहल हैं। हक तआला ने फरमाया है- (कम्मन मसलहु फी जोलोमाते लैसअ बखारिजीन मिन्हा) यानी ''कौन है उसकी मिस्ल जो तारीकियों में है, जो उससे कभी निकलता ही नहीं।''

जाहिर हुआ कि **मार्फते-इलाही की हकीकत यह है कि दिल अल्लाह के साथ जिन्दा हो। उसका बातिन मासिवा अल्लाह से खाली हो। हर एक की कद्र व मन्जेलत मार्फत से है और जिसे मार्फत नहीं, वह बेकीमत है।** इल्म की सेहत व दुरुस्तगी मार्फते इलाही से ही सम्भव है। तमाम ओलमा व फोकहा का इस पर इत्तफाक है। हमारे तमाम मशायखे-तरीकत हाल की सेहत और उसकी दुरुस्तगी को मार्फते इलाही से ताबीर करते हैं। इसी आधार पर वे मार्फत को ईल्म से अफजल कहते हैं। क्योंकि सेहते हाल, सेहते ईल्म के बगैर मुमकिन नहीं। सेहते इल्म के लिए सेहते हाल लाजमी है। मतलब यह है कि बन्दा उस वक्त तक आरिफ (ईश पहचानकर्ता) नहीं हो सकता, जब तक की आलिम बहक (ईश ज्ञान का सच्चा धर्मज्ञानी) न हो। अलबत्ता आलिम (धर्मज्ञानी) के लिए यह मुमकिन है कि वह आरिफ (ईश पहचानकर्ता) न हो।

मार्फते-इलाही क्या है? यह ईल्म है या खुदा के सम्पर्क में रहने की जिन्दगी है। इस मामले में हम कई तरह की गलतफहमियां अपने पास रखते हैं। एक आलिम (धम विद्वान) ने हमसे फरमाया कि **'मार्फते' दुनियां तो आसान है, मार्फते-खुदा काफी मुश्किल है।** मार्फते-इलाही के सन्दर्भ में हमारे एक मसजिद के इमाम साहब ने यूं बताया। जो मुसलमान, पंजवक्ता नमाज का पाबन्द हो और नफिल नमाजें भी अदा करे, वह इस्लाम के रोजा और तिलावते कुरआन में भी लगा हो, वह अल्लाह के मार्फत में लगा है। उन्होंने यह भी कहा कि अल्लाह पाक के हुक्म की पैरवी और रसूले पाक के सुन्नत पर कायम रहना। अल्लाह की मार्फत ही है। जरा सोचिए, अल्लाह के मिलन के बिना अल्लाह की मार्फत झूठी है या नहीं?

वहीं मेरे दादा पीर हुजूर अब्दुर्रहीम शाह चिश्ती गोरखपुरी ने कहा– "अल्लाह पाक और रसूले खुदा सल्ले अला व सल्लम की सच्ची मार्फत उनका दीदार है। अगर दीदार हमें हासिल है तो हमें अल्लाह व रसूले–पाक सल्ले अला व सल्लम की मार्फत हासिल है। इस मार्फत के लिए हमें कामिल पीरों के बताए इबादत के ईल्म पर कायम होना पड़ेगा। इसी गैर–जानकारी से हमारे रोजा, नमाज और इबादत में आज असर नहीं है।" मेरे पीरो–मुर्शिद हजरत हाफिज, सूफी, कारी जनाब जमीर अहमद शाह उर्फ हजरत दीदार शाह चिश्ती, कादरी, निजामी गोरखपुरी कहते हैं– "इन्सान की इबादत, तब तक सच्ची नहीं हो सकती, जब तक की वह खालिस अल्लाह की इबादत न करे। अल्लाह पाक की इबादत हमारे कामिल पीरों ने वहीं बतायी है, जो नबीए–अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व सल्लम ने अपने चार यार और असहाबे–सुफ्फा हजरात को बतायी है। अल्लाह की सच्ची इबादत का ढ़ंग, वहीं है, जो आज कामिल पीरों की खानकाहें बताती हैं।"

विश्वविख्यात सन्त श्री साधु बाबा मार्फते–इलाही अर्थात– ईश्वर–सम्पर्क के सन्दर्भ में कहते हैं– "मार्फत क्या है? किसी इन्सान से इन्सान का मिलना–जुलना, एक–दूसरे से बातचीत करना, इसी को मार्फत कहते हैं। बिना एक–दूसरें के मिले, बिना देखे और बातचीत किए, मार्फत हासिल नहीं हो सकती। फिर मार्फते–इलाही यानी ईश्वर–सम्पर्क बिना उसे देखे और उससे बातचीत किए पूर्ण कैसे होगी। केवल जुबान और दिल से खुदा का नाम लेने या उसकी सच्ची इबादत करने का नाम 'मार्फत' नहीं है। जिन्हें खुदा की मार्फत है, वही खुदा की मार्फत पाने की राह बता सकते हैं। हम मार्फत पाए हुए लोगों का पता किससे पूछें? **दुनियां में मार्फते–इलाही और मार्फते–नबी वाली जमात का नाम ही कामिल पीर है।** यह जमात खुदा के हुक्म पर और रसूले–पाक की बतायी हुई खुदाई–ईल्म पर कायम है। कामिल पीर शरीयत, तरीकत, हकीकत, मार्फत के सारे ईल्म से वाकिफ होते हैं। यह बजाहिर मुसलमान दिखते हैं, मगर वह सच्चे मोमिन हैं। यह अपने मुरीदों को सच्चे खुदा की इबादत सिखाते हैं। सच्चे खुदा की बख्शिश से यह मखलूके खुदा की खिदमत भी करते हैं। खुदा इन सच्चे पीरों से राजी है, वरना आज दुनियां में हजरत पीराने–पीर–दस्तगीर, हजरत ख्वाजा गरीब नवाज, हजरत हाजी मलंग आदि पीरों के नाम और पीर–वंशक्रम (शेजरा–शरीफ) कैसे चलते?"

मार्फते–इलाही के सन्दर्भ में हजरत झरना शाह बाबा ने फरमाया– "जिस व्यक्ति ने अपने दिल–दिमाग से दुनियांवी फिक्र, चिन्ता, ईच्छा सब कुछ तर्क कर दिया हो, वही खुदा की सच्ची पूजा–इबादत कर सकता है। ऐसे व्यक्ति को चाहिए कि वह मार्फते–खुदावन्दी के लिए किसी कामिल पीर की कुर्बत में दाखिल हो। कामिल पीर के बताए जिक्र–अजकार को दिल लगा कर करता रहे। एक दिन वह मार्फते–हक (ईश मिलन) पा जाएगा। जब तक हमारा दिल व दिमाग अपनी जरुरत, परेशानी और व्यक्तिगत उलझनों से खाली न हो जाए, मार्फते–इलाही पाने के लिए सोचना, अपना वक्त

जाया (नष्ट) करना है। इन उलझनों के साथ तो हमारी सच्ची पूजा, सच्ची नमाज भी नहीं हो सकती। मार्फते-इलाही तो आगे की मन्जिल है। इन्सानों की तालीम के लिए हकीकत में कामिल पीर की जमात दुनियां में मौजूद होती है। वह एक स्थान पर रहकर मखलूके खुदा की खिदमत भी करते रहते हैं। उन्हें कोई जमात या गिरोह बनाने की जरुरत नहीं है। खुदा की सच्ची इबादत करने की वजह से ही, वे कामिल पीर कहलाते हैं। लोग इनकी ईज्जत करें या इन्हें न माने, इन पर कोई इसका असर नहीं होता। वह अपने कामिल पीर से पाए ईल्म की वजह से कामिल की मन्जिल पाए है, इसलिए वह अपने पीरों के पद्चिन्हों पर जिन्दगी गुजारते हैं।"

श्री झरना शाह बाबा बोले- "कामिल पीर और नकली पीर में गोपनीय अन्तर का नाम मार्फते-इलाही है। नकली पीर खुदा की सच्ची इबादत से खाली होगा। वह शक्लो-सूरत और पहनावे की नकल तो कर लेता है, मगर उसके दिल में दुनियांवी हविस बाकी रहती है। त्याग या तर्क उसमें नहीं होगी। लोगों से उम्मीद लगाए बैठा होगा। नाम लेगा कि खुदा के भरोसे हूं, मगर वह दुनियां की देन पर नज़रें टिकाए रखेगा। वह रोजा-नमाज का भी पाबन्द हो सकता है, मगर मार्फते-इलाही की बू उसमें नहीं होगी। अच्छी तरह जान लें, **जिसमें मार्फते-हक नहीं, उसमें तर्के-दुनियां, तर्के लज्जात, तर्के-नफ्स नहीं पायी जा सकती।** जो लोग रुपया और धन कमाने के लिए पीर बने हुए हैं। वह तो दुनियां की तरसती भूख में जीते हैं। ऐसों को अपनी ईज्जत, शोहरत और दौलत की भूख होती है। ऐसे लोग कामिल पीर क्या होंगे, वह तो कामिल बन्दा भी कहलाने के लायक नहीं हैं। इसीलिए कामिल पीर कम मिलते हैं, आज नकली पीरों की संख्या समाज में काफी है।"

मशहूर सन्त श्री झरना शाह बोले- " समाज में कामिल पीर के नकली रुपों में आप तमाम बहरुपिए लोगों को आज देख रहे हैं। वह कामिल वलियों के मजारों पर भी अपनी दूकानदारी शुरु कर देते हैं। दोआ, तावीज, यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र करना उनका पेशा है। हर मर्ज या समस्या की दोआ उनकी झोली में मिल जाएगी। हर परेशानी को वह करनी या भूत-प्रेत का प्रकोप बताकर अपनी जेबें गरम करते रहते हैं। कई एक मजारों पर ऐसे बहरुपिए लोग यह अभिनय भी करते हैं कि उन पर फलां-फलां वली-पीर या फकीर की सवारी आती है। अज्ञानी लोग हाथ जोड़े ऐसे नकली पीर या बाबा से समस्या समाधान उपाय पूछने लगते हैं। तमाम लोग ऐसे हैं, जो भूत, भविष्य, वर्तमान की जानकारी लेने के लिए उनके श्रद्धालु बन जाते हैं। जिस पीर, वली या सन्त की मजार पर हम जाते हैं, उनके प्रति विश्वास हमारे दिलों से खत्म होने लगता है। और हम फंस जाते हैं, झूठे बाबाओं के चंगुल में। वजह सिर्फ यह है कि हम मजारों पर भी दुनियां मांगने या लेने जाते हैं, हम अगर मार्फते-इलाही पाए किसी पीर-वली, फकीर के दर पर जाते हैं तो उनसे क्या मांगे, हम यह भी नहीं जानते हैं।"

श्री झरना शाह बाबा ने स्पष्ट कहा– "मार्फते–इलाही, जिसे हासिल है, वही पीर है। जिसे खुदा की मार्फत हासिल नहीं, वह अल्लाह का वली कैसे होगा? इसी मार्फते–इलाही की बदौलत अल्लाह की वेलायत हासिल होती है, जिसे अल्लाह की वेलायत मिली, वही औलिया अल्लाह है। वही तो वली है। वह वली है, इसलिए उसकी मजार–दरगाह है। उसके पास दुनियां की दी हुई वेलायत नहीं है। उसे अल्लाह ने अपनी खुशी–रजामन्दी से अपनी वेलायत अता की है। इसी खुदाई वेलायत से, वह खुदा के बन्दों को चैन, राहत और खुशियां देता रहता है। यह खुदा की ही वेलायत है कि वह अपने चाहने वालों को दूर या करीब से फौरन मदद पहुंचाता है। यह वेलायत का ही कमाल है कि वह दुनियां की नजरों से पोशीदा है, मगर वह हर बातों का ईल्म रखते हैं। अल्लाह की वेलायत ऐसी जिन्दगी रखती है, जो उन्हें जिस्म जाने के बाद भी दुनियां में जिन्दा रखती है। वरना कोई मुर्दा इन्सान, जब अपनी जरुरत पूरी नहीं कर सकता, फिर वह दुनियां के लाखों लोगों की जरुरत और हाजत रोजाना पूरी कैसे कर सकेगा? यही है अल्लाह की वेलायत, जिससे वलियों ने मुर्दे को जिन्दा किया। यह वेलायत अल्लाह ही की है कि अल्लाह की बनायी हर शय पर भी वह हुकुमत करते हैं। यह देन वेलायत की है कि वह जो जुबान से कह दें, अल्लाह उसे पूरी फरमाता है। अल्लाह की सच्ची वेलायत की यही पहचान है, जो लोगों के दिलों में उनकी ताजीम करने के लिए मुहब्बत की प्यास जगाता रहता है। आज हम अपने मां–बाप की ताजीम नहीं कर पाते। फिर हम ऐसे मजार वाले की ताजीम में कैसे लगे रहते हैं, जिन्हें हम जानते–पहचानते तक नहीं हैं।"

सन्त झरना शाह बाबा ने मार्फते–इलाही का रहस्योद्घाटन करते हुए कहा– "अल्लाह की मार्फत आम नहीं, खास है। यह हर इन्सान को हासिल नहीं होती। अल्लाह अपनी मार्फत उन्हें ही प्रदान करता है, जो उसके हो जाते हैं। पीर, वली, औलिया को खुदा की मार्फत इसलिए प्राप्त हुई, क्योंकि वह खुदा के सिवा किसी गैर को देखे तक नहीं। अब बताए कोई कि गैरुल्लाह या अल्लाह के गैर कौन हैं? अल्लाह की मार्फत जिन्हें प्राप्त है, वह तो अल्लाह वाले हैं। जिन्हें अल्लाह की मार्फत नहीं, वहीं तो गैरुल्लाह हैं। हम पंजवक्ता नमाजी हैं। हम रोजेदार हैं, हम परहेजगार हैं, हम तो हाजी हैं, अगर हमें मार्फते–इलाही हासिल नहीं है, तो हम अल्लाह के खास नहीं हैं। अल्लाह का खास वह जो अल्लाह में फना होकर, अल्लाह के साथ हो। हम अल्लाह वाले भी नहीं हैं। हम किसी की भी नमाज, इबादत की पाबन्दी देखकर कह देते हैं कि यह तो मुत्तकी परहेजगार हैं। यह तो 'अल्लाहवाले' हैं। जिन्हें अल्लाह ने अपना बनाया हो, वही है 'अल्लाह वाला'। क्योंकि किसी की नमाज, ईबादत, रोजा, हज व अजकार, जो भी है, वह अल्लाह ने कुबूल की या नहीं, यह पक्की जानकारी हमें तो है नहीं। इसलिए हम खुदा के बन्दे तो हैं, मगर 'खुदा वाले' बन्दे हैं, यह बात साबित नहीं होती। हम अल्लाह के बन्दे तो हैं, मगर सच्चे बन्दे हैं या मुशरिक बन्दे हैं या मुनाफिक बन्दे हैं या नफ्सपरस्त बन्दे

हैं, यह जांच-पड़ताल तो हमको ही तन्हाई में करनी होगी। दुनियां में करोड़ों मसजिदें हम बनवाते रहें। दुनियां की सारी मसजिदों में हम बाजमात नमाजें भी अदा करते रहें, अगर हमें अल्लाह की मार्फत नहीं हैं, तो हम बन्दे हैं, मगर अल्लाह के खास बन्दे नहीं। जो अल्लाह का खास नहीं, वहीं तो अल्लाह से अपरिचित है। इसलिए वह परिचय न होने से अल्लाह का अभी गैर है। अल्लाह के वली को अल्लाह की मार्फत हासिल है। उसे रसूले पाक सल्ले अला व सल्लम की भी मार्फत हासिल है। इसलिए वह अल्लाह व रसूले पाक सल्ले अला व सल्लम का खास है, वह उनका गैर कहां है। जो अल्लाह व उसके रसूल का जुबानी या दिल से भी कल्मा पढ़े, उन्हें वह न देखे। नमाज, इबादत, रोजा, जिक्र सारे नेक काम अन्जाम दे, मगर खुदा को न पहचाने, वहीं खुदा के लिए अभी गैर है। जिसने देख कर उसकी पूजा की, वही तो उसका है। वही खुदा का खास है। क्योंकि खुदा उसे चाहता है, तभी तो अपना दीदार कराया। रसूले-खुदा ने जब उसे पसन्द किया, तभी तो उसे अपना रुखे-अनवर दिखाया। यहीं खुदा की मार्फत है, जो खुदा के गैर और खास में पहचान कराने वाली है। अब जो गैर हैं, वह खुदा के खास बनने के लिए मार्फते-इलाही का ईल्म जरुर हासिल कर लें। गैरुल्लाह से खुदा का खास वही बन सकता है, जिन्हें मार्फते-इलाही भी हो और मार्फते-रसूल भी।''

सन्त श्री झरना शाह बाबा ने 'मार्फते-इलाहीं' में पोशीदा 'मार्फते-रसूल' का भी रहस्य खोल दिया। उनके एक और दोस्त सर इकबाल अली अहमद साहब ने इस बिन्दू पर यूं कहा- ''मार्फत हमारी कैसी है, यह पहले देखना चाहिए। नमाज की मार्फत क्या है? उस पाकजात के सामने खड़े होकर उसकी हम्दो-सना (प्रशंसा व स्तुति) करना। तकबीर कहकर उसकी महानता स्वीकार करना। उसके सामने रुकू में झुककर उसकी शान और अजमत को बताना। जब उसके सामने सजदे में जाते हैं, तो उसकी बड़ाई बयान करना। हम जब सजदे के बाद बैठकर अत्तहियात व दरुद और दोवा पढ़ते हैं, तो यह कुबूल करते हैं कि सारी इबादतें खुदा के लिए हैं। हम नबी सल्ले अला व सल्लम पर अल्लाह की रहमत व बरकत होने का भी इकरार करते हैं। फिर उन पर और उनके आले-पाक पर दरुदो-सलाम भी भेजते हैं। हम आखिर में अपने नफ्स के जुल्म से खुदा की बारगाह में माफी मांगते हैं और बक्शिश भी चाहते हैं। यही हमारी नमाज है। और इस नमाज में खुदा की मार्फत होनी चाहिए, मगर वह दिखाई नहीं देती। हमें खुदा पर यकीन है कि खुदा सब कुछ देख रहा है। क्या इस यकीन को हम खुदा की मार्फत कह सकते हैं। नमाज के लिए हम घर में खड़े हों या मसजिद या ईदगाह में या काबा शरीफ में, क्या हमें यह कामिल यकीन है कि खुदा के सामने खड़े हैं। क्या नमाज की नीयत कर लेने के बाद हमारे दिल और ख्याल में सिर्फ खुदा का ही ख्याल बाकी रहता है। नमाज की नीयत के बाद हम जिस दुनियां में मशगूल रहते हैं, क्या उस दुनियां को हम हर तरह से भूल जाते हैं। अगर नहीं, तो फिर नमाज की मार्फत कायम कहां रहीं? नमाज की मार्फत अपने दिल-दिमाग से

गैरुल्लाह को हटाना है। हमारे माल, जन, फर्जन्द और काम, जरुरत तथा ख्वाहिशें, यह सारी चीजें दुनियां हैं, इसीलिए यह अल्लाह की गैर हैं। गैर को बिना दिल-दिमाग और ख्याल से निकाले बिना, नमाज की मार्फत हमें कैसे हासिल होगी। अल्लाह के जिक्र-अजकार के वक्त भी इन्हीं गैरुल्लाह को हटाने पर ही जिक्र-इबादत की मार्फत हमें हासिल होगी। यह है अल्लाह पाक के नमाज व इबादत की सच्ची मार्फत। इसी सच्ची मार्फत के सहारे हम मार्फते-इलाही या खुदा की मार्फत पा सकते हैं।''

सर इकबाल अली अहमद गम्भीरता से बोले- ''क्या हमें मालूम है कि अल्लाह तआला ने अपने नबी सल्ले अला व सल्लम को अपनी मार्फत के लिए इबादत के कुछ खास तरीके बताए हैं। क्या हमें पता है कि हजरत अबु बकर सिद्दीके अकबर, हजरत उमर फारुके आजम, हजरत उथमान गनी और हजरत मौला अली और असहाबे-सुफ्फा हजरात को हुजूर नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम ने नमाज व इबादत की तालीम दी तो उन्हें मार्फते-इलाही पाने का ईल्म भी अता किया। नमाज और इबादत तो हम जानते हैं, मगर उनकी मार्फत से हम आज काफी दूर हो गए। मार्फते-इलाही की सच्ची तालीम क्या है? कहां है? आज हमारी नजर इस सच्चाई की तलाश भी नहीं करती। **मार्फते-इलाही तो बड़ी नेएमत है, अगर मार्फते-रसूल सल्ले अला व आलेहीं व सल्लम ही हमें हासिल होती, तो हमारी नमाज, मेराजवाली नमाज बन जाती।** हमारी इबादत, मार्फते-इलाही का जरिया बन सकती थी।

आज हम हर नेक काम करने में मशगूल हैं। मगर हमारी हालत दिन-ब-दिन बुलन्दी की जगह पस्ती में जा रही है। वजह सिर्फ इतनी सी है कि हम नमाज, इबादत की मार्फत से दूर हैं। हम अपने नबी सल्ले अला व आलेहीं व सल्लम के मार्फत से भी गुरेज करते हैं। अल्लाह के नबी आए और अल्लाह के पास गए, यह यकीन भी हम नहीं करते। हम नबी को अपनी तरह पैदा होना और अपनी तरह मौत होना ख्याल करते हैं, फिर ऐसे यकीन वाले को नबी अल्लाह की मार्फत कैसे नसीब होगी। जिन्हें हम हजरत अब्दुल्लाह के घर में पैदा होने से, बशर समझ रहे हैं, वह बशर अगर हम इन्सानों जैसा होता तो अल्लाह उन्हें नबी अल्लाह यानी अल्लाह का नबी या रसूलल्लाह यानी अल्लाह का रसूल क्यों कहता?

नबी अल्लाह या रसूलल्लाह को हम बशर अपने जैसा अगर मानते हैं, तो फिर मार्फते-नबी अल्लाह या मार्फते रसूलल्लाह का पाना मुहाल है। क्योंकि बशर की मार्फत, बशर की जिन्दगी तक ही महदूद होती है। बशर लामहदूद नहीं है। बशर की सीमा उसकी जिन्दगी तक है, बशर असीमित नहीं हो सकता। मगर बशर की शक्ल में अगर नबी अल्लाह है, तो वह बशरी सिफात में कैद नहीं है। बशरी जिन्दगी उनके नबी अल्लाह होने से, अल्लाह की सिफतों के साथ जुड़े होने का सुबूत पेश कर रही है। इसलिए जब हम नबी अल्लाह या रसूलल्लाह कहते हैं तो नबी या रसूल अपने अल्लाह के साथ

कायम हैं। वह हम बशर की तरह मुर्दा नहीं। वह जिन्दा हैं, उन्हें मौत नहीं। बशर को मौत है। नबी अल्लाह की बजाहिर मौत, उनका अल्लाह के पास जाना है। बशर को अपने नेको-बद आमाल का हिसाब देना है, नबी जबसे हैं, वह पाक हैं। जब गए तो भी पाक हैं। जब यह सच्चा अकीदा हममें होगा, तभी अल्लाह पाक और नबीए-पाक की मार्फत हम बशर हासिल कर सकते हैं।''

मार्फते-इलाही सचमुच मार्फते-नबीअल्लाह के बिना प्राप्त होना मुश्किल है। हमारी पूजा-नमाज और तरह-तरह की इबादत में अगर हमारे दिल-दिमाग और ख्याल की मार्फत शामिल नहीं है, तो पूजा-इबादत कहां तक सच्ची है, यह कह पाना कठिन है। आज हम अल्लाह या परमेश्वर की पूजा-इबादत में जरुर लगे हैं, मगर इन सच्चाईयों पर गौर नहीं करते। हम ईश्वर के दूत को मानव रुप-रंग में पाकर उन्हें अपनी तरह मानव समझ लेते हैं। यह ऐसी भूल है, जो हमें ईश-दूत से तो दूर करती ही है, हमें ईश्वर से भी कोसों दूर कर देती है। जिनसे ईश्वर के होने का प्रमाण मिला, जिनके ज्ञान से हम भी ईश्वर को पाने का रास्ता पाए, वह मानव रुपी ईश-दूत, हम मानव की भांति कैसे होंगे?

ईश-दूतों के माध्यम से नाना-नाना प्रकार के एजाज, मोजजे और ईश-प्रदत चमत्कार दुनियां के मानव के समक्ष प्रकट हुए हैं। ईश-दूत के काल का मानव या आज के काल का मानव वैसे ईश-चमत्कार आज तक प्रकट क्यों नहीं कर सका? यह मानव के दुःखद चिन्तन का काल है। हमने नबीए-पाक को अपनी तरह समझा और दिल में जर्रा बराबर यह ख्याल आया कि जो वह करते थे, मैं भी करता हूं या कर रहा हूं, तो इसके अर्थ यह निकलते हैं कि वह बिना खुदा की नबूवत पाए नबी बनने लगा है। यह आश्चर्यजनक स्थिति नहीं है। क्योंकि ईश-ग्रन्थों में ऐसे मनुष्यों का भी उल्लेख है, जो अपने आपको ईश्वर-खुदा होने का भी दावा करते रहे। मनुष्यजाति में यदि ईश्वर के दावेदार हो सकते हैं; तो नकली नबी या झूठे पैगम्बर होने का दावा करना क्या मुश्किल है? ऐसे दावेदारों की जिन्दगी काफी छोटी होती है। कुरआन में ईश्वर ने फिरऔन, नमरुद, शद्दाद जैसे झूठे ईश्वरीय दावेदारों का उल्लेख किया है। इन नकली खुदाओं की मौत कैसे हुई, यह प्रसंग भी सविस्तार से बतायी गई है। जिन्हें झूठा खुदा बनने का शौक है, वह इनके विवरण का अध्ययन कर सकते हैं।

हम असली खुदा के पूजक हैं। असली नबी, पैगम्बर, ऋषि को मानने वाले हैं, फिर हमें वह पूजा-इबादत की आवश्यकता है, जिससे ईश्वर का सम्पर्क मिले। ईश्वर की निस्सन्देह कृपा हम पाएं। आखिर सचमुच वह सत्य पूजा, सच्ची इबादत का ढंग क्या है, जिसे पढ़ते रहने से ईश्वर की कृपा तथा ईश-मिलन एवं ईश-दूत मिलन होने लगता है। इस अतिविशिष्ट एवं अतिमहत्वपूर्ण विषय पर हमें सावधानीपूर्वक ध्यान देना चाहिए।

[11-A] खुदा के नेकबन्दे वलीअल्लाह

मोमिन या ईमानवाले सभी नहीं कहला सकते। मोमिन और ईमानवाला किसे कहा जाए। निरन्तर पूजापाठी को या नमाज, जिक्र-अजकार में हर पल मस्त रहने वाले को। 'मोमिन' को हम ईमानवाला ही कहते हैं, मगर ईमान की परिभाषा बदल दी गई है। जो इस्लाम मजहब को कुबूल करे और कल्मा पढ़ ले, वह मोमिन है। ऐसे मोमिन आज संख्या में ज्यादा हैं। सचमुच, ईश्वर के सत्य धर्म एवं आदेश-निर्देशों का अर्थ आज कितनी सरलता से हम निकालने लगे है। मोमिन कौन है? जिसने अपनी दिल की आंखों से ईश्वर और उसके पैगम्बर सल्ले अला व सल्लम को देखा। और वह जब चाहे देखता रहे। बिना दर्शन या दीदार के हम मोमिन नहीं। जहां दीदार हुआ, वहीं हमारा कल्मे का पढ़ना, नमाज का पढ़ना, रोजे रखना, हज करना, जिक्र-अजकार करना, सब कुछ शत-प्रतिशत खरा और दुरुस्त हो गया।

मोमिन बनने के लिए हमें एक कामिल पीर चाहिए। मौलाना जलालुद्दीन रोमी ने चालीस साल की कड़ी मेहनत के बाद फारसी भाषा में कुरआन पर अपना 'ग्रन्थ' लिखा था। तब तक वह मोमिन नहीं थे। जब वह बाबा शम्स तबरेज से ईल्मे तरीकत, ईल्मे-हकीकत और ईल्मे मार्फत, मुरीद होकर पाए, तो ईमान वाले बन गए। उन्होंने मुरीदी की सच्चाई जानने के बाद अपने ग्रन्थ में कामिल पीर की हकीकत को भी बयान किया। उन्हें अपने पीर के सम्पर्क में जो खुदा की इबादत का पोशीदा-ईल्म मिला, तो दीदार की दौलत से मालामाल हो उठे। इसलिए मोमिन बनने के लिए असहाबे-सुफ्फा हजरात तथा हजरत अबु बकर सिद्दीक रजि0अ0, हजरत उमर फारुक रजि0अ0, हजरत उषमान गनी एवं हजरत अली हुजूर को रसूले-पाक सल्ले अला व सल्लम ने पोशीदा खुदाई ईल्म दिया है, उसी ईल्म की हमें आज जरुरत है।

ईश्वर पूजा, ईश्वर के प्रति मानव का पूर्ण आत्म-समर्पण है। इस कथन से ईश्वर के सारे धर्म-मजहब सहमत हैं। धर्म प्राचीन है या नवीन, यदि वह ईश्वर का है, तो धर्म-धर्म है। इसमें प्राचीन या नवीन का कोई महत्व नहीं है। अलबत्ता कुछ मूल तथ्यों का अवलोकन हमें ध्यानपूर्वक करते रहना चाहिए। जैसे ईश-पूजा करने से हममें इन्सानियत की जागृति हुई या नहीं? ईश-पूजा, नमाज, जप-तप करने से हमारे मन, हृदय में हर मानव के प्रति प्रेम उपजा या नहीं? हम जिस एक ईश्वर-अल्लाह की पूजा-इबादत में लगे रहते हैं, क्या उस ईश्वर द्वारा घोषित नबी, पैगम्बर, रसूल, ऋषि आदि के प्रति प्रेम और सम्मान की सरिता भी हमारे हृदय में हिलोरे लेती है? हमारे हृदय में क्या ईश्वर के सन्त-फकीरों एवं वली-औलिया एवं महायोगीराज, साधु, पीर, सद्‌गुरु आदि के प्रति भी श्रद्धा-प्रेम का दीपक जलने लगा है? निर्धन, अनाथ, बेसहारों के लिए क्या हमारे दिलों में स्नेह-सहयोग

कायम है? अगर इस तरह की कुछ स्थितियां हमें अपने आप में अनुभव होती हैं, तो जान लें आप ईश-पूजा के सत्य मार्ग पर अग्रसर हैं। ईश्वर प्रदत्त समस्त धर्मों या मजहबों के सत्य परिपालनकर्ताओं में कुछ इस प्रकार के परिवर्तन अवश्य दिखाई देंगे।

हम ईश्वर और उसके सन्देशवाहकों (नबी, पैगंम्बर, रसूल, ऋषि आदि) को श्रद्धा और सम्मान की एक नजर से देखें। ईश्वर प्राप्त सन्तों, फकीरों तथा ईशकृपा प्राप्त वली-औलिया, पीर, सूफी, कलन्दर, मलंग, आध्यात्मिक सद्गुरु आदि की मान-प्रतिष्ठा करें और उनसे अन्तर्लीन प्रेम रखें। जिसने ईश्वर के प्रेम में सर्वस्व न्यौछावर किया है, वही ईश्वर का सच्चा प्रेमी है। जिसे ईश्वर ने अपनी प्रेम दृष्टि से देखा, वह तो ईश्वर का ही हो चुका है। हमारे सन्त, फकीर, सूफी, वली, साधु, महात्मा आदि इसी कारण सम्माननीय हैं, क्योंकि उन्हें ईश्वर-अल्लाह ने सम्मानित किया है।

सन्त, फकीर और वली-औलिया और सूफी, पीर आदि से श्रद्धा रखना, ईश्वर के प्रेम उपहार में मस्त ईश-विभूतियों से प्यार करना है। भूल से इन्हें गैर-खुदा या खुदा में शरीक करना ना समझे। सन्त, पीर, फकीर, सूफी, वली तो खुदा में फना हैं, वह एक ईश्वर में विलय हैं, फिर गैर-खुदा या खुदा में इन्हें शरीक करना कैसे हुआ? क्या किसी पीर, वली, सन्त, फकीर की पूजा-इबादत भी कोई करता है, जिस प्रकार खुदा की इबादत की जाती है। बिलकुल नहीं। कोई खुदा का बन्दा किसी भी पीर-फकीर, सन्त, वली की पूजा-इबादत तो नहीं करता। फिर कौन है, जो हमें 'शिर्क' समझाता है?

खुदा तो अपने नबी-रसूल, पैगम्बर और सन्त-फकीर तथा वली-औलिया से प्यार करता है। **जिससे खुदा प्यार करे, उससे खुदा का सच्चा बन्दा भी जरुर प्यार करेगा। यह न तो कुफ्र है और ना ही शिर्क या बिदअत।** यह तो ईश्के-खुदा का मजहब है। इसे ही ईश प्रेम मार्ग कहते हैं। प्रेम का दूसरा नाम खुदा है। मुहब्बत खुदा है। खुदा ही ईमान है। जिसके पास ईमान की दौलत है, वही खुदा का सन्त, वली, फकीर है। मुहब्बत है खुदा की और ईमान है खुदा का। फिर खुदा की खुदाई में आशिक-माशूक का झगड़ा कहां है? हुजूर नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम के प्रति इसीलिए उ0प्र0 के बरेली निवासी हजरत अहमद रजा खां आला हजरत ने फरमाया-

वाह क्या जूदो-करम है शहे बतहा तेरा। नहीं सुनता ही नहीं मांगने वाला तेरा।।
धारे चलते हैं अता के वो है कतरा तेरा। तारे खिलते हैं सखा के वो है जर्रा तेरा।।
अग़निया पलते हैं दर से वो है बाड़ा तेरा। असफिया चलते हैं सर से वो है रस्ता तेरा।।
फर्श वाले तेरी शौकत का उलू क्या जाने। खुशरवां अर्श पे उड़ता है फुरेरा तेरा।।
मैं तो मालिक ही कहूंगा कि हो मालिक के हबीब। यानी महबूब-ओ-मुहिब में नहीं मेरा तेरा।।
तेरे कदमों में जो हैं वो गैर का मुंह क्या देखें। कौन नज़रों में जंचे देख के तल्वा तेरा।।
आंखें ठण्डी हों जिगर ताजे हों जानें सैराब। सच्चे सूरज वो दिल आरा है उजाला तेरा।।

दिल अबस खौफ से पत्ता सा उड़ा जाता है। पल्ला हल्का सही भारी है भरोसा तेरा।।
एक मैं क्या मेरे इसियां की हकीकत कितनी। मुझसे सौ लाख को काफी है इशारा तेरा।।
किसका मुंह तकिये, कहां जाईये, किससे कहिये। तेरे ही कदमों पे मिट जाए ये पाला तेरा।।
तेरे सद्के मुझे इक बूंद बहुत है तेरी। जिस दिन अच्छों को मिले जाम छलकता तेरा।।
हरमो-तैबा-ओ-बगदाद जिधर कीजिए निगाह। जोत पड़ती है तेरी नूर है छनता तेरा।।
तेरी सरकार में लाता है रज़ा उस को शफीअ। जो मेरा गौस है और लाड़ला बेटा तेरा।।

(आला हजरत बरेलवी के इस कलाम में- "मैं तो मालिक ही कहूंगा कि हो मालिक के हबीब, यानी महबूब-ओ-मुहिब में नहीं मेरा तेरा।" शेएर में वे फरमाते हैं- या मेरे प्यारे रसूले खुदा सल्लल्लाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम हुजूर आप तो उस पाक जात के सर्वप्रिय हैं, जो सारे जहान का मालिक है। इसलिए मैं तो आपको ही मालिक कहूंगा, क्योंकि आप उस पाक मालिक के महबूब (सर्वप्रिय) हैं और वह सारे कायनात का मालिक आपसे बेइन्तहा प्यार करता है। या रसूलल्लाह सल्ले अला व सल्लम मैं जानता हूं कि महबूब और मुहिब में मेरा और तेरा का रिश्ता नहीं होता। बल्कि जो मुहिब का है, वह सब कुछ महबूब का है। इसलिए मैं आपको अल्लाह पाक की मिलकियत का मालिक कहूंगा।)

हुजूर आला हजरत विश्व के उन प्रमुख इस्लामी धर्माचार्यों में एक हैं, जिन्हें कुरआन व हदीस की सत्यता का परिपूर्ण ज्ञान था। इस्लामी दुनियां उन्हें इस्लाम का महापण्डित मानती है। वे कादरिया गुरु-परम्परा के एक आध्यात्मिक सद्गुरु भी हैं। ईश-ज्ञान का रहस्य वह जानेगा, जो ईश्वर कृपा प्राप्त हो। आला हजरत को ईश्वर कृपा प्राप्त है। कुरआन का अनुवाद तथा व्याख्या भी आपने की है।

12 - मजारों की हकीकत

इस्लाम में वली-औलिया का उल्लेख मिलता है। कुरआन में ईश्वर की वाणी है कि मेरे औलिया को न कोई खौफ है और न हुज्न और मलाल। हजरत पैगम्बर साहब ने ईश्वर के कथन को यूं प्रस्तुत किया है- "मेरे औलिया मेरे कबा में हैं, उन्हें मेरे सिवा कोई नहीं जानता।" ईश्वर कथन है कि "मेरे वली को किसी ने अजीयत (तकलीफ) दी तो उसने मुझसे एलाने-जंग किया।"

आईए- अब गौर करें कि अल्लाह के वली कौन हैं? हम प्रमाण के लिए हजरत ख्वाजा गरीब नवाज अजमेरी बाबा से मिल लें। उन्होंने ईश्वर की प्राप्ति के लिए कामिल पीर (सद्गुरु) हजरत उषमान हारुनी बाबा से बैय्यत की यानी शिष्य बने। सद्गुरु से ईश-प्राप्ति दीक्षा लेकर वह कठोर तपस्या में लगे। दुनियां की हर वस्तुओं का त्याग किया। स्वादिष्ट भोजन और नींद को त्यागा। जुबानी, हार्दिक

झूठ का पर्दाफाश करते हैं। हमने अपने सद्गुरु सूफी दीदार शाह चिश्ती बाबा के साथ ऐसे सन्तों को देखा है, जो मनुष्य रुप में प्रकट होकर उनसे ईश-चर्चा करते थे। वे बाकायदे सत्य ईश संगोष्ठी, उर्स-पर्व, मिलादुन्नबी आदि में भाग लेते थे। ईश्वर के ग्रन्थों की सत्यता वे किसी जलसे या तकरीर में समझाते थे। मेरी पुस्तक 'इस्लाम की हकीकत' उसी दौर के सन्त-वचनों का संग्रह है। सन्त-वचनों का अपार संग्रह मेरे सद्गुरु-काल की सुरक्षित है, जिसे लोक-कल्याण की दृष्टि से मैं अपनी पुस्तकों में प्रस्तुत करता रहता हूं।

सन्तों-फकीरों के नाम सुनकर आप सनातनी, इस्लामीं, ईसाई, पारसी आदि कौमों के भ्रम में न पड़ें। वे देश और समाज के अनुसार अपने नामों को प्रकट करते हैं। वे ईश्वर के हैं, इसलिए ईश-धर्म की सत्यता की रक्षा उनका प्रथम कार्य है। ईश्वर सभी का एक है। सन्त भी धर्म-विवाद से पवित्र हैं और सबके लिए हैं। यदि कोई सद्गुरु दीक्षा में ईमानदारी से लगे, तो सन्त-साक्षात्कार सम्भव है। किसी भी सत्य धर्म में जब कोई मनुष्य असत्यता का मिश्रण आरम्भ करता है, तो सन्त उनकी जालसाजी को दुनियां में बेनकाब करते हैं। (सन्तों के सन्दर्भ में 'पीर की दौलत' तथा 'आध्यात्मिक दर्शन' एवं 'आध्यात्मिक चमत्कार' पुस्तक देखें।)

14 - विस्फोटक जन-प्रश्न ?

प्रश्न 1 :- ईश-सेवा / पुण्य ईश-कर्म अथवा धर्म या मजहब सेवा करने का अधिकार वास्तव में किसे है?

सर विलियम :- ईश-सेवा क्या है अथवा धर्म-सेवा किसे कहते हैं? यह पहले समझना जरुरी है। इस सम्बन्ध में आज काफी भ्रामक स्थितियां हैं। ईश्वर, अल्लाह या गॉड के सन्दर्भ में चर्चा करना अथवा ईश-ग्रन्थों या धर्म-ग्रन्थों को सुनना-सुनाना, इसे ही सामान्यतः हम ईश-सेवा या धर्म-सेवा कार्य से जोड़ देते हैं। सामान्य धारणा है कि ईश-सेवा या धर्म-सेवा यही है। धार्मिक ज्ञान के पठन-पाठन में लगे लोग भी ईश-सेवा में हैं, वे ऐसा समझते और मानते हैं। हमें अनुभव है कि मन्दिर, मसजिद अथवा धर्म -स्थलों के साथ जुड़े लोग भी यही मानते हैं कि हम ईश-सेवा अथवा धर्म-सेवा में हैं। पर क्या यह मान्यताएं सत्य हैं? क्या ऐसी सेवाएं सचमुच ईश्वर के लिए ही हम करते हैं?

पहले यह खुद से पूछिए कि ईश्वर को भलीभांति आप जानते-पहचानते हैं या नहीं? दूसरी स्थिति खुद में यह देखिए कि ईश-दर्शन और ईश-वार्तालाप करने की क्षमता आपमें है या नहीं? आप कहेंगे कि इन बातों का सम्बन्ध ईश-सेवा से नहीं है। मैं कहूंगा कि जब तक ईश्वर से हमारा साक्षात्कार नहीं तथा ईश्वर हमें अपनी सेवा या ईश-ज्ञान प्रचार-प्रसार के लिए निर्देशित न करे,

हमारी सेवा अवैधानिक है। आप कहेंगे कि ईश-सेवा पुण्य एवं सर्वमहान सेवा है, इसे हर जीवित मानव को करनी चाहिए। हम कहते हैं कि ईश्वर से जिसका मिलन ही न हो, वह ईश-सेवा का कार्य सत्य कैसे करेगा? ईश-प्रशंसा, ईश-गुण बखान तथा ईश्वर की महानता का विविध ढ़ंग से प्रचार-प्रसार का करना यह क्या ईश-सेवा या खिदमते-खुदा है? ऐसा क्यों? इसलिए कि हमारी सेवा में कहीं न कहीं और किसी न किसी रुप में हमारी इन्द्रियां (ईच्छा, लोभ, धनसंचय, नाम, शोहरत आदि प्रवृति) शामिल हैं। इन्द्रियहीन सेवा, वही कर सकेगा, जो इन्द्रियनिग्रह (नफ्सकुशी) की साधना अपने सद्गुरु ज्ञान (कामिल पीर के ईल्म) से किया हो। एक छोटे दृष्टान्त से समझ लें। क्या मसजिद के इमाम साहब बिना किसी वेतन या पारिश्रमिक के नमाज पढ़ाते हैं? किसी धर्मस्थल के महंत या पुजारी या मोअज्जिन को सेवा के बदले में श्रद्धालुओं या भक्तों से कुछ नहीं चाहिए? धर्मज्ञान या दीनीं तालीम देने वाले गुरु या उस्ताद क्या वेतन नहीं लेते हैं? कुरआन, हदीस, दीनीं-किताबें और धर्म-ग्रन्थों को बेचने का कारोबार क्या हम नहीं करते हैं? हम धर्म-ज्ञान या मजहबी-तकरीर की सी0डी0/वी0सी0डी0/कैसेट्स नहीं बेचते हैं? हममें तो तमाम ऐसे हैं, जो कुरआन और हदीस पर पुस्तकें छापकर या परिचर्या करके सी0डी0 अथवा वी0सी0डी0 या पुस्तकें बेचने के कारोबार में संलग्न हैं। बताईए, इस तरह के कार्य को कोई कैसे सत्य ईश-सेवा अथवा सत्य ईश-पुण्य कर्म स्वीकार करेगा? कुछ लोग हमें ऐसे दिखे जो धर्म, मजहब की किताबें अपने संस्थान या ट्रस्ट के प्रचार के नाम पर निःशुल्क बांटते हैं। इस बहाने वे चन्दा या दान, जकात भी बटोरते हैं। हमने देखा है कि किसी अपने प्रियजन के मृत्यु पर कुरआन ग्रन्थ अथवा कोई धार्मिक पुस्तक छापकर उस आत्मा की शान्ति या पुण्य-प्राप्ति हेतु निःशुल्क बांटते हैं। कुछ किताबें ऐसी मुफ्त बांटी जाती हैं, जिसके पीछे ईश या ईश धर्म विरोधीं विश्वास को फैलाने का उद्देश्य होता है? इस तरह की इन्द्रियभावना के साथ किए कार्य में मात्र ईश-सत्यता प्रचारित करने का उद्देश्य कहां है? इसलिए ऐसी सेवाएं ईश सेवा कर्म दिखती हैं, वास्तव में हैं नहीं?

ऐसा क्यों और कैसे कहा जाएगा? समझना आसान है। कलामुल्लाह (कुरआन) 'वही' के रुप में अल्लाह ने नाजिल की? कलामे-हक् देने के लिए अल्लाह तआला ने कोई पैसा तो नहीं लिया। रसूले पाक ने कलामे-खुदा देते वक्त किसी सहाबा या किसी व्यक्ति से कोई शुल्क, फीस या कीमत तो नहीं मांगी? यही हाल हदीसे-पाक का है। रसूले खुदा ने जो भी ईल्म एनायत की, उसके लिए कोई फीस या दाम किसी से नहीं वसूला? अब बताईए की हम कुरआन और हदीस की किताबें फिर कैसे बेचते हैं? अगर हम यह कहते हैं कि कागज और छपाई का खर्च ही लिया जाता है। इसे बेचने की नीयत नहीं है। मुनाफा या फायदा लेने की नीयत नहीं है। अल्लाह के कलाम और रसूले खुदा के कलाम को प्रकाशित/वितरित करने के लिए क्या खुदा व रसूल से आदेश हमने लिया है?

अगर नहीं, तो नेक काम करने के लिए अपने पास के जायज रकम से दीनी किताबें प्रकाशित/वितरित करना चाहिए। अगर मुमकिन नहीं है, तो आप इसे मत करें। जब मुद्रण-प्रकाशन की सुविधा नहीं थीं, तब इस्लाम कैसे कायम रहा? अल्लाह तआला का पाक-दीन किसी इन्सान के तबलीग, तकरीर, इस्तमा, चिल्ला पर निर्भर नहीं है। इस्लाम के तालीमी अदारे, जमात, ट्रस्ट, संस्थान भी देखें की वह खिदमते-खल्क (जनसेवा) या खिदमते-दीन किस तवक्कल पर कर रहे हैं। तवक्कल खुदा पर है या मखलूक के इमदाद पर? इन्हें यह जांच-पड़ताल भी करनी चाहिए की इस्लाम की हकीकत तालिब-ईल्म में किताबी ईल्म की सूरत में दाखिल हो रही है या अमली सूरत में? ईल्मे-खुदा और ईल्मे रसूले पाक है। तालिब-ईल्म इस ईल्म को पा कर कितना पाक हुआ।

पहली जरुरत है कि हमें ऐसा गुसल, वजू सीखाया जाए कि इन्सान अपने जाहिर-बातिन से पाक (पवित्र) हो जाए। हमें कल्मा इस तरह पढ़ायी जाए की कल्मे की हकीकत हमारे चाल-चलन से जाहिर होने लगे। नमाज़ें हम ऐसी सीख लें की हक़ ताअला का मेराज होने लगे। तौहीद हम इस तरह पढ़ें कि पाक-रब के सिवा कुछ भी हममें बाकी न रहे। हज का तरीका हम ऐसा जान लें कि दावे के साथ यह कह सकें कि ऐ मेरे रब, मैं सिर्फ तेरे लिए हाजिर हूं। हज में तलबिया हम यही तो पढ़ते हैं- (लब्बैक अल्ला हुम्मअ लब्बैक ला शरीकअ लकअ लब्बैक इन्नल हम्दअ वन्नोअमहअ लकअ वलमुल्कअ लकअ ला शरीकअ लकअ।) अर्थात- मैं तेरे लिए हाजिर हूं। इलाही मैं तेरे लिए हाजिर हुआ। हम्द (प्रशंसा) और फजल (कृपा) तेरे हीं लिए है। और हुकूमत तेरी है और कोई तेरा शरीक नहीं।

हज या उमरा में हम तलबिया यही अरबी जुबान में पढ़ते हैं। हम अल्लाह के लिए हाजिर हैं, इसलिए हममें गैरुल्लाह नहीं रहना चाहिए। गैरुल्लाह से पाक होने का ईल्म हमें जरुरी है। यही इस्लाम में तौहीद कहलाती है। रोजा के बारे में खुदा का फरमान है कि 'ऐ ईमानवालों, तुम पर रोज़े फर्ज किए गए हैं।' रसूले पाक सल्ले अला व सल्लम फरमाते हैं कि 'जब रोजा रखे तो अपने कान, आंख, जुबान, हाथ और जिस्म के हर अजू का रोजा रखे। बहुत से रोजेदार ऐसे हैं, जिनका रोजा कुछ फायदेमन्द नहीं होता। केवल इसके की वह भूखे और प्यासे रहते हैं।' अपने जिस्म के हर अजू (अंग) का रोजा हम कैसे रखें, यह खास ईल्म हमें लेनी चाहिए। इन सारी जरुरी बातों को सिखाने के लिए कामिल पीर होते हैं। हमें उनसे इस्लामी अमल को सीखना चाहिए। ईश-सेवा के लिए अल्लाह तआला की तरफ से कामिल पीरों की जमात अधिकृत है। धर्म सेवा या मजहबी खिदमत के जुनून में क्या हम यह सोचते हैं कि धर्म या मजहब का जनक और स्वामी कौन है? आखिर वह ईश्वर या खुदा ही तो है। समस्त धर्मों का स्वामी ईश्वर है, फिर स्वामी की आज्ञा बिना लिए हम धर्म सेवा यदि करते हैं तो यह अपराध है या पुण्य प्राप्ति की सेवा? आप अपनी अन्तर्रात्मा से पूछिए। ईश-सेवा या धर्म-सेवा का अधिकार जिसे ईश्वर या उसके ईशदूत (नबी, पैगम्बर) द्वारा प्राप्त हो, वही अधिकृत (Authorised)

जन-प्रतिनिधि है। कामिल पीर या सद्गुरु को ईश और ईशदूत साक्षात्कार होता है। उन्हें ईश्वर द्वारा अपनी सेवा के लिए चुना जाता है। इसलिए इनके सिवा कोई भी ईश-अधिकृत सेवाकर्मी नहीं है। पीर, सद्गुरु के रुप में आज बहरुपिए भी यहां-वहां नजर आते हैं। इसलिए सत्य गुरु को प्राप्त करने हेतु ईश्वर से प्रार्थना करनी पड़ती है। आप सत्य ईश-सेवी को पहचान लें। यह पहचान उसके धर्म-प्रवचन या तकरीर या इस्तमा अथवा पूजा-नमाज की पाबन्दी देख कर समझ में नहीं आएगी। हजरत ख्वाजा गरीब नवाज अजमेरी का यह कथन आपके समझने के लिए काफी है। वे फरमाते हैं कि जिसने ईश्वर (अल्लाह तआला) को पहचान लिया है, वह कभी भी ख्वाहिश या आरजू नहीं करता। जिसने नहीं पहचाना, वह इस बात को नहीं समझ सकता। कामिल पीर सूफी दीदार शाह चिश्ती कहते हैं कि जिसने अपने पीर (गुरु) के सान्निध्य में ईश-दर्शन प्राप्त किया हो, वही कामिल पीर या परिपूर्ण है। ईश-मिलन नहीं तो वह कामिल नहीं। ईश्वर द्वारा ऐसे कामिल को दुनियां में ईश-शिक्षा देने हेतु जब चुना जाता है, तो वही 'कामिल पीर' कहलाते हैं। कामिल पीर स्वंय या किसी बाह्य शिक्षण संस्थान द्वारा नहीं बनते। बल्कि उन्हें ईश्वर बनाता है। ईश्वर की पूजा, नमाज, जाप-साधना बताना तथा ईश्वर से मिलाना, इनका कार्य है। यही तो सच्ची ईश-सेवा है। ईश-सेवा के लिए ही ईश्वर द्वारा ईश-दर्शन प्राप्त सद्गुरु या कामिल पीर नियुक्त किए जाते हैं। वे ईश्वर द्वारा अधिकृत प्रमाण-पत्र धारक (Authorised certificate holder of God) हैं।

ईश्वर द्वारा अमान्यता प्राप्त ईश सेवकों से रस्मी प्रचार-प्रसार फल-फूल रहा है। लेकिन मानव का हृदय परिवर्तन नहीं हो पा रहा है। हृदय, मन, विचार में सांसारिक मोहमाया के शैतान छिप-छिपकर उन पर आक्रमण करते रहते हैं। वह यह मान बैठे हैं कि जो कुछ पूजा-इबादत कर रहे हैं, वह सत्य है। उन्हें यह भी विश्वास है कि वह धर्म-नियम के पालनकर्ता हैं। वह यह नहीं सोचते कि ईश-धर्म की सत्यता, हम उससे लें, जो ईश्वर से पूर्ण परिचित है। ईश्वर से पूर्ण परिचित पथ-प्रदर्शक को ही समाज में कामिल पीर (पूर्ण सद्गुरु) के नाम से पुकारा जाता है। इनके मिलने का स्थान इनकी खानकाहें (आध्यात्मिक आश्रम) हैं। ईश-वचन, ईश-ग्रन्थ तो ईश्वर का कानून है, इसे हम कहीं भी ग्रहण कर सकते हैं। किन्तु ईश-कानून के परिपालन का ज्ञान हमें ईश-अधिकृत सद्गुरु से ही प्राप्त होगा। क्योंकि सच्चा ईश-सेवक इनके सिवा कोई नहीं। यही जानते हैं मुक्ति का मार्ग। यही बताते हैं कि पवित्र काबा में ईश्वर का बन्दा किस तरह हाजिर हो कि वह यह कह सके- 'ऐ अल्लाह मैं तेरे लिए हाजिर हूं।'

प्रश्न 2 : इस्लाम क्या है? इस्लाम में सूफी हजरात हैं या गैर-इस्लाम में? इस्लाम में जेहाद क्या है? विश्वस्तरीय जेहाद का वर्तमान स्वरुप क्या सत्य इस्लाम पर निर्भर है?

उत्तर : (क) सूफी दीदार शाह चिश्ती : इस्लाम के संस्थापक एवं ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के अनुसार- "कल्मए-शहादत पढ़ना और पांच समय की नमाजें अदा करना तथा तीस दिन रमजान के रोज़े रखना; जकात देना और ताकत हो तो हज भी अदा करना, यही इस्लाम है।" प्रत्यक्ष में इस्लाम की परिभाषा काफी सरल दिखाई दे रही है, किन्तु इस पर चलना सरल नहीं है। सबसे कठिन कार्य है पहले कल्मा तैय्यब (लाईलाहअ ईल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह अर्थात- नहीं कोई माबूद या पूज्यनीय सिवाए अल्लाह तआला या ईश्वर के तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के ईशदूत-रसूल हैं।) पढ़ना और कल्मे के अनुरुप खुद के अन्दर ईश्वर/अल्लाह को कायम करना तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को दिल से अपना ईशदूत स्वीकार करना।

यहां यह समझना जरुरी है कि-'लाईलाहअ' (नहीं कोई माबूद) क्या हैं? किसी बच्चे की परवरिश उसके माता-पिता करते हैं, मगर वह माबूद या ईश्वर नहीं। हमें रोजी-रोटी के लिए दूकान या कारोबार से पैसे मिलते हैं, लेकिन दूकान या धन्धा माबूद नहीं। हमें नौकरी से वेतन प्रदान करने वाला माबूद या खुदा नहीं। हम ग़म, फ़िक्र, मोहमाया और ईच्छा, आवश्यकता में आकण्ठ डूब जाते हैं, दिल-दिमाग उसी चिन्ता में लगा रहता है, ये माबूद नहीं। यानी हर वह बात जो ईश्वर के सिवा अन्य किसी उलझन में डाल दे, वह इस कल्मे के अनुसार 'ला ईलाहअ' है। ईश्वर या अल्लाह के सिवा हमारा दिल-दिमाग किसी भी मामले में चिन्तामग्न रहे, तो हमने ईश्वर के सिवा अपना माबूद या ईश्वर उसी चिन्ता को बना लिया। हमने 'लाइलाहअ' पर अमल नहीं किया। ऐसी सूरत में हमारा 'ईल्लल्लाह' कहना या पढ़ना बेअसर है। यही कारण है कि इस्लामी ईल्म और अमल के लिए कामिल पीर (पूर्ण सद्गुरु) हर इन्सान के लिए लाजिम (अनिवार्य) है। यह कल्मा जेहाद का आदेश दे रही है। अपने हर ईच्छा, अहंकार आदि को 'लाईलाह' (नहीं कोई माबूद) करके जेहाद करो तब ईल्लल्लाह तक पहुंच सकोगे। जेहाद वास्तव में ईश्वर-प्राप्ति हेतु अन्तर्मन से युद्ध है। क्योंकि अन्तर्मन में ईश-प्रेम के अतिरिक्त किसी भी अन्य प्रेम या मोहमाया का रहना उसी को 'नहीं कोई माबूद' (लाईलाहअ) बताया गया है। इन्हें दिल-दिमाग से बाहर निकालने का नाम जेहादे अकबर (सर्वश्रेष्ठ ईशप्राप्ति युद्ध) है। कल्मा शहादत "अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदन अब्दहू व रसूलहू।" (अर्थात : मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर के अतिरिक्त कोई पूज्यनीय नहीं। मैं गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के बन्दे और ईशदूत (रसूल) हैं।) का पढ़ना उन्हें देखने की तरफ संकेत है। शहादत या गवाही सत्य वही होती है जो आंखों देखी हो। सुनकर या विश्वास में दी गई गवाही पक्की नहीं मानी जा सकती। चश्मदीद गवाही सत्य होती है। अब जो भी मुसलमान हैं अपने आपको देखें कि वह अल्लाह तआला (ईश्वर) और उनके ईशदूत (हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम) को देखकर कल्मा-शहादत पढ़ते हैं? यदि नहीं तो वह शहादत देने का ईल्म हासिल कर

ताकि उनकी गवाही (शहादत) सच्ची हो। सच्चे मुसलमान के लिए कल्मा-शहादत का इकरार अल्लाह तआला (ईश्वर) और उनके रसूल (ईशदूत) को देखकर देना पड़ेगा। जिनकी शहादत सच्ची हुई, वह रोजा, नमाज, हज, जकात, तौहीद को भी सच्चे ढ़ंग से अदा करेंगे। 'शहादत' देने का ईल्म ईश्वर द्वारा घोषित उनके अन्तिम पैगम्बर (ईशदूत) हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के पास है। हजरत पैगम्बर साहब ने यह ईल्म बैय्यत करके (शिष्य बनाकर) अपने विशिष्ट सहाबा (प्रमुख चार खलीफा) तथा अहले-सुफ्फा हजरात को दिया है। ईश्वर द्वारा अधिकृत ईशदूत से जिन्होंने यह ज्ञान लिया, वे भी ईशदूत द्वारा अधिकृत हुए। इन अधिकृत ईशदूत प्रतिनिधिया ने अहले बैत एकराम को दीक्षित किया। इनसे ताबईन तथा ताबईन से तब्बे ताबईन ईश-ज्ञान से दीक्षित हुए। अहले-सुफ्फा हजरात के पद्चिन्हों पर जो चला, वही 'सूफी' नाम से पुकारा गया। 'सूफी' वह जो, ईश एवं ईशदूत दर्शन में परिपक्व हो। जिसमें यह दर्शन-गुण नहीं, वह नकली सूफी है। अहले सुफ्फा जब इस्लामवाले हैं तो सूफी इस्लाम से बाहर कैसे होगें? वास्तव में सच्चे इस्लाम के नियम-कानून पर बाअमल यही सूफी समुदाय है। यही तो कामिल पीरों के रुप में दुनियां में चर्चित हैं। इन्हीं कामिल पीरों (पूर्ण सद्गुरु) की इस्लामी शिक्षा-दीक्षा से वली-औलिया पैदा होते हैं। **क्या कोई बताएगा कि वली-औलिया किस इस्लामी शिक्षण संस्थान से उत्पन्न होते हैं?** ईश्वर की सरकार की ओर से कामिल पीर अधिकृत ईश्वरीय प्रशिक्षक हैं। शेष अनाधिकृत हैं। शहादत देने का ईल्म यही ईश-प्रतिनिधि जानते हैं। यह प्रमाणित सत्य है। हजरत ख्वाजा गरीब नवाज को ईश एवं ईशदूत दर्शन का प्रशिक्षण उनके कामिल पीर हजरत उषमान हारुनी ने दिया। हजरत बाबा फरीदगंज शकर ने कल्मा तौहीद और कल्मा-शहादत का प्रमाणित प्रशिक्षण सैय्यद निजामुद्दीन औलिया तथा हजरत अलाऊद्दीन साबिर कलियरी को दिया। **पीरों के शेजरा-शरीफ साक्षी हैं कि सच्ची शहादत देने वाले इस्लामी मुसलमान कौन-कौन हैं?** अगर हम इस्लाम में दाखिल हैं, तो हमें ईश्वर एवं ईश्वर के ईशदूत द्वारा अधिकृत कामिल पीर से इस्लाम की सच्ची तालीम लेनी होगी। सोचिए, कल्मा-शहादत के मुताबिक हम सच्चे शहादतवाले मुसलमान हैं या नहीं? यदि नहीं, **तो शहादत का ईल्म हासिल करना हर मुसलमान पर फर्ज है।** इस्लामी बुनियाद यदि दुरुस्त नहीं है, फिर तो हर इस्लामी काम में हमसे गड़बड़ी हो सकती है।

कल्मा तैय्यब 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' है। अर्थात- नहीं कोई पूज्यनीय, ईश्वर के सिवा। मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईशदूत हैं। इस कल्मे में 'लाइलाहअ' (नहीं कोई पूज्यनीय) यह जेहादे अकबर (सर्वश्रेष्ठ जेहाद) है। **हमारी इन्द्रियलिप्सा, मोहमाया, लालच, खुदगर्जी, अहंकार, चिन्ता, कष्ट आदि यदि दिल-दिमाग में घर बनाए हुए हैं, तो यही हमारे माबूद (ईश्वर) बनकर पूज्यनीय हो जाते हैं।** ईसलिए इन्हें सच्चा मुसलमान या ईश-बन्दा 'नहीं' (ला)

करके पहले दूर भगावे। बिला 'एलाहअ' को 'ला' किए- ईल्लल्लाह का कथन सार्थक कैसे माना जाएगा? **यहीं 'एलाहअ' से जंग करना, जेहादे अकबर है। जो जेहाद बम, बन्दूक, बारुद से जारी है, वह क्या इस्लामी जेहाद है? बिलकुल नहीं। यह जेहाद तो मानवतावादी-हत्या का है, जिसकी आज्ञा न ईश्वर-अल्लाह देता है और न इस्लाम।** कहीं इन्सानियत का खून करने से, किसी को ईश्वर की प्राप्ति हुई है? इस कुकर्म से ईश्वर या इस्लाम का कोई वास्ता नहीं। यदि कोई मुसलमान इस नृशंस हत्याकाण्ड को 'जेहाद' मानता है तो निश्चित रुप से उसने इस्लामी शिक्षा ईश्वर एवं उसके ईशदूत (पैगम्बर) द्वारा अधिकृत इस्लामी प्रशिक्षक (कामिल पीर) से नहीं लिया है। ईश्वर द्वारा अनाधिकृत प्रशिक्षकों से जेहाद की गलत परिभाषा दुनियां में फैलायी जा सकती है, जो केवल इस्लाम-विरोधी ही नहीं, ईश्वर-विरोधी कार्य-प्रणाली है।

(ख) सैय्यद महमूद रजा अली शाह (उर्फ सर विलियम जे0 थामस) :- इस्लाम क्या है? सबकी कुशलता चाहने वाला। सम्पूर्ण विश्वमानवजाति की कुशलता जिसमें निहित है, वही इस्लाम है। इस्लाम की पहचान आज दुनियां हम मुसलमानों में तलाश कर रही है। इस्लाम देखना है तो उसके संस्थापक हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के जीवन-शैली में देखें। इस्लाम देखना है तो हजरत पीराने-पीर दस्तगीर, ख्वाजा गरीब नवाज, बाबा ताजुद्दीन औलिय, हाजी अली, हाजी मलंग, हाजी वारिस अली शाह, सैय्यद निजामुद्दीन औलिया जैसे वली-औलिया में नजर आएगा। इस्लाम हमें हजरत अबू बकर सिद्दीके अकबर, हजरत उमर फारुके आजम, हजरत उषमान गनी और हजरत अली में दिखाई देगा। ताबईन और तब्बे ताबईन की जमात से सच्चे इस्लाम में हरियाली आयी। उसी हरियाली ने दुनियां में कामिल पीर और वली-औलिया को जाहिर किया। इस्लामी हरियाली रसूले पाक का अमली ईल्म है। वही ईल्मे-पाक आज भी कामिल पीरों के सीने में जिन्दा है।

मौजूदा दौर में हम नाम और शक्लो-सूरत से मुसलमान जरुर दिखाई देते हैं। मगर हमारे किरदार में इस्लामी खुश्बू नजर नहीं आती। हम पंजवक्ता नमाज़ें पढ़ते हैं, तिलावते कुरआन करते हैं, रोजा रहते हैं, तौहीद का जिक्र-अजकार करते हैं, मगर इस्लामी-ईमान की बूबास हममें नहीं मिलती। वजह सिर्फ इतनी है कि हमने इस्लाम को जुबान और जिस्म से अदा करना जान लिया है। हमारे दिल ने इस इस्लामी पाक काम में पाकीजगी के साथ शिरकत नहीं की। इसी पाक दिल की गैर-हाजरी हमें सच्चा मुसलमान बनने नहीं देती। इस कमी ने हमें संख्या में मजबूत जरुर किया है, मगर इस्लामी ईमान में हम कमजोर हो गए। **मुसलमान तो इस्लाम के सच्चे ईमानवाले का नाम है। फिर नृशंस हत्या, बेईमानी, झूठ, मकरो-फरेब, गद्दारी, छल-प्रपंच, लालच, नफ्सपरस्ती, खुदगर्जी, धोखाधड़ी, अमानत में ख्यानत जैसे गन्दे और नापाक काम मुसलमानों से जाहिर कैसे होते हैं?** यह कुसूर है सिर्फ रस्मी और नुमाईशी इस्लाम में जिन्दगी गुजारने की। यह

रिवाज छोड़ना इसलिए मुश्किल है, क्योंकि हक्की इस्लाम में दाखिल होना अपने नफ्सी शैतान से दूरी पैदा करना है। हमें महसूस होता है कि सच्चे इस्लाम की पैरवी करना जिन्दगी को मायूस करना है। हम ऐसे इस्लाम में क्यों जियें, जहां लोभ-लालच, हिर्स, हवा, तकब्बुर और शान-बान की नुमाईश न हो। हमें नफ्सकुशी वाले इस्लाम की जरुरत क्यों होगी? जब नफ्स की कुशादगी के साथ हम मुसलमान कहला सकते हैं? सरल इस्लाम और सरल मुसलमान बने रहने से हमें हर तरह का लाभ ही लाभ तो है। भला ऐसा इस्लाम हम क्यों ग्रहण करें, जो यह कहे कि 'ईल्लल्लाह' कहने से पूर्व अपनी सारी दुनियांवी मुहब्बत को तर्क करो। अपने नफ्सी माबूदों को 'ला' (नहीं) करो।

अल्लाहो अकबर ! ऐसा कल्मा हम क्यों पढ़ें? अगर ठीक से पढ़ लिया तो हमारी दुनियांवी ख्वाहिश और शानो-शौकत का क्या होगा? हमारे रिवाल्वर, बन्दूक, कार, बंगले को देखकर कौन कहेगा कि मैं बड़ा आदमी हूं? लाईलाहअ ईल्लल्लाह पढ़ता रहूंगा, कौन जानेगा कि मैंने 'एलाहअ' को 'ला' (नहीं) किया या नहीं? हमारे पंजवक्ता सजदों से तो लोग यूं ही मुझे दीनदार, मुत्तकी, परहेजगार समझते हैं। अल्लाह तआला मुझे माने या न मानें, यह उसकी मर्जी। मगर मेरा समाज तो मुझे 'मजहरे इस्लाम' (इस्लाम के प्रकटकर्ता) समझता है। इस्लामी मजहर यूं तो औलिया अल्लाह हैं, मगर आज यह लकब (उपाधि) मेरी शान को रौशन करता रहता है। ऐसे नशे में चूर मुसलमानों को किसकी मजाल है, जो कल्मा- 'लाएलाहअ' उन्हें कोई दुरुस्त पढ़ाए। वह तो न जाने कितनी बार कल्मा पढ़ते और पढ़ाते रहते हैं? *उनकी जुबान धीरे से कहती है 'ला' (नहीं) और हलक से आवाज निकलती है की कायम* है हमारा- 'एलाहअ' (पूज्यनीय मालोजर, शानो-शौकत, ऐशो-ईशरत आदि)। और कायम है हमारा- 'ईल्लल्लाह'?

--- इन्हें कौन सुझाएगा कि कामिल पीर (पूर्ण सद्गुरु) की शिक्षा से जब अल्लाह के वली पैदा होते है, फिर क्या वही तालीम सच्चा इस्लामी मुसलमान नहीं बना सकती? मैं हैरान हूं ऐसे लोगों पर जो मुसलमान तो हैं, मगर उन्हें सच्चे इस्लामी मुसलमान बनने में शर्म आती है। आज यही बेशर्मी या अज्ञानता मुसलमान को आतंकवादी और क्रूरतम जेहादी बनाने में कामयाब है। जब 'लाएलाह' हममें दुरुस्त होता, तो ईमान में मजबूती होती। जब ईमान मजबूत होता, तो तथाकथित जेहादी खूनी खेल मुसलमान नामक व्यक्ति नहीं खेलता? ईमान मजबूत होता तो ओसामा बिन लादेन या मुल्ला उमर नकली जेहाद की पैरवी न करते? ईमान की मजबूती होती तो अब्दुलकरीम तेलगी जाली स्टैम्प पेपर मुद्रित कराकर देश के साथ गद्दारी नही करता? ईमान अगर कायम है तो मुसलमान किसी के साथ धोखाधड़ी या छल-प्रपंच नहीं कर सकता? ईमान अगर है तो मुसलमान अपनी जान दे सकता है, किसी की जान नहीं ले सकता? अरे हकीकत तो यह है कि ईमान का दूसरा नाम इस्लाम है। अब

मुसलमान परखें कि उनमें ईमान कितना दाखिल है? यह ईमान की ही कमजोरी है कि सलमान रुश्दी ने ईश-वाणी कुरआन को शैतान-वाणी समझा। सलमान जब ईश्वर-वाणी 'ला इलाहअ' को नहीं समझ पाया, फिर वह विशाल ईश-वाणी 'कुरआन' कैसे समझ पाता? ईश-वाणी को वह अपने नफ्सी शैतानों को 'ला इलाह' करके नहीं देखा। किसी कामिल पीर से उसने नफ्सकुशी की तालीम भी नहीं लिया। अपने शैतानी नफ्स की मौजूदगी में, उसे शैतानी आयात के सिवा नजर क्या आता? शैतान तो अपनी शैतानियत दिखाएगा? इसलिए रुश्दी को शैतान माना गया। तसलीमा नसरीन अगर सच्चे इस्लामी अमल को जानतीं तो उन्हें 'लज्जा' लिखने की जरुरत नहीं पड़ती। हमें हैरत है कि जिसमें 'लाईलाह' ही दाखिल नहीं हो, वह ईल्लल्लाह और इस्लाम को कैसे समझेगा?

प्रश्न 3 : क्या इस्लाम में भिन्न-भिन्न प्रकार की मान्यता वाले मुसलमान हैं? ऐसा क्यों? क्या इस्लाम अलग-अलग प्रकार का दीन (मजहब) है?

सैय्यद महमूद रजा अली शाह : इस्लाम तो एक है। इस्लाम का ईश्वर एक है। ईशदूत (पैगम्बर) एक हैं। इस्लाम का ईश-वचन संग्रह 'कुरआन' तो एक ही है। अब जब सम्पूर्ण इस्लाम एक है, फिर भिन्न-भिन्न मान्यता वाले मुसलमानों को आप यदि देख रहे हैं, तो निःसन्देह यह चिन्तनीय स्थिति है। मुसलमानों की मान्यता तो यथार्थ इस्लाम में है। यथार्थ इस्लाम क्या है? यही समझ लेने पर मुसलमान की पहचान हम कर सकते हैं। यह निर्विवाद सत्य है कि इस्लाम की सच्ची पैरवीं करने वाले का नाम 'मुसलमान' है। न कि 'मुसलमान' होने का नाम 'इस्लाम' है। यह अन्तर वृहद है, यह बहुत बड़ा अन्तर है। इसी अन्तर की गैर-जानकारी ने इस्लामी लोगों में भिन्न-भिन्न मान्यताएं पैदा कर दिया। इस्लाम की सत्यता क्या है, इसे संक्षेप में जान लें।

1- ईश्वर द्वारा तमाम ईशदूतों (पैगम्बर, ऋषि, अवतार, रसूल, नबी आदि) के बाद अन्तिम ऋषि (नराशंस या कल्कि अवतार) के रूप में अरब देश के मक्का शहर में हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहे व सल्लम आए। ईश्वर ने अपने ईशदूतों को धरती पर मानव कल्याण के लिए जब-जब भेजा है, तो मानव-माध्यम को प्रयुक्त किया। कहीं देवकी-वासुदेव, राजा दशरथ, हजरत मरियम (मेरी) आदि माध्यम बनें, कहीं हजरत अब्दुल्लाह और हजरत आमना बीबी। आम आदमियों ने आम नजर से ईशदूतों को अपने जैसा मानव समझ लिया। किसी ने मानव-सरदार (सैय्यदुल बशर) समझा, तो किसी के मन में यह वहम घुस पड़ा कि ईशदूत के बताए पूजा-पद्धति और ईश हेतु कर्म को यदि हम मानव भी करते हैं तो ईशदूत के बराबर हो सकते हैं? यह मान्यताएं कहीं दम्भ में की गयीं तो कहीं यह सोचकर किया गया कि ईशदूत तो सशरीर हैं नहीं, फिर मुझे ईशदूत बन जाने या ईशदूत सहायक बनने में समस्या क्या है? ऐसे लोगों ने बाकायदा संगठन तैयार किया और ईश-सेवा के

नाम पर ईशदूत–प्रतिस्पर्धा कार्यक्रम आरम्भ कर दीं। इनके पीछे ऐसे धन–आपूर्तिकर्ता भी सहयोग देने लगे, जो नाम तो इस्लाम का लेते हैं, मगर करते हैं अपनी निजी इस्लाम–विरोधी मान्यताओं का प्रचार–प्रसार। हमने देखा है कि इस्लामी सूरत–शक्ल में मुसलमान कहलाने वाले कुछ लोग उर्दू, अरबी, अंग्रेजी, मराठी, बंगाली, तमिल आदि भाषाओं में इस्लामी–प्रचार के नाम पर गैर–इस्लामी मान्यताएं समाज में बांटते रहते हैं। इस कार्य में वे पत्र–पत्रिका, पुस्तक, सीडी, वीसीडी तथा टी0वी0 चैनल्स आदि का प्रयोग भी जमकर करते हैं। इनके हर जगह दफ्तर, शिविर, केन्द्र दिन–प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। जकात, चन्दा, हदिया, फित्तरा आदि अनेक नामों से धन–प्राप्ति देश–विदेशों से करते–रहते हैं। भारत सरकार धार्मिक कार्य समझ कर इन्हें नहीं छूती। इनमें इस्लाम की सत्यता वास्तव में कितनी है? यह केन्द्रीय अन्वेषण ब्युरो (सी0बी0आई0) अथवा रॉ विभाग कैसे समझे? धर्म एवं धार्मिक स्वतन्त्रता के नकाब में इसी निजि मान्यता वाले इस्लाम का प्रचार–प्रसार धड़ल्ले से जारी है। जिसमें वास्तविक इस्लाम की बूबास ही नहीं है। इसे हम इस्लाम के नाम पर स्वयं की मान्यता का प्रचार कह सकते हैं। इसी भ्रामक इस्लामी जागरण अभियान ने यथार्थ इस्लाम की महाशान्ति को नाना–नाना प्रकार की अशान्ति में परिवर्तित कर दिया है। इन्हीं अभियानों की प्रगति है कि मुसलमानों की संख्या ख़ूब दिखाई पड़ती है, मगर उनमें सच्चा इस्लाम कितना है, यह बता पाना कठिन है?

2– इस्लाम के ईशदूत के बाद ईश्वर द्वारा ईशदूत धरती पर अब कोई नहीं भेजा जाएगा। इससे प्रमाणित होता है कि इस्लामी ईशदूत का कार्यकाल उनके सशरीर दिखाई न देने के बाद भी, ईश्वर द्वारा प्रलय (कयामत) तक के लिए वही ईशदूत प्राधिकृत किए गए हैं। कोई इस ईश–व्यवस्था को माने या न माने किन्तु सच्चे मुसलमान को तो मानना ही पड़ेगा की उनके ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेहीं व सल्लम आज भी उनके ईशदूत हैं और प्रलय तक जो भी पीढ़ियां आती रहेंगी, उनके भी ईशदूत वही होंगे। यही इस्लाम की यथार्थ मान्यता है। अब ईश–सेवा या इस्लाम–सेवा करने का अधिकार उसी को है, जिन्हें ईशदूत द्वारा अधिकृत किया जाए अथवा ईश्वर द्वारा किसी ईश–बन्दे को आदेशित किया जाए? यदि किसी भी बन्दे को ईश्वर या ईशदूत द्वारा ईश–सेवा कार्य के लिए निर्देशित–आदेशित नहीं किया गया है तो ऐसे बन्दे द्वारा ईश–सेवा कार्य यदि किया जाता है तो अवैध है। और ऐसा अनाधिकृत व्यक्ति प्रत्यक्ष में पुण्यकर्म तथा ईश सेवा कर्म करता जरूर दिखाई देता है, मगर वह करता है ईश–कानून का उलंघन। ईश–सेवा के लिए पहले किसी पूर्ण ईश–सेवक (कामिल पीर) से दीक्षित हो कर ईश–सेवक की योग्यता तो अपने में पैदा कर लें। हमें ऐसे लोगों पर हंसी आती है, जो ईश–बन्दे के नियम पर ही दुरुस्त नहीं हैं, लेकिन वह ईश–सेवक होने का छल–प्रपंच शान से करते रहते हैं। आश्चर्य तो यह भी है कि वह अरबी भाषा में ईश्वर के पूज्यनीय होने तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को ईशदूत होने की बिना देखे गवाही भी देते रहते हैं तथा स्वयं का

इस्लामी रहबर या रहनुमा भी घोषित करते हैं। ईश्वर या ईशदूत से जब भेंट या मुलाकात ही नहीं, तो इन्हें ईश-सेवा करने की अनुमति मिलेगी कैसे? जाहिर है कि ऐसे लोग अनाधिकृत ईश-सेवक हैं, जिनसे प्रमाणिक और यथार्थ इस्लाम की रौशनी नहीं फैलेगी। यह अनाधिकृत इस्लाम फैलाएंगे। इनका इस्लाम रस्म-रिवाज और इस्लामी तौर-तरीके का तो दिखेगा, मगर सच्चे इस्लाम की सुगन्ध उसमें नहीं होगी। ऐसे लोगों को इस्लामी तराजू पर तौला जाए तो इनकी सारी क्रिया-क्लाप ईश्वर और ईशदूत के कथन की सत्यता से काफी दूर मिलेगी। उदाहरण के लिए **कल्मा (महामन्त्र)- 'लाईलाह ईल्लल्लाह' (नहीं कोई पूज्यनीय, ईश्वर ही है पूज्यनीय) तो वह खूब पढ़ते मिलेंगे, मगर 'ईलाह' (दुनियादारी) के साथ उनका हार्दिक सम्बन्ध गहरा होगा। यही कथनी-करनी का भेद उन्हें सच्चे इस्लाम से दूर करता है।** फिर भी वह इस्लामी रहनुमा कहलाने में गर्व महसूस करते रहते हैं। ऐसे लोगों की संख्या आज सर्वाधिक वृद्धि में है। क्योंकि यह 'सरल इस्लाम' के अनुयायी हैं। इस्लाम की सत्यता को समाज में ढंकने-छिपाने वाला यह गिरोहबन्द समुदाय है। इन्हीं से भिन्न-भिन्न इस्लामी मान्यताएं उत्पन्न होतीं रहतीं हैं। ऐसे लोग इस्लाम के पर्दे में छिपे खतरनाक विषाणु (Dangreous Virous) हैं, जो सच्चे इस्लामी जीवन को रस्मी इस्लाम के रुप में बढ़ावा देते रहते हैं। इनसे सावधान रहना हर मुसलमान पर फर्ज है।

3- इस्लाम की सच्चाई हमें कहां मिलेगी? यह हमें गहनता से छानबीन करनी होगी। इस्लामी ईशदूत या ईश्वर के अन्तिम तथा प्रलयकाल तक के लिए ईश्वर द्वारा घोषित ईशदूत (पैगम्बर, रसूल) हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हैं। उन्होंने ईश-आदेशानुसार शिष्य भी बनाए। इस्लाम में इसी प्रक्रिया का नाम 'पीरी और मुरीदी' है। ईशदूत स्वयं एक महानतम सद्गुरु (सर्वश्रेष्ठ कामिल पीर) के रुप में अपने विशिष्ट सहाबा (खलीफा) हजरत अबु बकर सिद्दीके अकबर हुजूर, हजरत उमर फारुके आजम हुजूर, हजरत उषमान गनी हुजूर तथा हजरत अली करमुल्लाह वजहू आदि को मुरीद (शिष्य) भी बनाए। असहाबे-सुफ्फा भी उनके मुरीद थे। पता चला की खुल्फाए-राशेदीन और असहाबे सुफ्फा तथा तमाम सहाबा के वह रसूल भी हैं और कामिल पीर भी। ईशदूत के इसी सत्य मार्ग पर उनके सारे शिष्य चले और दुनियां को चलाए। इन्हीं से सच्चा इस्लाम अहले बैत एकराम और ताबईन एकराम तक बैय्यत (पीरी-मुरीदी) के माध्यम से पहुंचा। पुनः तब्बे-ताबईन एकराम के माध्यम से सच्चा इस्लाम बेशुमार वली-औलिया को प्रकट करने लगा। यही वह जमात है, जिसके पास इस्लाम की सच्चाई आज भी सुरक्षित है। यह किसी मान्यता अथवा फिरका या गिरोहबन्द इस्लाम की जमात नहीं है। यही वो जमात है, जो आज भी ईश्वर और ईशदूत की सत्यता को प्रमाणित करते रहते हैं। यही असल इस्लामी जमात है, जिसमें सरल या रस्मो-रिवाज वाले इस्लाम की गुंजाईश नहीं है। यही वह दीने-मुहम्मदी है, जो देखकर अल्लाह तआला (ईश्वर) और हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम की

शहादत (गवाही) देते हैं। इनकी नमाजें ईश-मिलन (मेराज) वाली होती है। इनके हर इस्लामी कार्य ईश्वर और ईशदूत के निर्देशानुसार ही क्रियान्वित होते हैं। इसी जमात के अनुयायी पीरी-मुरीदी के इस्लामी तालीम से खुदाई रास्ते पर चलते हैं। क्योंकि ईशदूत का ईश-रहस्यवादी ज्ञान इनके पीरों के दिलों में सुरक्षित है।

इन पीरों का इस्लाम यह है कि वह कल्मा 'लाईलाह' (नहीं कोई पूज्यनीय) का जाप तब तक करते रहते हैं। जब तक उनके मन, हृदय, विचार और ध्यान से हर प्रकार की लोभ, मोहमाया, चिन्ता, दुःख, कष्ट आदि सांसारिक ईच्छाएं समाप्त न हो जाएं। तब यह अन्दर-बाहर से खाली होकर 'ईल्लल्लाह' (ईश्वर ही पूज्यनीय) पढ़ते हैं। और यही इस्लाम की सच्ची पैरवी है। इस सत्य साधना से ही दर्शन-मिलन के द्वार खुलते हैं। तब उनकी ईश-दर्शन वाली आंखें देखकर कल्मा-शहादत पढ़ती हैं। वो सच्चे साक्षी हैं, इसलिए कह उठते कि मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। मैं गवाही देता हूं कि यह मेरे रसूल हजरत मुहम्मद सल्ले अला हैं, जो ईश्वर के बन्दे और रसूल हैं। इस्लाम के सच्चे साक्षी का नाम कामिल पीर है। जिसने ईशदूत के सत्य ज्ञान पर चलकर ईश्वर और ईशदूत का साक्षात्कार किया। उनसे गुप्त वार्ता और मिलन की क्षमता रखा। वही ईश व ईशदूत द्वारा ईश-सत्यता (इस्लाम) की दीक्षा समाज को देने हेतु अधिकृत किए जातें हैं। कामिल पीर ईश्वर द्वारा अधिकृत है ताकि वह ईश्वर की सत्यता एवं ईश-वचन के निर्देश को समाज में बांटे। ईश-प्राप्ति का ज्ञान भी वह ईच्छुकों को दें। उन्हें ईशदूत द्वारा भी अधिकृत इसलिए किया जाता है क्योंकि दिव्य दृष्टि से वह सम्पन्न है। वह ईशदूत के कथन-वचन एवं शिक्षा-ज्ञान को मात्र शब्दों से नहीं जानते। वह ईशदूत से मिलन रखते हैं। इसलिए सत्य ईशदूत वचन (हदीस एवं हदीसे कुदसी) के आशय से परिचित है। ध्यान से सोचिए ईश्वर और ईशदूत की सत्यता से जो रु-ब-रु है, वही तो सत्य ईश सन्देश समाज को दे सकता है। यही कारण है कि कामिल पीर ईश व ईशदूत अधिकृत सामाजिक पथ-प्रदर्शक या इस्लामी रहनुमा हैं।

पीरी-मुरीदी के जो मुन्किर हैं, क्या उन्हें सच्चे इस्लाम का ज्ञान मिलना सम्भव है? सच्चा इस्लाम तो सत्य ईश्वर और सत्य ईशदूत के दर्शन-मिलन और सम्पर्क कराने का नाम है। ताकि हम उस एक पवित्र ईश्वर के प्रमाणित बन्दे बन सकें। केवल इस्लामी नियम एवं आचार-संहिता का ज्ञान होना या लेना, यह सत्य प्रमाणित इस्लाम कैसे माना जाएगा? इस्लाम, जब बन्दे में प्रवेश करता है तो बन्दा एक दिन ईश्वर का नेकबन्दा बन जाता है। यही बन्दे की हद या सीमा है। बन्दा जब बन्दगी से ईश्वर द्वारा नेकबन्दा घोषित हो जाए तो उसकी बन्दगी और जिन्दगी दोनों सफल हो जाती है। यही सत्य और यथार्थ इस्लाम है। ऐसा बन्दा मुसलमान है। ईश-पूजा, नमाज, प्रार्थना करना यह इस्लामी कार्य कहला सकता है। मगर जब तक हमारी पूजा-नमाज, जप-तप (जिक्रो अजकार) से ईश-सम्पर्क हासिल न

हो, हम ईश्वर के नेकबन्दे हैं, यह कैसे साबित हो सकता है? वास्तव में इस्लामी नेकबन्दे का दूसरा नाम वली-औलिया है। ईश्वर-दर्शन तथा ईशदूत-दर्शन, जिन्हें दोनों प्राप्त है। जिन्हें ईश्वर अपने विशेष पुरस्कार (वेलायत) से सम्मानित करे, वही ईश्वर के नेकबन्दे हैं। इसलिए नेकबन्दे की सनद (प्रमाण-पत्र) ईश्वर की चिरस्थाई यश-कृपा है। उर्दू भाषा में इसे ही 'वेलायत' कहते हैं। जिसे अल्लाह की वेलायत मिली, वही अल्लाह के वली-औलिया कहलाते हैं। यही है नेकबन्दे की पहचान। वेलायत उसे ही प्राप्त होती है, जिसे ईश-साक्षात्कार एवं ईशदूत दर्शन मिल जाए। दर्शन अगर नहीं है, फिर वेलायत आप कैसे पाएंगे? वेलायत ईश्वर देता है, इसलिए ईश-साक्षात्कार सम्पन्न बन्दा होना चाहिए। वेलायत से वली है। वेलायत ईश्वर के ईनाम का नाम है। ईश्वर की वेलायत अनश्वर होती है। इसी कारण ईश्वर का नेकबन्दा भी अमर बन जाता है। ख्वाजा गरीब नवाज, सैय्यद निजामुद्दीन औलिया, बाबा हाजी मलंग, बाबा ताजद्दीन औलिया, जिन्दा शाह मदार आदि क्या आज भी अमर नहीं हैं? इस अमर जीवन के पीछे ईश्वर द्वारा प्रदान की गई 'वेलायत' है। अगर वे ईश-कृपाहीन होते तो यह अमरत्व उन्हें हरगिज नहीं मिलती। इसीलिए कल्मा तम्जीद में ईश्वर ने नेकबन्दे का उल्लेख किया। नमाज के तशहुद में अल्लाह के नेकबन्दे भी शामिल हैं। यही नेकबन्दे हैं, क्योंकि इन्हें अल्लाह तआला ने अपनी 'वेलायत' का मेडल (पदक) दिया है। इन्हीं नेकबन्दों का उल्लेख ईश्वर ने अपने ईश-वाणी (कुरआन) में किया है। इसे सच्चा इस्लाम इसीलिए कहना पड़ेगा, क्योंकि इस ज्ञान-ध्यान मार्ग पर सफल होने वालों को अल्लाह तआला ने अपनी 'वेलायत' प्रदान की है। ईश्वर जिस ईश-पूजा मार्ग पर चलने वाले को अपना अमर जीवनदायिनी ईश-कृपा (वेलायत) दे रहा है, वह मार्ग गलत, भ्रामक या गुमराही का रास्ता कैसे हो सकता है? जिस ईश-मार्ग में ईश-कृपा (वेलायत) नहीं, वह मार्ग निस्सन्देह सन्देहास्पद है। इन तीन क्रम बिन्दुओं से यह प्रमाणित हुआ की इस्लाम की वास्तविकता क्या है? सत्य-असत्य या भ्रामक मान्यताएं अथवा भिन्न-भिन्न मतों के कारण क्या हैं? सत्य विवेचन से यह रहस्य भी खुला की जिस 'इस्लाम' को हम एक मजहब के रुप में समझ रहे हैं, वह इस्लाम तो वास्तव में 'ईश धर्म' है। ऐसा धर्म जो ईश्वर और उसके ईशदूत तथा ईशदूतों के परमप्रिय प्रतिनिधियों आदि से मिलन-वार्ता कराने की शक्ति रखता है। इस्लाम सभी के लिए सबकी सलामती (कुशलता) का ईश धर्म है। ईश्वर सबका है, इसलिए इस्लाम पर अधिकार भी सभी का है।

प्रश्न 4 :- ईशदूतों की वास्तविकता क्या है? क्या वे हम जैसे मानव हैं?

सर विलियम :- ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा से सचमुच ईश-प्राप्ति सम्भव है। क्या किसी को इस तथ्य में सन्देह है? इस सत्य में सन्देह का कोई भी स्थान नहीं है। सन्देह, शंका, कुशंका, भ्रम, कल्पना आदि का स्थान तो दुनियां की वस्तुओं में होता है। ईश्वर, अल्लाह या गॉड की राह में ऐसे

सांसारिक दोषों का कहीं भी स्थान नहीं है। जानते हैं ऐसा क्यों? क्योंकि जिसे हम परमेश्वर-खुदा कहते हैं, वह दोषरहित है। दूसरे शब्दों में वह हर दोषों से पूरी तरह पवित्र है। वह सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी इसीलिए सारे जहान से सबसे बड़ा परिपूर्ण है और सबसे बड़ा पवित्र एवं परम शुद्ध है। इसी कारण जिसने उसे पाया है, वह भी पवित्र हो जाता है।

ईश्वर को पाना तथा ईश्वर की याद करना, ये दोनों स्थितियां अलग-अलग हैं। सारे ईशदूत ईश्वर के पास हैं और वे वहीं से आए फिर उसी ईश्वर के पास गए। इसलिए सारे ईशदूत या नबी, पैगम्बर पूर्व से ही ईश-प्राप्त हैं। इन्हें ईश्वर को पाने के लिए किसी भी पूजा-इबादत की जरुरत नहीं है। इसी तरह ईश्वर के सारे सत्य सन्त-फकीर, ईश्वर प्राप्त हैं। जरा इस अन्तर को समझें। सारे ईशदूत ईश्वर के साथ थे और हैं। यानी ईशदूत को ईश्वर को पाना नहीं है। वह दुनियां में आने से पूर्व ईश्वर के साथ थे। दुनियां से जाने के बाद भी ईश्वर के ही पास हैं। आप कहेंगे की वे ईश्वर के पास कैसे हैं? इसको समझना सरल है। अपने सारे ईशदूतों को ईश्वर ने जब-जब चाहा, तब-तब धरती पर मानव के रुप में भेजा। हम दुनियां की नजर से उन्हें पैदा होना समझते रहे और वास्तव में उन्हें ईश्वर ने अपने पास से भेजा। स्पष्ट है कि ईशदूत, ईश-सन्देश देने के लिए मानव रुप में आए और अपना कार्य पूर्ण कर के ईश्वर के पास चले गए। ईशदूत, कोई भी हो, वह ईश्वर की पूजा, नमाज के आधार पर न बनाया जाता है और ना ईशदूत या नबी, पैगम्बर इन्सानों या फरिश्तों में से चुना जाता है। ईशदूतों ने ईशबन्दों को ईश्वर की सत्य-पूजा, नमाज पढ़के बतायी। ईश बन्दगी का प्रशिक्षण देने के कारण उन्हें ईश-बन्दा हम कहते हैं। मगर सामान्य मानव की भांति वह बन्दे की श्रेणी में नहीं हैं। ईशदूतों से ईश्वर की सत्यता का पता ईश-बन्दों को चला। उन्हीं से ईश्वर की पूजा, इबादत की सच्ची राह भी मिली।

नबी को देखो कैसे बशर हैं?

क्या अब मालूम हुआ कि नबी, पैगम्बर, रसूल, ऋषि, तीर्थंकर, अवतार, मेसेन्जर आदि किसी बशर या बन्दे के लिए बनना सम्भव नहीं है। हम ईश-सन्देश या ईश-ज्ञान आजीवन बांटते रहें। हम कुरआन व हदीस या विभिन्न धर्मग्रन्थों के परम ज्ञानी बन जाएं तथा समाज में हमारी खूब पूछ भी होने लगे, तो भी हम नबी, पैगम्बर, रसूल या ईशदूत न हो सकते हैं और ना ही माने जा सकते हैं। अक्सर लोग यह अन्दरुनी भ्रम पाले रहते हैं कि मैं वही काम तो कर रहा हूं, जिसे हमारे ईशदूतों ने किया है। ईशदूत जनता के मध्य गए, उन्हें ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा-नमाज बतायी। ईशदूत पैदल न जाने कहां-कहां जाते रहे। वहां लोगों को ईशज्ञान देते थे। हम भी दूर-दूर तक जाते हैं। वहां लोगों को ईश्वर-खुदा की पूजा-नमाज, जिक्र-अजकार बताते हैं। इसलिए हम भी लगभग नबी, रसूल, अवतार

बनने के सन्निकट ही तो हैं। कुछ लोग पैगम्बर या मेसेन्जर का सीधा मतलब निकालते हैं। पैगम्बर वह जो ईश्वर का पैगाम दे। मेसेन्जर वह जो गॉड का मेसेज दे। वह मन ही मन सोचते हैं कि वे पैगाम, सन्देश, मेसेज तो ईश्वर, अल्लाह या गॉड का ही मानव समाज को देते हैं। इसलिए ईश्वर के नबी, ऋषि, रसूल, दूत या अवतार की श्रेणी तक हम भी पहुंच चुके हैं। वे यह भूल जाते हैं कि ईशवाणी तो ईश्वर ने ईशदूतों को ही दिया है। उन्हें ईशवाणी तो मिली नहीं। फिर वे ईशदूत या नबी के समकक्ष कैसे हो सकते हैं? कुछ को यह मन ही मन अनुभव होता है कि वे उप-ईशदूत योग्य हैं। कुछ यह भी सोचकर मन ही मन प्रसन्न रहते हैं कि मुझे ईशदूत या उप-ईशदूत कोई न माने, परन्तु हमें ईशदूत-प्रतिनिधि मानने में किसी को सन्देह क्या है? आखिर हमारी सेवा-भावना का पुरस्कार कुछ तो समाज को देना होगा। इसी तरह के इन्द्रिय रोग में कुछ लोग अपने को नबी या सहायक नबी समझने लगते हैं। वह मन ही मन कहते हैं कि मैं यह घोषणा नहीं करता कि मैं नबी हूं। क्योंकि लोग मुझे इस पदनाम पर स्वीकार नहीं करेंगे। इसलिए उन्हें अपनी पहचान के लिए दुनियां को नबी की पहचान बतानी पड़ती है। मैं लोगों से कैसे कहूं कि मैं भी पैगम्बर हूं, मगर ये मेरे और ईश्वर-अल्लाह के बीच राजो-न्याज की बात है। मुझे देखो, मैं तो उस पाक ईश्वर का बन्दा भी हूं और नबी भी। आए हुए नबी, रसूल, तीर्थंकर, अवतार सभी तो बशर या मानव थे। वे बशर के साथ ईश्वर के बन्दे भी थे। फिर मेरी मजहबी सेवा देखकर भी, क्या ये नहीं लगता की मैं कलियुग या चौदहवीं सदी का नबी हूं। नबी नहीं तो नबी जैसा हूं या नहीं? ऐसी आन्तरिक चिन्तन में कुछ लोग घी के लड्डू फोड़ते रहते हैं।

वे अपने आप से पूछते रहते हैं कि तुम कौन हो? तब उन्हें उत्तर मिलता है कि हम भी नबी या पैगम्बर हैं। उनका दिल और मस्तिष्क उन्हें बताता है कि तुम किसी भी नबी या पैगम्बर से कम नहीं हो। नबी, जो भी आए, वह बशर थे। उन्होंने भी उस पाक रब या परमात्मा की पूजा-नमाजें खूब की थीं। इसलिए वह बन्दे भी है। ईश्वर की सत्यता वे लोगों तक पहुंचाते थे। इसलिए वह नबी, रसूल बन गए। तुम भी तो बिलकुल वही काम करते हो? इसलिए तुम भी पैगम्बर या नबी के दर्जे तक पहुंच गए हो? वह मानते हैं कि हमें दुनियां नबी माने या नहीं। इसकी हमें कोई चाह नहीं। हमने दुनियां को तर्क करके उस पाक़जात से रिश्ता जोड़ लिया है। मुझे नबी, रसूल कहलाने की भी कोई आरजू नहीं है। मुझे तो अल्लाह पाक का भरोसा काफी है। जो मुझे न पहचाने, वह बहुत पछताएगा। उस आदमी पर अफसोस है, जो मेरे नेक कामों को देखकर भी मुझे नहीं पहचान पा रहा है? वह मन ही मन यह भी निर्देश देते रहते हैं- "ऐ लोगों, तुम मुझ पर गौर नहीं करते। हैरत है कि तुम सूरह फातेहा हर नमाज में पढ़कर भी हमें नहीं समझ पाए। उस पवित्र रब ने साफ-साफ कहा है कि जो उसके सीधे रास्ते पर होते हैं, उन्हें वह ईनाम देता है। मैं उसी ईनाम को पा चुका हूं। मुझ पर उस अल्लाह का ईनाम है, तभी तो तुम्हें हम कुरआन, हदीस और नमाज की तालीम देते हैं। तुम बन्दों की इस्लाह (दुरुस्ती) और नेक

बनाने के लिए हम घर-बार छोड़कर निकलते हैं। मुझे तुमने अगर पहचान लियां, तो खुदा का सीधा रास्ता पा जाओगे। अब बताओ, मैं भी बशर हूं, मैं भी बन्दा हूं, मैं भी उस रब की पूजा-नमाज में पाबन्दी से लगा हूं। जो तालीम तुम्हें देता हूं, वह मेरी नहीं है। वह खुदा का ही सन्देश है। खुदा के नबी जो करते थे, बिलकुल वही मैं भी तो करता हूं, फिर हमें नबी या नायब नबी ही मानने में तुम सब देरी क्यों कर रहे हो?"

--ऐसे बन्दे बजाहिर नबूवत का दावा नहीं करते हैं। मगर उनके नफ्स की कैफियत कुछ ऐसी ही रहती है। क्या आप ऐसे झूठे नबी से पूछ नहीं सकते कि प्यारे हबीब सल्ले अला व सल्लम के जिस्मे पाक पर नबूवत की मुहर थी, क्या उनके पास भी ऐसी मुहर है? उनके शरीर की परछायी नहीं थी, क्या इनकी भी परछायी नहीं है? नबीए-पाक के पास ईश-सन्देश लेकर ईश्वर के खास फरिश्ते जिब्रील आते थे, इनके पास कौन ईश-सन्देश लाता है? वह नबी तो हमारे जैसे बशर हैं। वह हम जैसे लोगों की तरह ही थे। क्या हम जैसे बशर व बन्दे अल्लाह या ईश्वर से मेराज या मिलन करने की शक्ति रखते हैं? नबीए पाक ने अपनी ऊंगली के एक ईशारे से चांद के दो टुकड़े किए। अहले-अरब ने देखा। गैर-अरब भी देखे। हम बशर और बन्दे अपनी बीसों ऊंगलियों के ईशारे से क्या एक ईंट या एक पत्थर के भी टुकड़े कर सकते हैं?

--इस तरह के प्रश्नों पर ऐसे रस्मी इबादतगुजार अथवा औपचारिकतापूर्ण पूजापाठी फौरन अपना पैंतरा बदलते हैं। वे तुरन्त अपने इन्द्रिय चिन्तन से मन ही मन यह बुदबुदाते हैं- "हमारे पास मुहरे नबुवत नहीं है। तो क्या करें। हमारी परछायी है तो क्या हुआ, मुझे नबी मत मानो। मैं कहां कहता हूं कि मुझे नबी बनने का शौक है। मैं चांद के दो टुकड़े नहीं कर सकता हूं, ऐसा दावा हम क्यों करें। चांद के दो टुकड़े करने से खुदा की खिलकत (बन्दे) को पूरी रौशनी नहीं मिलेगी, इसलिए ऐसे काम खुदा की खुदाई में दखल अन्दाजी करना है। फिर हमारे सामने तो आज अबु जेहल भी नहीं है। यह उसका सवाल था। अबु जेहल जैसें स्वाभाव के लोग अगर चांद के दो टुकड़े करने की बात आज करेंगे तो हम कह देंगे- कम्बख्त कुफ्र मत बको, चांद के दो टुकड़े मेरे नबी ने बहुत पहले करके दिखाया है। मैं नायबे रसूल हूं। देखते नहीं रसूलल्लाह के सारे कामों का बोझ हमारे कन्धों पे है। जो काम मेरे चीफ (प्रमुख) कर चुके हैं, उसे मैं भी कर सकता हूं, मगर हमें खुदा की तबलीग और दूर दराज के सफर करते रहने से फूर्सत कहां है। फिर मैं तो नायब हूं। नायबे रसूल से ऐसे सवाल नहीं करनी चाहिए। सूरज को पलटाना, चांद के दो टुकड़े करना और कंकड़ियों से कल्मे पढ़ाने जैसी तमाम हैरत अंगेज बातें हमारे चीफ नबी (प्रमुख ईशदूत) ने किया है। यह उस वक्त की जरुरत थी। काफिरों को मुसलमान बनाना था, इसलिए चीफ साहब ने ऐसा कर दिया। हमारे दौर में हम सभी को ऐसे हैरत अंगेज कारनामे की जरुरत क्या है। अब मुसलमान तो बेशुमार पैदा हो गए हैं, इन्हें अल्लाह-रसूल के

सच्चे रास्ते पर लगाना बहुत बड़ा काम है। नायबे रसूल का आज के दौर में बस यही काम है कि वह मुसलमानों को संगठित करके नमाज, रोजा, हज, जकात की सच्ची तालीम दें। अवाम को कल्मा तौहीद और सारे कल्मे खूब याद करावे और उनसे खूब जिक्र कराएं ---।"

वह मन ही मन अपनी पहचान के लिए बेचैन रहते हैं। वे अफसोस करते हैं कि अवाम आज के जिन्दा नबी या नायबे रसूल को नहीं समझ पा रही है। नबीए पाक जब 40 साल की उम्र में हुए तो उन्होंने अरब में एलान किया कि मैं नबी हूं। हम अगर अपनी उम्र के 40 या 50 साल में यह कहें कि मुझे नायबे रसूल कहो, तो इस बात में बुराई क्या है? देखो बुरा मत मानो, मैं सूरत-शक्ल से बाशरीयत मुसलमान हूं। मैं पंजवक्ता नमाजी हूं। मैं कुरआन और हदीस की ही बात करता हूं। नबी भी तो यही सब करते थे। फिर हमें नायबे रसूल ही मान लो। हम नबी और उनके खलीफा की हुबहु नकल करते हैं। काश ! उस दौर का अबु जेहल आज होता तो वह तुम्हें गवाही देकर बता देता कि मैं नबी ही हूं। मगर अफसोस मेरी कौम मुझे नायब नबी भी तसलीम करने में शर्माती है। ऐ मेरी कौम के लोगों, मेरी पेशानी पे सजदे के पाक निशान तुम नहीं देख रहे हो? क्या ऐसे निशानात तुम्हें यह नहीं बता रहे हैं कि हमने नमाजें उस पाकजात के लिए कितनी ज्यादा पढ़ी हैं? फिर तुम हमें मान लो, मैं बशर जरुर हूं, लेकिन नायबे रसूल के मकाम तक पहुंच चुका हूं।

आज के माहौल में अन्दरुनी तौर पर कुछ मुसलमान जबरन नबी-रसूल या नायबे-रसूल के अहमभाव में मुबतला हैं। कुछ ऐसे भी थे जो कहते थे कि मेरी पैरवी में ही नजात है? अल्लाह ऐसे नफ्स के पालनहारों से मखलूक को बचाए। हमें ऐसे मिशन के पीछे छिपी शक्तियों की पहचान भी करनी चाहिए। वे खुदा के सच्चे दीन को फरोग देने के नाम पर हुसैनी दीन की पैरवी में हैं या नबीए-पाक के बताए सच्चे दीन से अलग यजीदी दीन के अनुयायी? इन्हें पहचानें। उनके दीनी-मिशन में न नबीए पाक के आले-पाक हजरत पीराने-पीर दस्तगीर हैं और ना ही हजरत ख्वाजा मुईनद्दीन चिश्ती हैं और ना ही हजरत सैय्यद निजामुद्दीन औलिया जैसे शहजादए रसूल। यह जिन खुल्फाओं की पैरवी का नाम लेते हैं, उनकी सच्ची अमली जिन्दगी से भी वे वाकिफ नहीं हैं। नबीए-पाक के खुल्फाओं या सहाबा ने हमेशा आले-पाक की ताजीम की। यह किस खुल्फाए-रसूल के हुक्म पर ताजीमे रसूलल्लाह और ताजीमे आले-रसूलल्लाह नहीं करते हैं? अल्लाह तआला का ईल्म-रसूले पाक की अमानत है। इस अमानत को बिना ताजीमे रसूल सल्ले अला व सल्लम पाना मुहाल है। रसूले पाक की ताजीम अगर दिल में नहीं, तो उनकी शरीयत की ताजीम कोई कैसे करेगा?

15 - ईश धर्म में धर्मान्तरण

18 सितम्बर, 2007 ई0 के दैनिक जागरण हिन्दी पत्र के गोरखपुर (उ0प्र0) संस्करण ने अपने प्रथम पृष्ठ पर भारतीय मूल की अमरीकी महिला सुनीता विलियम के सन्दर्भ में सनसनीखेज समाचार प्रकाशित किया था। समाचार इस प्रकार प्रकाशित है।

अन्तरिक्ष परी सुनीता विलियम ने धर्म बदला

रिश्तेदार ने कहा : वैवाहिक रिश्ते दरक सकते हैं, वेबसाइट और एसएमएस के जरिए हो रहा प्रचार

बरेली, जागरण संवाददाता : अन्तरिक्ष परी सुनीता एल0 विलियम ने इस्लाम धर्म कुबूल कर लिया है। एक वेबसाइट के जरिए यह जानकारी पूरी दुनिया में बांटी जा रही है। मुसलिम समाज खासतौर से युवा वर्ग में इसकी चर्चा है।

इस्लामिक इनफारमेशन सेंटर की ओर से जारी इस खबर में कई अखबारों का भी जिक्र है। जिसके अनुसार नासा ने पिछले दिनों भारतीय मूल की अमेरिकन महिला सुनीता विलियम के नेतृत्व में एक दल अन्तरिक्ष में भेजा था। बताते हैं कि वहां से जब पृथ्वी को देखा तो पूरी तरह अंधेरे में डूबी नजर आई। मगर सिर्फ दो जगह से रौशनी निकलती दिखाई दी। इस बात से वे सभी अचंभित थे। इसको जानने की जिज्ञासा बढ़ी तो सुनीता ने इस रौशनी को दुबारा देखने के लिए टेलीस्कोप का सहारा लिया। प्रकाश फेकने वाले स्थान मक्का और मदीना है। जहां हरम शरीफ और नबूवी मसजिद है। जिसकी स्पेस से सुनीता ने फोटो भी ली है। हरम शरीफ वो जगह है जहां लोग हज करते हैं और नबूवी मसजिद है, जहां पैगम्बरे इस्लाम मोहम्मद साहब ने नमाज पढ़ाई है। बताते है तब ही सुनीता ने तय कर लिया था कि पृथ्वी पर पहुंच कर वह इस्लाम धर्म कुबूल कर लेगी। अब शायद हुआ भी ऐसा है कि उन्होंने इस्लाम धर्म कुबूल कर लिया है। कहा तो यह भी जा रहा है कि अन्तरिक्ष में उनके साथ यात्रा करने वाले सदस्य भी इस्लाम धर्म के कायल हो चुके हैं। यह खबर इन दिनों काफी चर्चा में है। मगर इस बात को कई कारणों से राज में रखा जा रहा है। हैदराबाद से निकलने वाले एक उर्दू दैनिक ने भी भारत में रहने वाले सुनीता के निकट सम्बन्धी के हवाले से सुनीता के इस्लाम कुबूल किये जाने की बात कही है। सुनीता के निकट सम्बन्धी की बात का हवाला देते हुए उन्होंने सुनीता के पिता के हवाले से यहां तक बताया है कि सुनीता जो पहले हिन्दू से ईसाईयत की तरफ आकर्षित हुई थी। अब इस्लाम की तरफ अपना झुकाव किया है, जिसकी वजह से उनके वैवाहिक रिश्तों में भी खलल पड़ सकता है। सुनीता के उसी सम्बन्धी ने यह भी बताया कि वैसे तो सुनीता शुरु से ही तमाम धर्मों का आदर करती रही है, लेकिन अपनी जुबान और क्रिया-कलापों से यह जताती रही है कि उसके नजदीक सबसे बड़ा मजहब इन्सानियत है। चर्चित बातें यह भी है कि सारी दुनियां में भारत का नाम

रौशन करने वाली इस महान महिला का भारत दौरे पर उसका भव्य स्वागत न होने दे। ●●●
(समाचार समाप्त)

अमरीकी जीवन एवं उन्नतिशील विज्ञान में जीने वाली नासा वैज्ञानिक सुनीता का धर्म पहले सनातन था, बाद में ईसाई धर्म अपनाया और अन्तरिक्ष यात्रा से लौटने के बाद इस्लाम की अनुयायी बन गयीं। क्या इन्हें किसी ने तीर या तलवार की धमकी देकर 'इस्लाम' धर्म कुबूल करने को विवश किया है। सनातन, ईसाई या इस्लाम, जो भी धर्म दुनियां में उपस्थित हैं, वह ईश्वर ही का तो है। सुनीता, विलियम बने या बिलकीस बेगम, इन नामों के परिवर्तन से ईश्वर का क्या बननां बिगड़ना है? ईश पथ पर मानव चले। ईश्वर-अल्लाह को एक जानकर उसकी पूजा-इबादत करे। वह सदैव उसके आदेश-निर्देश पर चलता रहे। उसके नबी, पैगम्बर, रसूल का सम्मान करे, उनके निर्देशन या शिक्षा-दीक्षा का पालन करे। यही मूल कर्म हम सभी का है। सुनीता ने जो कुछ अन्तरिक्ष से देखा, वह काबा हो या मदीना, इसमें आश्चर्य की बात क्या है? ईश्वर या अल्लाह दो अलग-अलग शक्तियों के नाम तो हैं नहीं। इस्लाम नामक मजहब भी किसी व्यक्ति या ईश्वर भक्त का बनाया नहीं है। श्री राम, श्री कृष्ण यदि ईश्वर के पैगम्बर हैं, तो श्री ईसा अलैहिस्सलाम और श्री मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम भी ईश्वर के ही नबी व रसूल हैं। सुनीता सनातन धर्म में रहे या ईसाई धर्म में या इस्लाम में, वह उसी एक परमेश्वर की पूजा-इबादत करेगी। **धर्म-परिवर्तन से ईश्वर का परिवर्तन नहीं होता।**

इस्लाम में अल-कहहार जिसे कहते हैं, वही सनातन में रुद्र हैं। जिसे शिव कहते हैं, वही इस्लाम में 'अल रज्जाक' हैं। जो विभूतियां हैं, उन्हीं को सिफात कहते है। जलाली को ऐश्वर्यवाली, जमाली को माधुर्यवाली कहा जाता है। कुरआन में अलबादी है, वही वेद में सृष्टा है। जो अल-जामी है, वही संहर्ता है। अलहादी को वेद में तारक तथा अल-बातिन को वेद में अव्यक्त कहा गया है। संस्कृत शब्द 'आर्य' ऋ धातु से निकला है। ऋ धातु का अर्थ होता है 'जाना'। आर्य शब्द का अर्थ एक विद्वान ने यूं बताया- "आर्य उस व्यक्ति को कहा जाता है, जो दुखियों का दुःख दूर करने के योग्य हो तथा जिसके पास हमेशा दुःखी लोग अपने दुःख दूर कराने के लिए चलकर आवें।"

यही दशा अरबी शब्द 'इन्सान' की है। यह शब्द अरबी के 'उन्स' से निकला है। उन्स का अर्थ होता है, प्रेम या हमदर्दी। इस प्रकार इन्सान वह जो सबके साथ प्रेम या हमदर्दी करे तथा वह सब इन्सानों का दोस्त हो।

अरबी, संस्कृत या उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी आदि के शब्दों के जाल से ईश्वर की मान्यता एवं ईश्वरीय प्रभाव पर कोई असर नहीं पड़ता है। शब्द माध्यम हैं, ईश-सत्यता को प्रकट करने के लिए। धर्मग्रन्थ या ईश-ग्रन्थ जो भी हैं, वह पुस्तक या ग्रन्थ के रुप में ईश्वर द्वारा किसी नबी, पैगम्बर,

अवतार, ऋषि, तीर्थकर या रसूल को प्रदान नहीं किए गए। आकाशवाणी या फरिश्ते के माध्यम से समय-समय पर ईश-वचन आते रहे। जब उनका आना रुका, तो ईश-नबी या रसूल ने ईश-वाणी का संग्रह किया। बाद में वही ईश-वाणी, ईश-ग्रन्थ के रुप में दुनियां के सामने आई। मौजूदा कुरआन भी ईश-वाणी के अंशों का संग्रह है। यही मूल कारण है कि कुरआन में एक ही बात विभिन्न स्थानों पर भी कई बार पायी जाती है। यह ईश्वर-वचन की जगह ईश द्वारा लिखित या प्रदत्त पुस्तक होती, तो एक ही तथ्य कई स्थानों पर नहीं मिलते।

कुरआन में कुल छः हजार छः सौ 66 आयात हैं। जो पैगम्बर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को याद थी। उनके सहाबी हजरात भी ईश-वाणी आने पर याद कर लेते थे। कुछ सहाबी ऐसे भी थे, जो लिख लेते थे। कुरआन का वर्तमान स्वरुप स्वयं पैगम्बर साहब ने दी। जिस प्रकार ईश-वचन प्रारम्भ में आनी आरम्भ हुई, उस क्रमानुसार कुरआन ग्रन्थ का संकलन या ईश-वचन का क्रम नहीं है। ईश-वचन या ईश-कथन में कोई शब्द कम या ज्यादा नहीं है। बस उनका क्रम आगे-पीछे है, जिसे पैगम्बरे-खुदा (ईशदूत) ने स्वयं व्यवस्थित किया है। समझने के लिए यह बताना आवश्यक है कि- 'इकरा बिस्मे रब्बे कल्लजी' की आयत सर्वप्रथम ईश्वर ने फरमायी थी। परन्तु यह प्रारम्भिक ईश-वाणी कुरआन में अन्तिम पारों से पूर्व में रखी गई है। कुरआन की कौन सी आयत कब आयी, यह प्रमाणिक ज्ञान जब तक हमें नहीं है, कुरआन में दर्ज ईश-वाणी का सत्य भावार्थ हम नहीं जान सकेंगे।

एक बार हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम से लोगों ने सवाल किया कि आप कहते हैं कि मृत इन्सान को ईश्वर पुनः जिन्दा करेगा। बताईए जब मरे व्यक्ति की हड्डियां नष्ट हो जाती हैं, तो वह जिन्दा कैसे होंगी? ईश्वर ने तत्काल ऐसे लोगों के लिए फरमाया- "आप उनसे कहिए कि वही पुनः पैदा करेगा, जो अव्वल बार में उन्हें पैदा किया था। और वह हर तरह का पैदा करना जानता है।" यह ईश-वाणी कुरआन में सूरह यासीन के अन्तर्गत है। इसी प्रकार कुरआन में ईश-वचन समय, परिस्थिति के अनुसार आए हैं तथा दर्ज हैं।

कुरआन का अनुवादक यदि ईश वचन के आने के पूर्व का कारण नहीं जानेगा, तो उसके अनुवाद पाठकों की अक्ल में शंका-कुशंका को जन्म देते रहेंगे। कुरआन जब ईश-वचन है, वह ईश्वर द्वारा लिखित पुस्तक के रुप में प्राप्त नहीं हुई है, फिर तो इसके भावार्थ के लिए अनुवादक या पाठक को कौन सी आयत कब आयी तथा आने के पूर्व वहां की स्थिति क्या थी? यह पहले जानकारी लेनी होगी। इसी जानकारी न लेने वाले कुरआन के अनुवादकों द्वारा ईश-वचनों के असत्य अर्थ प्रकाश में आए। जो अनर्थ एवं समाज-विरोधी कार्य को उत्पन्न करते रहते हैं। आज कुरआन में आए कुछ ईश-वचनों के मात्र शाब्दिक अर्थ निकालने के कारण भ्रामक एवं विवादित अर्थ समाज में दुष्प्रचारित

किए जाते हैं। कुरआन के या किसी भी ईश-वचन के सत्य भावार्थ के लिए यह प्रक्रिया पूर्णरुपेण भ्रामक एवं असत्य है।

16 - तब्लीगे-हक़/सत्य ईश-ज्ञान प्रचार

इस्लाम का दूसरा नाम ईश्वर के समक्ष ससम्मान आत्म समर्पण है। यह आत्म समर्पण इस्लाम के प्रथम महामन्त्र (कल्मा तैय्यब) से प्राप्त किया जाता है। नहीं कोई ईच्छा, अहंकार, लोभ-लालच, पत्नी-सन्तान आदि की चिन्ता पूज्यनीय। अरबी में इसे ही 'लाईलाहअ' कहा गया है। पूज्यनीय शब्द पर हम ध्यान दें तो हमें पता चलता है कि अन्तर्मन की अभिलाषाएं, नाना-नाना प्रकार की ईच्छाएं जो मनुष्य को रंजो-ग़म में डालती हैं, वह खुदाई कानून या इस्लामी सत्यता के आधार पर ईश्वर के अतिरिक्त ये 'पूज्यनीय' श्रेणी में आती हैं। इसी कारण इसे 'लाईलाहअ' नहीं कोई पूज्यनीय कहा गया। ईश्वर, अल्लाह, प्रभु, गॉड जिस नाम से हम उस पवित्र रब को याद करें, वास्तव में पूज्यनीय वही है, उसके सिवा दूसरा कोई नहीं। अरबी भाषा में 'ईल्लल्लाह' अर्थात ईश्वर ही पूज्यनीय अन्य कोई नहीं, यह कहने का निर्देश है। मात्र कहने से भी इसका अभिप्राय प्रमाणित नहीं होता। 'ईल्लल्लाह' (ईश्वर ही पूज्यनीय) को जब तक हृदय और विचारों में आत्मसात न किया जाए, केवल जुबान से कहना मात्र रस्म-रिवाज और औपचारिकता के सिवा कुछ भी नहीं।

इस्लाम का मूलाधार महामन्त्र, 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' है। अर्थात- ''नहीं कोई (ईच्छा, मोहमाया, अहंकार, चिन्ताएं आदि) पूज्यनीय, केवल ईश्वर ही है पूज्यनीय।'' आज जेहादी हाव्वा का आतंक प्रचारित करके मौत के सौदागर प्रसन्नचित्त हैं। उन्हें इस्लामी नकाब जेहाद के रुप में मिल गया है। जिसका ईश-विरुद्ध परिचालन अपने स्वार्थलाभ के लिए वे करते रहते हैं। हैरत है कि इस्लाम पवित्र और समस्त मानवजाति की सलामती का पूर्ण ईश-धर्म है। मगर यह तथाकथित जेहादी मुसलमान किस कूटनीति से इस्लामी सत्यता को रौंदने में लगे हैं, यह विश्व इस्लाम जगत के लिए शर्मनाक है। लोग समझते हैं कि इस्लामी तबलीग (इस्लामी धर्म प्रचार) के कारण यह वर्तमान जेहाद आज जिन्दा है। पूरी दुनियां में इस्लामी तबलीग का मिशन जिसने आरम्भ किया, उस के संस्थापक और उनके अनुयायियों से पूछा जाए। यह आरोप लगाया जा रहा है कि मुसलमानों की टोली दुनियां के कोने-कोने में किस इस्लाम का सन्देश बांट रही है? क्या इनकी कार्य-पद्धति इस्लामी सत्यता के अनुकूल है? 'ला' अरबी शब्द का अर्थ 'नहीं' होता है। इस्लामी कल्मे का आरम्भ इसी 'ला' शब्द से है। कत्ल, गुण्डागर्दी, चोरी, डकैती, पाकेटमारी, घोटाला, रिश्वतखोरी, सूदखोरी, हरामखोरी आदि को 'ला' करना है। छल-प्रपंच, धोखाधड़ी, ठगी, व्यभिचार, बलात्कार, शराबखोरी, जुएबाजी आदि भी

ला' (नहीं) करना है। यहां तक की अन्तर्मन के विचार तथा चिन्ताएं, ईच्छाएं सभी कुछ इस्लाम में ला' (नहीं) पहले करने के बाद ही कोई मुसलमान कल्मे की सच्ची अदायगी कर सकता है? आप कहेंगे कि कल्मा 'ला ईलाहअ' में 'नहीं कोई माबूद' के लिए 'ला' यानी नहीं का प्रयोग होता है। उसमें ग़लत आमाल, आपराधिक कार्य 'नहीं' या 'ला' करने के लिए प्रयुक्त नहीं है। आईए एक नज़र इस सत्यता पर डालें। कलामे-इलाही है- "ऐ ईमान वालों, इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो जाओ और शैतान के पीछे न चलो, वह तुम्हारा सरीह दुश्मन है।" (सूरह बक्र, कुरआन)

ईश्वर ने आदेशित किया कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो जाओ। शैतान के पीछे न चलो, वह सरीह दुश्मन है। शैतान कौन है? जिसके पीछे न चलने को वह ईश्वर मना कर रहा है। शैतान को यदि भूत-प्रेत, आसेब, खब्बीस या जिन्न-जिन्नात, हम मानते हैं तो गौर करें कि क्या कोई व्यक्ति इनके पीछे चलता है? जी नहीं ! जो नज़र ही न आए, उनके पीछे कौन चलेगा? तो वह शैतान कौन है, जिसके पीछे न चलने से अल्लाह तआला रोक रहा है। वह शैतान है- हमारी नफ्स या इन्द्रिय। वह शैतान है हमारी ईच्छाएं, चिन्ताएं, लोभ-लालच, गुनाह और ईश-विरोधी आचरण। जिनकी पैरवी से इन्सान शैतान बन जाता है। इस शैतान को अगर हम 'ला' (नहीं) नहीं करेंगे फिर तो वह हमें सच्चे-ईश पूजा से रोकेगा। जब हमारे दिल-दिमाग में वही बैठा रहेगा तो हम इबादत के मायनी रस्मी और जिस्म व जुबान की इबादत ही तक लगाएंगे। माबूद या पूज्यनीय तो ईश्वर है। हम यदि जुबान से ईश-पूजा करें, किन्तु दिल-दिमाग में नफ्सीयाती शैतान दाखिल हों, तो बताईए वास्तव में हमारा माबूद या खुदा कौन हुआ? शैतानी नफ्स चूंकि दिल-दिमाग में है, इसलिए हमारा माबूद तो सर्वप्रथम वही हुआ। इसीलिए कहा गया कि ऐसे शैतानों को सबसे पहले 'लाईलाहअ' करो, जब वे 'ला' हो जाएं, तब पढ़ो 'ईल्लल्लाह' (यानी- ऐ अल्लाह तू ही पूज्यनीय है।) अगर आज की इस्लामी तबलीग में 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' को पढ़ने-पढ़ाने की सच्ची तालीम (शिक्षा) होती, तो नकली जेहाद और नफ्सीयाती इबादत की रस्में तरक्की नहीं पातीं। हमने देखा है कि इस्लाम की सच्ची पैरवी का ईल्म हमें नहीं है, फिर हम किस इस्लामी तबलीग के लिए कुर्बानियां पेश कर रहे हैं? पहले इस्लाम में पूरी-पूरी तरह हमें दाखिल होना चाहिए या बिना पूरा दाखिला लिए हमें तबलीग में लगना चाहिए? हुक्मे-इलाही (ईश-आदेश) है कि ऐ ईमानवालों, इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो जाओ। हमने इस्लामी सूरत बना ली, भले ही सीरत (आचरण) गैर-इस्लामी हो या नफ्सीयाती शैतान की सीरत (आचरण) हो? नमाज, रोजा, हज, जकात, तौहीद सभी पे हम पाबन्द नज़र आएं, मगर इस्लामी एहकामात या इस्लामी शरीयत में नफ्स कायम रहे, क्या यही हुक्मे-इलाही और दर्से-रसूल (ईशदूत शिक्षा) की सच्ची पैरवी है? 'लाईलाहअ' इस्लाम का जेहादे-अकबर है। अपने नफ्स (इन्द्रिय) से अल्लाह तआला की परस्तिश (पूजा) हेतु युद्ध करना। क्या हमें ईल्म है कि 'ला' (नहीं) की तलवार या

बम-विस्फोट से इन्द्रिय राक्षसों (नफ्सी शैतान) को पराजित कैसे किया जाता है? इस शैतान-निर्मूलन क्रिया में वक्त कितना लगेगा? इसी शैतान के निर्मूलन से हम इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो सकते हैं। मगर आज की इस्लामी तहरीक (अभियान) या तबलीग में इस इस्लामी रुह पे अमल क्यों नहीं है? अगर जेहादे अकबर की सही तालीम मुसलमान ग्रहण करें तो मुल्ला उमर या ओसामा बिन लादेन की यजीदी मान्यता वाला इस्लाम कभी ध्वस्त हो चुका होता? इस्लामी 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' के सच्चे अमल से हम खाली हैं। बताईए ऐसे हालात में कल्मा शहादत 'अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह, अश्शहादोअन्नअ मुहम्मदन अब्दहू व रसूलहू।' अर्थात- मैं गवाही देता हूं कि नहीं कोई पूज्यनीय सिवाए अल्लाह तआला के व मैं गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह पाक के बन्दे व रसूल (ईशदूत) हैं, की सच्ची गवाही हम कैसे दे सकेंगे? कल्मा तैय्यब और कल्मा शहादत की हकीकत से जब अमली तरीके से हम ही वाकिफ नहीं हैं, फिर आम मुसलमानों को जेहादे अकबर और अल्लाह व रसूल की शहादत देने के योग्य कैसे बनाएंगे? जिसकी निस्बत और मार्फत (सम्पर्क) अल्लाह पाक व रसूले-पाक से न हो, वह अपनी तालीम या तबलीग से सच्चे इस्लाम को फैलाएगा या रस्मी इस्लाम को? यही सवाल आज हर मुसलमानों के सामने गम्भीर चिन्तन का रुप ले चुका है? जानकार मुसलमान कहते हैं कि जेहादे अकबर का ही जब ईल्म नहीं, फिर शहादत कैसे दी जाएगी? हम अगर शाहिद (साक्षी) नहीं तो नमाज में मेराज (ईश मिलन) कैसे होगी? इस्लाम जुबानी कौल-करार पर कायम नहीं है। इसकी तबलीग के लिए ही अल्लाह तआला ने कामिल पीरों की जमात आज तक कायम रखी है। मगर इस जमात की पैरवी से हम काफी दूर हैं।

इस्लामी हकीकत जिनसे अमली जिन्दगी पाती है, उसी तबकात (समूह) से मुसलमानों को दूर करने की साजिश रस्मी-इस्लामी तहरीक (अभियान) ने पैदा किया। उन्होंने मुसलमानों को हुसैनी अमल और यजीदी अमल में फर्क भी नहीं बताया। उन्होंने ईल्म और मसनवी (दिखावटी) अमल के दायरे में अवाम को फंसाकर इस्लाम की हकीकत से दूर किया। अल्लाह ने इस्लाम में पूरी तरह दाखिल होने का हुक्म दिया। काबिल रहनुमाओं ने इस्लामी रंग-रुप और कायदे-कानून पर चलने का नाम दाखिल होना करार दिया? हैरत है कि हक़परस्ती का दाखिला हममें नहीं हुई और नफ्सपरस्ती के साथ हम 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' भी पढ़ते पढ़ाते रहे? कामिल पीरों की तबलीग ने हजरत ख्वाजा मुईनुद्दीन हसन चिश्ती, हजरत कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी, हजरत बाबा फरीदगंज शकर, सैय्यद निजामुद्दीन औलिया, हजरत अलाऊद्दीन साबिर कलियरी आदि लाखों-करोड़ों वली-औलिया पैदा किया है। यही सच्चे और बातिल (झूठ) इस्लाम की पहचान है। तबलीगें-इस्लाम के लिए कामिल पीर तो खुदा और रसूल की तरफ से अधिकृत हैं। यह वह जमात है जो अल्लाह तआला की इबादत अल्लाह तआला को देखकर करती है। रस्मी इस्लाम से यह दूर हैं। इस्लाम क्रियात्मक ज्ञान और पुष्टि

का मजहब है। यह यकीन और कायदे-कानून की सिर्फ जानकारी से दाखिल नहीं होता। इस्लाम और इस्लामी तबलीग की हकीकत यही है। तब्लीगे-हक़ अर्थात सत्य ईश-ज्ञान का प्रसार। सत्य को ही 'हक' कहते हैं। और हक़ की वास्तविकता ईश्वर, अल्लाह है। हक की हकीकत का हकदार जो होगा, वही तो हक़ की तब्लीग करेगा। हम अपने-अपने को देखें कि हम में 'हक़' कितना है? यानी हम हक से कितने वाकिफ हैं? हक या सत्य आधा-अधूरा या कमोबेश तो नहीं होता। क्या हक़ का सम्पूर्ण ज्ञान हमें है? हक़ का सम्पूर्ण ज्ञान रखना क्या किसी मनुष्य के बूते की बात है? अगर नहीं फिर सत्य ईश-ज्ञान प्रसार या तब्लीगे-हक हम कैसे देते हैं? कुरआन, हदीस, शरीयत और सुन्नत का ईल्म जानना तथा उन्हें लोगों तक पहुंचाना, क्या यह तब्लीगे-हक़ के लिए दुरुस्त और पर्याप्त है? बाईबिल (इन्जील), तौरेत, जब्बूर आदि किसी भी धर्म-ग्रन्थों के केवल ज्ञाता को, हम क्या ईश-सत्यता का ज्ञानी मन्जूर कर सकते हैं? केवल वेद ज्ञान के विद्वान होने का अर्थ, क्या सत्य ईश ज्ञानी होना माना जा सकता है? गीता, रामायण, उपनिषद, पुराण आदि पवित्र ग्रन्थों को पूर्णरुपेण आत्मसात यदि हमने कर लिया है, फिर क्या हम इस धर्म-ग्रन्थ के आधार पर सत्य ईश-ज्ञान के प्रसारक बन सकते हैं? किसी भी धर्म-ज्ञान से क्या यह सम्भव है कि हम तब्लीगे-हक़ या सत्य ईश-ज्ञान के प्रसारक बन सकें? धर्म, मजहब, रिलीजन को यदि हमने अपने में धारण किया, तो क्या हक या सत्य भी धारण हो जाता है?

किसी भी धर्म के ज्ञान को अपने में धारण करना, यह साबित तो नहीं करता कि हमने ईश्वर, अल्लाह या गॉड को भी अपने में धारण कर लिया है? जब वह पवित्र ईश्वर या खुदा हममें पूर्णरुप से सर्वदा के लिए दाखिल नहीं है, तो फिर हक़ या सत्य के साथ हम हैं कहां? जब हम में स्थाई सत्य का वास नहीं, फिर उस सत्य या हक़ का प्रचार-प्रसार या तब्लीगे-हक हम कैसे करेंगे? अगर करते हैं तो यह तब्लीग या ज्ञान प्रसार केवल मजहबी या किसी भी धर्म, रिलीजन का प्रसार-प्रचार तो हो सकता है। किन्तु यह ईश सत्य प्रसार या तब्लीगे-हक नहीं कहला सकता। हक के यदि हकदार हम नहीं हैं। सत्य के साथ यदि हम नहीं हैं, फिर तब्लीगे-हक या ईश-सत्यता के नाम पर हम समाज को ईश-धर्म या खुदाई इस्लाम आदि ही देंगे। हम ईश सत्यता तो नहीं दे सकते? यह प्रश्न-बिन्दू सभी इन्सानों के लिए आज गम्भीर चिन्तन का मामला है। तब्लीग शब्द का प्रयोग ईश्वर की सत्यता और ईश-पूजा सिखाने के रुप में प्रयुक्त होती है। हम इस्लामी मान्यता वाले हैं, तो हमें अल्लाह का हुक्म और रसूलल्लाह के निर्देशों को बताया जाता है। हमें दरुद शरीफ, जिक्र-अजकार (ईश नाम-जप) तथा नमाज पढ़ने के तरीके सिखाए जाते हैं। धम या मजहब अथवा रिलीजन का ज्ञान देना और लेना, यह ईश-ज्ञान तो है, मगर इससे ईश्वर या अल्लाह को क्या पाया जा सकता है? ऐसे ज्ञानी हमें ईश-वचन और ईशदूत (पैगम्बर, ऋषि, नबी) कथन तो खूब बताते हैं। किन्तु उनका सत्य परिणाम

या सच्चा अमली तरीका क्या है, यह ज्ञान नहीं देते। वे हमें ईश्वर का यह आदेश भी बताते हैं, जो उसने अपने ईश-वाणी संग्रह कुरआन के सूरह बक्र में फरमाया है- "ऐ ईमानवालों ! इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो जाओ और शैतान के पीछे न चलो। वह तुम्हार सरीह दुश्मन है।"

इस ईश्वर-वाणी के अनुसार क्या यह नहीं लगता कि ईश्वर अपने ईश-धर्म में पूर्णरुप से दाखिला चाहता है? यह ईश-धर्म में पूर्णता से ही तो सम्भव है? ईश-धर्म की पूर्णता धर्म या मजहब या रिलीजन के ज्ञान में पूर्णता को हम कह सकते हैं? ईश-धर्म की पूर्णता तो ईश्वर की प्राप्ति का दूसरा नाम है। पूर्ण ईश्वर ही है। धर्म या मजहब का ज्ञान हम जितना भी ग्रहण कर लें, वह हमारे बनाएं पाठ्यक्रम या कोर्स के अनुसार तो पूर्ण है। मगर ईश्वर के अनुसार पूर्ण धर्म को अपने में धारण या दाखिल करना, ईश्वर की प्राप्ति के सिवा दूसरा क्या होगा। इस ईश-वचन से प्रकट होता है कि शैतान के पीछे चलने से ईश्वर को धारण नहीं किया जा सकता। क्योंकि शैतान, मानव का बहुत बड़ा दुश्मन है। वह सरीह दुश्मन इसलिए कहा गया कि किसी व्यक्ति में से उक्त शैतान को भगाने की क्रिया-विधि का ज्ञान पहले जरुरी है? क्या आज के प्रचारित-प्रसारित ज्ञान से शैतान-दमन सम्भव है? इस तब्लीगी-ईल्म से कोई मानव ईश्वर-मिलन पा सकता है?

हमें खुदा का यह हुक्म भी सुनाया जाता है कि- "कायम करो नमाज। बेशक नमाज बेहेयाईओं और बुराईयों से रोकती है।" नमाज़ें हम जमात के साथ या तन्हाई में पढ़ते हैं, क्या पांच वक्त की नमाज़ें पढ़ लेने से नमाज़ कायम हो जाती है? क्या हम नमाज़ें पाबन्दी से अदा कर लेने के बाद भी बेहेयाई या बुराईयों से पाक रहते हैं? बेहेयाई और बुराईयां यदि हैं, तो इसका मतलब है कि नमाज की हमारी कायमी में कहीं न कहीं गड़बड़ी या दोषयुक्त अवश्य है? नमाज की कायमी अगर हममें हो जाए तो हम दोषों से पवित्र हो जाएंगे। यह पहचान अल्लाह या ईश्वर ने नमाजी लोगों के लिए स्पष्ट कर दिया है। झूठ, छल, दगा, शोषण, बड़प्पन, गर्व, हसद, द्वेष, ईर्ष्या, कत्ल, चोरी, तकब्बुर, धन -प्रदर्शन, शक्ति-प्रदर्शन, गुनाह, दुराचार, लालच, ठगी, ब्लेकमेलिंग, रिश्वतखोरी, घमण्ड आदि के आचरण से क्या हम पवित्र हैं? नमाज़ें हमारी पाबन्दी के साथ अगर कायम हैं, फिर बुराईयां और बेहेयाईयां हममें बाकी तो नहीं रहनी चाहिए? अगर हैं, तब तो कायमी नमाज, जिसे अल्लाह चाहता है, वह हम नहीं पढ़ते। नमाज की कायमी, अल्लाह तआला वास्तव में हमारे कौल और फेएल (वचन एवं कर्म के आचरण) में देखना चाहता है। क्योंकि अगर ध्यान से देखें तो बेहेयाई और बुराई का सम्बन्ध हमारे आचरण या कौल-फेएल से ही है। हृदय, मन, मस्तिष्क में जन्मी या बैठी यह बुराईयां या बेहेयाईयां अगर हैं, तभी तो आचरण द्वारा वैसा व्यवहार प्रकट होता है।

अब हम ऐसी नमाज किस रहनुमा या उस्ताद से पढ़ें, जो हमारे आचरण से इन खराबियों को हमेशा के लिए दूर कर दे। वह नमाजी रहनुमा भी वही हो सकता है, जिसे नमाज़ में मेराजे-हक़

(ईश-मिलन) उसे नसीब होती है। मेराजे-हक़ जिसे नमाज में हासिल हो, वही तो मोमिन या ईमानवाला खुदा का बन्दा है? मालूम यह हुआ की मोमिन की जमात ही बुराई और बेहेयाई से पाक (पवित्र) होगी। मोमिन की नमाज़ ही कायम नमाज़ है। क्योंकि वह दीदारे-इलाही से कायम हो गई है। अल्लाह तआला कायम है। अल्लाह तआला का मेराज, जिसे हो जाए, उसकी इबादत (ईशपूजा) भी कायम है। जब उसकी इबादत अल्लाह के दीदार (दर्शन) से कायम हुई, तो दीदारे-हक उसने किया है, वह भी कायम (अनश्वर) हो गया। नबीए-पाक हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम को तो लिबासे-बशरी (मनुष्य रुप में) में मेराजे-हक़ (ईश-मिलन) हुई है। वह ईश्वर के नबी (ईशदूत) भी हैं, मगर इन्सानी सूरत में जब नबीए-पाक को अल्लाह का दीदार हुआ, तो क्या वह इन्सानी सूरत में कायम नहीं हो गए? नबीअल्लाह का मिलन तो निरन्तर ईश्वर-अल्लाह से रहता है। वह इन्सानी सूरत में प्रकट हों या न हों। मगर मेराजे-नबीअल्लाह की घटना (वाकया) यह प्रकट कर रही है कि अल्लाह के नबी, बशरी सूरत में अल्लाह से मिले। यह मिलन या मेराज यह प्रमाण है कि अल्लाह के नबी हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम, अल्लाह के सारे नबी में ऐसे नबी हैं, जो बशरी सूरत में आज भी कायम हैं। अगर हम नमाज़ में मेराजे-हक़ पाते तो उन्हें जरुर देख लेते। यह जाहिर हो रहा है कि मेराजे-हक़ वाले मोमिन बन्दे ही कायम बशरी सूरत वाले नबीअल्लाह को देख सकते हैं।

इस घटना से यह भी प्रमाणित हो रहा है कि सच्चे मोमिन जो होते हैं, उनमें बेहेयाई और बुराईयां नहीं हो सकतीं। क्या हमारे रहनुमा या धर्म-प्रचारक में यह शक्ति है कि उनके शिक्षण-प्रशिक्षण से ईश-दर्शन या मेराजे-खुदा इन्सान को प्राप्त हो जाए? यदि नहीं, फिर उनके धर्म-प्रचार या दीनी तबलीग से विश्वमानव समाज को वास्तविक लाभ क्या मिल रहा है? इस मुद्दे पर आज हमें खुद आत्म-चिन्तन करना चाहिए।

[16-A] नबीअल्लाह और गैरुल्लाह

तब्लीगे-हक़ के नाम पर कुछ लोग यह भी समझाते हैं कि खुदा के सिवा हर शय बुत (मूर्ति) है। केवल खुदा ही माबूद (पूज्यनीय) है। इसलिए खुदा के सिवा जो भी पैगम्बर, रसूल और वली-औलिया या फकीर हैं, उनसे हार्दिक प्रेम न रखो। क्योंकि यह भी बुत ही है। उनका कथन है कि अगर ईश्के-खुदा और ताजीमे-रसूलल्लाह ईश्के वली या फ़कीर आदि दोनों करते हो, तो यह उस पाकजात के साथ शिर्क करना है। इस्लामी शरीयत में शिर्क उसे कहते हैं, की ईश्वर, अल्लाह में किसी ईश्वर, अल्लाह के गैर को शामिल किया जाए। हकीकत में ईश्वर के गैर तो वह हैं, जो ईश्वर, अल्लाह के गैर हों। वली-औलिया, खुदा के फकीर और अल्लाह के रसूल गैर हैं या अल्लाह के खास हैं। इस सत्य पे ऐसे लोग हमें कुछ भी नहीं बताते हैं।

काबा के एक धर्म विद्वान (इस्लामी उस्ताद) ने कहा कि हज या उमरा में हिज्रे-असवद (काबा शरीफ में रखा पत्थर) को बोसा (चूमना) देना सुन्नते-रसूल है। उनकी यह मान्यता है कि अल्लाह के रसूल हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम ने हिज्रे-असवद को बोसा दिया है। इसलिए यह कार्य सुन्नत है और यह शआरे-इस्लाम (इस्लामी कर्म) बन चुका है। वरना मुसलमानों को एक पत्थर से क्या काम? वहीं विद्वान यह भी कहते हैं कि हज के लगवी मायने (शाब्दिक अर्थ) किसी हस्ती को काबिले-ताजीम (सम्मान योग्य) समझ कर उसकी जियारत (दर्शन) के लिए बार-बार जाना है। उनके ज्ञान के अनुसार हज उसे कहते हैं, जिसमें खुदा की हस्ती की जियारत (दर्शन) हो। क्योंकि सारी दुनिया के लिए उस पवित्र ईश्वर के सिवा काबिले-ताजीम अथवा सर्वोच्य सम्माननीय दूसरा कोई नहीं है। वह सूरह तौबा (कुरआन) की इस आयत का हवाला देते हुए कहते हैं कि- "उन्होंने अल्लाह को छोड़कर अपने ओलमा को अपने जाहिदों को रब बना रखा है और मसीह इब्ने मरीयम को भी। हालांकि उनको सिर्फ एक ही माबूद की इबादत का हुक्म दिया गया था।" ऐसे लोग ओलमा और जाहिदों का अर्थ कामिल पीर और वली-औलिया से लगाते हैं तथा मसीह इब्ने मरीयम को उनके मानने वालों के विश्वास के अनुसार हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के मानने वालों के विश्वास के साथ जोड़ते हैं। जबकि मसीह अलैहिस्सलाम को उनके मानने वाले सीधे ईश्वर का पुत्र या खुदा का बेटा समझ कर मानते हैं। रसूले-पाक को दुनियां का कोई व्यक्ति अल्लाह का बेटा नहीं मानता। बल्कि उन्हें ईश्वर का ईशदूत या पैगम्बर मानकर उनसे श्रद्धा या अकीदत रखता है।

ईश-वचन में स्पष्ट कहा गया है कि अल्लाह को छोड़कर अपने ओलमा और अपने जाहिदों को रब बना रखा है। प्रकट है कि ऐसे आलिम (धर्म विद्वान) तथा जाहिद (शुद्ध ईश पूजक) जो ईश्वर के दर्शन से कोरे हैं, उनकी मान्यता रखने वालों के प्रति ईश्वर ने यह कलाम (वार्ता) किया है। इस ईश-वचन का खुलासा यह है कि ऐ लोगों, मात्र धर्म ज्ञानी (मार्फते हक से खाली आलिम) तथा मात्र ईश-पूजक (मार्फते खुदा से खाली जाहिद) को एक खुदा के पैगम्बर हजरत ईसा अलैहिस्सलाम को खुदा का बेटा कहके अपना रब मत बनाओ। ईश-वचन स्पष्ट करती है कि ऐसे ओलमा व जाहिद जिन्हें केवल धर्म-ज्ञान है अथवा वे किताबी ईल्म के अनुसार ईशपूजा में लगे रहते हैं। उन्हें ईश-मिलन ज्ञान नहीं है। यदि उनके कथन की पैरवी करते हो, तो यह तुम्हारे सच्चे रब की पैरवी नहीं है। अर्थात- ऐसे ईश-दर्शनहीन आलिम या जाहिद के कथन की पैरवी में लगना, उन्हें ही अपना रब बनाना है। आलिमे-हक वो जिसने अपने ईल्म से ईश-प्राप्ति की है तथा जाहिदे-हक वो जिसने अपने जोहदो तकवा के ईल्म से ईश्वर को पा लिया है। ऐसे आलिम व जाहिद से ही तुम दीने-हक (ईश-धर्म) लेना। खुदा के कथन में पहले ही यह शब्द है कि उन्होंने अल्लाह को छोड़कर ऐसे आलिमों व जाहिदों को जो अल्लाह को पाए नहीं हैं, उनके पीछे-पीछे भागते हैं और ऐसे गैरुल्लाह यानी

अल्लाह के गैर की पैरवी करते हैं। अल्लाह को जो न पाए, वहीं अल्लाह का गैर है। जो अल्लाह को पाया, वहीं तो अल्लाह का अपना खास या अल्लाह वाला है। कामिल पीरों ने तथा वली–औलिया ने अल्लाह को पाया है। वरना कामिल पीरों की पैरवी या नक्शे–कदम (पदचिन्ह) पर चलकर दुनियां में इतने वली–औलिया कैसे बनते रहते? अल्लाह को जिसने पाया, उसने अल्लाह को न छोड़ा है और न उसके पैरवी करने वाले अल्लाह को छोड़ते हैं। अगर कामिल पीर अपने को रब घोषित करके अपनी पूजा, इबादत कराते, तो उनकी तालीम और तबलीग से अल्लाह के वली कैसे पैदा होते रहते? इसलिए अल्लाह तआला का यह कथन अल्लाह के दीदार से खाली ओलमा और नकली जाहिदों को अपना मार्गदर्शक या रहनुमा न बनाने की तरफ ईशारा कर रही है। जो ऐसा करेगा, उसने उन्हें अपना रब बनाया। यहां समझने की बात यह भी है कि जिस आलिम या जाहिद ने स्वयं ईश–मिलन नहीं प्राप्त किया है। उनके तालीम या तबलीग से कोई कैसे अल्लाह तआला का दीदार पाएगा? ऐसे में तालीम देने और लेने वाले दोनों रब से दूर हुए। यही है अल्लाह को छोड़कर बेअमल आलिमों और नाकिस जाहिदों को अपना रब बनाना। जिसे रब का दीदार नहीं, उसकी पैरवी में लगे रहना, यही तो अल्लाह के सिवा, अपने रहनुमा रहबर को रब बनाना है। किसी नाकिस आलिम या झूठे जाहिद के बताए ईल्म और अमल पर हम चलते हैं, तो अल्लाह की नज़र में उसको रब बनाना है। क्योंकि ऐसे रहबर को दीदारे खुदा हासिल नहीं है। यानी अल्लाह को वह छोड़ चुके हैं। वह अल्लाह के साथ नहीं हैं। इसलिए ऐसे गुमराह लोगों की पैरवी करते हो, तो तुमने उन्हें अपना रब बनाया। खुलासा यह कि वह सिर्फ अल्लाह का नाम लेते हैं, वह अल्लाह से वाकिफ नहीं हैं।

हजरत ईसा का नाम इसलिए आया, क्योंकि उनका लाया दीने–हक़ यदि हक़ पे कायम रहता, तो दीने–इस्लाम को अल्लाह तआला जाहिर न फरमाता। नबीए–पाक सल्ले अला व सल्लम से अकीदत, मुहब्बत और उनकी अजमत करने वाले उन्हें नबीअल्लाह कहते हैं, उनकी मुहब्बत में कोई शख्स उन्हें अल्लाह तो नहीं कहता। उन्हें अल्लाह का महबूब कहते हैं, कोई उन्हें अल्लाह का बेटा या अल्लाह मानकर जिक्रे रसूलल्लाह तो नहीं करता। इस खुदाई सन्देश की सच्चाई बिना समझे ऐसे उस्ताद और उनके चेले कहते हैं कि नबी अल्लाह की मिलाद और वली–औलिया के कब्रों पर जाना, उनसे मदद या मिन्नत मनौती मांगना आदि यही 'शिरकिया अकायद' (ईश्वर में किसी को सम्मिलित करने का विश्वास) है। सर्वमहान औलिया हजरत पीराने पीर दस्तगीर की ग्यारहवीं शरीफ तथा हजरत ख्वाजा गरीब नवाज अजमेरी की छठी शरीफ मनाना। उनके नाम के वज़ीफे पढ़ना यह तो गैरुल्लाह की परस्तिश करना है। काबा के उस्ताद का कहना है कि शैतान जो इन्सान का खुला दुश्मन है, उसने हर इबादत के मुकाबले पर इबादतगाहें बनवायी।

यहां ऐसे विचारों से स्पष्ट है कि इस तरह के रहनुमा या उस्ताद को नबीअल्लाह और वली-अल्लाह की ईश्वर द्वारा कायम जिन्दगी का सच्चा ज्ञान नहीं है। ऐसे विचारकों को न फनाफिल्लाह हासिल है और न फनाफिर्रसूल की मन्जिल। यह मार्फते-हक और मार्फते नबी-अल्लाह से खाली हैं। जो अल्लाह के खासुलखास (अतिविशिष्ट) हैं, वह नबी अल्लाह हैं। जो अल्लाह के खासुलखास नबी के खास हैं, उन्हें अल्लाह तआला ने भी अपने खास में शुमार कर लिया है। यही जमात तो वली-औलिया की है। यानी- वली-औलिया, अल्लाह और नबीअल्लाह के खास का नाम है। इसीलिए अल्लाह ने "मेरे औलिया' शब्द से उन्हें अपने कलाम (कुरआन) में सम्बोधित किया है। इन वली-औलिया के शिक्षक-प्रशिक्षक या रहनुमा को कामिल पीर कहते हैं। हजरत पीराने-पीर दस्तगीर के कामिल पीर हजरत शैख अबू सईद मुबारक अलमखजूमी हैं। ख्वाजा-ए-ख्वाजगान हजरत सैय्यद मुईनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी अलमारुफ (चर्चित) हजरत ख्वाजा गरीब नवाज़ हिन्दल-वली के कामिल पीर हजरत ऊषमान हारुनी चिश्ती हैं। हजरत पीराने-पीर कादरिया पीरों की परम्परा के एक पीर हैं। हजरत ख्वाजा गरीब नवाज चिश्तिया पीरों की परम्परा के एक पीर हैं। यह प्रकट हो रहा है कि कामिल पीरों की जमात का नाम ही वली-औलिया है।

ध्यान से देखें की कामिल पीर यदि ईश-दर्शन प्राप्त तथा ईशदूत (नबी, पैगम्बर) दर्शन प्राप्त न होते, तो अपने शिष्य को वली अल्लाह कैसे बनाते? यही ईश-धर्म की सच्ची पहचान है कि जिस ईश्वर, अल्लाह की हम पूजा, नमाज़ करते हैं, उसकी प्राप्ति हो। उस ईश्वर से बन्दा इतना मिले की बन्दे को खुद अल्लाह तआला खुश होकर अपनी 'वेलायत' से नवाज दे। 'वेलायत' की प्राप्ति का ही दूसरा नाम 'ईश्वर की चिरस्थाई कृपा' प्राप्त करना है। ईश-दर्शन और मिलन की निरन्तर प्रक्रिया से वली-औलिया कहलाने वाले बन्दे कायम हो जाते हैं। ईश-चिरस्थाई कृपा में निरन्तर कायम रहने का नाम 'वेलायत' है। जिसे वेलायत मिली क्या वह भी कायम नहीं रहेगा? अल्लाह के वली के पास जब अल्लाह की ही अताकर्दा (ईशकृपा) वेलायत है, तो वह अल्लाह की वेलायत से ही तो मिन्नत-मनौती और जन-आकांशा की पूर्ति निरन्तर करते रहते हैं। अल्लाह की वेलायत की कायमी बरकरार है। यह वली-औलिया के दर से अवाम को निरन्तर पता चलता है। अल्लाह के वली को अल्लाह की वेलायत से देने का अधिकार न होता, तो वे मखलूके खुदा को देते कैसे? प्रकट हुआ कि कामिल पीर की हकीकत अल्लाह की वेलायत है। वेलायत में अल्लाह की रहमत, बरकत और इनायत पोशीदा है। अल्लाह की वेलायत तो वली के लिए एक खास इनाम है। इस इनाम की सच्चाई की जांच-पड़ताल कैसे होती, यदि उनसे कुछ मांगा न जाता। उनसे लोगों को मिलता है, यह मिलना प्रमाण है कि उनके पास अल्लाह तआला की सच्ची वेलायत मौजूद है। वह अल्लाह के हो गए, इसलिए अल्लाह के करम से देते हैं। यही नेकबन्दे हैं, जो यह प्रमाण भी देते हैं कि अल्लाह तआला ने उन्हें मखलूके खुदा के

साथ निरन्तर नेकी करने के लिए कायम फरमाया है। यह अल्लाह के गैर कहां? यही तो अल्लाह वाले हैं। गैरुल्लाह तो वह है, जो अभी अल्लाह तआला की वेलायत से महरुम है। अब सोचिए की इनके ऊर्स, जश्न नहीं होंगे, तो क्या किसी गैरुल्लाह के होंगे? इनके नाम में अल्लाह जुड़ा है, यानी- वलीअल्लाह। अगर कोई इनके नाम को जोड़कर कुछ पढ़ता है तो अल्लाह तआला उसकी कैसे सुन लेता है? वली अल्लाह के नाम पर यदि पाक रब को एतराज होता, तो वह लोगों की जरुरतें पूरी क्यों करता? इससे साबित यह हो रहा है कि जिसने अल्लाह तआला की रजा और बख्शिश से इन्कार किया, वह अभी तक गैरुल्लाह है। अगर वह अल्लाह वाला होता तो अल्लाह के वली पर नाहक इल्जाम न लगाता। ऐसे लोग वली की बारगाह को शैतानी खलल की इबादतगाहें तसव्वुर करते हैं। उन्हें कब यह एहसास होगा कि **आस्ताना या दरगाह औलिया का अल्लाह की दरबारे-वेलायत है।** क्या कोई सच्चा इस्लामी शख्स अल्लाह की वेलायत की जगह को बुतखाना या शैतानी इबादतखाना कह सकता है? जो दरगाह या मजार अल्लाह के सच्चे इबादत करने वाले की पहचान कराए। वह जगह शैतान से पाक न होती, तो अल्लाह उनकी इबादत से खुश होकर अपनी वेलायत का इनाम उन्हें कैसे देता? हैरत है कि आज ऐसी इस्लामी तब्लीग की आंधियां गिरोहबन्दी के साथ-साथ किताबी शक्लों में भी बांटी जा रही हैं? तब्लीगे-हक् के नाम पर समाज में ऐसे नये-नये मिलावटी इस्लामी विचार फैलाए जा रहे हैं, जिनकी निस्बत न हक् से है और न इस्लामी हक् से। ऐसी तब्लीग की कुछ और झलकियां देखें और गौर करें। तब्लीगे-हक् के बहाने ऐसे नाहक तब्लीग करने वाले क्या-क्या नासमझी और गुमराही के सन्देश इस्लाम के नाम पर देते रहते हैं।

एक तब्लीगी रहनुमा कहता है- "नमाज में हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम की तरफ ख्याल ले जाना, अपने गदहे और बैल के ख्याल में डूब जाने से बदरजा जहां बदतर है। जिसका नाम मुहम्मद या अली है, वह किसी चीज का मालिक व मुख्तार नहीं।"

एक दूसरा तब्लीगी रहबरे इस्लाम कहता है- "हुजूर सलललललाहो अलैहे व सल्लम के मकबरे को देखना ऐसा गुनाह है, जैसे बुतों को देखना।" इस्लामी मुल्क के एक बादशाह ने शोबा-ए-शरीयत (इस्लामी कर्मकाण्ड विभाग) के डायरेक्टर की हैसियत से यह फतवा वर्ष- 1981 ई0 में जारी किया। उसने कहा- "मिलाद शरीफ की महफिलें मुनक्कद (आयोजित) करना शिर्क व बिदअत है।" उसी इस्लामी हुकूमत के अखबार 'अलदावत' में सन् 1978 ई0 में यह प्रकाशित किया गया- "कब्र रसूल और गुम्बदे खिजरा को मोनहद्दम (ध्वस्त) कर देना चाहिए। यह शिर्क व बिदअत है।"

– ऐसी तरह-तरह की इस्लामी तब्लीग हम रोज सुनते-पढ़ते हैं। लेकिन जब दिल 'तब्लीगे-हक्' की तलाश करता है तो ऐसे रहबर और रहनुमा में हक् की बूबास तक नहीं मिलती।

17 - तब्लीगे-हक़ कान्फ्रेन्स

'हक़' खुदा का एक नाम है। नाहक का दूसरा नाम गैरुल्लाह है। गैरुल्लाह यानी अल्लाह के गैर। हक़ क्या है? हक़ की पहचान किसे है? हक़ है किस में? जिसमें हक़ दाखिल है, वही तो हक़ की हकीकत बयान कर सकता है। इस मसले पर 'खानकाह रहीमीया' मुहल्ला-तिपरापुर, थाना-तिवारीपुर, शहर गोरखपुर (उ0प्र0) के सज्जादानशीन और कामिल पीर हजरत हाफिजे, सूफी, कारी जनाब जमीर अहमद शाह उर्फ सूफी दीदार शाह चिश्ती, कादरी, निजामी की सदारत में नज़राना प्रेस, कप्तानगंज, जिला-देवरिया (अब कुशीनगर) उत्तर प्रदेश में एक कान्फ्रेन्स "तबलीगे-हक़" नाम से सम्पन्न हुई थी। यह पहली रमजान से पूरे रमजान माह तक निरन्तर चली। उसके बाद उ0प्र0, महाराष्ट्र तथा देश के अन्य कई नगरों में सम्पन्न हुई। इस तबलीग में हजरत सैय्यद फैजल शाह उर्फ श्री साधु बाबा, हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ सर विलियम जे0 थामस (उर्फ जनाब झरना शाह बाबा), सर इकबाल अली अहमद और सर डेविड, हजरत सैय्यद नूरुद्दीन शाह, हजरत सितारा वली और सर रोडरिंग तथा सन्त श्री निर्मल महाराज, सैय्यद गुलाब शाह, स्वामी मुदलियार, मौलाना अलीमुद्दीन चिश्ती, सन्त श्री सुरजीत शाह, हजरत हजारी बाबा, श्री मोहीनी शाह, सर जॉन डी0 डिसूजा जैसे अनेक फकीर मौजूद थे। आईए-- इस कान्फ्रेन्स की संक्षिप्त झलकियां देखें।

[17-A] अजान क्या है ?

श्री कबीर दास ने एक बार यह कहा कि मसजिद के ऊंचे स्थान पर चढ़कर मुल्ला (मोअज्जिन यानी अज़ान देने वाला) खुदा को क्यों पुकारता है? श्री कबीर दास ने यूं कहा था-

कांकर-पात्थर जोड़ि के महजिद लियो चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाए।।

अर्थात :- कन्कड़, पत्थर को जोड़ कर मसजिदें बना ली गई और उस पर मुल्ला चढ़कर आवाज देता है, क्या खुदा (ईश्वर) बहरा है, जो नहीं सुनता?

प्रत्यक्ष में यह दोहा मसजिद में पांच वक्त अजान देने वाले मुल्ला या मोअज्जिन की ओर संकेत दे रहा है कि वह अल्लाह को चिल्लाता क्यों है? खामोशी से भी अगर अल्लाह या खुदा को याद किया जाए तो वह सुनता है, वह बहरा नहीं है। कबीर दास जी का यह चिन्तन 'अजान' की सत्यता जो नहीं जानता, उसके लिए उत्तम है। पर जो सत्यता जानता है, वह कहेगा कि मुल्ला अजान देकर नमाज पढ़ने वालों को बुलाता है, न कि खुदा की पूजा-प्रार्थना चिल्ला कर वह करता है। मसजिदों में जो अजान दी जाती है, जरा उसके अर्थ को तो देखें।

अल्लाहो अकबर- अल्लाहो अकबर
(ईश्वर सबसे महान, ईश्वर सबसे महान।)
अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह
(गवाही देता हूं कि ईश्वर एक है और वही पूज्यनीय है।)
अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदुर्रसूलल्लाह
(गवाही देता हूं कि मुहम्मद साहब ईश्वर के रसूल या ईशदूत हैं।)
हईया लस्सलाह - हईया लल्फलाह।
(आओ नमाज या ईशपूजा के लिए- आओ मुक्ति (नजात) के लिए।)
अल्लाहो अकबर-'अल्लाहो अकबर।
(ईश्वर सबसे महान - ईश्वर सबसे महान।)

- यही अजान के अरबी शब्द हैं, जिसके अर्थ से प्रकट हैं कि मसजिद में पांच समय अजान देने वाला, लोगों को नमाज के लिए आमन्त्रित करता है, न कि खुदा की उपासना-आराधना वह चिल्ला कर अथवा ऊंची आवाज में करता है। पर एक और बात भी तो है। श्री कबीर दास जी कहते हैं:-

कबीरदास की उल्टी बानी।
बरसे कम्बल, भींजे पानी।।

अर्थात- कबीर दास की वाणी उल्टी है, जैसे कम्बल की वर्षा हो और पानी भींगता हो। अगर इस दोहे के आधार पर हम कबीर दास की 'कांकर पाथर जोड़िके....।' दोहा का भावार्थ लगाएं तो इन्सान को ईश्वर की सत्यता का दर्शन सहज ही प्राप्त हो जाएगा। श्री कबीरदास की उल्टी वाणी के आधार पर उनके कथन का यह अर्थ निकलता है। "ऐ मुसलमानों, अगर खुदा की सच्ची मुहब्बत तेरे दिल में है तो तुम नमाज के लिए बिना अजान की प्रतीक्षा किए स्वयं क्यों नहीं आ जाते। खुदा तो हर इन्सान के दिलों में है। अगर तुम्हारे दिलों में ईश्वर की सच्ची मुहब्बत होती, तो तुम पांच वक्त अजान की प्रतीक्षा करके खुदा की पूजा में न जाते। ऐ मुसलमानों, तुमने कंकड़-पत्थर को चुन-चुन कर मसजिद रुपी खुदा का घर जरुर बना लिया है, पर अपने दिल के खुदा को अब तक पहचान न सके। ऐ लोगों सुनो, खुदा की सच्ची पूजा दिल से करना सीख लो, वह सर्वशक्तिमान ईश्वर-खुदा बहरा नहीं है, तेरे दिल की जुबान को भी वह खूब समझता है। उसे चिल्ला कर या खामोशी से भी अगर याद करते हो तो वह खुदा जानता और सुनता है।"

श्री कबीर दास के वचन का प्रथम अनुवाद शाब्दिक था, यह दूसरा अनुवाद उनके उसी कथन का भावार्थ है। देखिए दोनों के अर्थ-भावार्थ में कितना अन्तर है?

[17-B] ईश-पूजा की सत्यता

अब तक हम यहीं जानते रहे हैं कि अरबी भाषा में 'लाईलाह इल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' का जिक्र करना या उसे निरन्तर जपना, ईश्वर-अल्लाह की उच्च पूजा या इबादत है। थोड़ा अरबी भाषा के छः कल्मे या इन खुदाई जिक्र-अजकार (ईश नाम जप) के अर्थ-भावार्थ पर एक बार पुनः विचार कर लें ताकि यह हमें पूर्ण विश्वास हो जाए कि हम अरबी भाषा में जो कुछ भी अल्लाह की पूजा, परस्तिश या इबादत के नाम पर पढ़ते हैं, उसका सत्य भाव क्या है?

1. कल्मा तैय्यब :- "लाईलाह ईल्ललल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह" :- उर्दू भाषा में इसका अर्थ यह बताया जाता है- "नहीं कोई माबूद, सिवाए अल्लाह के और हजरत मुहम्मद सल्लललाहो अलैहे व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं।" इसी को यदि हम हिन्दी भाषा में अर्थ करें तो यह कहा जाएगा कि 'नहीं कोई पूज्यनीय, उस ईश्वर के अतिरिक्त और हजरत मुहंम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के सन्देशवाहक और ईश-वाणी के प्राप्तकर्ता हैं। उस एक जग-मालिक को अल्लाह, खुदा, रब, ईश्वर, प्रभु, निरन्जन, अहुरमज्द हम जो भी कहें, उसके तो अनगिनत नाम हैं। वह एक ही है, वही तो सर्व सृष्टि में पूज्यनीय हैं। *मगर ईश-दूतों में अम्बिया, नबी, रसूल के जो पदनाम आए हैं, वह अपने* अन्दर भावार्थ अलग-अलग छुपाए हुए हैं।

(क) अम्बिया :- अम्बिया वास्तव में नबी शब्द का बहुवचन है। अर्थात- ईश्वर के अनेक नबी। ईश्वर के अनेक नबी का स्पष्ट अर्थ होता है कि ईश्वर ने अपनी ईच्छानुसार सम्पूर्ण सृष्टि या अपने समस्त लोकों में समय-समय पर अपने नबी या ईशदूत को भेजा।

(ख) नबी :- इस नबी शब्द का अर्थ बताया गया है- 'बुलन्दी मर्तबा'। अर्थात- नबी वह हैं, जिनका मर्तबा ईश्वर के समक्ष काफी बुलन्द हो। मर्तबा कहते हैं, सम्मानित पद को। ऐसा सम्मानित पद, जो ईश्वर के दृष्टि में सर्वोच्च हो। नबी का अर्थ, ईश्वर की खबर देने वाला या ईश-सन्देश को प्रकट करने वाला भी होता है। जब यह कहा जाएगा कि हजरत ईसा नबी अल्लाह हैं या हजरत मूसा नबीअल्लाह हैं, तो इसका अर्थ यह निकला कि हजरत ईसा या हजरत मूसा, ईश्वर के सम्मानित एवं उच्च सन्देशवाहक हैं। इन दोनों नबी की पहुंच ईश्वर की नजर में सर्वाधिक प्रिय एवं सर्वोच्च है। नबी का एक अर्थ- 'मखफी आवाज' यानी ईश-वचन को या गुप्त ईशवाणी का सुनने वाला भी होता है। अर्थात- ईश-वाणी को जो सुनता है, वह नबी है। संसार के लोग ईश-वाणी या ईश-फरिश्ते आदि को जानते-पहचानते तक नहीं है। इसलिए नबी के इस अर्थ में 'मखफी आवाज' अर्थात ईश्वर का खुफिया या गुप्तस्वर, जिसे केवल नबी सुन सकते हैं, अन्य मानव या कोई बशर नहीं। प्रकट हुआ कि नबी वह भी हैं जो ईश्वर का गुप्त सन्देश पाएं तथा मानव समाज में प्रकट करें। दूसरे नबी वह भी

है, जो ईश्वर के सर्वोच्च सम्मान प्राप्त हों। यह भी कहना सत्य है कि नबी अल्लाह, अल्लाह के सर्वोच्च और सबसे सन्निकट रहने वाले सर्वश्रेष्ठ ईश-प्रियजन हैं। नबी, को नबी इसलिए भी कहा जाता है, क्योंकि वे ईश्वर और मानवसमाज के मध्य पूर्ण सम्पर्क-सूत्र हैं। **दूसरे शब्दों में जिन्हें ईश्वर की कुरबत (सानिध्य) एवं मार्फत (दर्शन) की उत्कण्ठा हो, वह नबी रुपी सम्पर्क-सूत्र से पहले आत्मिक एवं हार्दिक सम्बन्ध स्थापित करें।** ईश-सन्देश को 'वहीं' भी कहते हैं। यह 'वहीं' ईश्वर के आदेश-निर्देश से परिपूर्ण हो या नबी से समाज द्वारा किए गए जन-प्रश्नों का उत्तर हो। जन-प्रश्न तत्कालिक प्रश्न हैं, जो नबी के समक्ष मानव समाज वाद-विवाद के रुप में उठाता है। ईश्वर द्वारा अपने नबी को उक्त लोक-प्रश्नों का भी उत्तर 'मखफी आवाज' या 'वहीं' के रुप में दिया जाता है।

(ग) रसूल :- रसूल का अर्थ- ईश्वर का सन्देश या पैगाम पहुंचाने वाला तथा ईश्वर की ओर से भेजा हुआ होता है। रसूल की विशेषता यह होती है कि उन्हें ईश्वर की ओर से ईश-सन्देश जो भी प्राप्त हों, उसे याद हो और वह संग्रह करे। समझने के लिए रसूल के पास ईश-वचन का संग्रह होता है। हर रसूल, नबी अवश्य होता है, परन्तु हर नबी का रसूल होना आवश्यक नहीं है। अब तक के प्राप्त ज्ञान से इस्लामी पुस्तकों के आधार पर नबी तो बहुत आए, किन्तु रसूल की संख्या तीन सौ तेरह बतायी जाती है। ईश-सन्देशयुक्त पुस्तकों की संख्या कुल एक सौ चार कही जाती है। लगभग एक सौ ऐसे ईश-वचन संग्रह की पुस्तकें हैं, जिनका स्थाई नामकरण नहीं है। इन्हें इस्लामी दृष्टिकोण से 'सहीफे' कहा जाता है। ईश-वाणी या ईश-सन्देश संग्रह की जो एक सौ चार पुस्तकें हैं, उनमें चार ईश-सन्देश संग्रह के नाम, तौरेत, इन्जील, जब्बूर और कुरआन है। स्पष्ट हुआ कि रसूलल्लाह भी नबी अल्लाह हैं, मगर उनके पास ईश्वर का सन्देश रुपी बहुमूल्य संग्रह है।

अब कल्मा तैय्यब- 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' की तरफ ध्यान दें, तो पता चलता है कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेहीं व सल्लम को पहले अल्लाह का रसूल दिल, जुबान, मस्तिष्क और विचार से कुबूल करना पड़ेगा। जब तक कामिल यकीन या परिपूर्ण श्रद्धा हमारी उनके प्रति नहीं होगी, हमारा यह कथन कि 'नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के' हमें पूर्ण लाभ नहीं पहुंचाएगी। ऐसा क्यों होगा। कारण स्पष्ट है, अल्लाह के रसूल ने ही तो हमें बताया कि ईश्वर-अल्लाह दो चार नहीं, एक है। उन्होंने सबसे पहले ईश्वर को जाना-पहचाना है। तभी तो ईश-दूत कहते हैं कि ईश्वर के सिवा अन्य की पूजा करना अनुचित है। केवल पूजा उसी एक ईश्वर की करनी चाहिए। हमें ईश-दर्शन, ईश-सम्पर्क या ईश-ज्ञान तो कुछ भी नहीं है। बस रसूलल्लाह या ईश्वर के सर्वोच्च दूत ने हमें जो कहा, हमने उस बात को पूर्ण श्रद्धा से माना है। ईश-दूत के कथन पर पूर्ण श्रद्धा यदि हमारी है, तो इसके पूर्व वह सचमुच ईश्वर के भेजे हुए रसूल हैं, यह हृदय में होनी चाहिए। अब हमारा- ईश्वर

के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं, यह कथन या जाप-तप या जिक्र-अजकार करना हमें जरुर फायदा देगी।

ईश-सम्पर्क या मार्फते-इलाही इस कल्मा तैय्यब से कैसे पायी जाए। यह बात काफी चिन्तनपूर्ण है। कल्मा तैय्यब- 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह।' अर्थात- (1) नहीं कोई पूज्यनीय (2) ईश्वर के सिवा ;(3) हजरत मुहम्मद सल्ले अला अल्लाह के रसूल हैं।

(1) नहीं कोई पूज्यनीय :- पत्नी, पिता-माता, सन्तान, धन-दौलत, गर्व, अहंकार, मकान, दूकान, नौकरी, व्यवसाय, रिश्ते-नाते, सर्वप्रिय वस्तुएं, सर्वप्रिय भोजन, शारीरिक आनन्द के विभिन्न साधन आदि जो भी हैं, यही 'कोई' शब्द का इस स्थल पर सत्य अर्थ या संकेत है। संक्षेप में ऐसी कोई वस्तु जिसके कारण मानव या अन्य प्राणी को दुःख पहुंचे या किसी सांसारिक वस्तु की ऐसी चाह, जिसकी प्राप्ति हेतु हृदय-मस्तिष्क उसी में लगा रहे, यही 'कोई' है। इसी कोई पूज्यनीय या माबूद, को सर्वप्रथम 'नहीं' कहके दिल-दिमाग, विचार से भगाना चाहिए। 'नहीं कोई पूज्यनीय', 'नहीं कोई पूज्यनीय' का सच्चा जाप जब हम करने लगेंगे तो यही होगा, ईश्वर के समक्ष हमारा पूर्णरुपेण आत्मसमर्पण। अगर हम ऐसा नहीं कर पा रहे हैं तो यही 'कोई' (दुनियां या इन्द्रिय या नफ्स) हमारा पूज्यनीय या माबूद हो गया। फिर हमारा **अरबी में 'ला ईलाहअ ईल्लल्लाह' कहने का अर्थ तो यह हुआ कि- "हैं सभी पूज्यनीय ईश्वर के साथ।" हम अरबी में लाखों-करोड़ों बार जुबान से 'नहीं ! कोई पूज्यनीय' कहते रहें, मगर दिल-दिमाग और विचारों का बहुमत कहेगा- "हैं सभी पूज्यनीय ईश्वर के साथ।" ऐसी जाप या इबादत हमें सत्य लाभ से दूर रखेगी। अगर कोई चिन्ता है तो इसके पढ़ने में यह अर्थ निकलेगा- "है मेरी चिन्ता पूज्यनीय ईश्वर के साथ।" इसी को गैरुल्लाह कहते हैं। यह 'कोई' ही हमारे दिल-दिमाग और विचारों के नाना-नाना प्रकार के बुत या मूर्ति हैं। यह 'कोई' अगर ईश्वर के साथ शामिल हो रहे हैं, तो इसी को शिर्क करना कहते है। हम पढ़ने में ऐसा कर रहे हैं तो जाहिर में हम ईश-पूजक या मुसलमान तो हैं, मगर ईश्वरीय परीक्षण में हम ईश्वर के गैर अनुयायी हैं। हम ईश्वर के साथ-साथ अपने मन के बुतों की पूजा भी कर रहे हैं। ईश्वर के साथ हम गैर को भी शरीक कर रहे हैं। ऐसा हम करते हैं तो हम बुतपरस्त और मुशरिक भी हो गए।**

यही ईश-वाणी या ईश-पूजा की सत्यता है, जो मात्र किसी इस्लामी व्यक्ति पर ही लागू नहीं होती, यह तो सृष्टि के सारे मानव के लिए है। जब सबका ईश्वर एक है, फिर ईश-वचन का कानून सब पर समान रुप से लागू होगा। अब हमारी मर्जी मानें या न मानें।

(2) ईश्वर के सिवा :- ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। ईश्वर के सिवा, जो कुछ है, वह बिन्दू एक में उल्लिखित है। मन, विचार, हृदय, मस्तिष्क, जुबान सभी में ईश्वर -अल्लाह ही मौजूद हो,

तब हमारा 'ईल्लल्लाह' का कथन पूरी तरह से उस ईश्वर के पूज्यनीय होने का इकरार करेगा। इस तरह जुबान से इकरार करना ईश्वर की सत्य पूजा को प्रकट कर रही है। हृदय, विचार, मन, मस्तिष्क एक साक्षी या गवाह के रुप में जुबान के कथन को स्वीकार कर रहे हैं। अब हमने ईश्वर को ही अन्दर-बाहर से पूज्यनीय माना।

(3) हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम :- इन्हें हमने अल्लाह का रसूल दिल, जुबान, विचार सभी से स्वीकार किया। इन पर लेशमात्र भी शंका-कुशंका न किया। इन पर पूर्ण विश्वास करके कहा-'मुहम्मदुर्रसूलल्लाह।' तब तो हमारा जुबान से कल्मा तैय्यब का पढ़ना तथा दिल, मस्तिष्क व विचारों का समर्थन, सब कुछ सही व दुरुस्त होगा। वास्तव में ईश्वर की पूज्यनीयता के लिए हमें 'नहीं कोई' (ला) कहना जरुरी है। लेकिन हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईशदूत हैं, यह कथन सार्थक तभी होगा, जब हमारे हृदय में उनका सम्मान और प्रेम हो।

2. कल्मा शहादत :- अश्शहदो अल्लाईलाहअ ईल्ललल्लाहो, वहदहू ला शरीकअ लहू व अश्शहदो अन्नअ मुहम्मदन अब्दोहू व रसूलहू।

(भावार्थ : मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। ईश्वर अकेला है, उसका कोई शरीक नहीं। और मैं गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद (सलललललाहो अलैहे व सल्लम) ईश्वर के बन्दे और रसूल हैं।)

प्रथम कल्मा तैय्यब में हमने ईश्वर-अल्लाह के समक्ष यह वचनबद्धता प्रकट की कि- ईश्वर के सिवा कोई पूजा के योग्य नहीं तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के ईश-दूत हैं। जब हम यह संकल्प कर चुके कि वह एक ईश्वर ही पूज्यनीय है तथा ईश-दूत हमारे हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हैं। उसके बाद यह दूसरा महामन्त्र (कल्मा शहादत) हमें दोनों के साक्षी होने के लिए संकेत दे रहा है। साक्षी कौन है? वह व्यक्ति जो ईश-पूजा को ही स्वीकारा तथा ईश-दूत को भी स्वीकार किया।

अब ऐसे व्यक्ति को कहना है कि मैं गवाही देता हूं या मैं साक्षी हूं कि ईश्वर के सिवा दुनियां की कोई चीज पूज्यनीय नहीं है तथा ईश्वर एक है और उसका कोई शरीक या भागीदार नहीं है। मैं साक्षी हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के बन्दे और रसूल या सन्देशवाहक हैं।

कल्मा शहादत को हिन्दी भाषा में हम साक्ष्य महामन्त्र भी कह सकते हैं। हम साक्ष्य के साथ यह बयान दें कि ईश्वर एक है, उसके साथ कोई सम्मिलित नहीं तथा वह एक ईश्वर ही पूज्यनीय है। यही कथन हम अरबी भाषा के कल्मए-शहादत से करते रहते हैं। मगर गवाह या साक्षी हम कैसे कहलाएंगे? क्या केवल जुबानी कथन से हमारी यह गवाही मान्य होगी। हमारा ईश्वर पर सुदृण

विश्वास है कि वह एक है, वहीं पूज्यनीय है। यह हमारा एक ठोस विश्वसनीय कथन तो हो सकता है, मगर साक्षी के लिए उस एक ईश्वर को देखना अनिवार्य प्रतीत होता है। बिना देखे गवाही हमारी सत्य कैसे मानी जाएगी? आगे हमें ईश-दूत की भी गवाही देनी है कि वे ईश्वर के बन्दे और ईश-दूत हैं। अब समस्या यह है कि हमने न तो ईश्वर को देखा हैं और ना ही ईश-दूत को, फिर कैसे कहें कि मैं गवाही देता हूं। अगर पूर्ण श्रद्धा या पूर्ण विश्वास के साथ हमें यह कहना होता कि ईश्वर एक है तथा ईश-दूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हैं तो हम लाखों-करोड़ों बार कहते रहते। मगर यहां तो शहादत या साक्ष्य हमें देनी है कि प्रभु एक है तथा वह अकेला है, उसका कोई शरीक नहीं तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम उसी एक ईश्वर के बन्दे और रसूल हैं।

मशहूर सन्त श्री सितारा वली ने इस कल्मे के सन्दर्भ में कहा- "यही शहादत का कल्मा हम रोज पढ़ते हैं, क्या हम कभी गौर किए कि शहादत या गवाही हमारी किसके समक्ष है? मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर एक है, उसका कोई साझीदार नहीं और वही पूज्यनीय है। ईश्वर एक है, यह तो हमें ईश-दूत ने बताया। ईश्वर का कोई साझीदार नहीं तथा वही पूजा के योग्य है। यह भी ईश-दूत ने ही बताया। बन्दा कैसे बन्दगी करे यह बन्दे की तरह ईश-पूजा करके ईश-दूत ने सिखाया। फिर तो गवाही देना सरल हो गया। हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के बन्दे और ईश-दूत हैं, मैं पूर्ण विश्वास के साथ सर्वप्रथम यह सशपथ गवाही देता हूं। मैं यह भी सशपथ गवाही देता हूं कि ईश-दूत के कथनों के अनुसार कि अल्लाह, प्रभु एक हैं तथा वह अकेला है, उसका कोई साझीदार नहीं तथा मैं उसी की पूजा करता हूं।

यही है ईश्वर व उसके ईश-दूत के समक्ष हमारी सच्ची शहादत (गवाही) का आत्मिक कथन। मार्फते-इलाही यानी ईश-सम्पर्क तथा मार्फते-रसूल यानी ईश-दूत सम्पर्क जिसे प्राप्त है, वह तो अपनी शहादत की ऊंगली उठाकर कहेगा कि ईश्वर एक हैं तथा ईश-दूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हैं। ईश व ईश दूत का सम्पर्क पाया व्यक्ति तो सचमुच सच्चा गवाह है। उसे देखने और सुनने की आत्मिक शक्ति प्राप्त है, वह जब कल्मए शहादत पढ़ेगा तो सच्ची शहादत यानी सत्य साक्ष्य देगा।"

लोकप्रिय सन्त श्री सितारा वली ने आगे यूं स्पष्ट किया- "ईश्वर के कल्मे या महामन्त्र तो हम पढ़ते हैं, मगर यह गौर क्यों नहीं करते कि यह महामन्त्र हमें क्या संकेत दे रहे है? अगर एक खुदा की इबादत व पूजा करने का संकल्प हमने किया है, फिर यही तो शहादत है कि हम एक ईश्वर की पूजा करते हैं। जिस ईशदूत ने हमें बताया कि ईश्वर एक है, उसका कोई साझी नहीं, उस ईश-दूत के प्रति भी हमें गवाही देने में हर्ज क्या है कि ईशदूत वह हैं। ईशदूत पर हमारा ठोस विश्वास ही हमें शहादत देने का मार्ग बताता है।

जिसने ईशदूत को माना, उनसे दिली प्यार किया। वह उनसे सम्पर्क-सूत्र स्थापित कर लेता है। यह सम्पर्क-प्रेम उसे उनके दर्शन-अनुभव तक पहुंचा देती है। जब ईश-दूत मिले तो उनके अगाध प्रेम के कारण ईश-दर्शन मिलन भी हो जाता है। इसीलिए ईश-दूत के बिना ईश्वर को पाना असम्भव है। ईश-दूत के चले जाने के बाद, जिन्हें पाने का शौक है, उसे किसी पूर्ण सद्गुरु या कामिल पीर की शरण में जाना चाहिए। कामिल पीर को ईश-दूत और उस एक प्रभु-अल्लाह को पाने का सीधा और सच्चा रास्ता मालूम है।"

बहुचर्चित सन्त श्री सितारा वली ने अपना यूं विचार दिया- "ईश्वर-अल्लाह का सत्य धर्म-मजहब क्या है? हम कभी इस पहलू पर भी सोचते हैं या नहीं सोचते हैं? सनातन, बौद्ध, पारसी, ईसाई या इस्लाम के रंग में हम मस्त हैं। अगर यह सारे धर्म या धर्म सन्देश किसी ईश्वर के नबी, रसूल, पैगम्बर, ऋषि आदि के माध्यम से हमें मिली है, तो फिर समय-समय पर आए ईश-निर्देश या सन्देश का नाम ही तो हमने इस्लाम, सनातन, ईसाई, पारसी, बौद्ध आदि सम्बोधन के लिए रखा है। सारे ईश-दूत न इस्लाम वाले हैं और न सनातनी और ना ही बौद्ध या ईसाई। **नबी, पैगम्बर, ऋषि, रसूल जितने भी हैं, सभी ईश-दूत हैं। ईश-दूत को आज हम सब अपना-अपना धर्म-दूत बनाने में लगे हैं।** यह जानते हुए भी कि वे एक प्रभु, निरन्जन, खुदा या गॉड के सन्देशवाहक हैं। हम उन्हें इस्लामी पैगम्बर, सनातनी ऋषि या अवतार या ईसाई मेसेन्जर या पारसी प्रवर्तक या बौद्ध दूत आदि विभिन्न नामों की मान्यता से जोड़ते रहते हैं। अफसोस है कि आखिर उन सभी ईशदूतों को उसी एक सृष्टि स्वामी के भेजे दूत हम दिल से कुबूल क्यों नहीं कर पाते हैं। ईश-दूतों को भी हम अपने व्यक्तिगत बुद्धि-ज्ञान के मतभेद में फंसाकर मानवजाति में भेद उत्पन्न करते रहते हैं। यह धर्म-मजहब और ईश-दूत भेद की मान्यताएं हमें उस एक प्रभु, परमेश्वर, गॉड या खुदा से काफी दूर कर देती हैं। **जरा सोचिए जब ईश्वर एक है, फिर उसी के भेजे सारे ईशदूत एक हैं या नहीं?**

हम में से कुछ लोग धर्म प्रसार या धर्म सेवा एवं धर्म रक्षा के कार्य को ईश्वर का पुण्यकर्म या सवाब का काम समझ कर जुट जाते हैं। **हम यह भी नहीं सोचते कि हमें इस्लाम सेवा या सनातन सेवा अथवा ईसाई, पारसी, बौद्ध सेवा करनी है या उस एक सत्य ईश्वर की सेवा करनी चाहिए।** इसी निजी सद्कर्म में हम उलझकर ईश-सेवा के स्थान पर भिन्न-भिन्न ईशदूत सेवा अथवा भिन्न-भिन्न ईश-धर्म सेवा में जुट जाते हैं। परिणाम इस ईशसेवा का सर्वदुखद, सर्वकष्टकारी और सर्वअमंगलकारी जब होने लगता है, तब हम चिल्लाते हैं- ऐ अल्लाह ! गैर-मुस्लिमों से मेरी जान-माल की हिफाजत करना। ऐ प्रभु ! मेरी धर्म-शत्रुओं से सुरक्षा करना। **OH GOD ! I am active in your worship. But all non-religious person were trying to kill me. Please help me & save my life !**

इस तरह हम धर्म-धर्म और मजहब, रिलीजन, पंथ, मत आदि के शानदार राज्य की स्थापना में सक्रिय रहते हैं। हम सभी के मध्य से यह सत्य भावना भी उठ जाती है कि हर धर्म और ईश-दूत के मूल प्रेषक तो ईश्वर, अल्लाह या गॉड है। हमारी भिन्न-भिन्न धर्म सेवाएं हमें उस एक ईश्वर को अनेक या भिन्न-भिन्न बनाती है, अन्यथा सभी मनुष्यजाति को हम उसी एक ईश्वर की प्रजा मानते? ऐसे सद्कर्म करने वाले मानव को हम कैसे कहें कि वह उस एक ही प्रभु-खुदा या गॉड पर पूर्ण आस्था रखता है और वह एक ईश्वर को ही पूज्यनीय मानता है। ऐसे पुण्यकर्मी समाज में कर्मवीर बनें अथवा रहबरे-इस्लाम या धर्मवीर, मगर उन्हें ईश-वीर के सम्मान से कोई सुशोभित कैसे करेगा?''

तार्किक प्रश्नों को उठाते हुए सन्त श्री सितारा वली बोले- ''हम प्रतिदिन कहते रहें कि ईश्वर एक है, वहीं पूज्यनीय है। मगर व्यावहारिक रुप से तो हम यह प्रकट करते रहते हैं कि हर धर्म-मजहब का खुदा-गॉड, निरन्जन झूठा, मेरे धर्म का खुदा ही सच्चा है। वही मेरे ही धर्म का खुदा या ईश्वर तो पूज्यनीय है। हम ऐसा जन-सन्देश या जन-जागरण खुल्लम-खुल्ला तो नहीं करते हैं, मगर धर्म-मजहब की प्रोन्नति के लिए जो नाना-नाना प्रकार के हम कर्म करते हैं, उसका सारतत्व यही निकलता है। आज मुसलमानों की जमात या हिन्दू संगठन और ईसाई मिशन आदि संगठनों के माध्यम से जो भी धर्म सेवा समाज में दिख रही है, उस प्रसार-प्रचार या घोषणा में क्या वह एक पूज्यनीय या एक खुदा, प्रभु या गॉड कहीं मौजूद है? अगर वह एक सर्वसृष्टि का संचालक नहीं है, फिर यह धर्म और मजहब के पवित्र कर्म किस ईश्वर, खुदा या गॉड के लिए हम करते रहते हैं? हम जुबान से कहें कि प्रभू-अल्लाह के अनन्त नाम हैं, मगर वह एक ही है। उसका कोई साझीदार या शरीक नहीं। पर हम सामाजिक मंच पर तो यह सन्देश छोड़ते रहते हैं कि ईश्वर, परमेश्वर, प्रभु सब तो एक हैं, परन्तु अल्लाह, खुदा, रब, गॉड यह ईश्वर के साझीदार हैं। एक ही को पूजो, साझीदार को मत पूजना। ईश-दूत या ईश के ऋषि, अवतार या पैगम्बर सिर्फ श्री राम हैं या श्री कृष्ण हैं, इन्हें ही मानना, शेष ईशदूत हैं या नहीं यह सत्यापित नहीं है। **यही कार्य आज कुछ मुसलमान, ईसाई या हिन्दू आदि नामों के लोग कई प्रकार से करने में लगे रहते हैं।** यह एक उदाहरण है, जो आज के पूजकों आदि की धर्मनिष्ठा या मजहबपरस्ती का नमूना यदा-कदा पेश करती रहती है।

खुदापरस्ती, ईश-पूजा, गॉड-प्रेयर की सच्ची विधियां हम आज भूलते जा रहे हैं। हम जिस ईश-धर्म के अनुयायी हैं, उसी धर्म-मजहब की पूजा-अर्चना, जागरण, प्रदर्शन, जन-समर्थन या धर्म-मजहब के बहुमत बनाने में अनथक परिश्रम कर रहे हैं। इस धर्म जागरण या मजहबी नुमाईश में हमारा ईश्वर से किया हुआ संकल्प या इकरार केवल कथन बनकर रह गया है। क्योंकि हम उस एक की इबादत, पूजा, परस्तिश में सचमुच नहीं हैं। हम तो ईश्वर के भिन्न-भिन्न नबी, ऋषि, रसूल, मेसेन्जर को भी एक ईश्वर के भेजे हुए ईशदूत हैं, इस पर भी विश्वास नहीं रखते। सारे धर्म, उसी एक ईश्वर

ने दिया है, आज यह भी हमें विश्वास नहीं है।

यहीं हम ईश्वर के सत्य धर्म तथा ईशदूतों के सत्य धर्म–मजहब, रिलीजन को समझने में चूक करते रहते हैं। ईश्वर का सत्यधर्म तो यह है कि सारे धर्म उसके हैं तथा उसके भेजे सारे ईशदूत, उसी के हैं। इसलिए विशाल मानवजाति ईश्वर की है। ईश्वर एक है कि सत्यता जो वास्तव में हृदय, जुबान, मन–मस्तिष्क से स्वीकारता है, वह अपने–अपने धर्म या मजहब का बहुमत नहीं जुटाएगा। वह तो ईश्वर, खुदा या गॉड की सर्वप्रथम सत्य पूजा सीखेगा। उसे तो सारे प्राणी अपना ही कुटुम्ब दिखाई देंगे। वह ईश–पूजा एवं ईश–सम्पर्क तथा ईश–दर्शन के प्रसार–प्रचार में लगा रहेगा। धर्म–पार्टी या मजहबी जमात बनाने का कार्य वह इसलिए नहीं कर सकता, क्योंकि वह अपने पूर्ण एवं सुदृण विश्वास से यह जानता है कि वह ईश्वर, खुदा, गॉड एक ही है। वह यह भी जानता है कि धार्मिक या मजहबी संगठन जिस–जिस ने कायम किया और उनके ईश्वर या अल्लाह यदि दो बने तो उसने संगठन या पार्टी के रुप में ईश्वर में साझीदार या शरीक बनाया। यही कर्म तो ईश्वर या खुदा के आदेश की अवमानना है। यह अतिगम्भीर गुनाह है। जो शायद प्रायश्चित, तौबा या अस्तगफार करने से क्षमा नहीं होगी। माफी या क्षमा चाहने वाला पहले अपना यह ईश सद्कर्म रुपी ईश–विरोधी कर्म को सदैव के लिए बन्द करे। फिर ईश्वर से क्षमा मांगे या तौबा करे तो उम्मीद है वह परम दयालु ईश्वर उसे क्षमादान दे दे।''

सन्त श्री सितारा वली ने स्पष्ट कहा– ''ईश्वर, गॉड या खुदा परमपवित्र है। उसके सारे ईशदूत उसके पास हैं, इसलिए वे भी ईश–सम्पर्क में रहने के कारण पवित्र हैं। ईश्वर और ईश–दूतों से सत्य सम्पर्क रखने वाला मानव भी उनकी पवित्रता अपने में पाने लगता है। सत्य ईश–पूजा तथा निःस्वार्थ ईश–दूत प्रेम करने वाले मानव, ईश्वर के प्रिय बन जाते हैं। इन्हीं पवित्र ईश–प्रियजनों को कामिल पीर या आध्यात्मिक सद्गुरु कहते हैं। नकली पीर या ढ़ोंगी गुरु को ईश्वर या गॉड या खुदा का प्रियजन नहीं माना जा सकता है। दाढ़ी, टोपी, एमामा, तसबीह या तिलक, पीत या लाल वस्त्र अथवा पगड़ी, शेरवानी या चोगा, जुब्बा आदि में सुसज्जित दिखने वाले हर व्यक्ति का अर्थ यह नहीं होता कि वे ईश्वर, गॉड या अल्लाह के प्रियजन ही हैं। केवल भेष–भूषा या विभिन्न रंग–रुप की कलई कर लेने से कोई ईश्वर का प्रियजन है, यह न तो प्रमाणित होता है और न सत्यापित। ईश–प्रियजन की एक खास पहचान होती है। यह उनके सम्पर्क में जाने पर ही प्रतीत होगा। प्रवचन या तकरीर अथवा धार्मिक पुस्तक लेखन या धर्म–भाष्य लेखन का अर्थ मात्र इतना है कि ऐसे व्यक्ति ईश्वर और उसके दूतों से अपार प्रेम करते हैं। वह स्वयं ईश्वर, अल्लाह या गॉड के प्रेमी हैं। वह श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्री मूसा, श्री ईसा, श्री मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम जैसे किसी ईश–दूत या सारे ईश–दूतों से प्रेम करते है। उनमें ईश–प्रेम और ईश–दूत प्रेम दोनों है। वे दोनों के प्रेमी हैं। लेकिन मार्फते–रसूल (ईश दूत

सम्पर्की) तथा मार्फते-इलाही (ईश सम्पर्की) सद्गुरु या पीर अथवा ईश प्रियजन में होती है। क्योंकि उन्हें ईश्वर और ईशदूत दोनों प्यार करते हैं। इसी विशेष प्रेमकृपा के पुरस्कार के कारण वह आध्यात्मिक सद्गुरु या कामिल पीर कहलाते है।"

श्री सितारा वली ने गुरु महिमा को यूं व्यक्त किया- "जिसे मार्फते रसूल और मार्फते-इलाही चाहिए, उन्हें कामिल पीर की कुर्बत में जाना होगा। जो सच्ची पूजा उस पवित्र ईश्वर की करने को व्याकुल हैं, उन्हें कामिल पीर से शिक्षण-प्रशिक्षण लेनी चाहिए। सद्गुरु या कामिल पीर में प्रथम विशेषता जो पायी जाती है, वह है दुनियां के किसी भी वस्तु से उनका दिल न लगाना। वह ईश ज्ञान देने के प्रशिक्षण होते हैं। जन सेवा के नाम पर उनके वहां निःशुल्क भोजन, निःशुल्क ज्ञान आदि बांटी जाती है। वे एकान्त प्रिय होते हैं। दुनियां की भोग लिप्सा या ईच्छा, चिन्ता, कष्ट उन्हें नहीं सताती। वह बहुत कम बोलते हैं, क्योंकि अव्यक्त रुप से वे हार्दिक एवं आत्मिक जाप में संलग्न रहते हैं।

उनकी आंखें भी अधिकतम बन्द रहतीं हैं। क्योंकि वे पल-पल उस एक प्रभु और प्रभु के दूत के दर्शन-मिलन में परमानन्दित रहते हैं। इस तरह के कुछ विशेष गुण आप किसी सद्गुरु या पीर में अगर पाते हैं, तो जान लें कि वह सत्य के साथ है। इसी पीर, गुरु, मास्टर से हमें पूजा, नमाज की सत्य पद्धति मिल सकती है। वह सत्य ईश उपासना बताने से पूर्व व्यक्ति से संकल्प लेते है, यही संकल्प सूफी मार्ग में 'बैय्यत' या शिष्य बनना कहलाती है। जब वह कामिल पीर की शिक्षा पर चलने लगा, तो उसे ईश दर्शन एवं ईश-दूत दर्शन प्राप्त होते हैं। वही सच्चा ईश पूजक या मुसलमान या ईसाई या पारसी, बौद्ध तो कहने का अधिकारी है कि मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर एक है और वही पूज्यनीय है तथा हमारे ईश दूत ईश्वर के भेजे हुए हैं।"

सन्त श्री सितारा वली बोले- "ईश-संकल्प के मन्त्र या कल्मे का तराजू सबसे भारी है। इसी तराजू पर जो अपने आपको तौलना चाहे, तौल ले। पता चल जाएगा कि कौन सच्चा बन्दा है। या कौन ईश्वर के साथ गैर को भी पूज रहा है। अथवा कौन बुतपरस्त या मूर्तिपूजक है। किसे मुसलमान कहें या गैर-मुसलमान कहा जाए। वह कौन है, जो ईश्वर की पूजा में किसी को शरीक करके मुशरिक है। हम किसे कुफ्र करने वाला मानें या काफिर कह सकते हैं। ईश-संकल्प मन्त्र या कल्मे की सत्यता जानकर उसे अपने आप में ग्रहण करना चाहिए। वास्तव में कल्मे के अनुसार हमारी प्रकट व छिपी जिन्दगी दोनों होनी चाहिए। ईश-महामन्त्र या कल्मे केवल जुबानी पढ़ते रहने से हमें पूर्ण ईश-लाभ नहीं मिलेगा।"

सर रोडरिग एक विश्वचर्चित सन्त हैं। उन्होंने कल्मए-शहादत के सन्दर्भ में साफ तरह से यह विचार प्रकट किया- "वह सारे जग का स्वामी एक है और वही पूजने के लायक है, उसका कोई साझीदार नहीं। इसी की शहादत या गवाही हमें देनी है। हम उस एक पवित्र निरन्जन को एक और

अकेला मानते हैं। उसका कोई शरीक नहीं। यह शरीक या साझेदार या भागीदार कौन हो सकता है? खुदा-प्रभु के सामने ही हमें यह गवाही देनी है कि ऐ ईश्वर 'वहदू ला शरीकअ लहु' है। यानी ऐ पवित्र गॉड, ऐ मेरे प्रभु, ऐ मेरे रब, आप सचमुच एक और अकेले हैं, आपमें कोई शरीक नहीं है। यहां 'शरीक' अल्फाज (शब्द) या 'साझी' शब्द का संकेत यह सच्चाई जाहिर कर रही है कि मनुष्य या मानव अथवा हर जीव में तो ईश्वर-अल्लाह का नूर (ज्योति) और रुह (आत्मा) शरीक है, मगर खुदा या प्रभु में कोई सचमुच शरीक नहीं है। यानी वह पाकजात, वह पवित्र ईश्वर हमेशा से है और हमेशा रहेगा। वह न किसी व्यक्ति से जन्म लिया है और न उससे कोई व्यक्ति जन्म लिया। उसने मानव बनाया। तमाम जीवों को अपने आदेश से बनाया। तमाम वस्तुएं उसके मात्र विचार करने से ही पैदा हो गई। इसीलिए हर भाषा में हम उसे पवित्र, पाक, सर्वमहान, सर्वशक्तिशाली, सर्वपूज्यनीय तथा सर्वोच्च सर्वप्रशंसनीय कहते हैं। उसी सारे सर्वोच्च, सर्वमहान, सर्वश्रेष्ठ गुणवाले का नाम प्रभु, अल्लाह, गॉड या अहुरमज्द आदि है। यही कामिल यकीन या पूर्ण श्रद्धा हमारी शहादत या गवाही है कि वह एक है, वहीं पूजा-इबादत या वर्शिप परस्तिश के योग्य है। ऐसा सामान्य व्यक्ति या कोई वस्तु जो उसके हुक्म से है या उसके द्वारा निर्मित हैं, वह पूज्यनीय नहीं है। जो कुछ उसने पैदा किया या जाहिर किया, उसमें वह पवित्र प्रभु शरीक है। इसलिए ऐसी चीजें न तो 'ला शरीक' है और ना ही पूज्यनीय हैं। पूजा उसकी की जाए जो 'ला शरीक' है यानी उसी एक पवित्र प्रभु की ही पूजा-इबादत बन्दे को करनी चाहिए।"

सन्त सर रोडरिंग ने सत्यता यूं बयान की- "सूरज, चांद, सितारे, धरती, आकाश, ग्रह, उप-ग्रह, वनस्पति, पहाड़, नदी, समुद्र, आदमी, जिन्न-जिन्नात और न जाने क्या-क्या तथा सब कुछ उस पवित्र ईश्वर की ईच्छा और निर्माण से हमें दिखाई दे रहे हैं। इसलिए यह 'ला शरीक' नहीं हैं। **'ला शरीक' वह जो आदि से है तथा जिसका अन्त न हो। ईश-निर्मित या ईश-उत्पन्न वस्तु की पूजा कैसे की जाएगी, जबकि वह स्वयं उत्पन्न हैं। जिसका अन्त न हो, वहीं ईश्वर है। जो जीवन-मृत्यु से पवित्र है, जिसे नींद या सोने की आवश्यकता नहीं, जिसने फरिश्ता, देवदूत और सन्त, फकीर को बनाया, जो अपने सत्य सन्देश के लिए मानव रुप या जिन रुप में अपने नबी, अवतार, ऋषि, रसूल, मेसेन्जर को भेजा, वहीं परमेश्वर, गॉड या रब है। इसलिए वहीं पूज्यनीय है तथा वह अकेला है, उसका कोई हिस्सेदार नहीं।**

हमें ऐसे प्रभु, अल्लाह या गॉड की ही पूजा करनी चाहिए। दूसरे शब्दों में वही पवित्र है, उसी की पूजा हम करते हैं। उसके माध्यम से उत्पन्न या निर्मित किसी भी जीव-निर्जीव की हम पूजा नहीं करते। यह पक्का विश्वास अगर उस प्रभु के प्रति हममें है, तो हमने अरबी भाषा में 'अश्शहदोअल

लाईलाहअ ईल्लल्लाह, वहदहू ला शरीकअ लहु...।' (अर्थात- मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर अकेला है, उसका कोई साझी नहीं तथा वही पूज्यनीय है।) यह हमने ठीक ढ़ंग से पढ़ा और समझा। बिना ठीक से समझे, सिर्फ पढ़ते रहने का कुछ फायदा नहीं है।"

सन्त सर रोडरिग ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से बताया- "मानव सात तरह की मिट्टी का संग्रह है। ईश्वर के यह छः कल्मे उसके एक-एक मिट्टी के लिए ईश्वर के समक्ष आत्म समर्पित संकल्प है। सातवीं मिट्टी के लिए सातवां कल्मा जाहिर में नहीं बताया गया। यह गुप्त सातवां संकल्प दिल और रुह से ईश-पूजा करने की है। सातवें ढ़ंग को सीखने के लिए खुदा ने अपने ईश दूतों के बाद कामिल पीरों या आध्यात्मिक सद्‌गुरुओं को कायम रखा है। पहले छः संकल्प-मन्त्र (कल्मे) को अपने आप में दाखिल करें। सातवें गुप्त ईश संकल्प को अपने में धारण करने के लिए किसी भी कामिल पीर से मिलें। ईश-प्रेमी लोग हर कल्मा, हर पूजा कामिल पीर से ही अगर सीखते हैं, तो यह तो सबसे सुन्दर बात है। ऐसे लोग कामिल पीर या अपने आध्यात्मिक सद्‌गुरु की सेवा-सानिध्य में ईश्वर-प्रभु की सच्ची पूजा जल्दी सीख जाते हैं।"

सर रोडरिग साहब ने चिन्ता व्यक्त की- "दुनियां के कोने-कोने में अरबी भाषा का यह ईश-संकल्प महामन्त्र हर भाषा के लोग अरबी भाषा में ही पढ़ते रहते हैं, मगर वे नहीं समझते कि ईश्वर, रब या गॉड के समक्ष वे क्या गवाही दे रहे हैं या क्या संकल्प करते हैं। इसी ना समझी और गैर-जानकारी से हम नहीं जान पाते हैं कि हम सच्ची पूजा कर रहे हैं या गैर के साथ उस पाक परवरदिगार की पूजा कर रहे हैं। हम अपने को मुसलमान कहते हैं, मगर खुदा की पूजा में हम अपने अन्दर के गैर को भी शामिल रखते हैं। अगर यह स्थितियां हैं, तो हम क्या गैर-मुसलमान नहीं हैं। हम सनातनी हैं, मगर उस एक शाश्वत सनातन प्रभु की पूजा, अगर अपने भीतर छिपे गैर के साथ करते हैं, तो गैर-सनातनी हैं। इस तरह अपने भीतर छिपे गैर के साथ हम उस पवित्र ईश्वर की पूजा, वर्शिप या इबादत में मशगूल हैं, तो हम गैर-पूजक हैं, न कि ईश-पूजक या सच्चे मुसलमान या सत्य सनातनी।

अब हमें फैसला करना है कि हम गैर-पूजक रहें या उस एक ईश्वर की ही पूजा करें। दुनियां में अशान्ति का साम्राज्य आज कायम न होता, अगर इन्सान अपने एक प्रभु, अल्लाह या गॉड की पूजा में अपने नफ्सी शैतान को शरीक न करता। नफ्सी-शैतान या इंन्द्रिय राक्षस कौन है? हमारे दिल के अन्दर छिपी बेचैन ईच्छाएं, गर्व, अहंकार, प्रतिशोध, क्रोध, लोभ की भावनाएं। यही अन्दर छिपे वह गैर हैं, जो हमें एक ईश्वर का जुबानी इकरार करने पर वह अन्दर से अपना इकरार हमें कराते रहते हैं। यही गैर-खुदा हैं। इन्हें ही 'ला शरीक' करने की जरुरत है। यह अगर शरीक हैं, तो वे ही ईश्वर के साझीदार बन जाते हैं। फिर हमारा जुबानी कथन करना कि ईश्वर, अल्लाह में कोई शरीक नहीं, ऐसी गवाही या संकल्प कथन तो झूठा होगा। हमारी पूजा, इबादत, नमाज में अगर भीतरी वस्तुएं

शरीक हैं, फिर तो यह एक जग स्वामी की सच्ची पूजा भी नहीं है।

यही गैर-खुदा या खुदा में किसी गैर की शिरकत है। हम अपनी पूजा, नमाज, इबादत, प्रेयर, वर्शिप पर खुश रहते हैं। मगर यह ध्यान नहीं देते कि हमसे खुदा खुश है या नहीं। ऐसी पूजा, नमाज और इबादत हमें इन्सान बने रहने नहीं देती। हमें मन्दिर, मसजिद, चर्च जैसे ईश-पूजा स्थलों में यही गैर-खुदा भेद, भ्रम, द्वेष, शत्रुता, कटुता दिखाते रहते हैं। **यही गैर-खुदा हमें खुदा के एक बन्दे को मुसलमान, हिन्दू, ईसाई, पारसी, यहूदी, बौद्ध आदि के रुप-रंग में बांटना सिखाते है। यही गैर-ईश्वर हम से ईश-वाणी या ईश-ग्रन्थों के भ्रामक अनुवाद कराते रहते है। यही गैर-प्रभु, हममें यह भावनाएं जगाते हैं कि सनातन का ईश्वर और इस्लाम का खुदा एक नहीं हैं। दोनों अलग-अलग हैं। यही गैर-गॉड ईसाईयों को समझाते रहते हैं कि तेरा गॉड ही सर्व महान है, इस्लाम का अल्लाह तो काफी कमजोर है। अगर गॉड के सच्चे पुजारी हो तो इस्लामी अल्लाह को एटामिक एनर्जी से शिकस्त दो।** आज दुनियां में धर्म-मजहब का सत्य स्वरुप इन्हीं गैर-खुदा, गैर-प्रभु तथा गैर-गॉड के कारण द्वेष-शत्रुता और अमानुषिक अत्याचार के रुप में पनपती जा रही है।

अपने नफ्सी शैतान या इन्द्रिय राक्षस की पूजा, जब एक ईश्वर-अल्लाह या गॉड के साथ की जाएगी, तो परिणाम विश्वमानवजाति के साथ प्रेम का नहीं बन सकता है। इसलिए 'वहदहू ला शरीक' को इस्लामी खुदा का फरमान न समझें। यह वही सच्चा, पवित्र और दयालु-कृपालु गॉड या ईश्वर है, जो सबका है, सभी का है।"

3. कल्मा तम्जीद :- सुबहानल्लाहे वल्हम्दोलिल्लाहे व लाईलाहअ इल्ललल्लाहो वल्लाहो अकबर व लाहौल वला कुव्वत इल्ला बिल्लाहिल अलिउल अजीम।

(भावार्थ : ईश्वर पवित्र है तथा समस्त स्तुति एवं प्रशंसा उसी ईश्वर हेतु है। नहीं कोई पूज्यनीय सिवाए ईश्वर के और वह ईश्वर सर्वश्रेष्ठ है और गुनाहों (पापों) से बचने तथा नेकी करने की शक्ति ईश्वर ही की तरफ से है, जो ईश्वर परमप्रतिष्ठित (आलीशान) और परमादरणीय (अजमत) है।)

इस कल्में में विशेष बात- 'व लाहौल वला कुव्वत ईल्ला बिल्लाहिल अलीऊल अजीम' अर्थात- और पापों से बचने तथा पुण्यकर्म करने की शक्ति ईश्वर ही की ओर से है, जो ईश्वर सर्वप्रतिष्ठित एवं सर्व परम सम्माननीय है।

हमें इस अरबी कल्मे से यह ज्ञात हो रहा है कि पापों से बचाने वाला ईश्वर है। पुण्य या नेकी के कर्म कराने वाला भी ईश्वर है। फिर हम पाप या गुनाह से बचते क्यों नहीं हैं? अरबी भाषा या इस्लाम का खुदा, अगर यह शक्ति रखता है कि वह पाप-गुनाहों से बचा लेगा, फिर नकली जेहादी

आतंकवाद और यजीदी जेहादी खून खराबा को उसने क्यों नहीं रोका? अगर इस्लाम का खुदा, वही एक पवित्र ईश्वर है, फिर श्री राम-रावण युद्ध, महाभारत जैसे युद्ध में तमाम मारे गए, उसने रोका क्यों नहीं? क्या पाप-पुण्य की परिभाषा जो हम मानव समझ रहे हैं, वह गलत है? या ईश्वर की दृष्टि में पाप-पुण्य की व्याख्या कुछ और है? ईश-दूत हजरत ईसा को सलीब पर चढ़ाया गया, ईशदूत हजरत युनुस को मछली निगल गई? ईश दूत हजरत जकरिया के सिर पर आरी चली? इस तरह के अनेक प्रकरण हैं, जो ईश दूतों के साथ गुजरे हैं। हम क्या यह मानें कि लोगों ने ईश-दूतों के या ईशदूतों के उत्तराधिकारियों के संग पाप नहीं किया? या यह कहें कि ईश्वर अपने ईश-दूतों को भी पापकर्मियों से बचाने में सक्षम नहीं है? कहीं ऐसा तो नहीं है कि हम अरबी भाषा के इस कथन का अर्थ गलत लगा रहे हों?

अचानक हमें इस सन्दर्भ में सन्त श्री झरना शाह बाबा की बात याद आ गई। उन्होंने एक अवसर पर यह फ़रमाया था- "कल्मा तम्जीद वही है, जो उस एक पवित्र परमेश्वर की प्रशंसा करे तथा पूज्यनीय होने का प्रमाण दे। इसमें हम उस एक ईश्वर की बड़ाई और महानता की ही चर्चा करते हैं। इस महानता या प्रशंसा करने का सम्बन्ध हमारे दिल-दिमाग और विचार में बस जाना चाहिए। सिर्फ जुबानी कथन करने से सत्यासत्य मान्यता प्रमाणित नहीं होती। अब पापों से बचने की शक्ति ईश्वर ही की तरफ से है। यह कथन गलत कहां है? ईश्वर भूल करे, ईश्वर गलत कहे, ईश्वर अनुचित करे, ऐसा सोचना-समझना ही गम्भीर पाप है। जब ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा हम करेंगे तो ईश्वर हमें यानी सत्य पूजक को पापकर्म से बचाएगा। यही सीधी और सरल बात उस एक ईश्वर ने हमें समझाई है। स्पष्ट है जब गैर-खुदा के साथ हम ईश-पूजा करेंगे तो ईश्वर ऐसे मुशरिक या बुतपरस्त पुजारी को पापों से बचाने की जिम्मेदारी नहीं लेता। वह प्रत्यक्ष में ईश-पूजक, धार्मिक, आध्यात्मिक, धर्माचार्य, फादर, विशप, अल्लामा, मौलाना, हाफिज, मुफ्ती, ओलमा, धर्मवीर, ईशभक्त, सन्तभक्त, श्रद्धालु आदि कुछ भी हों, उनकी ईश-पूजा अगर गैरुल्लाह या खुदा के गैर के साथ होती है, तो गुनाहों या पापों से बचने की शक्ति उन्हें ईश्वर कैसे प्रदान करेगा? ईश्वर की सत्य पूजा उसे एक समझकर कोई करे, उस एक ईश्वर में कोई किसी को शरीक न करे, तो उसे वह पवित्र ईश्वर हर गुनाहों से बचाएगा। उसी सत्य पूजक को ईश्वर पुण्य कर्म करने की शक्ति भी प्रदान करता है। स्पष्ट है, ईश-पूजा दुरुस्त हो, तो हम सारे गुनाहों से भी बच जाएंगे और पुण्य कर्म भी करने लगेंगे।"

सर्वप्रिय सन्त श्री सैय्यद फैजल शाह उर्फ श्री साधु बाबा बोले- "नकली जेहादी क्या सत्य ईश पूजा करते हैं? यजीद की पूजा क्या सच्ची थी? हजरत ईसा को सलीब पर चढ़ाने वाले क्या सत्य ईश पूजक थे? जो गुनाह करे, वह सत्य ईश पूजक नहीं हो सकता। ईशदूतों के संग जो अनाचार और दुष्टाचार की घटनाएं हुई हैं, उसके पीछे ईश-भेद है। दुनियां यह देख ले कि ईशदूत किस स्तर

के धैर्यवान, क्षमादानी तथा ईश-सेवा में अपनी आहुति देते हैं। दूसरी तरफ यह ईश-सन्देश है कि ईश-सत्यता के साथ यदि जीवन जीना है तो तुम्हें दुनियां हर प्रकार से सताएगी। इस जुल्म, ज्यादती पर जो मेरा है, वह अपनी जान दे देगा, मगर ईश-सत्यता से लेश मात्र विचलित नहीं होगा। श्री जेसस, श्री युनुस, श्री जकरिया आदि ईशदूतों के साथ जो हुआ, वह ईश-परीक्षण है।

उस पवित्र ईश्वर ने सत्य ईश पूजकों को ही पाप से बचाने की बात कुबूल की है। अब जो सच्चा ईश पुजारी नहीं, वह गुनाह को भी पुण्यकर्म समझकर करता रहेगा। आज ऐसे कुकर्मी हमें पुण्यकर्मी के रुप में ज्यादा दिखाई दे रहे हैं। धर्म-मजहब के नाम पर हम आज इतने दिवाने हैं कि किसी भी धर्मस्थल को तोड़ने या वहां बम ब्लास्ट करने से भी नहीं चूकते। ईश-विरोधी कुकर्म आज ईश्वर के धर्म-मजहब के नाम पर हम सीना ठोंक कर करते हैं। यह किस ईश्वर-अल्लाह के आदेश का परिपालन है? यह किसके धर्म-मजहब की रक्षा है? क्या हम सबने अपना-अपना कोई निजी खुदा या प्रभु का धर्म-मजहब कायम किया है? लगता तो ऐसा ही है। अगर हम सब एक ही खुदा या ईश्वर को सच्चे दिल से स्वीकार करते, तो अपने निजी गैर-खुदा या गैर-ईश्वर को सुरक्षित रखने के लिए अशान्ति का नगाड़ा न बजाते। गैर-खुदा का मजहब या गैर प्रभु का धर्म या गैर-गॉड का रिलीजन, आज दुनियां में ईश्वर से भी बड़ा धर्म कैसे बन गया? ऐसे निजी गैर-खुदाई धर्मों का खुदा-ईश्वर क्या असली खुदा-प्रभु या गॉड से भी सर्वश्रेष्ठ तथा सर्वाधिक सर्वमहान है? भला ऐसे महानतम गैर-खुदा या ईश्वर या गॉड की जो पूजा करे, वह क्या सर्वमहान ईश-पूजक होगा। इन सर्वमहान ईश-पूजकों से सर्वमंगलकारी शान्ति आज दुनियां भर में फैल रही है। लोग इतने शान्त हैं कि किसी भी पूजा-स्थल, दरगाह या श्रद्धा केन्द्रों पर जाने में भय खा रहे हैं। यही है ईश्वर के सिवा, गैर खुदा को पूजना। इसीलिए खुदा या ईश्वर बारम्बार अपने आप की पहचान बताते हुए कह रहा है कि मुझमें किसी गैर को शरीक न करो। और हम हैं कि उसके साथ एक नहीं, न जाने कितनों को शरीक करके पूजते रहते हैं।

ऐसी पूजा के कारण हमारे शरीक खुदा का अहंकार इतना बढ़ जाता है कि हम ईश्वर की सत्यता से दूर हो कर अपने-अपने गैर-खुदा की प्रोन्नत्ति करने लगते हैं। इसी सद्कर्म में गैर-खुदा, दूसरे के गैर-खुदा से टकराता है। फिर हमारा गैर-ईश्वर भयंकर अपराध भी पुण्यकर्म बताकर कराता है। आज दुनियां में धार्मिक युद्धों या धर्म -अपराधों की जननी, उसी गैर की पूजा है। ईश्वर ने बारम्बार रोका कि गैर को न पूजना, मगर हम हैं कि बिना गैर को पूजे हम शान्ति नहीं पाते हैं। अब दुनियां समझे कि असली खुदा या ईश्वर क्योंकर हमें गुनाहों से बचने की शक्ति देगा। जिस अहंकारी गैर-खुदा की हम परस्तिश करते हैं, वह तो गुनाहों को निडरता से करने की शक्ति देता है। वह झूठा या खुदा, नकली ईश्वर हम से मनुष्यता विरुद्ध कर्म को पुण्यकर्म बताकर कराता है।

अपने गैर-खुदा से तौबा करो, असली खुदा को सजदा करो। गुनाहों से बच जाओगे। तब देखना कि तुम्हारा पुण्यकर्म ऐसा होगा, जो सर्वमानव समाज के लिए हितकारी होगा।"

4. कल्मा तौहीद :- लाईलाहअ ईल्ललल्लाहो वहदहू ला शरीकअ लहू लहुलमुल्को व लहुलहम्दो युहई व योमीतो व होवअ हईयुल ला यमोतो अब्दन अब्दा। जुलजलाले वलएकरामे बेयदेहील खैरे, व होवअ अला कुल्ले शैईन कदीर।

(भावार्थ : नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के, वह अकेला है, ईश्वर का कोई शरीक (भागीदार) नहीं, उसी की सम्पूर्ण सृष्टि है और उसी की समस्त प्रशंसाए हैं। ईश्वर ही जिन्दा करता है और मारता है और ईश्वर सदैव के लिए जीवित (जिन्दा) है, उसकी मृत्यु नहीं। वह तेजस्वी परमेश्वर परमश्रेष्ठ है तथा ईनाम (पारितोषिक) देने वाला और सर्वशुभमंगलकारी है।)

इस कल्मे की व्याख्या सन्त श्री निर्मल महाराज ने यूं की- "हम इस्लाम का कल्मा, सनातन के ईश-नियम तथा बाईबिल या इंजील के प्रभु को अगर अलग-अलग मानेंगे, फिर उस एक सर्वमहान ईश्वर की मान्यता को खण्डित करना है या नहीं। कल्मा-तौहीद है तो अरबी में, मगर इस अरबी जुबान का खुदा सिर्फ अरब का खुदा है या सारे ब्रम्हाण्ड का। जरा इस बात पर भी गौर कर लें।"

महान सन्त श्री निर्मल महाराज ने यह विचार दिया- "अरबी भाषा का पहला कल्मा- "लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह" है। इसका सरल हिन्दी जुबान में मतलब क्या है? हम अपनी छोटी बुद्धि से यह समझ लें- "समस्त सृष्टि का स्वामी ही केवल पूज्यनीय है। शेष सभी कुछ जो भी है, वह नहीं पूज्यनीय है। सर्वजगत के स्वामी के ईशदूत श्री मुहम्मद साहब सल्ललल्लाहो अलैहे व आलेही व सल्लम हैं।"

इस कल्मे या वचन में सम्पूर्ण सृष्टि के मालिक को ही पूजने के योग्य स्वीकारा गया है। अरबी भाषा-भाषियों को अरबी जुबान में यह बताया गया कि तुम जिसे अल्लाह, रब्बुलआलमीन, अहद, समद, लम यलिद व लम यूलद, रब्बील अजीम, रब्बील अला, अल्लाहो अकबर कहते हो, वही एक तो है, जो समस्त सृष्टि का स्वामी और संचालक है।

अरबी भाषा में उसी एक मालिक की प्रशंसा भिन्न-भिन्न नामों से की गई। यह भी बताया गया कि ऐ अरब के लोगों, जिन्हें तुम हजरत मुहम्मद इब्ने (पुत्र) अब्दुल्लाह समझ रहे हो, उन्हें तुम पहचान लो वह सम्पूर्ण लोकों के स्वामी के भेजे हुए रसूल हैं। यह वह रसूल हैं, जिन्हें हमने अपना सन्देश दिया, इन्होंने मेरे सन्देशों को लोगों तक पहुंचाया। इन्होंने मेरे सन्देश का संग्रह (कुरआन रुप) तुमको प्रदान किया।

अरब में ईश्वर के दूत आए। वह अरबी भाषा बोले, प्रभु भी उनकी भाषा में उनसे बातें करने

लगा। प्रभु सचमुच अपने दूत, ऋषि से बहुत प्यार करता है। जहां या जिस देश में उन्हें भेजता है, वह उन्हीं की बोली बोलने लगता है। ईशदूत ने कहा- 'अल्लाहो अकबर', उन्हें हृदय से प्रेम करने वालों ने कहा- "ऐ प्यारे ईशदूत, बेशक आपने सच कहा कि ईश्वर सर्वमहान है।" ईशदूत ने कहा- 'ईश्वर अकेला है, उसका कोई साझीदार नहीं।' सभी ईश-प्रेमी चिल्ला उठे- "ऐ ईश्वर के परमप्रिय ऋषि, हमने कुबूल किया कि ईश्वर बिना किसी साझीदार के अकेला है।" जब ईशदूत ने कहा- "ऐ लोगों ईश्वर के सिवा तुम अपनी ईच्छा, चिन्ता, वासना, क्रोध या इन्द्रिय उमंगों को ईश्वर की पूजा में सम्मिलित मत करना। अगर ऐसा करोगे तो ईश्वर के साथ तुम अपनी तरफ से साझीदार बनाओगे। वह एक ईश्वर परम शुद्ध और परम पवित्र है। तुम्हारे मन, हृदय और मस्तिष्क के साझीदार पूर्ण अपवित्र हैं। परम पवित्र के साथ पूर्ण अपवित्र की पूजा करना शिर्क है। साझीदार जो बनाए, उसने ही तो ईश्वर के साथ साझीदार को भी शरीक किया। यही शिर्कत हमारी सच्ची पूजा को खण्डित करती है।"

ईशदूत के कथन पर उन्हें हृदय से ईश-दूत स्वीकारने वालों ने सहर्ष समर्थन किया- "ऐ सारे जग के स्वामी के भेजे हुए ऋषि, हम केवल उसी एक जग-स्वामी की वन्दना, पूजा करेंगे। वह एक है, वह पवित्र है, इसलिए हम सब अपने अपवित्र सांसारिक वस्तुओं को उसकी पूजा में शरीक नहीं करेंगे।"

सन्त निर्मल महाराज मुस्कराए- "वह अल्लाह सिर्फ अरबी जानता है क्या? वह सारे ब्रम्हाण्ड का स्वामी केवल संस्कृत या अंग्रेजी भाषा ही जानता है? क्या ईश्वर को संसार की भाषाएं, हम भाषा-विद्वान सिखाएं हैं? जो प्रभु अनन्त सृष्टि का निर्माता है, उसे भाषा-ज्ञान किसी मानव या जीव से सीखना पड़ेगा? श्री राम ईशदूत हैं, जिस अयोध्या में आए, उस अरबी अल्लाह ने उनकी भाषा में बात किया। श्री कृष्ण, जिस गोकुल में आए, अरबी अल्लाह, वही भाषा बोलने लगा। फारसी का खुदा जेसस क्राईस्ट से अंग्रेजी में बात कैसे करता था? ऐसे लाख से भी ज्यादा ईशदूत हैं, वे जहां आए, वह एक मालिक उन्हीं की भाषा में उनसे बात किया और उन्हें अपना सन्देश दिया।

अब अरबी भाषा बोलने वाला अल्लाह, क्या संस्कृत, अंग्रेजी, अवधी, ब्रज आदि भाषाएं नहीं बोल सकता। अगर बोल सकता है तो अरबी के अल्लाह, रब, रहमान, रहीम, कादिर को ईश्वर, प्रभु, परमेश्वर, गॉड, अहुरमज्द आदि नामों को एक ईश्वर का सम्बोधन न समझें।

सन्त श्री निर्मल महाराज ने भेद खोला- "अरबी भाषा का अल्लाह, वही परमेश्वर है। वही गॉड है। इसलिए अरबी भाषा का कुरआन सम्पूर्ण मानव जगत के लिए उसी एक ईश्वर का पैगाम है। कल्मा तैय्यब, अरबी में है। मगर यह सन्देश भी केवल मुसलमान कहलाने वाले लोगों तक सीमित नहीं है। उस पवित्र और एक ईश्वर को मानने वाला, क्या उसके केवल एक नबी, एक ऋषि या एक अवतार को ही मानेगा? एक लाख चौबीस हजार कम या अधिक ईशदूतों को ईश्वर ने ही भेजा है। सारे

ईश-दूतों का धर्म-मजहब तो ईश्वर का ही मजहब हुआ। पूज्यनीय ईश्वर है, पवित्र ईश्वर है, सर्व महान ईश्वर ही है। यह हम अपने-अपने ईशदूतों के बताए या ईश-सन्देश में आए सत्य पर आत्मिक-विश्वास के साथ कहते हैं। फिर उसी एक ईश्वर के समस्त ईशदूतों को सम्मान की एक नजर से देखने में आपत्ति क्यों करते हैं?

कोई श्री राम, श्री कृष्ण, श्री बुद्ध, श्री मूसा, श्री ईसा को ईशदूत माने, मगर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को ईशदूत न माने, यह धारणा ईश्वर के समक्ष अभिनन्दनीय नहीं होगी। हम सच्चे ईश्वर के पूजक हैं तो उस ईश्वर के ज्ञात-अज्ञात सभी नबी, रसूल, ऋषि, पैगम्बर या ईशदूतों के प्रति प्रेम-सम्मान की हार्दिक मान्यता रखनी ही होगी। किसी भी ईश-दूत के प्रति दुर्भावना, हमें ईश्वर से दूर करेगी, क्योंकि ईशदूतों को ईश्वर ने ही भेजा है।"

सन्त श्री निर्मल महाराज ने काफी गम्भीरता से कहा- "कल्मा तैय्यब- हमें ईश्वर की पूजा बताता है तथा ईशदूत को प्रमाणित करता है। कल्मा शहादत, उसी कल्मा तैय्यब की गवाही है। गवाही वही दे सकता है, जिसका ईमान सर्वप्रथम ईशदूत पर पक्का हो। ईशदूत जब-जब भेजे गए, तब-तब उन क्षेत्रों में या उस संसार में एक ईश्वर की जगह अपने-अपने अनेक ईश्वर की पूजा, परस्तिश और प्रार्थना का माहौल सरगर्म था। लोगों में व्यभिचार, काम, क्रोध, अहंकार, अत्याचार, झूठ, बेईमानी, अमानवीय प्रवृति का प्रचलन तीव्र था। जन-अशान्ति, जन-कलह, स्वलाभ-संघर्ष की ज्वाला लोगों में धू-धू करके जल रही थी। ईशदूत इन्हीं परिस्थितियों में आए। वह इन्सानी सूरत में प्रकट हुए। ताकि हम उन्हें अपनी तरह का मानव या बशर समझ कर उनके साथ रहें। उन्होंने इन्द्रिय पूजकों व स्वार्थ साधनारत् व्यक्तियों को ईश्वर की बन्दगी स्वयं करके सत्य पूजा-वन्दना का अभ्यास कराया। ईशदूतों ने ईश-पूजा स्वयं की ताकि ईश-बन्दे, सत्य ईश पूजा सीख जाएं। उनकी बन्दगी इसीलिए थी ताकि उनके साथ हर बन्दे, बन्दगी करने का गुर सीख लें। वह बन्दे यह न समझ सकें कि ईश्वर का दूत असाधारण मानव है। लोग यह न जान सकें कि ईशदूत पवित्र है तथा निरन्तर वह पवित्र ईश्वर के सम्पर्क में रहते है। वह यह रहस्य भी न समझें कि ईशदूत मनुष्य रुप में भी बन्दा नहीं हैं। इसलिए उन्होंने ईश्वर के संकेत पर कह दिया- मैं भी बशर हूं। मैं भी ईश्वर का बन्दा हूं। इस प्रकार के ईश्वर निर्देश के पीछे मात्र कारण यह रहा कि अगर दुनियां के लोग मेरे सर्वप्रिय ईशदूतों की सत्यता जान गए तो कहीं उनकी ही पूजा न करने लगें। वास्तव में ईश्वर यह चाहता है कि मेरे बन्दे मेरे ईशदूतों से सर्वोच्च एवं सर्वाधिक हार्दिक प्रेम करें तथा पूजा मेरी करते रहें। कल्मए-शहादत में ईशदूत के लिए इसी कारण यह शब्द आया कि वह बन्दे और रसूल हैं। रसूल की सत्यता यहां बन्दा कहकर छिपाई गई। इसी तरह जहां यह कथन आया कि ऐ मेरे परमप्रिय ईशदूत आप कह दीजिए की मैं बशर हूं, यहां तो उस काल के लोगों के अक्ल पर बशर का पर्दा डाला गया ताकि ईशदूत के ईश-सम्बन्धों की

सत्यता साधारण बन्दा न जान सके।"

सन्त श्री निर्मल महाराज ने यह भी खुलासा किया- "बिना ईशदूत पर पूर्ण श्रद्धा या परिपूर्ण हार्दिक विश्वास रखे, गवाही देनी मुश्किल है। ईशदूत से प्रेम और उनके प्रति अगाध लगन-लगाव से ही हम ईश्वर की सत्यता तक पहुंच सकते हैं। यही कल्मए शहादत का इकरार है।

कल्मा तम्जीद, यह बता रही है कि उस एक पवित्र ईश्वर की पूजा, प्रशंसा करना ही ईश्वर के सत्य बन्दे का लक्ष्य होना चाहिए। जब वह सत्य पूजा करेगा, तो ईश्वर उसे पापों से सुरक्षित रखेगा। उस बन्दे को ही ईश्वर पुण्यकर्म करने की शक्ति देगा। सवाल यहां यह उठ रहा है कि जो नेक काम या पुण्यकर्म कर रहे हैं, उन्हें शक्ति ईश्वर दे रहा है या उनका संचित धन? तमाम लोग मन्दिर, मसजिद या श्रद्धास्थली के निर्माण में धन देते हैं। अनेक मच्छलियों को आटा दान करते हैं। कितने अनाथ, निर्धन, भिखारी को रुपए-वस्त्र देते हैं। कई लोग निःशुल्क भोजन वितरण करते हैं। तमाम धार्मिक पुस्तकें निःशुल्क वितरित करते हैं। यह सारे तो पुण्यकर्म ही हैं। क्या इसका अर्थ यह लगाया जाए कि ऐसे लोग सत्य ईश पूजक हैं? क्योंकि पुण्यकर्म की शक्ति ईश्वर ही अपने सत्य ईश पूजक को देता है तथा उन्हें पापों से भी बचाता है। यह कथन कल्मा में है।

आईए- पुण्यकर्मों की सत्यता जांच लें। हमने जब भी पुण्यकर्म किए, कहीं मन में यह तो नहीं है की समाज के लोग हमें जान लें कि मैं बड़ा धर्मदानी हूं? पुण्यकर्म करने के पीछे क्या हमें अपने नाम की प्रसिद्धि की भूख है? फिर तो यह इन्द्रिय सम्मान कर्म हुआ। पुण्यकर्म क्या हमने इसलिए किया या करते हैं कि मेरा एक पूज्यनीय ईश्वर प्रसन्न हो जाए? क्या इन पुण्यकर्मों के मध्य या पूर्व हम प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष पापों से बचे रहते हैं? प्रत्यक्ष पाप, झूठ, दगा-फरेब, शोषण, क्रूरता, व्यभिचार, जुआ, शराब, परस्त्री सम्पर्क, रिश्वत, सूद-व्याज, हिंसा, धार्मिक उन्माद, पद-दुरुपयोग आदि अनेक हैं। अप्रत्यक्ष पाप, मन के घृणित विचार एवं गलत कार्य तथा षड्यन्त्र एवं नेत्र, हृदय, हाथ, पैर एवं इन्द्रिय के दोष हैं। क्या इन दोनों पापों से हम सुरक्षित हैं? यदि हां, तो हम सत्य ईशपूजक हैं। यह कल्मा रुपी कथन हमें यह कसौटी प्रदान कर रही है कि सत्य ईश पूजक को ही पापों से सुरक्षा मिलती है तथा पुण्यकर्म की शक्ति ईश्वर उन्हें ही देता है। यह अरबी कथन भी विश्वमानवजाति के लिए है। इसे अरबी या संस्कृत आदि भाषा के धार्मिक विवादों से दूर रखना चाहिए।"

सन्त श्री निर्मल महाराज ने चौथा कल्मा तौहीद के सन्दर्भ में भी स्पष्ट कहा- "यह भी पूर्व के तीन कल्मों की भांति ईश्वर की सत्यता को बन्दे के समक्ष प्रकट कर रही है। ईश्वर की पूजा क्यों करें? किस ईश्वर की पूजा करें? वह पूज्यनीय ईश्वर कौन है? जीवों को जीवित या निर्जीव कौन करता है? क्या ईश्वर की भी मृत्यु होती है? ईश्वर अपने कौन से बन्दों को ईनाम-एकराम देता है? वह सबके लिए शुभमंगलकारी कैसे है?

यह अरबी कथन भी केवल अरबी भाषी मानव हेतु नहीं है। इसमें उसी एक ईश्वर के गुण-विशेषता को उल्लेख है, जो यह भी स्पष्ट घोषणा करता है कि 'लहुलमुलको व लहुलहम्दो' अर्थात- वह सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी है तथा उसी के लिए समस्त प्रशंसाएं हैं। यह तथ्य प्रमाणित कर रहा है कि अरबी भाषा का अल्लाह, वहीं एक जग विधाता है, जिसे हम ओम्, हरि, ईश्वर, परमेश्वर, प्रभु, खुदा, गॉड, रहमान, रहीम, वहदहू ला शरीक कहते हैं। फिर ईश्वर, अल्लाह या गॉड का विभाजन हम क्यों करते रहते हैं? यह विभाजन हमें उस एक ईश्वर का बन्दा बनाए रखने में बाधक है।

हम पूजा, नमाज, इबादत, हरि कीर्तन, हरि भजन खूब करें, मगर हृदय हमारा उस अल्लाह-ईश्वर को दो मानें, तो उस एक ही की पूजा, नमाज, भजन, कीर्तन हमने कहां किया? वह ईश्वर अपने भेजे हर ईशदूत के स्थानिक भाषा में एक ही पहचान बताता जा रहा है, परन्तु हम उस सत्य को ग्रहण करने की जगह भाषाई-इन्द्रिय युद्ध में संलग्न हैं। ऐसी पूजा, नमाज पर ईश्वर अपना पुरस्कार या ईनाम कैसे देगा? ईश्वर सत्य ईश पूजक के लिए ईनाम लेकर प्रतीक्षारत है। और हम हैं कि ईश प्रदत्त उपहार को लेना नहीं जानते। यह ईनाम सभी बन्दों के लिए घोषित है। इस इनाम पाने का हकदार बस वही है, जो ईश्वर की पूजा में किसी को शरीक न करे तथा केवल और केवल उसी एक पवित्र ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा करे। उसी सच्चे ईश पूजक को इस ईनाम की गारन्टी है।

विश्वमानव समाज के समक्ष यह खुली घोषणा मौजूद है। मगर हम अपने मोहमाया का ईनाम लेने में व्यस्त हैं। किसी को सरकारी ईनाम चाहिए। कोई प्रशंसा-पत्र एवं सम्मान-पत्र के ईनाम के लिए व्यग्र है। किसी को रिश्वत का ईनाम चाहिए। कोई अपनी वाहवाही का ईनाम पाने के लिए व्याकुल है। आज हम किसी न किसी सांसारिक ईनाम के लिए बेचैन हैं। काश ! उस ईश्वर का ईनाम लेने के लिए हम ईश्वर भजन में लीन हो जाते। जब वह प्रभु अपने ईनाम को हमें प्रदान करता, तो सारी दुनियां हमें बिना किसी बाह्य प्रचार-प्रसार के जान जाती है कि वह देखो, वह ईश प्रदत पुरस्कार से पुरस्कृत है।"

सन्त निर्मल महाराज ने ईश-पुरस्कार को और स्पष्ट करते हुए कहा- "ईश्वर का पुरस्कार या अल्लाह का ईनाम क्या है? यह ईनाम ही उस एक प्रभु ने अरबी के सूरह फातेहा में स्पष्ट किया है। ईश्वर ने सूरह फातेहा अपने विश्वासी बन्दों के लिए बतायी है। इसके माध्यम से वह ईश्वर से प्रार्थना किया करें। सूरह फातेहा के मूल सार में है कि ऐ ईश्वर, चला हमें अपने उस सीधे रास्ते पर, जिस पर तूने ईनाम की घोषणा की है। अब ईनामवाले कौन होंगे? ईश्वर हमेशा से है। उसकी ईनामी घोषणा अरबी भाषा में क्या देर से आयी। नहीं, ऐसा नहीं है। यह घोषणा अनेक भाषाओं में अन्य ईशदूतों के स्थानिक भाषाओं में विभिन्न रूपों में मौजूद है। जिसने अपने ईशदूत को पहचाना तथा उसकी पैरवी की। जब वह सत्य पूजक बना, तो ईश्वर ने उसे पुरस्कृत किया।

हर ईशदूतों के शारीरिक कार्यकाल में ईश्वर ने सत्य पूजकों को पुरस्कृत किया है। हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के सहाबा, चार यार, असहाबे-सुफ्फा, अहले-बैत एकराम तथा ताबईन एवं तब्बे-ताबईन आदि बेशुमार हैं। वे ईश्वर द्वारा पुरस्कृत हुए। ईशदूत के जाने के बाद आज तक ईश्वर का वह पुरस्कार कामिल पीर, सूफिया एकराम, वली-औलिया, दरवेश, कलन्दर, मलंग आदि को मिलता आ रहा है। यह वह ईश-पुरस्कार है, जो ईश्वर की भांति अनश्वर है। यही वह ईनाम है कि बिना किसी इलेक्ट्रानिक मीडिया के दुनियां के दिलों तक पहुंच जाती है। लोग या गरीब नवाज, या गौसे पाक, या महबूबे इलाही, या बाबा हाजी मलंग, या हाजी वारिस अली, या जिन्दा शाह मदार तड़प-तड़प कर चिल्लाते हैं। दुखियारे दूर-दराज से आते-जाते हैं। यह ईश्वर पुरस्कृत पीर-वली, दरवेश अपने ईश्वरीय पुरस्कार में से देते जाते हैं। लाखों-करोड़ों इन ईश्वरीय पुरस्कारों में से हिस्सा लेते गए, मगर यह ईश्वरीय ईनाम कितना अनन्त और अपार है कि हजारों साल से बांटने के बाद भी कम न हुआ। यही ईश्वर का पुरस्कार है, जो ईश-गुणों से आवेशित है। ईश्वर परिपूर्ण है। उसका पुरस्कार भी परिपूर्ण है। ईश्वर, मृत्यु से पवित्र है। उसके पुरस्कृत वली-औलिया, साधु, महात्मा भी ईश-पुरस्कार के कारण जीवित हैं।

कल्मा तौहीद तथा पूर्व तीन कल्मों की मंशा के अनुसार जो ईश उपासना करे, वह ईश्वर का पुरस्कार पा सकता है। यही उस पवित्र ईश्वर का रहस्य इन कल्मों में पोशीदा है। यह कल्मे समस्त मानवजाति के लिए हैं।"

5. कल्मा अस्तगफार :- अस्तग़फेरुल्लाह रब्बी मिन कुल्ले ज़नबिम अज़नबतोहू अ़मदन औ खताअन् सिर्रन औ अलानीयतौं व अतूबो एलैहे मेनज्ज़म-बिललज़ी आलमो व मेनज़्ज़म-बिललज़ी ला-आलमो इन्नकअ अन्तअ अल्लामुल-गोयूबे व सत्तारुल ओयूबे व गफ्फारो अज़्ज़ूनोबे व लाहौल वला कुव्वत इल्ला बिल्लाहिल अलीयूल अज़ीम।।

(भावार्थ : मैं अल्लाह (ईश्वर) से माफी (क्षमा) मांगता हूं, जो मेरा परवरदिगार (पालनहार) हैं- हर गुनाह (प्रत्येक पापों) से; जो मैंने किया जानबूझकर या भूलकर, दर पर्दा या खुल्लमखुल्ला और मैं तौबा (गुनाह न करने का संकल्प) करता हूं उसके हुजूर (दरबार) में उस गुनाह से जो मुझे मालूम है और उस गुनाह से जो मुझे मालूम नहीं। बेशक (निस्सन्देह) तू गैबों (गुप्त भेद) का जानने वाला है, और ऐबों का छुपाने वाला है और गुनाहों को बक्शने (क्षमा करने) वाला है। और गुनाहों से बचने की ताकत (शक्ति) और नेक (पुण्य) काम करने की कव्वत (शक्ति) अल्लाह (ईश्वर) ही की तरफ से है, जो आलीशान (परमप्रतिष्ठित) और अज़मत वाला (परमादरणीय) हैं।)

--यह पापों से प्रायश्चित करने का मन्त्र है। मैं उस पवित्र ईश्वर की कृपा और दयालुता से

हतप्रभ हूं। वह कितना सच्चा, कितना अच्छा तथा कितना बन्दापरवर है। वह सचमुच कितना रहमान और रहीम है कि अपने हर बन्दे के लिए चिन्तित रहता है। वह पाकजात, कितना प्यारा है कि हमारे हर गुनाहों को माफ करने के लिए हर घड़ी तैयार रहता है। वह कितना बन्दापरवर है कि अपने बन्दे को पहले अपनी पहचान बताता है, फिर अपनी पूजा करने का गुर सीखाता है। वह जानता है कि मेरा बन्दा, गुनाह भी करेगा, इसलिए गुनाहों से माफी मांगने का ढ़ंग भी बताता है। अरबी भाषा में उल्लिखित यह कल्मा, सचमुच खुदा के समक्ष बन्दा कैसे अपनी गुनाहों की क्षमा मांगे तथा गुनाह न करने का संकल्प करे, प्रकट कर रहा है।

मशहूर फ़कीर हजरत हजारी बाबा ने कल्मा अस्तगफार की हकीकत यूं बयान की- "इस कल्मे से जाहिर हो रहा है कि गुनाह कितने तरह के होते हैं। जान-बुझकर किया गया गुनाह, भूल से हुई गुनाह, प्रत्यक्ष गुनाह तथा अप्रत्यक्ष गुनाह। जान-बूझकर किए जाने वाले गुनाहों की श्रेणी में कत्ल, मारपीट, चोरी, डकैती, ठगी, दगा-फरेब, अपमान, लूट, व्यभिचार जैसे तमाम गुनाह शामिल हैं। ऐसे गुनाह करने से पहले हमारा आशय उसे करने का बनता है। हम भलीभांति जानते हैं कि यह जो कुछ हम करने जा रहे हैं, वह पाप है, अपराध है। मगर इसके बावजूद नहीं डरते। अगर हममें उस एक खुदा के होने का यकीन होता, तो निस्सन्देह ईश्वर के भय से ऐसे गुनाह हम नहीं करते।

जानबूझ कर गुनाह करना, यह बताता है कि वह व्यक्ति जाहिर में ईश्वर का बन्दा है, मगर वह बन्दा अपने को ईश्वर का बन्दा नहीं मानता। वह अगर ईश्वर को मानता एवं उसकी सच्ची पूजा करता तो जान-बूझकर गुनाह वह कत्तई न करता। मगर हैरत है कि ऐसे व्यक्ति को भी वह परम दयालु ईश्वर अपना बन्दा मानता है। सचमुच वह एक पवित्र ईश्वर कितना कृपालु है कि गुनाह करने वाला उसके समक्ष अपनी गुनाहों को स्वीकार करे और सच्चे दिल से पुनः ऐसे गुनाह न करने का संकल्प ले तथा माफी मांगे, तो वह उसे क्षमादान देने के लिए हर घड़ी तैयार है। क्या ऐसा रहमान (दयालु) और रहीम (परम दयालु) भी कोई होगा, जो ऐसे पापी या गुनाहगार को माफ करके अपना बना ले।

सचमुच वह पाकजात कितना प्यारा है, कितना न्यारा है। बन्दा नहीं मानता कि वह मेरा ईश्वर-अल्लाह है। मगर वह मानता है कि विश्वमानव समाज का हर व्यक्ति उसका बन्दा है। वह अपने हर बन्दे के लिए क्षमा-दया की बाहें फैलाए, इस इन्तजार में है कि मेरा बन्दा आज नहीं तो कल मेरी तरफ आएगा। मुझसे अपनी गल्तियों और गुनाहों की माफी मांगेगा, फिर वह पाप से घृणा करेगा। मेरी बन्दगी को दिल से कुबूल करेगा। वह कहेगा- नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के। वह स्वीकार करेगा कि ईश्वर एक है, उसका कोई साझी नहीं। वह दिल से कहेगा कि मेरा ईश्वर सर्वमहान है। वही सर्वप्रशंसनीय है। सारे कल्मे की अन्दरुनी हकीकत यही है। यह कल्मे जुबान से पढ़े जाते हैं, मगर, जुबानी कथन को हमारा दिल-दिमाग भी महसूस करे। कल्में में जब हमारा दिल-दिमाग भी डूबेगा, तब

कल्मे के पढ़ने का मकसद पूर्ण होगा।

भूल से हुए गुनाह में दिल-दिमाग शामिल नहीं होते। यह वह भूल है, जो अचानक गुनाहों में हमें फंसाती है। गलतफहमी में भी कुछ गुनाह हो जाते हैं। कुछ गुनाह ऐसे हैं, जिन्हें हम गुनाह जानते हैं, मगर उस गुनाह को समाज या परिवार से छिपाते हैं। इन गुनाहों में वह गुनाह भी शामिल है, जो हमारे दिल और मन में जन्म लेते रहते हैं। दर पर्दा गुनाह वह भी हैं, जो विचारों या नज़रों से होते रहते हैं। ऐसे गुनाह प्रकट रुप से नहीं होते, मगर होते हैं गुनाह। इन्हीं सारे गुनाहों से तौबा करके उस पाकजात की बारगाह में हम क्षमा मांग लें। कल्मा अस्तगफार उसी का एक विधि-विधान है।

श्री हजारी बाबा ने आगे कहा- "इस कल्मे में उस पवित्र ईश्वर का एक खास गुण भी प्रकट है। वह पाकजात प्रभु, गैबों को जानने वाला है। वह पवित्र ईश्वर, अन्तर्यामी है। वह हर गुप्त या प्रकट बातों को जानने वाला है। कल्मा तौहीद में ईश्वर की यह विशेषता प्रकट हुई कि वही जिन्दा करता है और मारता है तथा वह ईश्वर सदैव के लिए जीवित है, उसकी मृत्यु नहीं। वह पुरस्कार देने वाला है। कल्मा तम्जीद में यह विशेषता उसकी बतायी गई कि वही गुनाहों से बचने की शक्ति देता है तथा पुण्यकर्म करने की शक्ति भी वही देता है। कल्मा शहादत ने स्पष्ट किया कि ईश्वर अकेला है, उसका कोई साझीदार नहीं। कल्मा तैय्यब ने यह बताया कि नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए उस एक ईश्वर के।

इस तरह यह पांचों कल्मे ईश्वर की रहस्यमय सत्यता के दर्पण हैं। इन्हें दिल-दिमाग में बसा कर उस एक ईश्वर की पूजा की जाए, तभी हमारी बन्दगी दुरुस्त होगी। यह सारे कल्मे उस एक ईश्वर की प्रशंसा और गुणों को प्रदर्शित करते हैं। अगर हम उसके बन्दे हैं, तो हमें इसी ढ़ंग से उसकी याद करनी चाहिए।"

6. कल्मा रद्दे-कुफ्र :- *अल्ला हुम्मअ ईन्नी अऊजोबेकअ मिन् अन् नुशरेकअ बेकअ शैईअवं व अनाअ आलमो बेही व अस्तगफ़ेरोकअ लेमाला आलमो बेही तुबतो अन्हो व तबर्रातो मेनल्कुफ्रे वशशिर्के 'वल-किज्बे वल गैबते वलबिदअते वन्नमीम वल फ़वाहिशी वल बुहतानी वल मआसी कुल्लिहा व अस्लमतु व अकूलु लाईलाहअ ईल्ललाहो मुहम्मदुर्रसूलल्लाहं।*

(भावार्थ : ऐ ईश्वर (अल्लाह) मैं तेरी पनाह मांगता हूं इस बात से कि किसी चीज को तेरा शरीक बनाऊं और मुझे ईल्म नहीं। मैंने अपने हर गुनाहों (पापों) से तौबा (प्रायश्चित) की और बेजार हुआ कुफ्र से और शिर्क व झूठ से और गीबत से और बिदअत से और चुगली से और बेहयाई के कामों से और तोहमत लगाने और हर किस्म (प्रकार) की नाफरमानियों से और मैं ईमान लाया और कहता हूं कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं और मुहम्मद सल्लेअला व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं।)

इस कल्मे के नाम से स्पष्ट है कि यह कल्मा 'कुफ्र को रद्द' करने के लिए है। कुफ्र क्या है? शिर्क क्या है? झूठ क्या है? गीबत क्या है? बिदअत क्या है? चुगली और बेहयाई के काम क्या हैं? तोहमत या आरोप लगाना किसे कहते हैं? हर प्रकार की नाफरमानी (ईश-आदेश विरुद्ध कार्य) क्या है?

इस कल्मा में उपरोक्त बातें आयी हैं। इन उपरोक्त बातों को यह कल्मा गुनाह मानता है तथा तौबा करने के लिए कहता है। इस कल्मे के सन्दर्भ में सन्त श्री साधुबाबा बोले- "कई बार मैं और गजानन तथा साईं इस कल्में के सन्दर्भ में चर्चा करते रहे। सन्त गजानन ने कहा कि कुफ्र और शिर्क दोनों इन्सान के हृदय-मस्तिष्क की खेती है। इन खेतियों में पानी, हमारा नफ्स या इन्द्रिय डालता है। कुफ्र और शिर्क की खेती जब लहलहाने लगती है, तब झूठ, गीबत, बिदअत, चुगली, बेहयाई और तोहमत एवं नाफरमानियों के बदबूदार फूल समाज में खिलने लगते हैं।

शेगांव में आपसी बातचीत के मध्य बन्धु गजानन बोले- कुफ्र करना क्या है? जिसने उस पवित्र एवं सर्वमहान ईश्वर के सिवा किसी अन्य को ईश्वर माना तथा उसकी पूजा की। यही उस सत्य ईश्वर के प्रति कुफ्र है। जिस बन्दे ने ईश्वर की पूजा में किसी गैर को शरीक करके पूजा की, वही शिर्क है। कुफ्र करने वाला काफिर है तथा ईश्वर में किसी को भी शरीक करने वाला मुशरिक है।

हम अपने धन-दौलत, व्यवसाय के बढ़ाने-घटाने में निरन्तर मन-मस्तिष्क और हृदय से व्यस्त है। हमारा मन, हृदय और मस्तिष्क ईश-पूजा में नहीं लगता। हम ईश-पूजा में भी अपना धन-धन्धा, प्रियजन की चिन्ता को ही उपस्थित रखते हैं, तो यह हुई माल व जाह की पूजा। यह पूजा कुफ्र है। तमाम लोग अपने मान-सम्मान, धन- सम्पदा और गर्व-अहंकार की पूजा करते हैं। यह भी कुफ्र है। अब अपने-अपने कुफ्र को हम तलाश करें, फिर ईश्वर के समक्ष तौबा या प्रायश्चित करें। यह नियम हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, बौद्ध जैसे सारे इन्सानों पर लागू होती है। यही मार्ग अपने-अपने कुफ्र को रद्द करने का ढ़ंग है।

मेरे मित्र शिरडी के श्री साईं बाबा बोले- "कुफ्र तो मन में है। कुफ्र दिल में है। कुफ्र हमारे विचारों में मजबूती से बैठा है। इसे नहीं कोई पूज्यनीय कहकर भगाना होगा। यही कुफ्र हमें ईश्वर से मिलने नहीं देता। ईश्वर की सच्ची दया-कृपा जो सभी के लिए निरन्तर जारी है, यही कुफ्र हमें पाने नहीं देता। ईश्वर की किसी भी पूजा में ईश्वर के अलावा जो कुछ भी शामिल है, वही शिर्क है। यह शिर्क भी नहीं कोई पूज्यनीय के हथियार से समाप्त की जा सकती है। जब कुफ्र और शिर्क हमारे मन, विचार, दिल और मस्तिष्क से हट गए, तब ईश्वर की नमाज, पूजा, इबादत से हममें खुदा-रब या उस प्रभु के प्रति पूर्ण ईमान मिल सकता है।"

श्री साधु बाबा ने काफी मस्ती में कहा- "कुफ्र और शिर्क अगर हमने अपने अन्दर से दूर किया,

फिर तो झूठ, गीबत, बिदअत, चुगली, बेहयाई और तोहमत की बातें हमसे दूर हो जाएंगी। इस कल्मे में नाफरमानी का जिक्र है। यही तो उस खुदा-हरि की नाफरमानियां है। वह रब शिर्क, कुफ्र, झूठ, गीबत, बिदअत, चुगली, तोहमत, बेहयाई को पसन्द नहीं करता। हमें अगर पसन्द है, फिर तो उस प्रभु की नाफरमानी हमने की। इन्हीं नाफरमानियों से बचने की हमें सख्त जरुरत है।"

फकीर श्री सैय्यद नूर अली शाह बाबा ने कहा- "अपने बातनी (आन्तरिक) कुफ्र और शिर्क को पहले रद्द (निरस्त) करो। तब पढ़ो ना 'ईल्लल्लाह', फिर पढ़ो 'अल्ला हो अल्ला'- देखो वह पाकजात (पवित्र ईश्वर) तुम्हें कितनी कृपा देता है। अगर 'ओम हरि ओम्' भी पढ़ते हो तो वही परमानन्द पाओगे। मगर शिर्क व कुफ्र का कल्बी-पर्दा (हार्दिक आवरण) पहले चाक करो। दिल में कुफ्र, शिर्क पाल कर उस एक मालिक की सच्ची नमाज या सच्ची परस्तिश नहीं हो सकती। झूठ बोलना, खुदा की सिफतों (गुणों) के खेलाफ है। खुदा के सच्चे दीन-धर्म में या उसके सन्देश में या ईशदूत की बताई राह में कोई नयी चीज अपनी तरफ से शामिल करना 'बिदअत' है। नयी चीज क्या है? नयी बातें और नई चीजे हैं, उस परवरदिगार या पैगम्बर के वचन, कथन और सत्य कर्म में अपनी बुद्धि से नये काम को जोड़ना। आज हम किसी ईशदूत के नाम की महफिल सजाएं, किसी वली-औलिया या फकीर से मुहब्बत करें, उसे लोग बिदअत करार देते हैं। हम नहीं समझ पाए कि यह बिदअत कैसी है? उनसे सच्ची अकीदत (सत्य श्रद्धा) और सच्ची मुहब्बत का इजहार करना, यह बिदअत कैसे हुई? क्या सहाबा नबीए-पाक से झूठी अकीदत और जुबानी मुहब्बत करते थे? हमारे वली-औलिया उस एक पाकजात और नबीए-पाक के सच्चे शाहिद (साक्षी) नहीं हैं? वह दोनों से दीदार की कुव्वत नहीं रखते हैं? यह तो अल्लाह के नेक और खास हैं। इसी सच्ची सिफत की वजह से यह नबीए-पाक के वारिस भी हैं और महबूब भी। फिर इनका उर्स मनाना। इनसे कुर्बत रखना। इनकी तारीफें करना। यह भी बिदअत कैसे हुआ? बिदअत खुदा और नबीए-पाक के गैरों के लिए है। अल्लाह की नबूवत और अल्लाह की वेलायत जिसके पास है, उसके सिवा सभी तो अल्लाह के गैर हैं। अल्लाह अपनी नबूवत और वेलायत अपने गैरों को नहीं देता।

वह नबी, पैगम्बर, ऋषि, रसूल तो ईश्वर-खुदा के हैं। वली-अल्लाह या औलिया अल्लाह भी अल्लाह की तरफ से हैं। फिर जिनसे अल्लाह खुश है, उनसे प्यार करने पर अल्लाह नाखुश कैसे होगा। हम नबीए पाक सल्ले अला व सल्लम की महफिल सजाएं, उनकी खुदाई अता की तारीफ करें, यह शिर्क-बिदअत या कुफ्र कैसे है? क्या खुदा के जो मकबूल और महबूब हैं, उन्हें याद करने से खुदा नाराज होगा? यह तो शाने-खुदा की तारीफ है। सारी प्रशंसाएं जब उसी एक रब के लिए है फिर तो अपने रब के महबूब या रब के दोस्त-यारों की प्रशंसा करना, उस एक रब की ही प्रशंसा हुई। यह गलत कार्य या शाने-खुदा के खिलाफ काम या रब के साथ शिरकत कैसे मानी जाएगी?"

सैय्यद नूर अली शाह ने एक आह भर के कहा– "खुदा की जात–सिफात से नावाकिफ लोग, नहीं चाहते कि दुनियां उस पाकजात के करीब रहने वालों को जाने। खुदा के नबी–रसूल क्या हमने बनाए या भेजे हैं? जिस इन्सानी जिस्म के पर्दे से हमारे पैगम्बर, रसूल दुनियां में जाहिर हुए, उनके मां–बाप को अल्लाह ने अपना नबी, पैगम्बर क्यों नहीं घोषित किया? खुदा ने नबी से बात की, मगर नबी के प्रत्यक्ष मां–बाप से खुदा ने बातचीत क्यों नहीं किया? पवित्र हजरत मरियम से उस एक खुदा ने बातें की थीं। सिर्फ यह बताने के लिए कि तुम्हारे पेट में पोशीदा शिशु मेरा नबी है। तुम लोक–लज्जा में न पड़ों। तुम अविवाहित हो मगर पवित्र हो। हजरत ईसा मेरे नबी हैं। मैंने उन्हें बिना बाप के जाहिर किया है। हजरत आदम मेरे पहले पैगम्बर हैं, उन्हें तो हमने बिना मां–बाप के ही जाहिर किया। अब कोई यह कैसे कहता है कि अगर अल्लाह के नबी, रसूल आए तो वह हमारे जैसे बशर हैं? इस बात को हम यूं भी कह सकते हैं कि हम जैसे बशर की हिदायत के लिए अल्लाह ने अपने नबी, पैगम्बर को बशर की शक्ल में भेजा। जो यह न माने वही अल्लाह के साथ झूठ बोलता है। कल्मा रद्दे कुफ्र में आया झूठ इसी तरह की बातों के लिए है।"

श्री नूर अली शाह ने फरमाया– "कुछ लोग कहते हैं कि नबी को ईल्म गैब नहीं होता? नबी हाजिर नाजिर नहीं हो सकतें? नबी, अल्लाह के नूर से नहीं हो सकता, क्योंकि वह मां–बाप से पैदा एक बशर हैं। नबी, रसूल, पैगम्बर, अल्लाह की बारागाहे अजमत में किसी की सिफारिश नहीं कर सकते, क्योंकि कब्र में जाने के बाद वह हमारे जैसे मुर्दा हो गए?

आज के दौर में इन बातों का ज्ञान; दुनियां के कोने–कोने में पहुंचाया जा रहा है। इसके पीछे मकसद सिर्फ इतना है कि नबी, रसूल एक साधारण व्यक्ति का नाम है, वह कोई अजूबा नहीं, जिससे उनकी ताजीम की जाए। जैसे हम मजबूर बशर हैं, वैसे वह भी मजबूर नबी हैं। अपनी बातों को दमदार बनाने के लिए ऐसे लोग कुरआन व हदीस का हवाला भी पेश करते हैं। कुरआन का मतलब वह इस तरह निकालते हैं, जैसे अल्लाह ने उन्हीं पर नाजिल किया हो। हदीसें इस समझ से पेश करते हैं, गोया नबूवत उनके घर की है।

अफसोस है ऐसे लोगों पर जो झूठ के साथ बेहयाई से चुगली और गीबत भी करते हैं। ऐसे लोगों पर तो फर्ज है कि वह कल्मा रद्दे कुफ्र को तब तक दिल–जुबान से पढ़ते रहें, जब तक उनके अन्दर से ऐसे ख्यालात मुर्दा न हो जाएं। वह पाकजात, बाखुदा गैबों का जानने वाला है। उसे यह ईल्म गैब है कि मेरे कुछ बन्दे मेरे नबी की खुदाई शान और नबूवत का दिल से मुन्किर होंगे। वह नबी, रसूल को जुबानी तसलीम तो करेंगे, मगर दिल उनका उन्हें खुदा का गैर समझेगा। जरा सोचे कोई, की नबी, रसूल उन्हें किसने कहा? उन्हें नबूवत जैसी खुदाद कुव्वत अता किसने की? वह अल्लाह के कौन हैं? नबी, रसूल या पैगम्बर वह बजाते खुद हैं या खुदा से हैं। उन्हें खुदा ने अपना नबी कायम

किया है? या वह खुद से नबी होने का ऐलान किए? सारे सवालात का जवाब एक अन्धा और बहरा बशर भी दे सकता है। वह नबी या रसूल हैं खुदा से। खुदा ने उन्हें अपना नबी, रसूल कहा। नबी को नबूवत और रसूल को रेसालत खुदा ने दी। नबी या रसूल से कलाम या बातचीत खुदा ने की। फिर खुदा के नबी या रसूल को खुदा की ताकत हासिल है या नहीं? खुदा ने कहा कि हमने नबी या रसूल भेजा। उसने यह तो नहीं कहा कि हमने नबी या रसूल को नबूवत या रेसालत उन की बन्दगी या इबादत और नमाज, रोजा से खुश होकर अता किया।

हम जान कर भी अनजान हैं कि नबी, रसूल, पैगम्बर पे इनायतें खुदा की है। उन्हें जो भी ईल्म है, वह खुदा का है। उनके जरिए जो मोजजा, एजाज जाहिर हुए वह उसी खुदा की तरफ से है। उन्हें जिसने भी याद किया, वह खुदा की कुव्वत से उन्हें सुनते-देखते हैं। अपनी खुदाद कुव्वत से वह उन्हें मदद भी करते हैं। जो खुदा का है, खुदा के साथ है, खुदा उसकी सिफारिश नहीं सुनेगा तो किसकी सिफारिश सुनेगा? आईए ना हम सब एक साथ कहें, ऐ अल्लाह मैं पक्का नमाजी हूं, ऐ पाकजात मैं सच्चा रोजेदार हूं, ऐ वहदहू ला शरीक मैं हाजी हूं, मेरी सिफारिश कुबूल फरमा। क्या हम यह दावा कर सकते हैं कि हमारी सिफारिश, वह हमारी इबादतों के बल पर कुबूल ही करेगा? क्या अल्लाह शर्तिया कुबूल करेगा, इस की गारन्टी है? मेरी नमाज, मेरा रोजा, हज, जकात दुनियां की नजर में तो मकबूल हो सकता है, अगर खुदा ने कुबूल न किया, फिर क्या होगा? हैरत है, हम इब्लीस की लाखों साल की इबादत पर भी नजर नहीं दौड़ाते। उसकी इबादत सिर्फ और सिर्फ खुदा के लिए थी। तभी तो खुदा खुश होकर उसे अपने फरिश्तों का उस्ताद मुकर्रर किया। मगर हजरत आदम के सामने वह हुक्मे खुदावन्दी सुन कर भी नहीं झुका। खुदा की खुश्नूदी पा चुका इब्लीस, एक पल में अपने तकब्बर (अहंकार) की वजह से मरदूद बन गया। अल्लाह ने अपना दिया ईनाम, इब्लीस के तकब्बर पर वापस ले लिया। यह खुदाई ईनाम नबी या पैगम्बर या रसूल के आने से पहले का है। यानी खुदा की ईनामी घोषणा खुदा के पास इब्ने आदम के आने के पहले से कायम है। हमें खुदा की खुश्नूदी (सर्वोच्च प्रसन्नता) हासिल है या नहीं, यह भी हमें नहीं मालूम। वह कब हमारी किस नेकी या पूजा से खुश हुआ, यह भी हम नहीं जानते। कब किस गल्ती या बुराई से वह नाखुश हुआ, हमें इसका भी ईल्म नहीं है। इसलिए कल्मा रद्दे कुफ्र को समझ कर दिल से पढ़ना हर बन्दे पर खुदा की बन्दगी से पहले लाजिम है।''

[17-C] सद्गुरु से ही ईश-ज्ञान

मशहूर सन्त श्री रुस्तम लकड़ावाला ने ईश्वर के बन्दों से यह सवाल किया- ''ईश्वर ही सर्वमानव समाज में पूज्यनीय है। क्या यह अरबी या किसी भी भाषा में कह देने से हमारी ईश-पूजा हो जाती है?

अरबी के 'लाईलाह ईल्लल्लाह' हिन्दी में 'नहीं कोई पूज्यनीय सिवाए ईश्वर के' अथवा 'ईश्वर ही पूज्यनीय है, शेष अपूज्यनीय' तो हम कहते हैं। परन्तु इसका भाव मात्र इतना ही है कि ईश्वर के सिवा कोई पूजने के योग्य नहीं। बात साफ हो गई की यह कथन या वचन या संकल्प है। ईश्वर की पूजा इसके कथन से प्रकट नहीं होती। हमें अब आप बताईए की हमारी ईश-पूजा या खुदाई परस्तिश क्या है?"

अल्लाह के फकीर श्री रुस्तम लकड़ावाला बोले- "कल्मा तैय्यब पढ़ने से तो यह साफ लगता है कि परस्तिश के लायक अल्लाह, प्रभु है। अब हमें कौन बताएगा कि ईश्वर की 'सत्य पूजा' कैसे किया जाए? हमें यह पवित्र पूजा का ईल्म देगा कौन? इसी सच्ची पूजा के परिपूर्ण-ज्ञानी को हम कामिल पीर कहते हैं। क्या आपने किसी कामिल पीर से पूछा की कल्मा तैय्यब जिस पाक रब (पवित्र ईश्वर) की पूज्यनीयता का एलान कर रही है, उसकी सच्ची पूजा क्या है? इसी सत्यता को लेने में हम क्यों चूक कर रहे हैं? ईश्वर ही पूज्यनीय है। खुदा के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं? ईश्वर ही परस्तिश के योग्य, शेष अपूज्यनीय। यही भाव तो अरबी के कल्मे 'लाईलाह ईल्लल्लाह' का निकलता है। बताईए- इस कथन या मान्यता में हमारे ईश-विश्वास की ही मान्यता है। उस ईश्वर-अल्लाह की पूजा सचमुच कैसे की जाए, यह तो हमें किसी भी कामिल पीर से सीखना होगा? हकीकत में कल्मा तैय्यब खुदा को पाने के लिए और खुदा के गैर से दूरी रखने का एक जेहाद है? यही इस्लाम या ईश-धर्म का ईश-प्राप्ति हेतु इन्द्रिय दमन का पवित्र युद्ध है। शब्द जेहाद की सत्यता न जानने का कारण क्या है?.सिर्फ यही की हम ईश-कानून की पढ़ाई किसी सद्गुरु या कामिल पीर से नहीं करते?"

ईश-सन्त सर आईजेक राबर्ट ने एक सत्यता यूं बयान की- "कामिल पीर हमें खानकाह में मिलते हैं। हमें यह देखना है कि उन्होंने दुनियां को सत्य ईश-पथ पर चलाया, क्या उन्होंने अपने परिवार या सगे-सम्बन्धियों को भी सत्यता से परिचित कराया?"

सर राबर्ट ने उदाहरण दिया- "ख्वाजा गरीब नवाज अजमेरी के शहजादे सैय्यद फखरुद्दीन चिश्ती तथा शहजादी सैय्यदा बीबी हाफिज जमाल को देखिए। हजरत ख्वाजा बुजुर्ग ने तो अपने बेटी-बेटे को भी अल्लाह तआला की नूरे-विलायत अता करा दी। इस मिसाल के पीछे हमारी मंशा है कि हमारे कामिल पीर अपने घरों में भी नूरे वेलायत की शम्मा रौशन करें। यह ऐन फर्ज है। हमारे रसूले खुदा सल्ले अला व सल्लम की शहजादी बीबी सैय्यदा फातमा अल्लाह पाक के नूरे-वेलायत से मालामाल है। नबीए-पाक के चचेरे भाई हजरत अली हुजूर तो शम्माएं नूरे-मार्फत हैं। नबीए-पाक की तालीम ने उन्हें ईश-ज्योति का प्रकाश-स्तम्भ बना डाला। नबीए-पाक की कुर्बत और शफ्कत ने हजरत इमाम हसन और हजरत इमाम हुसैन को वेलायत के आला मकाम पर फायज (पदासीन)

किया। वे दोनों नबीए पाक के शहजादे-नवासे उम्मते नबी के इमाम हो गए। हजरत उषमान गनी को रसूले-पाक की तालीम ने उन्हें अल्लाह से गनी बना दिया। यह नबीए-पाक के खलीफा भी हैं और दामाद भी। उधर हजरत उमर फारुके आजम और हजरत अबु बकर सिद्दिके अकबर जो नबीए-पाक के ससुर भी हैं और खलीफा भी, वे भी अल्लाह तआला की मार्फत पा कर चमक उठे। मैं बताना यह चाहता हूं कि सर्वश्रेष्ठ महापीर हमारे रसूलल्लाह हैं। उन्होंने अपनी बेटी, दामाद, ससुर, नवासा आदि को भी मार्फते-हक का पूरा-पूरा जाम पिलाया। फिर हमारे कामिल पीर अपने अहलो-अयाल और अजीजो-अकारिब को भी जामे-वहदत का प्याला क्यों नहीं अता करते हैं?"

सर आईजेक राबर्ट ने सलाह दी- "मेरी कामिल पीरों से अपील है कि वह मार्फते-इलाही (ईश सम्पर्क) का ईल्म गैरों के साथ-साथ अपने खानदान के अफराद को भी अता करें ताकि अल्लाह तआला की ईल्मे-मार्फत दुनियां को रौशनी देती रहे।"

मशहूर फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने एक दुःख भरे लेहजे में फरमाया- "खुदा की सच्ची इबादत का ईल्म कामिल पीरों के कल्ब (दिलों) में महफूज है। यह अमानते-खुदावन्दी है। इस खुदाई अमानत को पाने का हक हर मखलूके खुदा को है। हमें यह देखकर काफी अफसोस होता है कि मजारात और खानकाह के सज्जादानशीन और खादिम इस नेएमते-खुदावन्दी से खाली क्यों रहते हैं? उन्हें क्या अपने साहबे मजार से कुर्बत हासिल है? उन्होंने अपने कामिल पीर से ईल्मे-खुदावन्दी क्या लिया है? क्या कामिल पीर ने अपने साहबे-सज्जादानशीन और खुद्दाम को मार्फते-खुदावन्दी का ईल्म दिया?"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने फरमाया- "कामिल पीर पर लाजिम है कि वह अपने आले-औलाद को ईल्मे-हक (सत्य ईश ज्ञान) से कामिल बना दे। कामिल मुरीद अगर हो गया, तो वही तो कामिल पीर बनेगा? कामिल पीर ने अगर अपने खानदान को ईल्मे हक से लबरेज नहीं किया, तो उसके परदा फरमाने के बाद सच्ची सज्जादानशीनी और हक्की बेय्यत (सत्य गुरु-शिष्य परम्परा) का निजाम (प्रबन्ध) कैसे कायम रहेगा? आज ईल्मे-खुदावन्दी (ईश-विद्या) से खाली लोगों की वजह से अवाम मजारात या खानकाहों से किनाराकशी करने लगी है। तालिमे-हक का चेराग अगर कामिल पीर बुजुर्ग अपने आले-औलाद में रौशन करते, तो आज चेरागे-मार्फत से उनके मजारात और खानकाहें रौशन रहतीं। कहते हैं कि सज्जादानशीन असल के बदल होते हैं। यानी परदा फरमाए पीर की नूरानी रौशनी उनमें कायम-मकाम होती हैं। कामिल पीर जिस तरह अपने कामिल पीर एवं अपने रसूले-पाक और अल्लाह तआला में फना होता है, यही सिफात (गुण) सज्जादानशीन और खादिम (सेवक) में होनी चाहिए। इसलिए हर कामिल पीर पर यह फर्ज है कि वह अपनी अमानते-खुदावन्दी को अपने घरों में रौशन करें।"

सैय्यद साहब ने कहा– "ईश–सम्पर्क ज्ञान के अभाव में कामिल पीर होने की क्षमता नहीं होती। यह ज्ञान नहीं, फिर ईश–ज्ञान की सत्यता समाज में किस प्रकार कायम रह सकेगी? कामिल पीर इस दिशा में अवश्य चिन्तन करें।"

18 – नमाज का भावार्थ

आईए एक संक्षिप्त दृष्टि ननाज पर भी डाल लें। अगर हमें फज़िर (प्रातः) की दो रेकात नमाज पढ़नी है, तो इस प्रकार गुसल, वज़ू के बाद नीयत करनी पड़ती है–

"नीयत की मैंने दो रेकात नमाज फर्ज या सुन्नत की, वास्ते अल्लाह तआला के, मुंह मेरा काअबा शरीफ की तरफ अल्लाहो अकबर।"

अब हम इस प्रकार नमाज आरम्भ करते हैं।

सनाः सुबहानअकल्लाहुम्मअ व बेहम्देकअ व तबारकस्मोकअ व तआला जद्दोकअ व लाएलाहअ गैरोकअ। (अर्थात : ऐ ईश्वर तेरी जात पवित्र है और खूबियों वाली है और तेरा नाम बरकत वाला है और तेरी शान ऊंची है और तेरे सिवा कोई माबूद (पूज्यनीय) नहीं।)

तअवूज : अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम। (अर्थात : मैं ईश्वर की पनाह (शरण) मांगता हूं शैतान मरदूद से।)

तसमीयह : बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम। (अर्थात : ईश्वर के नाम से शुरु (आरम्भ) करता हूं जो रहमान (दयावान) और रहीम (दयालु) है।)

सूरह फातेहा : अल्हम्दोलिल्लाहे रब्बिल आलमीन। अर्रहमानिर्रहीम। मालेकेयोमिद्दीन। इय्याकनाब्दो व ईय्याकनस्तईन। एहदिनस्सेरातल मुस्तकीम। सेरातललजीनअ अन्आमता अलैहिम। गैरिल मगदूबे अलैहिम वलद्दालीन। आमीन। (अर्थात : समस्त प्रशंसा उस ईश्वर के लिए है, जो समस्त सृष्टि का पालनकर्ता है। ईश्वर दयावान और कृपालु है। ईश्वर प्रलय के दिन का स्वामी है। ऐ ईश्वर हम तेरी ही पूजा करते हैं और हम तुझसे ही मदद मांगते हैं। हमको सीधा रास्ता चला। उन लोगों का रास्ता जिन पर तूने ईनाम या पुरस्कार किया है। न कि उन लोगों का रास्ता जो तेरे गजब में मुब्तला हुए और ना गुमराहों का। आमीन अर्थात– ईश्वर कुबूल फरमा।)

सूरह एख्लास : कुलहू अल्ला हो अहद। अल्लाहुस्समद। लम यलिद व लम यू लद व लम यकुल्लहू कोफवन अहद। (अर्थात : कहिए वह ईश्वर एक है। ईश्वर बेनेयाज है। न ईश्वर ने किसी को जना और न वह किसी से जना। और कोई भी ईश्वर का हमसर या बराबरी वाला नहीं है।)

तकबीर : अल्लाहो अकबर। (अर्थात : ईश्वर सर्व महान है।)

रुकु : तीन बार पढ़ते हैं – 'सुब्हानअ रब्बील अजीम' (अर्थात – पवित्र है मेरा पालनकर्ता अजमत वाला।)

तसमीअ : समेअल्लाहो लेमन हमेदह्। (अर्थात : ईश्वर ने उस बन्दे की सुन ली, जिसने उसकी प्रशंसा की।).

तहमीद : रब्बना लकलहम्द। (अर्थात : ऐ पालनकर्ता तेरे लिए समस्त प्रशंसा है।)

तकबीर : अल्लाहो अकबर। (अर्थात : ईश्वर सर्वमहान है।)

सजदा : तीन बार कहें– "सुब्हानअ रब्बिलअला।" (अर्थात : पवित्र है मेरा पालनहार सबसे बड़ा आलीशान।)

तकबीर : अल्लाहो अकबर। (अर्थात : ईश्वर सर्व महान है।)

तशह्हुद या अत्तहियात : अत्तहियातो लिल्लाहे वस्सलवातो व तय्यबातो अस्सलामो अलैका अईहोहन्नबीओ व रहमतुल्लाहे व बरकातहू। अस्सलामो अलैना व अला एबादिल्लाहिस्सालेहीनअ। अश्शहदो अल लाएलाहअ इल्लल्लाहो व अश्शहदो अन्नअ मुहम्मदन अब्दोहू व रसूलोहू। (अर्थात: तमाम जुबान की पूजा या इबादतें ईश्वर के लिए हैं और शारीरिक पूजा तथा माल की पूजा भी। सलाम हो तुम पर ऐ नबी (ईशदूत) और ईश्वर की रहमत व बरकत भी आप पर हो। सलामती हो हम पर और ईश्वर के नेक बन्दों पर। मैं गवाही देता हूं कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं और मैं गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के बन्दे और उसके पैगम्बर हैं।)

दरुद शरीफ : अल्ला हुम्मअ सल्ले अला मुहम्मदींव व अला आले मुहम्मदींव कमा सल्लैतअ अला इब्राहीमअ व अला आले इब्राहीमअ इन्नकअ हमीदुन मजीद। अल्ला हुम्मअ बारिक अला मुहम्मदींव व अला आले मुहम्मदींव कमा बारकतअ अला इब्राहीमअ व अला आले इब्राहीमअ इन्नकअ. हमीदून मजीद। (अर्थात : ऐ ईश्वर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व उनकी औलाद पर रहमत भेज, जिस तरह तूने रहमत भेजी हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम पैगम्बर पर और हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की औलाद पर। बेशक तू ही सर्व प्रशंसनीय है। ऐ ईश्वर बरकत दे हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को और उनकी आल (औलाद) को, जिस तरह तूने बरकत दी हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनकी आल को। बेशक तू ही सर्व प्रशंसनीय है।)

दोवा : अल्ला हुम्मअ ईन्नी ज़लमतो नफ्सी जोलमन कसीरौंव व ला यगफेरुज्जोनोबअ इल्ला अन्तअ फगफिरली मगफेरतम्मीन इन्देकअ वरहमनी इन्नकअ अन्तल गफूरुर्रहीम। (अर्थात – ऐ ईश्वर हमने अपने नफ्स (इन्द्रिय) पर बहुत-बहुत जुल्म किया है और सिवाए तेरे और कोई गुनाहों को बक्श नहीं सकता। इसलिए तू अपनी खास बक्शीश से मुझको बक्श दे। और मुझ पर रहम फरमा दे। बेशक तू ही बक्शने वाला (मुक्तिदाता) अत्यन्त दयालु है।)

सलाम : दोनों कन्धों के तरफ- "अस्सलाम अलैकुम व रहमतुल्लाह।" (अर्थात : सलाम हो तुम पर और अल्लाह की रहमत।)

नमाज का ढ़ंग यहां संक्षेप में प्रस्तुत है। नमाज में प्रयुक्त अरबी शब्दों का हिन्दी में यहां भावार्थ भी है। पूरी नमाज में खड़े होकर फिर झुककर फिर सजदे में जा कर जो भी पढ़ा जाता है, उसमें एक ईश्वर की वन्दना, प्रशंसा तथा उससे सत्य ईश मार्ग पर चलने, ईनाम पाने, गुनाह माफ कराने का ही कथन हम करते हैं। हम ईश्वर के ईश-दूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम पर और उनकी आले-औलाद पर भी दरुदो-सलाम भेजते हैं। ईश्वर की प्रशंसा फिर उससे प्रार्थना करके झुकते हैं तो 'सुबहानअ रब्बिल अजीम' कहते हैं। अर्थात- ऐ समस्त सृष्टि के पवित्र रब आप प्रशंसनीय हैं और महासर्वश्रेष्ठ प्रतिष्ठा वाले हैं। यह भी ईश-प्रशंसा है। सजदे में जाकर कहते हैं- "सुबहानअ रब्बिल अला" अर्थात- ऐ समस्त सृष्टि के पवित्र रब या पालनहार आपकी शान-प्रतिष्ठा महासर्वश्रेष्ठों में महासर्वश्रेष्ठ है।

यह नमाज का ढ़ंग स्पष्ट करता है कि हम खड़े होकर, झुक कर और सजदे में जाकर उस पवित्र पूज्यनीय ईश्वर का अल्लाह व रब के नाम से गुणगान करते हैं। इस गुणगान की नीयत हम पश्चिम दिशा स्थित काबा की ओर रुख करके ईश्वर के वास्ते ईश्वर का गुणगान करते हैं। इस नमाज के पढ़ने में ज़ुबान साथ दे, मगर दिल-दिमाग इधर-उधर भटके तो ईश पूजा संकल्प या पवित्र नमाज की नीयत जो हमने किया है, वह भंग होता है। अरब के लोग अरबी समझ सकते हैं, मगर हमारी भाषा अरबी नहीं है। हमें समझ कर ही ईश्वर के समक्ष पूजा-नमाज एवं प्रार्थना और उसकी प्रशंसा करनी चाहिए।

[18-A] नमाज़ें अदा कैसे करें ?

हमारी पूजा, इबादत में नमाज एक अति महत्वपूर्ण अल्लाह-ईश्वर की पूजा है। आईए- हम नमाज के तरीके पर गम्भीरता से ध्यान दें।

विश्वविख्यात सन्त सर इकबाल अली अहमद ने इस सन्दर्भ में यूं बयान किया- "नमाज के पहले पाक-साफ होकर वजू के बाद हम नमाज की नीयत करते हैं। हम नमाज की नीयत अल्लाह तआला के वास्ते करते हैं। यानी हमारी नमाज उस पाक परवरदिगार के लिए है। मुंह मेरा काबा शरीफ की तरफ यानी पश्चिम दिशा में। क्योंकि काबा पश्चिम दिशा में है। काबा पाक है। उसमें कभी तीन सौ साठ बुतों की पूजा की जाती थी। उन बुतों से काबा जब पाक किया गया, तो काबा आज 'काबातुल्लाह' कहलाता है। बुत कौन थे? हुबल, लात, मनात, सअद वगैरह नामों के बहुत से। उनके पूजने वाले उन्हें खुदा मानकर पूजते थे। मगर हर पूजने वालों के खुदा अलग-अलग थे। वह विभिन्न

शक्लो-सूरत की बनायी गई मूर्तिया थीं या पत्थर आदि के प्रतीक चिन्ह थे। उन मूर्तियों या चिन्हों को ईश्वर-अल्लाह माना जाता था। उन्हें रब, ईश्वर, गॉड समझ कर ही उनकी पूजा की जाती थी। ईश्वर एक है, वह बुत रुप में नहीं हो सकता, यह कोई मानने को तैयार नहीं था। उनकी नज़र में ईश्वर इन बुतों के रुप में एक नहीं, तीन सौ साठ थे। इनके साथ ही उनके दिलों में ईच्छाओं के बुत रुपी माबूद (पूज्यनीय) नगण्य थे। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों बेशुमार बुतों के साथ उन सबकी जिन्दगी गुजर रही थी। जाहिर है इन बुतों की पहुंच ईश्वर तक नहीं थी। इन बेजुबान बुतों ने ईश्वर को देखा तक नहीं था। हमारे कुछ काबिल ओलमा और दीनी रहनुमा इन्हीं बुतों की तरह ईश्वर-अल्लाह से निरन्तर जुड़े नबी-रसूल या वली-औलिया की मजार या दरगाह को भी बुतखाना ख्याल करते हैं। वे नबी या ईशदूत या वली को पर्दा करने के बाद उन्हें बुत समझते रहते हैं। काबे के बुत बेजुबान थे, उनकी निस्बत बुत बनने या बनाने के पहले या बाद भी उस एक खुदा से नहीं थी।

नबी, रसूल की निस्बत प्रकट होने के पूर्व और बाद भी खुदा से है। वली तो खुदा और रसूल दोनों से गहरी निस्बत (सम्पर्क) में है। नबी दुनियां की नज़र से दिखाई दें या नहीं, मगर वह खुदा के नबी-रसूल हैं, इसलिए वह रहते हैं और रहेंगे। यह सच्चाई हम कुबूल कैसे करें? वह अल्लाह के नबी है। अल्लाह के लिए ही आए। अल्लाह मौत से पाक है, अल्लाह के नबी आम बशर की तरह कैसे मरेंगे? इसलिए जो अल्लाह के साथ है, उसे भी आम मानव की भांति मौत नहीं है। यही वजह है कि जब तक दुनियां कायम रहेगी, लोग मदीना जाएं या न जाएं, वह 'या रसूलल्लाह' कहते रहेंगे। क्या हजरत खिज्र अलैहिस्सलाम पैगम्बर नहीं है? वह बशर की शक्ल में तो नहीं आए, मगर तमाम वली-औलिया से वह बशर के रुप में जब चाहे मिलते रहते हैं। आखिर वह कैसे नबी या पैगम्बर हैं, जो बशर की शक्ल में दुनियां में नहीं आए, मगर बशर के रुप में मिलते रहते हैं। पता यह चला कि बशर के रुप में आने या न आने का कोई प्रभाव अल्लाह के नबी या पैगम्बर पर नहीं पड़ता।

वह हजरत खिज्र की तरह 'या रसूलल्लाह' कहने पर सुन सकते हैं और चाहें तो मौजूद हो सकते हैं। इसीलिए कहा जाता है कि नबी भी हाजिर-नाजिर हैं। इसलिए जहां भी दुनियां में आए नबी या ईशदूत का स्थान है, वह भी पवित्र है। इसलिए अल्लाह पाक की नबूवत और रेसालत या वेलायत जिसके पास है, वह हर हाल में बुत-शिकन (मूर्ति भंजक) हैं। उनके पास बुतपरस्ती करने की जुर्रत कौन करेगा? कांबा के अन्दर एक नहीं तीन सौ साठ खुदा थे। इसलिए वहां जरुरी था कि एक ईश्वर की सत्यता के लिए उन्हें हटाया जाए।

हजरत पैगम्बर मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को खुदा ने जब भेजा, तो उन्होंने ऐलान किया- ऐ लोगों, यह बुत, मूर्ति खुदा नहीं, इन्हें पहले 'ला' (नहीं) करो। इन्हें दिल से 'नहीं कोई पूज्यनीय' कहकर नष्ट करो। यानी 'ला ईलाहअ' पहले करो, तब कहो 'ईल्लल्लाह', तब कहो- ऐ पाकजात तेरे

सिवा कोई पूजने के लायक नहीं है। मैं तुझे ही पूजता हूं। मैं तेरे साथ किसी भी बुत या मूर्ति की परस्तिश (पूजा) नहीं करुंगा। लोगों ने कुबूल किया। यह मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हैं, जो अल्लाह की तरफ से भेजे गए रसूल हैं। यह सच्चे हैं, इनका खुदा सच्चा है। इसलिए हम सब इनके कथन पर दिल, दिमाग, ख्याल और जुबान से यकीन करते हैं।

पहले लोगों ने पक्का यकीन अल्लाह के नबी पर किया, तब झूम कर इकरार किया– लाईलाहअ ईल्लललाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह। अल्लाह या ईश्वर एक है, उसमें किसी अन्य को शरीक मत करो। वही पवित्र है, वही पाक है। वह वहदहू ला शरीक है। हम सारे उसी के बन्दे हैं। वह पाकजात हमेशा से है हमेशा रहेगा। हम बन्दों की जिन्दगी उसी से कायम है। वही जिलाता है, वही मारता है, मगर वह खुद मौत से पाक है। अरब के लोगों ने उनकी बातों पर दिल से यकीन किया। यह साबित हुआ कि किसी व्यक्ति ने भी खुदा को नहीं देखा, मगर उन्होंने बिना देखे उस एक खुदा पर यकीन किया। लोगों ने सचमुच अल्लाह के रसूल पर यकीन किया। उनका कामिल यकीन जब रसूले पाक पर हो गया तब कहा कि अश्शहदो अललाईलाहअ ईल्लल्लाह। यानी मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा इबादत के लायक कोई नहीं। उन्होंने यह भी साफ दिल से कहा कि अश्शहदो अन्नअ मुहम्मदन अब्दहू व रसूलहू। यानी मैं यह भी गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं। लोगों ने हजरत पैगम्बर साहब को बन्दा कहा क्योंकि वह खुदा की बन्दगी करके बताते थे। उन्हें रसूल कहा क्योंकि उन्होंने खुदा की हकीकत बयान की।"

सर इकबाल अली अहमद ने कहा– "बुतों की पूजा करने वाले अगर रसूले पाक की बन्दगी न देखते, तो फिर उस एक अल्लाह की पूजा, अपने बुतों के साथ कर सकते थे। अल्लाह एक है, उसी की पूजा की जाए। मगर कैसे, यह नबीए पाक ने करके सिखाया। हम खुदा को एक जाने, उसमें किसी को भी शरीक कभी भी न करें। अगर शरीक किया किसी भी शय को तो वह तेरा बुत है, वही तेरी मन की बनायी तस्वीर खुदा में शरीक मानी जाएगी। बुत या मूर्तियां प्रत्यक्ष में तीन सौ साठ थीं। उस दौर में हर एक का खुदा अलग–अलग था। इन गैर–खुदाओं में हर एक का दावा था कि मेरा खुदा बड़ा है। मेरा ही बुत महान है। तब नबीए–पाक ने फरमाया– अल्लाहो अकबर। यानी अल्लाह या ईश्वर ही सर्वमहान है। यह तो जाहिर बुत थे। मगर उन लोगों ने अपने दिल–जुबान से उन्हें अपना–अपना खुदा माना था। केवल बुत या मूर्ति रखकर उन्हें खुदा या ईश्वर नहीं कहा जाता था। बल्कि उन बुतों की इज्जत, अजमत और सम्मान उनके दिलों में भी थी। जाहिर बुत हटा दिए गए फिर भी दिल में बुतों को खुदा समझने की बात न बनी रहे। इसलिए खुदा की इबादत करने से पूर्व नीयत करने का कानून लागू हुआ।

उस एक खुदा या प्रभु की इबादत करनी है, तो पहले नीयत करो। जाहिर और बातिन यानी

व्यक्त व अव्यक्त बूतों को अपने दिल-दिमाग से निकाल फेंको। जब तक बुत नहीं हटेंगे, उस पवित्र रहमान या दया के सागर की सच्ची इबादत या शुद्ध पूजा सम्भव नहीं। नीयत की मैंने नमाज की या पूजा की, इसके पूर्व दिल-दिमाग में बसे-जागे सारे ख्यालातों के बुतों को दूर भगाओ। जाहिर बुत से ज्यादा खतरनाक हमारे बातिन (आन्तरिक) के बुत हैं। सिर्फ जाहिर बुत है तो उसे गैर-खुदा हम मान भी लेंगे। क्योंकि वह बुत हमने या हम जैसे किसी मानव ने बनाए हैं। बुत मजबूर हैं, उनमें जीवन चिन्ह नहीं। उनमें कोई अजूबी प्रकट शक्ति भी नहीं है। हमारे बुद्धि के तर्क से ही जाहिर बुत की मान्यता खत्म हो जाती है। मगर दिलों में छिपे नाना-नाना प्रकार के बुत तो खुदा की इबादत में शामिल रहेंगे। जरुरी है इन अन्दर के छिपे बुतों को खुदा की पूजा-नमाज से भगाना। यह बातिनी बुत अगर भाग गए, फिर तो नीयत नमाज की हो या उस एक ईश्वर के पूजा की, दुरुस्त हो जाएगी। इसीलिए हर पूजा-नमाज, जिक्र-अजकार, नाम-जप से पहले 'नीयत' पर जोर दिया गया। लोगों में इसीलिए यह कहावत भी तो मशहूर है कि जैसी नीयत वैसी बरकत।''

सर इकबाल अली अहमद साहब ने बड़ी सरस भाषा में कहा- ''हम बदन को पानी से स्नान कराके या गुसल देकर उपरी ढंग से पाक या पवित्र कर लेते हैं। हम नये कपड़े या धुले-धुलाए कपड़े पहन कर यह महसूस करते हैं कि पाक-साफ हो गए। अब इन कपड़ों में इबादते-ईलाही या प्रभु-पूजा की जा सकती है। हमने खुदा की नमाज या परमेश्वर की पूजा के लिए गुसल या स्नान किया। जिस तरह उपरी बदन के मैल हमने दुनियां के साबुन से मल-मल कर या रगड़-रगड़ कर साफ किया। क्या उसी नहाने में 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' के साबुन से हम हृदय-मन के मैल को साफ-सुथरा नहीं कर सकते हैं। पानी बदन पर जब डाला तो अन्दर ही अन्दर मन-हृदय के मैल से बारम्बार कहा- 'ला ईलाहअ' यानी तुम पूज्यनीय नहीं हो, तुम ईश्वर नहीं हो, तुम ईश्वर की भांति सर्वमहान नहीं हो, इसलिए मन-हृदय से भागो ताकि यहां मेरा 'ईल्लल्लाह' बैठे। ऐ मन-दिल के बुतों जगह खाली करो, मेरा पवित्र ईश्वर आ रहा है, वही पूज्यनीय है। वही या हईयो या कईयूम है। वही हमेशा से कायम और जिन्दा है। ऐ मेरे मन-हृदय के अपवित्र व नापाक बुतों हमेशा के लिए भाग जाओ, क्योंकि मेरा रब पाक है, वही अजमतवाला है। जब ऐसा गुसल, स्नान हम कर लें, फिर वजू हमारा दुरुस्त होगा। हमारी नमाज की नीयत सच्ची हो जाएगी। उस पाकजात या ईश्वर की सच्ची पूजा के लिए अब हम तैयार हैं।

जरा हम सोचें। जब गुसल, स्नान के बाद वजू हम करते हैं, तो इस काम की नीयत तो उस एक खुदा-प्रभु के नमाज-पूजा के लिए ही हुई। फिर हमें नीयत करने की जरुरत क्यों पड़ती है? नीयत हमारी गुसल-स्नान की खुदा के इबादत के लिए। वजू कर रहे हैं, खुदा की नमाज या पूजा के लिए। फ़िर यह गुसल व वजू की नीयत क्या ईश्वर-रब के सामने परिपूर्ण नहीं है? अगर हमारी इस नीयत

या संकल्प को खुदा स्वीकार करता, तो पुनः नीयत करने की बात नहीं होती। वास्तव में यह नीयत ही वास्तविक ईश-पूजा का संकेतक है। नीयत, संकल्प हमारा ठोस और मजबूत जितना होगा, उतनी ही सच्ची पूजा, नमाज हमारी होगी। सच्ची पूजा के लिए नीयत पूर्ण शुद्ध तब मानी जाएगी, जब किसी भी जाहिर या बातिन बुत का ख्याल हमारे दिल-दिमाग में न हो। हम पहले अन्दर-बाहर से 'ला-ईलाहअ' के अनुसार पवित्र हो जाएं। नहीं कोई पूज्यनीय, इन्सान के दिल-दिमाग से गैर-खुदा या ईच्छा-मूर्तियां या नफ्सीयाती बुत को धाराशायी करने का जेहाद है। यह जेहाद जिस बन्दे ने कामयाबी से किया, वही सच्ची इबादत का लुत्फ पाएगा। उसी की नीयत खरी होगी। अब वही जब कहेगा जुबान से कि नीयत की मैंने दो रेकात नमाज फर्ज की, वास्ते अल्लाह तआला या ईश्वर के, तो उसका दिल-दिमाग भी इसी नीयत को दोहराएगा। इसी सच्ची नीयत के बाद जब हम कहेंगे कि अल्लाहो अकबर या ईश्वर सर्वमहान है, तो हमारा यह कथन सच्चा होगा। अब हाथ बांधकर हम उस खुदा, प्रभु, गॉड के सामने उसकी सबसे पहले सना या प्रशंसा करते हैं। अब ईश्वर की सच्ची पूजा नमाज के नाम व रुप में आरम्भ हुई। ध्यान दें, नीयत दुरुस्त करके हमने यह कुबूल किया कि ईश्वर-अल्लाह हमारा सर्वमहान हैं। अल्लाहो अकबर कहके हमने नमाज या सत्य ईश पूजा की नीयत बांध ली। अब हमने उस पाकजात की पूजा, उसकी तारीफ या प्रशंसा या सना से शुरु की।

सना (ईश-प्रशंसा) क्या है? ऐ मेरे बहुत खूबियों वाले ईश्वर तथा बहुत बरकत या सुख समृद्धि देने वाले अल्लाह, तेरी शान सर्वोच्च और पवित्र है तथा तू ही पूजने या परस्तिश करने के योग्य है, तेरे सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। यही सना है। यही उस पवित्र प्रभु की प्रशंसा करते हुए उसकी पूजा का आरम्भ है। इसके बाद जब हम कहते हैं- अऊजोबिल्लाहे मिनश्शैतानिर्रजीम। तो इसका मतलब निकलता है कि ऐ मेरे सना वाले परमेश्वर, मुझे तेरी पनाह चाहिए। मुझे शैतान मरदूद की पनाह से बचा।"

सर इकबाल अली अहमद साहब ने नमाज में प्रयुक्त 'तअव्वूज' पर यूं रौशनी डाली- "नमाज खुदा की सच्ची पूजा का नाम है, उसमें शैतान मरदूद या गैर-खुदा का नाम क्यों आया? अल्लाह पाक मैं आपकी पनाह मांगता हूं शैतान मरदूद से। अल्लाह की इबादत पाक नीयत से हम कर रहे हैं, हमने पाक दिल-जुबान से अल्लाह की सना या प्रशंसा की, फिर शैतान मरदूद से पनाह मांगने की बात क्यों कर रहे हैं? हम अल्लाह पाक के सामने खड़े हैं, अल्लाह के वास्ते अल्लाह की ही पूजा कर रहे हैं। फिर यह गैर-खुदा शैतान इस पाक नमाज में क्योंकर दाखिल होगा?

लगता है कि इसमें खुदा का रहस्य कुछ खास है। हम उस मरदूद शैतान से पनाह चाहते हैं और अल्लाह की पनाह के ख्वाहिशमन्द हैं। अचानक सना के बाद यह शैतान मरदूद का खतरा हमें क्यों होने लगा? हम उस एक पाक खुदा की इबादत में हैं। इस इबादत में बुत, मूर्ति कोई नहीं। फिर वह

कौन सा शैतान है, जो उस पाकजात की इबादत में दखलअन्दाजी करने की जुर्रत करे? वह शैतान इतना दुस्साहसी है कि खुदा से उसे खौफ नहीं। आखिर पूजा-नमाज में तो ईश्वर का बन्दा है। वह बन्दा ही अरबी भाषा में कह रहा है कि 'अऊजोबिल्लाहे मिनश्शैतानिर्रजीम' यानी- मैं ईश्वर की पनाह या शरण मांगता हूं शैतान मरदूद से।

निश्चित रुप से ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा में पढ़ा जाने वाला यह अरबी वाक्य, यह साबित कर रहा है कि शैतान मरदूद कहीं न कहीं उसी बन्दे के साथ है। वह शैतान है- हमारी ईच्छाएं, अहंकार, काम, क्रोध, मोहमाया, प्रतिशोध, धन-कारोबार, परिवार प्रेम, सन्तान प्रेम, रुचिकर वस्तुएं आदि जो दिल-दिमाग और विचारों के माध्यम से ईश-पूजा की एकाग्रता में बाधा पहुंचाती हैं, इसलिए जो चीजें खुदा की याद से दूर करें या खुदा की याद में अपनी याद को भी जगाती रहें, वही मरदूद शैतान हैं। इन्हीं शैतानों से बचने के लिए बन्दा हर नमाज या सत्य ईश-पूजा में कहता है कि ऐ मेरे पाक परवरदिगार मुझे इन शैतान मरदूद से सुरक्षित रखिए, मुझे आपकी ही पनाह चाहिए यानी ऐ मेरे प्यारे पाकजात मुझे आपकी ही याद हर पल, हर सांसों में चाहिए। प्रशंसा-सना खुदा की। पूजा खुदा की। यादें भी हर घड़ी-हर सांस में उस अल्ला-ओम् की ही रहे, यही है उस पाक अजमत वाले प्रभु, परमेश्वर, रहमान और रहीम की पनाह। यही है उस निर्मल, पवित्र, वहदहू ला शरीक की शरण में रहना। हम नमाज या पूजा में शैतान मरदूद से पनाह इसीलिए मांगते हैं ताकि हमारे नफ्सीयाती शैतान का वजूद खत्म हो जाए और हममें अल्ला हो अल्ला या ओम्-ओम् की गमकती खुश्बू ही महकें उठे। यही है शैतान मरदूद से खुदा की स्थाई शरण की प्रार्थना करना।

अब हमें अपनी नमाज या ईश-पूजा में गौर करनी चाहिए कि हम शैतान मरदूद से कहां तक सुरक्षित हैं। हम खुदाए बुलन्द की पनाह में कब तक या किस वक्त तक रहते हैं। जब तक हम हर पल, हर सांस में उस पाकजात ईश्वर की शरण में नहीं रहते तो यह नमाज का 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' की प्रार्थना हमारे लिए सार्थक कैसे होगी? नमाज या सत्य पूजा की हकीकत में यह शैतान मरदूद काफी बाधक है। इसी कारण नमाज या ईश-पूजा की सच्ची प्रार्थना में उससे पनाह मांगी गई और उस एक पवित्र परम सम्माननीय प्रभु की शरण में जाने की बात की गई।

इसके बाद हम 'तस्मीया' यानी बिस्मिल्लाहहिर्रहमानीर्रहीम' पढ़ते हैं। अल्लाह या ईश्वर, गॉड के नाम से आरम्भ करता हूं, जो रहमान और रहीम है। अब हमने उस रहमान और रहीम के नाम से शुरु किया तो पढ़ा सूरह फातेहा। फिर हमने यूं प्रशंसा शुरु की- समस्त प्रशंसाएं या तारीफ उस परमेश्वर, खुदा या गॉड के लिए है, जो सारे सृष्टि या सारी दुनियां का पालनहार है। हम प्रशंसा कर रहे हैं उसी एक रब की जो केवल अरब या अमेरिका या लन्दन या भारत या चीन जैसे राष्ट्रों का ही रब नहीं है। वह रब है चौदह लोकों का, वह रब है अट्ठारह हजार या उससे भी अनन्त आलम का। हम प्रशंसा

'रब्बल आलमीन' या सारे आलम के रब की करते हैं। हमारा रब या पालनहार किसी एक राष्ट्र या विश्वदेश का स्वामी नहीं है। वह तो हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, बौद्ध या हर जीव, वनस्पति, सूरज, चांद, जमीन-आकाश तथा कण-कण का स्वामी है। वही सर्वमहान रब है। वह कितना प्यारा रब है, जो कुफ्र, शिर्क, बिदअत में जिन्दगी बसर करने वालों को भी माफ करता है। किसी की तौबा कुबूल करने में इन्कार नहीं करता। बन्दा उसका नेक है या बद, अच्छा है या बुरा, लेकिन वह सब का पालन करता है। हम सब उसी 'रब्बल आलमीन' की प्रशंसा करते हैं। इसी लिए उसे कहते हैं कि वह रहमान और रहीम है। वही ईश्वर, रब, गॉड है, जो प्रलय या कयामत का स्वामी है। हम उसी पवित्र सर्वमहान शक्तिशाली प्रभु की पूजा करते हैं और उसी से मदद मांगते हैं। हम उसी से यह प्रार्थना भी करते हैं कि ऐ महान सर्वश्रेष्ठ प्रभु हमें अपने उस सीधे सत्य मार्ग पर चला, जिस सत्य मार्ग पर चले लोगों को तूने अपने पुरस्कार से पुरस्कृत किया है। हमें ऐ पाक परवरदिगार उस रास्ते पर न चलाना, जिनसे तू क्रोधित हुआ तथा जो लोग तुम से गुमराह हुए।

यह सूरह फातेहा अरबी जुबान में तो है, मगर इसके भावार्थ से प्रकट है कि नमाज या बन्दगी करने वाला बन्दा, उससे यही प्रार्थना भी करता है कि हमें सीधी राह पर चला। ईश्वर का सीधा या सत्य मार्ग क्या है, वह भी इस प्रार्थना में स्पष्ट है। ईश्वर का वह सीधा रास्ता हम मांग रहे हैं, जिस रास्ते पर चलने वालों को वह पुरस्कार देता है। हमें ईश्वर का वह रास्ता नहीं चाहिए जो हमें ईश्वर के विरुद्ध चलाए तथा ईश्वर नाखुश हो जाए। हम नमाज रुपी सत्य ईश-पूजा में यही पढ़ते और कहते हैं। क्या हमें यह मालूम है कि ईश्वर, अल्लाह या गॉड का सत्य पथ क्या है? यह ईशारा इस प्रार्थना में अवश्य है कि ऐ मेरे रब हमें उसी रास्ते पर चलाना, जिस रास्ते पर चलने वालों को तूने पुरस्कृत करने का वचन दिया है। यह पुरस्कार या ईनाम वाला मार्ग क्या है? हम पूछें किससे? किसी ने मार्ग भी बताया तो कैसे यह समझ पाएंगे कि खुदा या प्रभु का ईनाम सचमुच क्या है?

यह सूरह फातेहा, नमाज की आत्मा है। बन्दे की इबादत का तराजू है। यह वह ईश-पूजा या सच्ची इबादत का आईना है, जिससे बन्दा यह पहचान कर सके कि हम खुदा की सच्ची राह पर हैं या खुदा से दूरी वाले रास्ते पर। यह तो स्पष्ट है कि खुदा की राह सीधी है। यहां सीधी राह का मतलब हम क्या निकालेंगे? क्या इस्लाम की राह सीधी है या सनातन की राह सीधी है? हजरत मूसा या श्री मोजेस की राह सीधी है या श्री ईसा या श्री जेसस क्राईस्ट की? इस्लाम के मायनी तो उस एक पवित्र ईश्वर के समक्ष आत्म-समर्पण है। यह आत्म-समर्पण जो करे तथा ईश-दूत को ईश्वर का ईश-दूत स्वीकार करे, वह मुसलमान कहलाता है। हम मुसलमान हैं, तो हमारे पास खुदा का ईनाम या पुरस्कार है या नहीं? यह देखना होगा। अगर खुदा का इनाम हमें प्राप्त है, तो हम उस ईश्वर-अल्लाह के सीधे रास्ते पर हैं। अगर हमारे पास ईनाम नहीं, फिर तो हमारा रास्ता इस सूरह फातेहा के

अनुसार ईश-विरोधी तथा ईश-अप्रसन्नता वाला है। हो सकता है, हम सीधे रास्ते पर चल रहे हों, मगर हमसे कोई भूल-चूक हो रही हो। इसकी जांच तो कर लेनी चाहिए। सूरह फातेहा का यह अरबी भाषा में बन्दे के लिए ईश्वर का दिया सन्देश है, जो हर बन्दे पर लागू है। यह मात्र किसी मुसलमान या इस्लामधर्मी की बात नहीं है। यह वह तराजू है, जिस पर हर ईश्वर का बन्दा अपनी सच्चाई को तौल सकता है। हम अपनी पूजा, नमाज, हज, रोजा, व्रत, भजन, कीर्तन, यज्ञ, प्रार्थना, वर्शिप, उपासना जो भी करने वाले हैं, तो अपने आप में तलाश करें कि ईश्वर, रब, गॉड, निरन्जन, अहुरमज्द का पुरस्कार मेरे पास है या नहीं? यह कसौटी है कि हम सच्चे ईश-पथ पर हैं या ईश-विरोधी पथ पर। अथवा रास्ते में कहीं खो गए हैं?

आदमी की पैदाईश से पूर्व ईश्वर ने अग्नि से जिन-जिन्नात को पैदा किया था। अग्नि से उत्पन्न जिन्नात में इब्लीस नामक खुदा का वह बन्दा भी था, जिसने रब की निःस्वार्थ पूजा-उपासना छः लाख साल से भी ज्यादा की थी। ईश्वर उसकी पूजा से प्रसन्न हुआ। उसे ईनाम या पुरस्कारस्वरुप अपने नूर से उत्पन्न फरिश्तों का उस्ताद या मोअल्लिम बना दिया। इब्लीस जब ईश्वर के सीधे रास्ते पर था, तभी तो उसे ईश्वर ने पुरस्कृत किया। हजरत आदम या श्री एडम या श्री मनु से इन्सान की जन्मकथा आरम्भ हुई। मनुष्य रुप में उस ईश्वर ने विभिन्न नामों से अपने ईश-दूतों को धरती पर भेजना आरम्भ किया। अब जो ईश-सन्देश मानव समाज को ईश-दूत के माध्यम से मिले, उसमें भी ईनाम या पुरस्कार की ईश्वरीय घोषणा कायम रही। तभी तो सूरह फातेहा के अरबी भाषा में भी यह बात आयी कि चला हमको सीधे रास्ते पर, उन लोगों के रास्ते पर जिन पर तूने ईनाम फरमाया। यानी स्पष्ट है कि ईश्वर का सीधा रास्ता वह है, जिन पर तमाम लोगों को पुरस्कार दिया जा चुका है। स्पष्ट है कि हुजूर नबीए पाक हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के पहले भी अल्लाह ने अपने सीधे रास्ते पर चलने वालों को पुरस्कृत किया है। ईश्वर के ईनाम पाने वाले बन्दे हैं जो इनाम पा चुके हैं। उन्हीं खुदाई ईनाम पाए हुए लोगों के रास्ते पर चलने की प्रार्थना हम कर रहे हैं। इसलिए कि ईनाम वाला रास्ता ईश्वर का सच्चा और सीधा रास्ता है। बाकी सभी ईश-पुरस्कारहीन मार्ग, ईश्वर का सच्चा रास्ता नहीं है। अब हम ईश्वर या खुदा के ईनाम को कैसे जाने और पहचानें। हम देख रहे हैं कि नमाजी हैं, हम पूजापाठी हैं। हम मस्जिद, मन्दिर, चर्च आदि में नियमित जाते हैं। हम कुरआन, वेद, रामायण, भगवद्गीता, उपनिषद, पुराण, बाईबिल, तौरेत, जब्बूर आदि के नियमित पाठक हैं। हर धार्मिक-मजहबी कामों में हमारी बढ़-चढ़ के भागीदारी है। हममें तमाम घर-बार छोड़कर वैरागी हैं। तमाम मस्जिद, मन्दिर, चर्च जैसे पावन श्रद्धास्थली में रहते हैं। अनेक सुनसान, वीरान स्थानों पर या जंगल, पहाड़ अथवा जलसमाधि में निमग्न हैं। हमें यह तलाश करना है कि हममें या उनमें ईश्वर का ईनाम किसे प्राप्त हैं?

ईश्वर के ईनाम या पुरस्कार का दूसरा नाम 'ईश्वर की चिर-स्थाई यशकृपा' है। इसी का दूसरी

भाषा में नाम 'वेलायत' है। इसी को 'फैजाने इलाहिया' भी कहते हैं। यही ईश्वरीय पुरस्कार अपने उन बन्दों के लिए निर्धारित है, जो ईश्वर के सीधे रास्ते पर चलें। जिन्हें यह ईनाम प्राप्त् है, उन्हीं को दुनियां कामिल पीर या वली-औलिया या आध्यात्मिक सद्गुरु अथवा साधु, महात्मा या आध्यात्मिक योगी आदि नामों से पुकारती है। ईनाम न पाने वाले बन्दे, इन्हीं ईश्वर पुरस्कार प्राप्त ईश्वर के प्रियजनों के पास जाते-आते हैं। पुरस्कार के पूर्व वह बन्दा था, अब वही बन्दा ईश्वरीय पुरस्कार पाकर ईश्वर का दोस्त बन गया है। वह है प्रत्यक्ष रुप में बन्दा, मगर ईश्वर के सच्चे रास्ते पर चलते रहने से उसे उस पाकजात ने अपना दोस्त बना लिया है। अब इस खुदा के दोस्त से खुदा के दिए ईनाम दुनियां में निरन्तर प्रकट होते रहते हैं। दुनियां उन्हें या गौसे पाक, या ख्वाजा गरीब नवाज, या बाबा हाजी मलंग, या बाबा हाजी अली, या बाबा निजामद्दीन औलिया, या बाबा ताजद्दीन औलिया कहकर पुकारती है। खुदा के यह प्यारे दोस्त फौरन उनकी सुनते हैं। खुदा के बन्दे ने खुदा के बन्दे को नहीं, खुदा के दोस्त को 'या' कहकर पुकारा है। बन्दा जिन्दा होता है फिर मुर्दा। बन्दे में यह कुव्वत कहां है, जो बदन जाने के बाद किसी की पुकार सुने। मगर खुदा का दोस्त कयामत तक अपने चाहने वालों की पुकार सुनता रहेगा, वह पुकारने पर खुदाई-ईनाम की कुव्वत से उन्हें मदद भी देता रहेगा। क्योंकि उसकी दोस्ती उस वहदहू ला शरीक से है, जो या हईयो या कईयूम है। वह खुदा एक है और सर्वमहान है। वह खुदा हमेशा से जिन्दा और कायम है। उस खुदा को नींद या ऊंघ नहीं। ऐसा पाकजात, अपना दोस्त किसी मुर्दा इन्सान या ऊंघने-सोने या हमेशा के लिए मर जाने वाले इन्सान को कैसे बना सकता है? उसने अगर किसी इन्सान को अपना ईनाम दिया, तो उस ईनाम पाने वाले को अपने दोस्तों की सूची में सूचीबद्ध कर लेता है। अब वह दोस्त है। खुदा की दोस्ती इतनी सच्ची की दोस्त चाहता है बारिश हो तो पानी बरसे। दोस्त ने चाहा, मुर्दा जिन्दा हो तो जिन्दा हो उठे। दोस्त ने कहा दरिया खुश्क हो, तो खुदा कह दे- खुश्क हो जा। दोस्त कहे कि इसकी मुश्किल दूर हो, तो खुदा कहे जा, दूर किया। यह है खुदा की दोस्ती और यही है उस एक पवित्र ईश्वर का पुरस्कार। क्या कोई खुदा का इबादतगुजार बन्दा भी इस तरह जो कह दे, वह हो जाता है? **यही फर्क खुदा के ईनाम न पाने वाले और ईनाम पाने वालों के मध्य है।** इसीलिए नमाज में सूरह फातेहा के जरिए बन्दा यह दोआ मांगता है कि ऐ मेरे रब, मुझे भी ईनाम पाने वालों के सीधे रास्ते पर चला।"

सर इकबाल अली अहमद ने सविस्तार बताया- "अल्लाह के वली-औलिया की राह अल्लाह का सीधा रास्ता है। दुनियां में वली-औलिया अपने कामिल पीर की खानकाह से पैदा हुए। खानकाहें या आध्यात्मिक आश्रम की शिक्षा-दीक्षा खुदा के बन्दे को खुदा का ईनाम दिलवाकर खुदा का दोस्त बना देती हैं। जिन्हें सीधे रास्ते की सचमुच तलाश है, वह किसी कामिल पीर की तलाश करे। अगर सच्चा पीर मिल गया, वह बताएगा उस पाकजात की सच्ची पूजा, सच्ची नमाज। जिसे पढ़ने पर खुदा

अपनी खुशी से ईनाम देता है। हम नमाज में सूरह फातेहा बारम्बार पढ़ते हैं। खुदा से उसके ईनाम वाले सच्चे रास्ते की मांग करते रहते हैं। मगर हम सच्ची राह की तलाश नहीं करते। क्या हम इस उम्मीद में बैठे रहते हैं कि खुदा हमें खुद अपने ईनाम वाले रास्ते पर एक दिन चलाएगा? या यह यकीन रखते हैं कि हम नमाजी, हाजी या पाबन्द इबादतगुजार हैं, इसलिए खुदा का ईनाम हमें हासिल है? क्या हमें ईनाम हासिल है? अगर हां, तो आप तो खुदा के दोस्त बन गए। फिर तो जो बात खुदा के दोस्तों से हर पल जाहिर होती है, वह आपसे जाहिर क्यों नहीं होती? इसी सूरह फातेहा को पढ़कर हजरत अली करमुल्लाह वजहू ने टूटे हाथ को जोड़ दिया था। मगर हमारे पढ़ने से किसी के हाथ या बदन का दर्द भी दूर नहीं होता। आखिर क्यों? सूरह फातेहा तो वही है। हजरत अली ने इसे ही पढ़ा था। फिर वह असर हमारे पढ़ने में आज क्यों नहीं है? सूरह फातेहा अरबी में खुदा का सन्देश है, जो बन्दे के लिए बतायी गई। बन्दा खुदा की बारगाह में इसे पढ़के पेश करे। यह उस पाक रहीम व रहमान् का कितना बड़ा करम है, अपने बन्दों पर। इसीलिए इसके पढ़ने के पूर्व 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम, बिस्मिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम' पढ़ना पढ़ता है। यानी ऐ अजमतवाले मेरे पाक रब मैं आपकी पनाह मांगता हूं शैतान मरदूद से। अल्लाह के नाम से शुरु करता हूं जो रहमान और रहीम है।

यह पढ़ने पर हम शैतान मरदूद से बचकर अल्लाह की पनाह में आए। अब हमें अपने अन्दरुनी हालात पे गौर करना है कि हम में अल्लाह मौजूद है या नहीं। अगर नहीं तो अभी हम शैतान की पनाह में हैं। अल्लाह की पनाह में नहीं हैं। हम जब तक गैर-ख्यालों से खाली न हो जाएं, सिर्फ जुबानी कहते रहने से अल्लाह की पनाह में नहीं होंगे। बन्दा, अल्लाह की पनाह में पहुंचा, तब वह कहे कि अल्लाह के नाम से शुरु किया, जो रहम वाला और दयावान है। अल्लाह का बन्दा नफ्सीयाती शैतान को मरदूद कह कर अल्लाह की पनाह में आ गया। अल्लाह खुश हुआ कि बन्दे ने हमारी पनाह चाही। मेरा बन्दा शैतान मरदूद की पनाह में नहीं रहना चाहता। वह बन्दे के रहमान और रहीम कहने पर खुश है कि मेरे बन्दे ने मुझसे रहम की भीख मांगी है। मैं उस पर रहम करुंगा, क्योंकि उसने मेरे नाम से मेरे कलाम या ईश-सन्देश को शुरु करता है। सूरह फातेहा अब बन्दा पढ़ता है तो वह अल्लाह जो रहमान और रहीम है। वह अल्लाह जो बन्दे को शैतान मरदूद से पनाह देने वाला है। अब वह रहमान रहम करने लगता है। बन्दे ने अल्लाह के गुणों में से एक गुण के साथ रहमान और रहीम कहा है, इसलिए वह रहम करेगा, वह दया करेगा। अगर सिर्फ यह कहा जाता कि अल्लाह के नाम से शुरु करता हूं तो यह डर था कि खुदा कहीं हमें अपने इन्साफ के तराजू पर न तौल दे। मेरी गल्तियां गुनाह तो रहमान या रहीम ही माफ करेगा, क्योंकि यह रहम की सबसे बड़ी सिफात या सर्वोच्च गुण भी उसी में है। इसलिए हम कहते हैं कि अल्लाह के नाम से सूरह फातेहा शुरु करता हूं या अल्लाह के नाम से अल्लाह के किसी भी पाक आयते करीमा को शुरु करता हूं, जो अल्लाह सबसे आला रहमान,

भी है और सबसे बड़ा रहीम भी है। इसीलिए हर काम के शुरु करने से पहले 'बिस्मिल्लाहहिर्रहमानीर्रहीम' कहना, ईश्वर की दया, कृपा को पाने का सर्वोच्च माध्यम है। सूरह तौबा को छोड़कर अन्य कुरआन की आयतों के पाठ में 'बिस्मिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम' पहले कहके पढ़ने का यही रहस्य है। नमाज जैसी पवित्र ईश-पूजा में भी सूरह फातेहा के पूर्व इसका पढ़ना, इसी कारण शामिल हुआ ताकि वह पवित्र अल्लाह, जो रहमान और रहीम है, वह मेरी प्रार्थना अपने सबसे बड़े रहम से कुबूल कर ले।

नमाज में सूरह फातेहा के बाद कुरआने पाक की कोई भी सूरह छोटी या बड़ी पढ़ी जाती है। उसके बाद हम तकबीर कहते हैं कि अल्लाहो अकबर। हम कहते हैं- "ईश्वर-अल्लाह सर्व महान है। फिर झुकते हैं, इसी झुकने को रुकू कहा जाता है। और रुकू में हम दिल से पढ़ते हैं- "सुबहानअ रब्बिल अजीम" यानी ऐ मेरे अजमत वाले रब (पालनहार) आप पवित्र हैं। हम तीन या पांच या सात बार अपने रब की प्रशंसा इस अरबी शब्द से बयान करते हैं। फिर कहते हैं- 'समेअल्लाहो लेमन हमेदह्' यानी अल्लाह ने उस बन्दे की सुन ली, जिसने उस अल्लाह की प्रशंसा- स्तुति की। उसके बाद यह इकरार किया जाता है कि- "रब्बना लकलहम्द' अर्थात- सारी प्रशंसा उस पाक रब के लिए है। अब हम रुकू से सीधे खड़े हो जाते हैं। फिर अल्लाहो अकबर यानी ईश्वर सर्वमहान है। यह कहकर सजदे में चले जाते हैं। सजदे में हम तीन या पांच या सात बार कहते हैं- 'सुबहानअ रब्बिल अला।' मेरा पालनहार आलीशान है, पवित्र है। इस तरह दो बार सजदा करते हैं। अब पुनः अल्लाहो अकबर कहकर हम खड़े हो जाते हैं। नमाज की एक रेकात पूरी हो गई। दूसरी रेकात में सजदे के बाद हम बैठ जाते हैं। फिर 'अत्तहियात' पढ़ते हैं। यह 'अत्तहियात' भी प्रार्थना या दोआ है। जरा इस दोआ की विशेषता पर एक नज़र डालें।"

सर इकबाल अली अहमद ने नमाज की इस दोआ के बारे में यूं अपना विचार दिया- "हम अल्लाह के समक्ष यह कहते हैं कि ऐ अल्लाह पाक हमारी हर एक इबादत आपके लिए है। यही बन्दे का ईश्वर के समक्ष आत्म-समर्पण करने का जुबानी कौल है। वह कहता है कि सलाम हो तुम पर ऐ नबी और ऐ नबी आप पर अल्लाह की रहमत व बरकत भी हो। जरा सोचे, वह नबी कौन हैं, जो जिन्दा हैं तथा जिन पर हम हर नमाज में सलाम कर रहे हैं और उनपर अल्लाह की रहमत व बरकत भी भेज रहे हैं। वह नबी अगर मुर्दा होते या सरापा बशर की सिफात वाले होते, तो खुदा की खास पूजा में उन्हें हम सलाम न करते। उन पर अल्लाह की रहमत व बरकत हो, यह कभी न कहते। कुरआन में अल्लाह ने नबीए अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व सल्लम को 'रहमतललिलआलमीन' यानी सारे आलम के लिए रहमत कहा है। अल्लाह ने अपने को सूरह फातेहा में 'रब्बल आलमीन' यानी सारे आलम का रब कहा है। इससे प्रकट हुआ कि ईश्वर समस्त एवं सम्पूर्ण सृष्टि का पालनहार है तथा नबीए अकरम हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम सारे सृष्टि के लिए ईश्वर की रहमत हैं। ईश्वर की रहमत क्या

है? निरोगी जीवन, खुशहाल जिन्दगी, विवादहीन दिनचर्या, स्वतन्त्र और कष्टहीन जीवन–यापन आदि रहमत है। ईश्वर की बरकत क्या है? हर हाल में खुशहाली, हर कदम पे सफलता, हर दशा में सुखद जीवन। इस तरह से यह बरकत के मूल तत्व है। रहमत और बरकत में जीवन है। यह शब्द निर्जीव तत्व के लिए प्रयुक्त नहीं होते। रहमत व बरकत वहीं है, जहां जीवन है। इसलिए यह शब्द नमाज जैसी पवित्र ईश–पूजा में आए। जो ईश्वर का नबी, रसूल, ऋषि है, वह शारीरिक रुप में हो या न हो, वह जीवित है। क्योंकि वह अल्लाह का नबी है। अल्लाह, हमेशा जिन्दा रहने वाला है। अल्लाह का नबी भी हमेशा जिन्दा रहेगा। अल्लाह की मार्फत व निस्बत जिसे हासिल है, वह लाफानी जिन्दगी पा गया। उसे न मौत है और ना फौत। हमारी आंखें उसे मौत या फौत के आगोश में देखती हैं, मगर वह अल्लाह के पास है, अल्लाह में वस्ल है। अल्लाह में फना है। जो अल्लाह में फना है, वह बका में है। वहीं बाकी है। वह अल्लाह में फना के कारण तरोताजा है। उसकी रहमत व बरकत सब कुछ कायम है। इसलिए बन्दा नबी को सलाम करके उनकी खुदाद रहमत व बरकत का इकरार करता है।

हम इसी दोआ में कहते हैं– सलामती हो हम पर और खुदा के नेक बन्दों पर। इस शब्द सलामती में भी जिन्दगी की रवानी है। हम नमाजी बन्दे पर सलामती हो। नमाज पढ़ने वाला बन्दा जिन्दा हैं। वह बदन के साथ है। उस बन्दे पर सलामती हो। लेकिन वह नेकबन्दे कौन हैं, जिन पर खुदा की सलामती हो? अल्लाह के नेकबन्दों की खुली पहचान यहां नहीं बताई गई। मगर हम हर नमाज में यह कहते हैं कि ऐ अल्लाह तेरे नेकबन्दों पर सलामती हो। पता चल रहा है कि जरुर अल्लाह के नेकबन्दे हैं। अल्लाह के नेकबन्दे को अल्लाह के ईनाम से समझा जा सकता है। जब वह बन्दे नेक बने, तभी तो अल्लाह ने उन्हें अपना ईनाम दिया। ईनाम वाले बन्दे खुदा के समक्ष उसके खास और नेकबन्दे हैं। वही वली–औलिया, पीर हैं, जिनकी सलामती की दोआ हम खुदा से मांग रहे हैं। इस प्रार्थना का सत्य आशय यूं है कि ऐ प्रभु, ऐ मेरे रब तेरे नेकबन्दे सलामत हैं, हम पर भी उन्हीं की तरह सलामती अता कर। यानी ऐ पाकजात तू हमें अपनी सलामती वाले नेक बन्दों में शुमार कर ले। हमें भी तू अपना नेकबन्दा कुबूल कर ले ताकि मुझे भी तेरी अताकर्दा दायमी (चिरस्थाई) सलामती हासिल हो जाए। इसके बाद दरुदो शरीफ में हम कहते हैं कि ऐ अल्लाह पाक तू हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम और उनकी आले–औलाद पर अपनी रहमत व बरकत अता कर जिस तरह तूने अपने पैगम्बर हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम एवं उनकी आले–औलाद पर अता की।

इस दरुद शरीफ में हम कहीं भी यह नहीं कहते कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला की रुह पर या उनकी आल (सन्तान) की रुह पर रहमत व बरकत दे। कोई फौरन कह देगा कि रुह के लिए रहमत व बरकत नहीं होती। रहमत और बरकत तो जिन्दगी वाले के लिए है। इस नमाज के दरुदे पाक से और भी खुलासा हुआ कि अल्लाह के नबी ही नहीं उनके आले–पाक भी बजाहिर हैं या नहीं, मगर

वह जिन्दा हैं। वरना हर नमाज में हम यह दरुद शरीफ क्यों पढ़ते रहते? अब आईए- देखें कि नबीए-पाक के आल कौन हैं? हजरत सैय्यदा बीबी फातमा आपकी आल हैं। जिन्हें सरकारे खातूने-जन्नत का सम्मान ईश्वर की तरफ से प्राप्त हैं। आपके शौहर हजरत अली मुर्तुजा हैं, जो सरकारे शेरे खुदा के लकब से ईश्वर द्वारा सम्मानित हैं। हजरत अली, हजरत नबीए अकरम सल्ले अला व सल्लम के खास खलीफा और चचेरे भाई भी हैं। इसलिए यह भी आल ही हैं। हजरत इमाम हसन व हजरत इमाम हुसैन, ये दोनों, सैय्यदा फातमा सरकार के लख्ते जिगर हैं। हुजूर नबीए पाक ने हजरत अली, बीबी फातमा, हजरत इमाम हसन व हजरत इमाम हुसैन तथा स्वयं को पंजतन पाक कहा है। इसलिए यह सारे पाक (पवित्र) आले पाक (पवित्र सन्तान) हैं। इनके सारे आले-पाक भी बारह इमाम कहलाते हैं। वह भी आले-पाक हैं। इन पाक पंजतन की आले-पाक में हजरत सैय्यदना गौसे-पाक, हजरत दातागंज बक्श, हजरत ख्वाजा गरीब नवाज, हजरत सैय्यद शाह अब्दुर्रहमान उर्फ बाबा हाजी मलंग, हजरत सैय्यद निजामद्दीन औलिया, बाबा ताजुद्दीन औलिया, हाजी वारिस अली शाह जैसे बेशुमार आले-पाक (पवित्र सन्तान) हैं। हम नमाज में नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम के साथ-साथ उनके इन आले-पाक के लिए भी रहमत व बरकत मांगते हैं।

कितनी हैरत की बात है कि जो नमाज सिर्फ उस पाक रब या ईश्वर की सच्ची इबादत है, उसमें भी नबीए पाक और उनके आले-पाक का जिक्र हम दरुद शरीफ के रुप में करते रहते है। फिर किस मुंह से हम तौहीने रसूल (ईशदूत अपमान) और तौहीने आले रसूल (ईशदूत सन्तान का अपमान) करने में लगे रहते हैं। अल्ला-अल्ला वह कौन से इस्लाम परस्त लोग हैं, जिनकी नमाज में अगर नबीए पाक का ख्याल आ जाए तो यह उनके लिए काफी बुरी अलामत (लक्षण) है? क्या वे नमाज में इस दरुद शरीफ और अत्तहिय्यात को नहीं पढ़ते? क्या जो अल्लाह के रसूल ने नमाजें दीं, उस नमाज से अलग हट कर ऐसे लोग नमाजें अदा करते हैं? प्यारे नबी पे अल्लाह ने नबूवत खत्म फरमा दी है। अब उनके बाद अल्लाह की तरफ से कोई रसूल या नबी या ऋषि आने वाला नहीं है। फिर वह कौन से नबी हैं, जो कहते हैं कि नमाज पढ़ने में अल्लाह के रसूले पाक सल्लललाहो अलैहे व सल्लम का ख्याल आना, काफी बुरी बात है? हजरत मेंहदी अलैहिस्सलाम पैगम्बर पूर्व से घोषित हैं यानी वह पहले से मौजूद हैं। वे खातमुन्नबी सल्ले अला व सल्लम से पूर्व से मौजूद हैं। उन्हें बस दुनियां में प्रकट होना बाकी है। हजरत ईसा अलैहिस्सलाम आ चुके, वे फिर आएंगे। जाहिर सूरत में यह दोनों नबी-पैगम्बर पूर्व घोषित हैं। रसूले पाक सल्ले अला व सल्लम के पूर्व घोषित यह नबी आखिरी नबी नहीं हैं। वे नबी के रुप में पूर्व घोषित होने से, जब भी आते-जाते रहें, वे आखिरी नहीं, बीच के नबी-पैगम्बर ही तो माने जाएंगे। आखिर हमारी नमाज में दरुद शरीफ के रुप में ताजीमे रसूलल्लाह भी तो शामिल है। अगर रसूले पाक और आले-रसूल की ताजीम हम नहीं कर पाते तो क्या हमारी नमाज दुरुस्त मानी

जाएगी।"

सर इकबाल अली अहमद साहब ने कहा- "हमने अत्तहियात और दरुद शरीफ के बाद नमाज में अन्तिम दोआ या प्रार्थना यह की कि ऐ मेरे अल्लाह हमने अपने नफ्स (इन्द्रिय) पर जुल्म किया है, इसलिए तेरे सिवा मेरे पापों को कोई क्षमा देने वाला नहीं। तू अपनी विशेष क्षमादान से मुझे माफ करके मुक्ति दे। मुझ पर दया कर। निस्सन्देह तू ही सर्वमहान क्षमादानी तथा अत्यन्त दयालु है।

यह प्रार्थना करके हम पहले दाहिने कन्धे फिर बाएं कन्धे की ओर सलाम फेरते हैं। कहते हैं- "सलाम हो तुम पर और अल्लाह की रहमत हो।" नमाज दो रेकात अब समाप्त हुई।

यही नमाज है, जिसे हम फजिर, जोहर, असिर, मगरिब और ईशा के नाम से पांच वक्त अदा करते हैं। इस पवित्र पूजा में हम अगर दिल-दिमाग और जुबान की एकाग्रता हासिल कर लें तो यह नमाज हमें खुदाई ईनाम पाने योग्य बना सकती है।"

19 - मजार और कब्र में भेद

वली-औलिया के प्रति दिल में श्रद्धा रखना, उनसे मिलना भी ईश्वर के मार्ग में बाधक नहीं है। हमें काफी ध्यान से पहले यह देखना होगा कि वली-औलिया, कामिल पीर या आध्यात्मिक सद्गुरु जिन्हें हम कहते हैं, वह हैं कौन? हमें यह जांच-परख भी करनी होगी कि वली-औलिया या कामिल पीरों के सम्पर्क में जाना ईश-कानून के अनुसार कहीं कुफ्र, शिर्क या बिदअत तो नहीं है? हम अगर किसी कामिल पीर की खिदमत करें, उनके बताए तालीम पर अमल करें, तो खुदा नाराज तो नहीं होगा।

पहले ध्यान से देखें तो हमें मालूम होगा कि हर पीर या जिसे वली-औलिया कहके हम सम्मान देते हैं, वह तो हमारी ही तरह खुदा के एक बन्दे है। उनके मां-बाप भी हैं, वह हमारी तरह ही समाज में और परिवार में रहते हैं। हमारे और उन में फर्क तो कुछ भी नहीं। फिर उन्हें समाज की तरफ से मान-प्रतिष्ठा दिया क्यों जाता है? उनके मृत्यु उपरान्त मजार निर्माण क्यों किया जाता है? अगर उन्हें किसी सार्वजनिक कब्रिस्तान में भी दफनाया जाए, फिर भी मजार उनकी बनती है। आखिर क्यों? उत्तर प्रदेश के जिला- गाजीपुर अन्तर्गत गांव- रक्शहां है। वहां के कब्रिस्तान में ही शाह सैय्यद शमसुद्दीन बाबा की दिलकश मजार है। लखनऊ के हजरतगंज क्षेत्र में कब्रिस्तान है। राज्यपाल भवन से आगे जाने पर माल एवेन्यू रोड स्थित इस कब्रिस्तान में हजरत नबी रजा शाह बाबा की खुबसूरत मजार स्थित है। इस तरह के अनेक ऐसे मजार कब्रिस्तान में ही बनाए गए हैं। क्यों सामान्य मुर्दों की भांति इन्हें कच्ची कब्रों के तौर-तरीके से अलग करके मजार के ढांचे में रखा गया।

खुदा के कानून में बदन से रुह निकलने के बाद इन्सान मुर्दा ही तो होता है। फिर मुर्दे शरीर को दफनाने में सामान्य कब्र या विशिष्ट कबनुमा मजार का अन्तर क्यों रखा जाता है? इतना ही नहीं सामान्य कबों पर तो इस्लाम के अनुयायी यदा-कदा जाते हैं, मगर मजारों पर खुदा के हर बन्दे का जाना-आना प्रतिदिन लगा रहता है। हर धर्म के नर-नारी मजारों पर ईत्र, फूल, मिठाई व चादर लिए क्यों आते-जाते हैं? क्या ऐसे लोगों को यह पता नहीं है कि जिनके मजारों पर वह श्रद्धा-सुमन अर्पित कर रहे हैं, वह मुर्दा हैं। जो सशरीर नहीं, जिस आदमी को मृत्युगति पाए वर्षों बीत गए, उनके पास ईत्र, फूल, मिठाई या चादर लेकर जाने से क्या फायदा है? हम देखते भी हैं कि वह मजार के व्यक्ति हमारा ईत्र या मिठाई, फूल, चादर अपने हाथों में नहीं लेते। वह अपनी जुबान से हम से बात भी नहीं करते, फिर भी हम सब उनके नाम पर तरह-तरह के उपहार लिए आते-जाते हैं। आखिर सब कुछ देखने-समझने के बाद भी हम सब मजार का पीछा क्यों नहीं छोड़ते। सर्वधर्म समभाव जिसे कहा जाता है, इस कथन का प्रत्यक्ष चित्रण किसी भी मजार-दरगाह पर हमें होते रहते हैं। वहां हिन्दू-मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी आदि नामों में बंटे लोगों की एकता क्यों और कैसे कायम रहती है? मजार वाले ईश्वर के बन्दों को आखिर क्या देते हैं, जिससे वहां जाने वालों की श्रृखंला दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जा रही है?

हम मस्जिदों में नमाजें पढ़ते हैं। नमाज जो हमें पढ़ाते हैं, उन्हें हम इमाम साहब कहके पुकारते हैं। मसजिद को खुदा का घर कहा जाता है। नमाज पांच वक्त की वहां पाबन्दी से होती है। फिर भी कोई पंजवक्ता नमाजी इमाम साहब की वह इज्जत, अजमत नहीं कर पाता, जैसा मजारों-दरगाहों पर हम देखते हैं। आखिर क्यों? हम आलिम, मुफ्ती से फतवा लेने या दीन (धर्म) का हुक्म समझने भी जाते हैं। वह कुरआने-पाक और हदीसे-पाक की रौशनी में जो कुछ बताते हैं, हम उसका पालन करते हैं। इसके बावजूद हम उस अकीदत-मुहब्बत का इजहार उनसे नहीं कर पाते, जो मजार में पोशीदा रहने वालों के लिए करते रहते हैं। आखिर ऐसा क्यों होता है?

हमें हैरत है कि मजार में पोशीदा रहने वाले इस वक्त जाहिर में न तो नमाजें पढ़ाते हैं और ना हीं खुदा-रसूल के बारे में तकरीर (प्रवचन) या तब्लीग ही देते हैं, फिर भी हम लोग उनके दरों पर अपना घर-कारोबार छोड़कर जाते रहते हैं। आखिर इन मजारों में दफन लोगों में क्या है, जिससे यहां रोज-ब-रोज खुदा के बन्दों की भीड़ लगी रहती है। मैं अभी मन के इस द्वन्द में ही उलझा था, तभी विश्वविख्यात फकीर सर विलियम जे0 थामस उर्फ सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ श्री झरना शाह बाबा की कड़कती आवाज कानों में घुस गई। वे बोले- "ईश्के-खुदा में हर पल जो गर्क हो, ईश्के-रसूल में जिसकी आंखें हर पल महबूबे खुदा का दीदार करें, वही खुदा का वली है। बन्दे को मार्फते-इलाही का जाम उसका कामिल पीर पीलाता है। जब खुदा का आम बन्दा ईश्के-खुदा,

ईश्के-रसूल में दिवाना बन जाता है, तो वही बन्दा, आम बन्दा नहीं, खुदा का नेक बन्दा और वली बन जाता है। अब वह आम बन्दे से नेकबन्दा बनकर वली हो गया। इसलिए खुदा के वली की मजार बनेगी, वह खुदा के आम बन्दों की तरह आम मुर्दों के साथ कब्र में नहीं जाएगा। उसकी कब्र जहां भी होगी, वह मजार की सूरत में होगी। क्योंकि उसकी बन्दगी से खुदा राजी है। खुदा ने उससे खुश होकर उसे अपनी 'वेलायत' दे दी है। वह अल्लाह की वेलायत के कारण वली है। यह वेलायत खुदा का एक खास भेद है। वरना हर नमाजी, हर हाजी, हर आलिम, हर हाफिज और हर इबादतगुजार अल्लाह का वली हो जाता। इसीलिए वह अब आम बन्दा नहीं कहलाता, उसे खुदा का दोस्त और खुदा का नेकबन्दा कहते हैं।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह बोले- "बन्दे की बन्दगी जब तक खुदा की बारगाह में मकबूल होकर नेक नहीं होगी, वह वली के दर्जे तक नहीं पहुंच सकता। मकबूल बन्दगी की पहचान का नाम वेलायत है। इस सच्ची बन्दगी को जानने के लिए इन्सान को एक कामिल पीर चाहिए। आज दुनियां में जो भी वली-औलिया हैं, उनके पीछे उनके कामिल पीरों की नजरे-करम है। वरना खुदा का हर आम बन्दा अपनी पूजा-नमाज की बुनियाद पर खुदा का वली बन जाता। आज दुनियां में कब्र कम दिखाई देते, हर जगह मजार ही मजार सभी का बनता रहता। अल्लाह व रसूले-पाक की सच्ची मुहब्बत पाने वाले का नाम खुदा का वली है। जब तक वह खुदा की राह में पूजा-इबादत करता रहा, वह बन्दा था। जब उसकी नमाज में मेराज होने लगी, उसकी इबादत में खुदा-रसूल का दीदार होने लगा, उसे उस दयालु ईश्वर ने जब अपना बना लिया। तो वह खुदा का वली हो गया। यही वली की हकीकत है। किसी बन्दे की बन्दगी खुदा कुबूल करता है या नहीं? जब किसी बन्दे को इसी का ईल्म नहीं है, फिर वेलायत तो काफी बड़ी चीज है। मगर जिस बन्दे की निरन्तर बन्दगी से खुदा राजी व खुश होता है, तब वह उस बन्दे को अपना वली घोषित करके मकबूल कर देता है। ज्यादातर बन्दे अपनी पूजा-इबादतों के बदले में अपनी मगफेरत या मुक्ति के याचक होते हैं। तमाम बन्दे अपने लिए खुदा की जन्नत-स्वर्ग को भी चाहते हैं। यह सारी मांग रखने वाला अभी बन्दा है। लेकिन जब कोई बन्दा पूजा-इबादत सिर्फ इसलिए करे कि खुदा उससे राजी व खुश हो जाए, तो वही बन्दा, खुदा की वेलायत पा कर खुदा का वली बन जाता है। लेकिन शर्त है कि वह बन्दा किसी कामिल पीर की सोहबत में रहकर पाकजात की इबादत करे।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने समझाते हुए कहा- "अपनी बन्दगी को पहचानो। बन्दा क्या है, वली कौन है, जान जाओगे। खुदा की वेलायत आम नहीं, खास है। इसलिए हर आम बन्दा, खुदा का वली नहीं कहलाता। खुदा के खास का मकाम खुदा के पास है। जो खुदा के पास है, उसके दर पर दुनियां उसके पाए खुदा के ईनाम को लेने जाती है। वह खुदा ही है, जिसने अपने महबूब वली के

लिए आम दुनियां के दिलों में मुहब्बत, चाहत, राहत भर दी है। वली-औलिया के दर पे जाना खुदा की मुहब्बत और खुदा के दिए इनाम को पाना है। कामिल पीरों से निस्बत रखना, खुदा और रसूल तक पहुंचने का सच्चा माध्यम है। उनसे मुरीद होना, खुदा तक जाने का संकल्प करना है। इसमें कुफ्र, शिर्क, बिदअत नहीं। काफिर या मुशरिक या मुनाफिक बन जाने की गुंजाईश कहां है?

अल्लाह का वली फनाफिल्लाह (ईश्वर में गर्क) भी है और फनाफिर्रसूल (रसूले खुदा में डूबा) भी। उसकी कुर्बत में जाना अल्लाह व रसूल की बख्शिश पाना है। यह वली तो खुदा के न गैर हैं और ना रसूले पाक के गैर। फिर इन्हें गैर-खुदा कोई कहता फिरे, दुनियां इस झूठ को कुबूल कैसे करेगी। खुदा का बन्दा, बन्दा है, खुदा का दोस्त या वली, खुदा का आम बन्दा कैसे कहलाएगा? खुदा की बन्दगी बन्दे पर लाजिम है, उसी तरह ईश्के खुदावन्दी अल्लाह के वली पर लाजिम है। बन्दा, खुदा के होने पर यकीन करके उसकी बन्दगी करता है। मगर अल्लाह का वली, अल्लाह को बिना देखे ईश्क नहीं कर सकता। वह आशिके रसूल भी है, इस से जाहिर हुआ कि वह रसूले खुदा को भी देखता है, तभी तो आशिक हुआ। बिना देखे ईश्क और आशिक का कोई वजूद नहीं है।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह बोले- "ईश्क की आग बिना माशूक व मतलूब (अभीष्ट लक्ष्य) को देखे नहीं लगती। दीदार ही ईश्क की बुनियाद है। दीदार ही दीदार आशिक का कारोबार है। जब वह इसमें डूब जाता है, तो यही मन्जिल उसकी फना की मन्जिल बन जाती है। जो खुदा और खुदा के रसूल के दीदार में फना हुआ, वही वली है। जो कभी अल्लाह और कभी दुनियां में मशगूल है, वही अल्लाह का आम बन्दा है। उसे अल्लाह का खास बन्दा भी नहीं कह सकते। वली के पास अल्लाह व उसके रसूल के सिवा कुछ भी नहीं होता। जहां अल्लाह व रसूल ही हैं, वहां अल्लाह के बन्दे का जाना शिर्क या कुफ्र कैसे होगा? अगर हम अल्लाह व रसूल के सच्चे मानने वाले हैं, तो वली के पास जाना बिदअत भी नहीं है।

जैसे खुदा सारे इन्सानों का रब है, उसी तरह अल्लाह का वली, खुदा के हर-हर बन्दे का प्यारा है। जिस तरह हर बन्दे का खुदा है। खुदा का वली उसी तरह खुदा के हर बन्दे से प्यार करता है। जब खुदा सबका है तो खुदा का वली भी सारे जाति, धम, वर्ग के लोगों का है। खुदा में सर्वधर्म समभाव है, वली में इसी कारण सर्वधर्म समभाव पायी जाती है। आज मजारों पर उमड़ती भींड़ यह गवाही दे रही है कि सचमुच वह एक अल्लाह सबका है, क्योंकि अल्लाह के वली सभी के हैं। वली-औलिया शाने-खुदा (ईश-गौरव) के मजहर (प्रदर्शित कर्ता) हैं। खुदा कितना प्यारा है, वह कैसा दयालु है, वह कितना कृपालु है। खुदा के बन्दे, खुदा के वली के पास जा कर इसी खुदाई वेलायत (ईश-चिरस्थाई कृपा) को महसूस करते हैं। कोई वली-औलिया, खुदा नहीं है। मगर खुदा में फना होने से उससे खुदाई सिफतों का जुहूर होता है। यही खुदा की वेलायत है। ईश्वर की चिरस्थाई यश कृपा का नाम

वेलायत है। वली-औलिया के मान-सम्मान के पीछे यही खुदा की वेलायत है। वेलायत नहीं तो वली नहीं। खुदा की वेलायत नहीं, तो हम सिर्फ उसके बन्दे हैं। हम नेक हों या बद, बस उस एक मालिक के बन्दे हैं। हम पूजा, नमाज, हज, तीर्थ, रोजा-व्रत, जकात-दान आदि सारे नेक काम करते रहें, हम बन्दे हैं। जब बन्दे को खुदा की वेलायत हासिल होगी, तभी वह खुदा का वली है। उसे ही ईश-योगी या ईश्वर प्राप्त महायोगीराज के नाम से हम पुकार सकते हैं। वह ईशकृपायुक्त है, इसलिए मजार में रहेगा। हम ईशकृपाहीन हैं, इसलिए हमारा अन्तिम ठिकाना कब है।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ सर विलियम जे0 थामस, ईश्वर के वह प्यारे फकीर हैं, जिन्हें 'ईश्वर रत्न' भी कहा जाए तो कम है। उन्होंने ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा को ही 'वेलायत' कहा। सचमुच, वही खुदा की वेलायत की खुश्बू है, जो ख्वाजा गरीब नवाज, हाजी मलंग, हजरत निजामद्दीन औलिया, हजरत बाबा ताजद्दीन औलिया, हाजी वारिस अली शाह, हजरत जिन्दा शाह मदार, हजरत मटका पीर बाबा, हजरत मखदूम शाह माहीमी और अलाऊद्दीन साबिर कलियरी आदि की मजारों दरगाहों से आज भी गमक रही है। ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा की पहचान, हमारे वली-औलिया की मजारें हैं। सैकड़ों साल उन्हें भौतिक शरीर से अलग हुए हो चुका, मगर ईश्वर की 'वेलायत' ने उन्हें आज भी तरोताजा बना रखा है। ईश्वर जब बासी नहीं हो सकता, तो उसके वेलायत पाए वली के नाम और सम्मान हर दिन तरोताजा क्यों न रहेंगे। वली-औलिया, सूफी, कलन्दर, मलंग, दरवेश खुदाई गुलशन के महकते-गमकते फूल हैं। इनकी खुश्बू जिन्हें मिल जाए, वह ईश-सेवक से ईश-भक्त बन जाए। इनकी कृपा दृष्टि जिन पर हो जाए, वह ईश-प्रेम में मदमस्त हो जाए। इनकी सेवा जिन्हें नसीब हो, वह सेवक से मालिक बन जाता है। उर्दू भाषा में हम इन्हें ही कहते हैं- खादिम से मखदूम होना।

वली की मुहब्बत हमें खुदा की हकीकत से आगाह कराती है। वली की वेलायत हमें खुदा की इनायत से मालामाल कराती है। दुनियां के किसी भी वली ने खुदा के सिवा किसी भी गैर की पूजा नहीं की, फिर वली खुदा के बन्दे से अपनी या गैर की पूजा कैसे करा सकते है? लोगों का हुजूम उन्हें इसलिए प्यार करता है, क्योंकि वली की सच्ची निस्बत सच्चे खुदा से है।

चन्द लोग वली की वेलायत पर यकीन नहीं रखते। वह उन्हें खुदा का गैर समझते हैं। उन्हें खुदा और गैर-खुदा में अन्तर भी नजर नहीं आता। उन्हें यह भी समझ पाने में तकलीफ होती है कि औलिया-अल्लाह या अल्लाह का वली उन्हें क्यों कहा जाता है। वली को हिन्दी भाषा में उत्तराधिकारी कहना अनुचित नहीं होगा। वली-अल्लाह यानी ईश्वर का उत्तराधिकारी। क्या ईश्वर का उत्तराधिकारी, ईश्वर कृपा प्रेम से वंचित होगा। ईश्वर ने अपने सभी पूजकों को बन्दा क्यों कहा? वह अपने सभी बन्दे को अपना उत्तराधिकारी या अल्लाह का वली क्यों नहीं मानता है? इसलिए वली,

ईश्वर का गैर नहीं हो सकता। वह ईश्वर में है, ईश्वर के साथ है, इसलिए ईश्वर का उत्तराधिकारी है। ख्वाजा गरीब नवाज, ईश्वर के उत्तराधिकारी हैं, तभी तो ईश्वर की पैदा की हुई अनासागर उनके कहने पर खुश्क हुई। धरती, ईश्वर ने बनायी, मगर अजमेर की धरती पर बैठे ऊंटों को मानो धरती ने चिपका कर बैठाए रखा। अजमेर में पानी से भरा अनासागर और वहां की बेजुबान धरती ने ईश्वर के उत्तराधिकारी को पहचान लिया था। तभी तो इन दोनों ने ख्वाजा गरीब नवाज के हुक्म को माना। वरना ईश्वर निर्मित यह वस्तुएं, हमारी आपकी बातें नहीं मानती हैं। ईश्वर के करोड़ों बन्दे अनासागर या किसी झील या नदी से प्रार्थना करें कि तुम खुश्क हो जाओ या कहें की जमीन ऊंटों को या किसी को बैठाए रखना। मगर हमारी बात यह दोनों नहीं मानेंगे। जब अजमेर में ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने कहा कि अनासागर मेरे पास आ। वह फौरन सूख गई। अनासागर ने हुक्म का तत्काल पालन किया। बेजुबान अनासागर को यह इल्म था कि जिसने मुझे कायम रखा है, उसके ख्वाजा गरीब नवाज उत्तराधिकारी हैं। ईश्वर के चाहने से मैं जलमग्न हूं, ईश्वर के उत्तराधिकारी की ईच्छा मुझे जलहीन करने की है, तो फौरन हो जाऊं, वरना कहीं ईश्वर खफा न हो जाए। इसी कारण उनका आदेश धरती ने भी माना। राजा पृथ्वीराज के ऊंट जहां बांधे जाते थे, वहां से राजा के सिपाहियों ने ख्वाजा साहब को उठा दिया। वह जमीन से उठते हुए बोले– 'ऊंट तो बैठे ही रहेंगे।' सचमुच ऊंट वहां सुबह तक बैठे ही रहे। उन्हें धरती ने जैसे चिपका लिया था। धरती ने ईश्वर के उत्तराधिकारी वली को पहचान लिया था। वरना वह ख्वाजा साहब की मंशा को मानकर ऊंटों को नहीं चिपकाती। इस तरह की तमाम विचित्र बातें हमारे वली–औलिया से दुनियां के समक्ष प्रकट होती रहती हैं। हमें आश्चर्य है कि ईश्वर की हर जानदार और बेजुबान वस्तुएं वली की वेलायत को पहचानती हैं। मगर हम इन्सान होकर भी उन्हें नहीं पहचान पाते।

लोग 'या गरीब नवाज' या 'या गौसे पाक' अथवा 'या बाबा हाजी मलंग' चिल्लाते हैं। इस 'या' कहने पर भी चन्द लोगों को गम्भीर आपत्तियां हैं। ऐसे लोगों का कथन है कि केवल अल्लाह को ही या अल्लाह या या ईश्वर कहना उचित है। क्योंकि ईश्वर–अल्लाह ही हाजिर व नाजिर है। इस कथन से प्रकट हो रहा है कि आपत्तिकर्ताओं ने ख्वाजा गरीब नवाज, सरकारे गौसे पाक एवं बाबा हाजी मलंग आदि वली–औलिया को खुदा का गैर समझा। इन्हें खुदा का वली वे समझते तो कत्तई ऐसे विचार प्रकट न करते। ऐसे विचारक यह कैसे भूल जाते हैं कि दुनियां 'या पीर', 'या कुतुब', 'या वली', 'या अली' जिन्हें कहके पुकारती है, उन्हें खुदा की वेलायत हासिल है। इसी वेलायत को पाने में वे खुदा और उसके रसूल में फना हुए हैं। फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह की मन्जिलें पाने के बाद ही खुदा ने इन्हें अपनी वेलायत से नवाज़ा है। खुदा के इसी वेलायत रुपी ईनाम ने उन्हें बन्दे से खुदा का दोस्त बना दिया है। तभी तो 'या' कहने पर वह सुनते हैं। वे अपनी वेलायत से पुकारने

वाले की मदद भी करते रहते हैं। इन्हें पुकारने वाले मदद पाए हैं और मदद पाते रहेंगे। फिर उन्हें 'या वली' कहने से कोई क्या रोक पाएगा? वली-औलिया के खिलाफ साजिश तो वही कर सकता है; जिसे अल्लाह की वेलायत पर यकीन न हो।

[19-A] नबूवत सिर्फ नबी अल्लाह को

फकीर सैय्यद गुलाब शाह हुजूर ने फरमाया- "नमाज, रोजा, हज व जिक्र-अजकार (ईश नाम जप) में अगर दिली खुशु व खुजू नहीं है, तो हम मुसलमान सिर्फ नाम के मुसलमान हैं। जिसने रसूले पाक के ईल्म से अल्लाह व रसूले पाक का दीदार नहीं किया, वह मोमिन या पक्का ईमान वाला नहीं। जिस व्यक्ति के दिलो-दिमाग में दुनियावी ख्वाहिशें या ईच्छाएं हर पल अंगड़ाईयां लेतीं हैं, उसे 'दुनियां वाला' कहेंगे या अल्लाह वाला? ऐसे व्यक्ति को ईश-पूजक या खुदा वाला हम कैसे कहें, जो ईश-पूजा में भी अल्लाह के सिवा अपनी दुनियां की ईच्छाओं के साथ सजदा करता है। मगर दिल तो उसका गैर-खुदा की याद में लगा रहता है। ऐसी पूजा-इबादत हमें सच्चे खुदा की नमाज या पूजा को झूठा कराती है। यही गैर-परस्ती है। यही शिर्क है, खुदा की नमाज या पूजा में। इसी गैर को हटाएं तो शिर्क हट जाता है। अब दिल, जुबान सभी से हकपरस्ती का शुभारम्भ हो गया। अब यही पूजा-नमाज खुदापरस्ती बन गई। सजदे में जुबान खुदा की याद करे और दिल की धड़कनें भी अल्ला-अल्ला पुकारें, तो ऐसी नमाज या पूजा खुदापरस्ती है। येही ईश्वर वाले की सत्य पूजा है। हम ऐसी इबादत करते हैं, तो हम 'अल्लाह वाले' हैं। अगर नबीए पाक सल्ले अला व सल्लम से कल्बी मुहब्बत भी शबाब पर हैं तो हम 'अल्लाह वाले' और 'रसूलल्लाह' वाले दोनों कहलाने के हकदार हैं। अब यह हम पर निर्भर है कि हम क्या बनें?"

फकीर सैय्यद गुलाब शाह ने सप्रमाण बताया- "हजरत अवैस करनी, वह आशिके रसूल हैं, जो प्रत्यक्ष रुप से अपनी पूरी जिन्दगी में नबीए पाक से न मिले थे और ना उन्हें देखा था। वह ईश्के-नबी में इस तरह फना हुए कि रसूले पाक का दीदार अपनी दिल की आंखों से करने लगे थे। उनका ईश्के नबी जब अनन्त की गहराई में पहुंचा, तो रसूले पाक ने उन्हें अपने वस्त्र को उपहारस्वरुप भेजा। अवैस करनी की हुजूर सल्ले अला व सल्लम ने प्रशंसा की। उन्हें अपना और खुदा का प्यारा कहा। शारीरिक रुप से भेंट न होने के बावजूद नबीए पाक ने अवैस करनी को कैसे पहचान लिया था? अवैस, करन नामक गांव में थे, नबीए अकरम मदीना शहर में। दोनों क्षेत्रों के बीच एक लम्बी दूरी थी। आखिर नबीए पाक ने अपने आशिक को कैसे पहचान लिया? क्या कोई बशर अपने गुमनाम चाहने वाले को पहचानने की कुव्वत रखता है? नबी बशर या मनुष्य रुप में हों, मगर खुदा की मार्फत और मिलन में हर पल खुदा के साथ होते हैं। यही खुदाई कुर्बत है कि वे अपने हर आशिकों और हर

तलबगारों की खबर रखते हैं। अल्लाह के नबी को अल्लाह के सिवा किसकी कुव्वत हासिल होगी? हम भी बशर हैं, वो भी बशर हैं। हम बशर ही हैं, वह खुदा के नबी हैं। हम खुदा की नजरे करम के याचक हैं, वह खुदा के नूरे-नजर हैं। उनका जिस्मे पाक साया नहीं रखता है, हमारे जिस्म का साया (परछाई) है। जो खुदा ने कहा, वही नबी ने बोला। जो हमारा दिल-दिमाग कहे, वही हम बोलते रहते हैं। वह खुदा से मिलते हैं, हम सिर्फ खुदा का नाम जानते हैं। वह खुदा के साथ शबबासी करते यानी रात गुजारते हैं। हम अपने नफ्स के महाजाल में दिन-रात बिताते हैं। उन्होंने चांद के दो टुकड़े किए, हम तो अपने नफ्सी शैतान के भी टुकड़े-टुकड़े नहीं कर पाते। उन्होंने डूबे सूरज को पलटाया, हम अपने दिल को सत्य ईश-पूजा में नहीं पलट पाते। ऐसी ढेरों बातें हैं, जिनमें से एक भी बात हम में नहीं है। फिर भी हम यह दावा करने से नहीं शर्माते कि वह हमारे जैसे बशर हैं? अरे हम यह कुबूल करने में क्यों भय खाते हैं कि वह अल्लाह के प्यारे और सर्वप्रिय पैगम्बर हैं, हम लोग सिर्फ बशर या मनुष्य हैं। हम इन्सान उस पाक रब के सिर्फ बन्दे हैं। हम नबी नहीं हो सकते।''

सैय्यद गुलाब शाह ने तर्क किया- ''क्या हुजूर को अल्लाह ने अचानक नबी बनाया? क्या मक्का में उनके सिवा नबी योग्य कोई दूसरा बशर नहीं था? आखिर हजरत अब्दुल्लाह के शहजादे में ऐसी क्या खास बात थी, जिससे खुश होकर खुदा ने उन्हें अपना नबी घोषित किया। क्या उनकी इबादत पर खुदा रीझ गया या उनकी सूरत पर खुदा को प्यार आया? आखिर नबूवत उन्हें ही क्यों दी गई? नबूवत, नबी के लिए खास है। यह नबूवत, वेलायत नहीं है, जो अल्लाह किसी अपने बशरी बन्दे को खुश हो कर अता कर दे। नबूवत, खुदा का एक पूर्व निश्चित कार्यक्रम है। नबी, खुदा के जो भी हैं, वह खुदा के पास भी नबी ही रहते हैं। जब वही नबी, बशरी लिबास में दुनियां में जाहिर होते हैं, तब भी वह नबी ही है। उनसे नबी होने की घोषणा, खुदा जब चाहे कराए।

नबी तो बशर के रुप में आते हैं, मगर नबूवत के लिबास में। नबी के बशरी जिस्म और बशर के जिस्म में जमीन-आसमान का अन्तर होता है। नबी वह पहले से है, जिस्म पाकर भी वह नबी हैं। इसलिए हर बशर नबी नहीं हो सकता। बशर की शक्ल में आने से वह आम बशर नहीं होते। फिर हम आम बशर, किसी नबी से अपनी तुलना मनुष्य शरीर देखकर क्यों करने लगते हैं? बशरी नबी, अल्लाह और उसके फरिश्तों को जानते-पहचानते हैं। हम अगर नबी की तरह बशर हैं, फिर अल्लाह और उसके फरिश्तों को क्यों नहीं पहचानते हैं? अल्लाह ने अपने हुक्म को नबी के मार्फत दुनियां में प्रक्ट किया। नबी ने नमाजें पढ़ीं और रोजे क्यों रखे? सिर्फ इसलिए की हमें इन्हें सीखने का शऊर आ जाए। नबूवत का दारोमदार नमाज, रोजा, हज, जकात और तौहीद पर नहीं है। यह आम आदमी के लिए जीवन आधार है। पैगम्बरे खुदा इसे स्वयं इसलिए करते हैं ताकि हमें खुदा के हुक्म को परिपालन करने का ढंग आ जाए। इन मामूली बातों से प्रकट होता है कि नबी, बशर के रुप में भी नबी

है। हम बशर हैं, नबी नहीं हो सकते। अल्लाह पाक का कुरआन में फरमान है कि ऐ लोगों, मैं और मेरे फरिश्ते अपने प्यारे नबी पर दरुदो सलाम भेजते हैं, तुम भी भेजो। यहां अल्लाह यह भी तो कह सकता था कि ऐ लोगों तुम हजरत मुहम्मद इब्ने अब्दुल्लाह पर दरुदो-सलाम भेजो। अल्लाह ने यह जानते हुए भी कि वह इब्ने अब्दुल्लाह है, उन्हें नबी कहके 'नबी' पर दरुदो सलाम भेजने का हुक्म क्यों दिया? खुदा खूब जानता है कि मेरा नबी इब्ने अब्दुल्लाह हो या इब्ने मरियम, वह मेरा नबी है, सिर्फ मेरा नबी। उसके मां-बाप तो धरती पर नबी को जाहिर करने के माध्यम मात्र हैं।

सन्त-वली के नाम लेने से या उनके दर पर जाने से, जो हम लाभ पाते हैं, उसका मूल कारण क्या है? आखिर सन्त-वली किसी भी बशर या मानव को ईश्वर कृति समझ कर अपना स्नेह-सहयोग क्यों देते हैं? उन्हें मानने वाले मानव पूजा या नमाज अपने घर में करें या मसजिद, मन्दिर, चर्च, मठ आदि में, वह इबादत या उपासना तो उस एक अल्लाह की ही करते रहते हैं। हमें हैरत है कि हर बशर या प्रत्येक मानव पूजा करें ईश्वर-अल्लाह की और उन्हें राहत, चैन पीर-फकीर, वली-औलिया, साधु, महात्मा क्यों देते है? यह लेन-देन की प्रक्रिया तो विचित्र है। कोई भी पूजा उस एक जग मालिक की करे और उनको वली-औलिया, सन्त-फकीर आराम देते रहें? क्या इन सन्तों, वलियों, पीरों, साधु-महात्माओं का कोई रिश्ता खुदा या परमेश्वर से है? इन लोगों ने खुदा से या खुदा ने इनसे कोई आपसी अनुबन्ध (एग्रीमेन्ट) किया है? खुदा क्या इन सन्तों या वलियों के मानव कल्याण करने का मुहताज है? खुदा सम्पूर्ण मानव समाज की ईच्छाएं या मनोकामनाएं क्या स्वयं पूर्ण नहीं कर सकता है?

यही हाल किसी भी नबी, रसूल, पैगम्बर, ऋषि, अवतार आदि के मामले में है। इनके प्रति अटूट श्रद्धा मानव समाज की तो रहती है, मगर कोई नर-नारी इनकी पूजा-नमाज तो नहीं करता? लोग नबी, रसूल, तीर्थकर आदि से भी अपनी मनोकामनाएं मांगते रहते हैं, जो पूरी भी होती रहती है। यहां भी वही पूर्व प्रश्न हमें उलझन में डालता है कि नबी, रसलू, अवतार मानव समाज की सुनते क्यों हैं? इन्हें कह देना चाहिए कि जिस अल्लाह की पूजा-नमाज करते हो, उसी से मांगो। मगर वह यह नहीं कहते। हम बशर अगर नबी, रसूल, तीर्थकर होते तो गला फाड़कर यह कह देते कि मियां इबादत करो खुदा की और मांगते हो मुझसे। मैं तुम लोगों को कुछ भी नहीं दूंगा। मुझसे लेना है तो मेरी इबादत करो। मैं नबी-रसूल, पैगम्बर हुआ तो क्या हुआ, पहले मैं बशर हूं। अपना माल हम तुम्हें इसलिए नहीं देंगे, क्योंकि तुम मेरे लिए क्या करते हो? तुम नाम-जप करो खुदा की, सजदा करो खुदा की, पूजा-इबादत में पढ़ो- खुदा का कलाम, फिर तुम किस मुंह से नबी, रसूल की शक्ल वाले बशर से मांगते हो। हमारी पूजा तुम करते तब हम इस पर विचार करते कि तुम्हें कुछ देना चाहिए या नहीं। मैं कहने को तो नबी, रसूल, ऋषि हूं, पर हूं तो बशर। बशर के पास अगर अतिरिक्त माल है, तब भी

देने के पूर्व वह सैकड़ों बार सोचेगा। अगर नबी रुपी वह बशर ही है तो पहले अपने परिवार, घर-घराने को देगा। दूसरों को अपनी सम्पत्ति बांट कर वह कंगाल नहीं बन सकता।

मगर हैरत है कि नबी, पैगम्बर, रसूल की शक्ल वाले यह बशर अपनी कुछ भी भलाई नहीं सोचते। धन-दौलत, ईल्म, दया, कृपा उनके पास जो कुछ है, उसे बशर में निःशुल्क बांट देते हैं। वह दूसरे दिन का अपना या अपने परिवार का भोजन भी नहीं रखते। यह तो अजीबो-गरीब बशर हैं। क्यों इन्हें अपने वर्तमान या भविष्य की चिन्ता नहीं है? क्या ये बशरी जिन्दगी को नहीं जानते? अपनी कमाई या प्राप्त धन-सामग्री आदि को बिना किसी स्वार्थ के मानव में बांटते रहने के पीछे उन्हें लाभ क्या है? जिन्हें वह देते हैं, वह बशर उन्हें धन्यवाद शब्द के सिवा देगा क्या? वह पूजापाठ तो करेगा, ऐसे ईश्वर की जो न दिखाई देता है और ना प्रत्यक्ष रुप से किसी को कुछ भी देता है। बशर जिसे कहते हैं, वह अपने लाभ-हानि की जांच-परख के बाद ही अपनी गांठ खोलेगा। रुपया-दो रुपया भी किसी को देने से पूर्व दस बार सोचेगा। फिर ये नबी, रसूल कैसे बशर हैं, जो दुनियादारों की भांति अपना जीवन-यापन नहीं करते।"

नबी और बशर की सत्यता को मशहूर सन्त श्री सुरजीत शाह ने यूं प्रकट किया- "अबु जेहल, हजरत मुहम्मद इब्न अब्दल्लाह के चाचा थे। वह अपने दौर के उच्च चतुर बशर थे। जब-जब उनसे कहा गया कि आप पढ़िए- 'लाईलाह ईल्लल्लाह, मुहम्मदुर्रसूलल्लाह।' यानी आप कहिए- ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं तथा मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं। वे साफ कहते थे कि मैं मुहम्मद को जानता हूं, वह मेरे भतीजे हैं। मैं भतीजे को अल्लाह का रसूल कैसे कहूं? अबु जेहल ने अल्लाह के रसूल को बशर ही माना था, वरना वह रसूल को अपना भतीजा आजीवन कैसे कहते रहते? हमारे ओलमाए-सू भी आज अबु जेहल की नजर से अल्लाह के रसूल और नबी को बशर मानते हैं। अबु जेहल को ओलमाए-इरफान ने न मुसलमान कहा और ना मोमिन माना। क्या हम लोग भी रसूले-पाक को जो बशर समझता है, उसे गैर-मुसलमान और गैर-मोमिन कहें? अल्लाह ने अपने नबी, रसूल, अवतार, ऋषि आदि को बशर के रुप-रंग में सारे दुनियां के हेतु बशर (मानव) अपना हुक्म एवं पूजा-नमाज और इन्सानियत की तालीम देने के लिए भेजा। अल्लाह ने एक लाख चौबीस हजार कमोबेश नबी, रसूल, पैगम्बर आदि को जाने किस-किस रुप में भेजा। बशर तथा जिन्नात आदि कौमों में भी उसने अपने सन्देशवाहकों को भेजा। हजरत आदम, हजरत शीश, हजरत सुलेमान, हजरत नूह, हजरत इद्रीस, हजरत इब्राहीम, हजरत मूसा, हजरत ईसा आदि को भी खुदा ने बशर की हिदायत के लिए बशर के रुप में दुनियां में जाहिर फरमाया। अगर हम लोग खुदा के सारे पैगम्बरों को अपनी तरह बशर समझते रहे तो इसका सीधा मतलब होता है कि वह हमारे बराबरी के हैं। हममें उनमें कोई फर्क नहीं। अल्लाह ने अगर उन्हें अपना नबी, रसूल कहा तो अल्लाह कहता रहे, हम तो उन्हें

बशर ही मानेंगे। हम भी बशर हैं, वो भी बशर हैं। फिर बशर, बशर की बात माने या न माने, यह अब बशर की मर्जी है। इस बशर के अकीदे से तो किसी भी बशर को अल्लाह का नबी या ईशदूत कहना सन्देहास्पद है? इससे तो अल्लाह के नाम पर कोई भी बशर अपने को झूठा नबी या नायबे रसूल या पैगम्बर उद्घोषित कर सकता है। बशर के रुप में अल्लाह के नबी आए। यह कहना किसी भी बशर को झूठा नबी बनने से पहले रोकता है। जब हम बशर किसी भी नबी को मानते हैं, तो नबी ने जो खुदा का हुक्म सुनाया, वह हुक्म बशर का है। इस तरह खुदा का कलाम भी झूठा हुआ, क्योंकि एक बशर ने अपनी जुबान से कहा है। खुदा ने किसी भी बशर या मानव के समक्ष स्वयं कलाम नहीं किया है। इसलिए ऐसे बशरी नबी का कथन सन्देहास्पद है?

यही अकीदा अबु जेहल का था। इस अकीदे से भी जबर्दस्त अकीदा यजीद का था। ऐसी मान्यता वाले बशर आज भी इस्लामी शक्लो-सूरत में मौजूद हैं। उनका खुदा से डायरेक्ट सम्पर्क है। उन्हें शरीयत, इबादत सब कुछ खुदा से मिली है। रसूले-पाक से उन्हें कुछ नहीं मिला? हर सच्चा इन्सान नबी, पैगम्बर को बशरी शक्ल में भी खुदा का नबी ही मानता हैं। उन्हें अपने जैसा बशर अगर उसने माना, तो यह खौफ है कि इब्लीस की तरह उसे खुदा मरदूद न बना दे ! यही खौफे खुदा है। यह खौफे खुदा, अगर अबु जेहल में होती तो उन्हें अल्लाह का नबी, भतीजा दिखाई नहीं देता। यजीद अगर नबी को बशर नहीं समझता, तो उसकी हिम्मत न होती, जो नबी के बताए खुदाई आदेश में अपनी निजी राय शरीक करे। अगर वह हजरत इमाम हुसैन को अहले-बैत और पाक-पंजतन का एक ईश-प्रशंसित फर्द समझता तो उनको शहीद कराने की योजना न बनाता। यजीद अगर नबी को खुदा का नबी समझता तो उसे रसूले खुदा की यह बात भी समझ में आयी होती। जो उन्होंने कहा है कि हुसैन मुझसे हैं, मैं हुसैन से हूं। उन्होंने कहा है- मैं और हुसैन खुदा के एक नूर से हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि मेरे अहले बैत से मुहब्बत रखना और कुरआन पर अमल करते रहना। अगर यह काम करते रहे तो ईश्वर के सच्चे रास्ते पर रहोगे। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे घराने वाले आमान (महाशान्ति) हैं, इस उम्मत के लिए। मगर यजीद को नबी पर यकीन नहीं था। वह नमाजें पढ़ता था, मगर नमाज बताने वाले नबी की तौहीन करने में लगा रहता था। यजीद को हुकूमत का नशा था। वह भी पैगम्बर को मुर्दा समझता था, क्योंकि जब हम बशर की धारणा किसी नबी के लिए रखेंगे तो नबी भी बशर की तरह मर चुका। बशर पैदा होते हैं और हमेशा के लिए मर जाते हैं। नबी दुनियां में बशर के रुप में आएं या किसी भी रुप में। वह जिस्म धारण करने के पूर्व भी अल्लाह के नबी हैं, जिस्म में आने के बाद या दुनियां से जाने के बाद भी नबी ही रहते हैं। उनकी नबूवत खुदा से है, खुदा को मौत नहीं, फिर खुदा के नबी, पैगम्बर, रसूल एक आम बशर की तरह कैसे मरेंगे?"

ईश-सन्त श्री सुरजीत शाह ने चुनौतीपूर्ण शब्दों में कहा- "ईश-मिलन या शबे-मेराज में हजरत नबीए अकरम सल्ले अला व सल्लम से उनके पहले भेजे हुए तमाम अम्बिया मिले, जो खुदा के पास थे। हजरत मूसा अलैहिस्सलाम (पैगम्बर मोजेस) तो उनसे बारम्बार मिले। उन्हीं के परामर्श पर हुजूर रसूले खुदा पच्चास वक्त की नमाज को कम कराने की सिफारिश अल्लाह से करते रहे। हुजूर नौ बार अल्लाह पाक के पास गए। हर बार पांच वक्त की नमाज की छूट मिलती रही। इस तरह नमाज आज जो पांच वक्त की है, वह पच्चास से घटकर पांच पर आयी है। क्या कोई बशर इस तरह अल्लाह के पास जा-आ सकता है? मेराज में तमाम दुनियां में बशर के रुप में आए नबी मौजूद मिले, यह कौन से बशर थे? जब वह मर चुके थे, तो वहां बजिस्मानी कैसे मौजूद थे? वहां अरब या दुनियां के किसी हिस्से का गैर नबी बशर क्यों नहीं था? कुरआन में अल्लाह का फरमान नबी को बशर कहने के लिए तब आया है, जब मुशरिकों ने हुजूर को खुदा का नबी मानने से इन्कार किया था। **नबीए पाक की सिफारिश से पच्चास वक्त की नमाज, पांच वक्त की अल्लाह ने कर दी। फिर वह कौन ओलमाए-सू है, जो यह कहता है कि अल्लाह के नबी को शफाअत की कुव्वत हासिल नहीं है? जिस नबी के चाहने पर अल्लाह ने अपनी सच्ची पूजा पच्चास से घटाकर पांच वक्त कर दी। वह अल्लाह, नबीए पाक के कहने पर शत-प्रतिशत बन्दों को क्यों जन्नत में दाखिल नहीं करेगा?"**

ईश्वर के चर्चित सन्त श्री मोहीनी शाह बाबा ने कहा- "जो शिर्क में डूबा है, वही तो मुशरिक है। जो एक अल्लाह के साथ अपने निजी अल्लाह की भी पूजा करे, वही मुशरिक है। जब मुशरिक का विश्वास एक अल्लाह पर ही नहीं है, फिर वे अल्लाह के नबी पर ईमान क्या लाएंगे? अल्लाह ने उन्हीं बदअकीदतमन्दों को बताने के लिए कहा था कि ऐ मेरे महबूब, उनसे कह दीजिए कि मैं बशर हूं। अल्लाह ने अपने पर अकीदा रखने वालों से यह कहा कि ऐ मेरे महबूब आप कह दीजिए मैं खुदा की तरफ से भेजा गया नबी हूं। जो नबी पर ईमान लाए, वही अल्लाह पर ईमान लाए। जो नबी को बशर ही समझते रहे, वह नबी-अल्लाह दोनों से दूर हो गए। ईमान की सच्ची पहचान, पहले खुदा के नबी पर यकीन रखना है। नबी पे यकीन की यह दौलत जिसे हासिल हो गई, उसे ही खुदा पर यकीन हासिल हो गया। अब हम किससे पूछें कि नबी को अपनी तरह का बशर मानें या उन्हें खुदा का सिर्फ नबी मानें? बशर से बशर की मुहब्बत लैला-मजनू, शीरी-फरहाद या रोमियो-जुलिएट बनाती है, मगर जब बशर की मुहब्बत अल्लाह और उसके रसूले-पाक से हो जाती है, तो वह बशर अल्लाह का वली बन जाता है। यही ईमानवालों की हद है। यही मोमिन की चरम सीमा है। दिल-जुबान से खुदा का इकरार और रसूले-पाक का यकीन, हमें मुसलमान कहलाने का हकदार बनाती है। मगर इस यकीन वाले बशर को जब रसूले खुदा का दीदार मिलने लगता है तो उसे ईमान की मजबूती नसीब होने

लगती है। जब अल्लाह व रसूल दोनों का दीदार हो गया, तब वही बशर अब खुदा की नजर में मोमिन है, वही सच्चा मोमिन है। अल्लाह पाक और रसूले पाक को दिल-जुबान से जिसने कुबूल किया। उस एक खुदा की पूजा की तब वह बशर मुसलमान बना। जब वही मुसलमान किसी कामिल पीर की सोहबत में रहकर उसने खुदा और रसूल की मार्फत हासिल की, तो मोमिन बन गया। इसी मोमिन को जब खुदा की वेलायत हासिल हुई, तो वह मोमिन से खुदा का वली बन जाता है।"

ईश सन्त श्री मोहीनी शाह बाबा बोले- "अब जाहिर हो गया कि अल्लाह के नबी, रसूल, जो बशर या मनुष्य रुप में दुनियां में आए, वह सामान्य मानव नहीं हैं। अल्लाह के वली-औलिया, तो सामान्य मानव में से ही चुने जाते हैं, मगर यह चयन-प्रक्रिया भी अल्लाह पाक और रसूले पाक की नज़रे करम से है। ईल्मे-शरीयत के साथ जिसने कामिल पीर की सोहबत में इल्मे तरीकत, इल्मे हकीकत और ईल्मे मार्फत की राह पकड़ी, वही अल्लाह का सच्चा तालिब (चाहनेवाला) बना। अपनी रियाजत-इबादत से जब वह अल्लाह और उसके रसूले-पाक में फना हुआ, तब यह उम्मीद बन जाती है कि वह खुदा का वली बन सकता है। जब ऐसे नेक बन्दे से खुदा खुश होता है, तब उसे अपनी वेलायत अता करता है। यह खुदा की वेलायत ही वली की पहचान है। बजाहिर वह बन्दा है, मगर खुदा की वेलायत हासिल होने से, वह खुदा का दोस्त बन जाता हैं। दोस्ती ऐसी जो अल्लाह के मखलूक की हर वक्त खिदमत करे। ईश्वर-अल्लाह सभी का, अल्लाह का वली या दोस्त भी सबके लिए। ईश्वर की वह सत्य पूजा कैसे की जाती है, जो हमें अल्लाह पाक की वेलायत दिलवाए? पूजा-नमाज, रोजा, इबादत कैसे की जाए, जो अल्लाह पाक को कुबुल हो? उसी सच्ची ईश-पूजा के जानकार को कामिल पीर या सद्गुरु कहते हैं। हम एक कामिल पीर को पा गए। उसके बताए ईल्म पर अगर चलें, तो पूरी उम्मीद है अल्लाह व रसूल तक हमारी पहुंच हो जाएगी। सच्ची पूजा, सच्ची नमाज, सच्चा रोजा, व्रत हम जान जाएंगे। मगर आज कामिल पीर की जगह हम ऐसे लोगों की पैरवी में लगे हैं, जिनके अन्दर न ईश्के-रसूल हैं और न खुदा की परस्तिश का सही रास्ता। रस्मी इबादत और रस्मी पूजा से निकल कर हक्की (सच्ची) इबादत की तरफ आईए। **मजहबी जुनून को छोड़िए, खुदा को पाने का जुनून रखिए।"**

20 - हकीकत की हकीकत

मशहूर और मारुफ फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ श्री झरना शाह बाबा ने ईश्वर की सच्ची पूजा या नमाज के सन्दर्भ में यह बताया- "हमें नमाज पढ़नी हो या ईश्वर के नाम-जप में लगने की ईच्छा हो। तो सबसे पहले हमें उस पवित्र ईश्वर के समक्ष हाजिर होने की तैयारी करनी होगी। हमें

यह देखना होगा कि मेरा दिल ईश्वर पूजा या नमाज के पूर्व किन विचारोंमे डूबा है। ईश्वर अल्लाह की पूज़ा-इबादत के पूर्व हमें अपने दिल की धड़कनों पर नज़र रखनी होगी। हमें यह भी देखना है कि हमारे मन की दुनियां में किन बातों के लिए द्वन्द (उलझन) मचा है। क्या मन किसी चिन्ता या दुःख से व्यथित है? मन किसी प्रियजन के प्रेम या बेवफाई से उद्वेलित है तो उसे शान्त करने की जरूरत है। हम आज रोजी-रोजगार के बढ़ाने में सक्रिय हैं। धन्धा-कारोबार में यदि घाटा हो रहा है, तो यह चिन्ता हमें हर पल सोच-फिक्र में डाले रहती है। हमें पुत्र के भविष्य की चिन्ता है। पुत्री की शादी की फिक्र है। हमें हर पल अपनी नाना-नाना प्रकार की आवश्यकताएं अन्दर बाहर से तोड़ती जा रही हैं। ऐसी परिस्थिति में हम नमाज या ईश-पूजा कैसे करें? हमें ईश-जाप के मन्त्र याद हैं। हमें नमाज में सारी पढ़ी जाने वाली आयतें-दोआएं कण्ठस्थ हैं। आखिर ईश-पूजा करने या नमाज पढ़ लिए जाने में हर्ज क्या है? हम यही सोचते रहते हैं और उस पवित्र ईश्वर की पूजा में लग जाते हैं। क्या यही है हमारी ईश-पूजा की सच्ची तैयारी?''

सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ सर विलियम जे० थामस बोले- ''सचमुच हम जिस हाल में ईश्वर की पूजा या नमाज के लिए तैयार हैं, यह ढ़ंग सच्ची इबादत का नहीं है। हमें एक आलिम ने बताया कि नमाज सरापा नूर है। इसमें अगर दुनियावी ख्यालात आते हैं, तो इससे घबराना नहीं चाहिए। नमाज आईना है और आईने में शक्लें या किसी भी ख्यालात का आना कोई बुरी बात नहीं है। जरा सोचें, क्या यह राय उस रब्ब-कायनात की सच्ची इबादत के लिए दुरुस्त है? क्या हमारी नमाज या पूजा में दुनियां भर के ख्यालात शामिल हो जाएं, तो भी हम कहेंगे कि हमने उस रब्बुल करीम की सच्ची इबादत की? आज हमारी इबादतों का यही हाल है, तो फिर सच्ची पूजा हम कब करेंगे?'' सर विलियम ने अफसोस जाहिर की- ''हम कहते हैं कि हम उस एक और वहदहू ला शरीक खुदा के बन्दे हैं। उस रब की प्रशंसा, पाकीजगी बयान करने के लिए क्या हमें जरुरी नहीं है कि पहले अपने नापाक ख्यालों से खुद को पाक-पवित्र कर लें। हमें तो यह देखकर अफसोस होता है कि बन्दा आज उस पाकजात की इबादत-पूजा में इस तरह हाजरी देता है, जैसे बाजार गया और सौदा-सुल्फ खरीद लाया। क्या ऐसी ही इबादत-पूजा से हम उस पवित्र ईश्वर की खुशी पा सकते हैं? हमें यह एहसास कब होगा कि हम जिसे पूजने की नीयत करते हैं, वह सारे आलम का रब है। हम जिसके वास्ते नमाज पढ़ने जा रहे हैं, वह पाक है और आलीशान है। वह अजमतवाला है। वह दुनियां के सारे श्रेष्ठ में महाश्रेष्ठ है। वह सारे महानों में सर्वोच्च महान है। वह पवित्र प्रभु वह है जिसके कब्जे में सारे आलम की जान है। वह प्रभु ही हमें जिन्दगी देता है, वही सभी की जिन्दगी जब चाहे ले लेता है। वह खुदा इतना आला-ऊला और अकबर है, जो हर दिलों के भेद से वाकिफ है। वह खुदा इतना बुलन्द है कि दुनियां की सारी जीव-निर्जीव वस्तुएं, उसके आगे कमतर हैं। ऐसे सर्व महान,

सर्वमहाश्रेष्ठ ईश्वर-अल्लाह की पूजा के लिए क्या हमें तैयारी की आवश्यकता नहीं है? हम किसी कार्यक्रम या समारोह में जाते हैं तो अपनी हर तैयारी जरुर पूरी करते हैं। फिर हम यह कैसे भूल जाते हैं कि उस पवित्र ईश्वर के सामने हाजिर होने से पूर्व हमें तैयारी की जरुरत नहीं है? जब हम दिल से यह महसूस करेंगे कि हमें दुनियां बनाने वाले उस सर्वमहान ईश्वर के सामने जाना है तो हमारा जाहिर-बातिन ईश्वर के खौफ से सिहर उठेगा।

नमाज या पूजा सरल तो है, मगर वही सरलता मुझमें मौजूद हो तब। हम इबादत के लिए तैयार हों या पूजा-नमाज के लिए। हमें तो ईश्वर के समक्ष ही जाना है। खुदा को हम नहीं देखते, मगर वह खुदा तो हम सबको देख रहा है। वह खुदा हमारे शहे-रग से भी करीब है। मगर हम अपने करीब मौजूद खुदा की पहचान नहीं कर पाते हैं। यह कितनी अजीब बात है कि हम खुदा के वजूद को मानते हैं, मगर खुदा कौन है और कहां है, इस हकीकत को नहीं जानते। हम अगर उस खुदा के होने का यकीन रखते हैं, तो खुदा के खौफ से लरजते क्यों नहीं? खौफे-खुदा होने के लिए सचमुच ईमान की मजबूती अनिवार्य है। ईमान की सच्ची सिफत बिना उस पाक परवरदिगार के दीदार के मुहाल है। यही वजह है कि हम जुबानी कौल-करार करते रहते हैं कि खुदा ही पूज्यनीय है। खुदा के सिवा इबादत के योग्य कोई नहीं? खुदा एक है, खुदा पाक है। खुदा कयामत का मालिक है। खुदा ही सारे जग का पालनहार है। मगर खुदा के इन चन्द सिफातों (गुणों) की जानकारी होने के बावजूद, हम खुदा से निडर बने रहते हैं। हमारी यह निडरता ही हमें ईश्वर के प्रति हमारी अहंकारी भावना को प्रदर्शित करती है। हम नहीं समझते कि हममें अहंकार, घमण्ड की भावना अंकुरित है, मगर सच्चाई यह है कि हमारी यह पूजा-पद्धति हमें अहंकारी-दलदल में ला देती है। हम समझते हैं कि हमने ईश-पूजा की। हम यह मानते हैं कि हमने नमाजें पढ़ लीं। मगर हम यह समझने या मानने को तैयार नहीं होते कि ईश्वर या अल्लाह के लिए जैसी पूजा-इबादत करना हर बन्दे पर फर्ज है, उस पर हमने ध्यान दिया या नहीं।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने आगे कहा- "हम इब्लीस की घटना से भी सबक लेने को तैयार नहीं हैं। उसने उस पाकजात की इबादत छः लाख साल से भी ज्यादा की थी। अल्लाह की एक नाफरमानी से वह मरदूद बन गया। हम तो न जाने कितनी नाफरमानियां रोजाना करते हैं, अल्लाह जाने हम बन्दों का हश्र क्या होगा? खुदा की बारगाह में मकबूल इब्लीस की छः लाख साल की इबादत एक नाफरमानी से खारिज हो गई। हमारे पास तो एक पल की भी इबादत ऐसी नहीं है, जिसे हम कह सकें कि हमने 'लाईलाहअ' और 'ला शरीक' समझ कर किया है। अल्लाह खैर करे, हमारा हाल क्या होगा? वह इब्लीस आतिशी था। अग्नि से उत्पन्न। बनाया था अल्लाह ने ही। इसलिए वह खुदा का बन्दा था। आदम की पैदाईश से पूर्व छः लाख साल से भी ज्यादा उसने इबादत की थी। इससे स्पष्ट हो रहा है कि इब्लीस को अल्लाह की सच्ची इबादत का ज्ञान था। अल्लाह की सच्ची

पूजा से वह परिचित न होता, फिर अल्लाह उसे अपने फरिश्तों का उस्ताद नियुक्त कैसे करता? छः लाख सालों से ज्यादा ईश-पूजा करने वाला इब्लीस, आज अपनी एक नाफरमानी से मरदूद है। वह खुदा की सच्ची इबादत में दिल, विचार और मन-मस्तिष्क से इन्सान को 'नहीं कोई पूज्यनीय' कहने नहीं देता। वह एक खुदा को 'ला शरीक' कहने में भी दुनियां के ख्यालों को शरीक कराता रहता है। इसी इब्लीस और शैतान मरदूद से बचने के लिए हम 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' पढ़ते हैं। उस अल्लाह पाक की पनाह मांगते हैं। अगर हमने इब्लीसी-हथकण्डे को पहचान लिया तो हम उस पर 'लाहौल वला कुव्वत ईल्ला बिल्लाहिल अलीऊलअजीम' भी पढ़ते हैं। इब्लीस हमारा अहंकार, घमण्ड और जिद है। शैतान हमारे नफ्स का नाम है। दिल, दिमाग, विचारों में पल-पल बसने वाले शैतान को हम अगर पहचान लें, फिर तो उसे हम 'लाईलाहअ' के जेहाद से नष्ट कर सकते हैं। मरदूद इब्लीस खुदा को जानता है। इसलिए जब उस पर 'लाहौल' पढ़ा जाता है, तो भागता है। अहंकार, घमण्ड, तकब्बुर आदि भी नफ्स के स्वरुप हैं। इसलिए- 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' यानी मैं अल्लाह की शरण मांगता हूं शैतान मरदूद से, तो इब्लीस नौ दो ग्यारह हो जाता है। हमें आज इन दोनों ईश्वरीय-शस्त्रों से अपने शैतान और इब्लीस को नष्ट करना है। ताकि हम उस एक पवित्र प्रभु-खुदा की सच्ची पूजा या नमाज के लिए तैयार हो सकें।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने स्पष्ट कहा- "हमारी ईश-पूजा में जब भी गड़बड़ी हो, इसका यह मतलब नहीं होता कि शैतान या इब्लीस ही गड़बड़ी कराता है। या वही हमारी पूजा-नमाज में तरह-तरह के ख्यालातों को लाकर हमारी एकाग्र पूजा को भंग करता है। यह हकीकत नहीं है। यह तो हमारे जेहन की गड़बड़ी है। यह तो सच्ची इबादत की बात भी नहीं है। हम नमाज या ईश्वर पूजा के लिए अगर तैयार हैं, तो दिल, दिमाग, विचारों में आने-जाने वाली बातें हमारी असली कैफियत को ब्यान करती हैं। मसलन हम किसी भी उलझन में अन्दर से बेचैन हैं। ऐसी सूरत में पूजा-नमाज, जुबान से तो पढ़ ली गई, मगर इस पूजा-नमाज में हमारे दिल-दिमाग ने आमीन-आमीन नहीं किया। सिर्फ हमारी जुबान अल्लाहजल्लेशानहू की जिक्र-फिक्र में मशगूल हैं। यही उलझन, परेशानियां अगर हमारी इबादत में शामिल न हों, तो वही इबादत सच्ची इबादत बन जाती है। यही खुदा की तरफ जाने वाला सीधा रास्ता है। इसी सीधे रास्ते पर चलकर हमें खुदा की खुश्नूदी हासिल हो सकती है। हम कहते हैं, नमाजें पढ़ ली। हम खुश होते हैं कि हमने तसबीह पर अल्लाह का जिक्र किया। हमने अल्लाह की पूजा-परस्तिश तो कर ली, अब अल्लाह की मर्जी वह कुबूल करे या न करे। यह हमारा कौल (वचन) कहां तक दुरुस्त है? क्या उस पाक रब की बारगाह में हमें नहीं जाना है? क्या हमारे दिल की कैफियत से खुदा वाकिफ नहीं है? हमारी नीयत क्या यही थी कि जैसे-तैसे हम उस पवित्र खुदा की बारगाह में सजदा करके फूर्सत पा लें। आखिर इस तरह की पूजा-नमाज करने में हम

खौफे-खुदा क्यों नहीं होता?"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने एक गहरी आह भरी- "अल्लाह हमें नेक अमल करने की तौफीक दे। हम किस तरह उस पाकजात (ईश्वर) की बारगाह में अपने नापाक दुनियां को साथ लिए हाजिर हो जाते हैं? हैरत यह है कि हमें शर्म भी नहीं आती कि हम किस बुलन्द, आलीशान, अजमत वाले जुलजलाल के सामने हैं। हम कैसे यह नहीं एहसास करते कि जिसकी पूजा-बन्दगी के लिए हम तैयार हैं, वह लातादाद आलम (अनगिनत विश्व) का माबूद (ईश्वर) है। उसकी बारगाह में हमें क्या इसी ढ़ंग से जाना चाहिए, जैसे दुनियांदारों के सामने हम जाते हैं। हर अक्लमन्द साफ कह उठेगा कि यह ताजीमे-रब्बुल ईज्जत नहीं, यह तो तौहीने-पाकजात है। हर ईशदूत चिल्ला उठेंगे-ऐ लोगों, उस सर्व महान ईश्वर की पूजा में अपने गैर को शामिल करके, क्या खुदा के गैर बनना चाहते हो।

श्री राम, श्री कृष्ण, श्री मूसा, श्री ईसा सभी एक साथ कह उठेंगे- ऐ ईश-बन्दे, तुम्हें हम सभी ने येह कहां बताया था कि उस एक और पवित्र सर्व जग के स्वामी की पूजा, मनमानी करना। हमने यह कब कहा था कि अपनी निजी ईच्छाएं हृदय में बसा कर केवल उस मालिक की जुबानी पूजा-इबादत करते रहना। ऐसी इबादत, उस समस्त सृष्टि के स्वामी का अपमान है। अगर तेरे दिल में उस पाक ईश्वर की ईज्जत होती तो कोई बन्दा, इस लापरवाही की पूजा-नमाज अदा नहीं कर सकता। ईश दूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम फरमाते हैं कि ऐ लोगों, उस पाकजात की इबादत में किसी को शरीक मत करो। वह पाक है, वही प्रशंसनीय है, वही तो जिन्दा रखता है और मारता है।"

सैय्यद साहब ने कहा- "अफसोस है ! अफसोस है कि हमें सिर्फ खुदा के नाम का ईल्म है। खुदा की सिफतों (गुणों) को भी हमने सिर्फ पढ़ सुन लिया है। मगर हमारे दिलों में उस एक पाक परवरदिगर की अजमत नहीं है। अगर अजमत, मान-सम्मान और सच्ची मुहब्बत हमारे दिलों में होती तो हम पाक-साफ दिल से, उस रब्बे जुलजलाल की बारगाह में हाजिर होते। यह केवल इब्लीस की खता नहीं है। **यह खताएं हैं हमारे निजी दुनियावी प्यार की। दुनियां की मुहब्बत को हम सबने अपने दिल-दिमाग में इस कदर भर ली है, कि खुदा, ईश्वर की मुहब्बत से हमारा हकीकी रिश्ता-नाता टूट रहा है।** क्या अब भी हमने अपने नफ्स के शैतान और दिल-दिमाग में बसे इब्लीस को नहीं पहचाना।"

उन्होंने खुदाई-ईश्क के जज्बात में कहा- "हमारी पूजा-नमाज में दिल की शिरकत, जुबान के साथ हो। यानी जो कुछ जुबान से पढ़ें, उसे दिल झूम-झूम कर दोहराता रहे। जो जुबान कहे, वही दिल बोले। उस पाकजात की मुहब्बत में जब दिल-जुबान एक हो जाए, तो नमाज-पूजा की हकीकत से बन्दा वाकिफ (परिचित) हो जाएगा। यकीन मानिए- दुनियावी मुहब्बत को बिना दिल से तर्क किए,

बन्दे में खुदा की मुहब्बत दाखिल नहीं हो सकती। क्यों? मुहब्बत का मकाम दिल है। मुहब्बत का इजहार, जुबान से तो होता है, मगर मुहब्बत की खेती दिल में होती है। अगर दिल की सारी जमीन पर हमने दुनियां-जहान के पेड़-पौधे उगाए हैं, तो वहां खुदा का प्रेम-पुष्प हम कैसे लगाएंगे? इसलिए पहले 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' और 'लाहौल वला कुव्वत इल्लाबिल्लाहिल अलीऊल अजीम' के हल से दिल में उगे सांसारिक पेड़-पौधे को उखाड़ फेंको। दिल की जमीन जब खाली हो जाए, तब उसमें 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' का वृक्षारोपण करो। 'ईल्लल्लाह' के बीज से रब, रहमान, रहीम, प्रभु, ईश्वर, अल्लाह, निरन्जन के प्रेम-पुष्प खिलने लगेंगे। इस तरह जब दिल उस प्रभु-खुदा के फूलों की खुश्बू से मोअत्तर होगा तो अब हमारी हर इबादत में खुदाई-खुश्बू गमक उठेगी। उस पाकजात की इबादत से पहले हम उसके प्रेम को दिल में बसाने का इस तरह प्रयत्न करें।"

सैय्यद साहब ने एक शाश्वत सन्देश दुनियां को इस तरह दिया- "हमने नमाज या पूजा की नीयत की। नीयत हमारी किसी दुनियां के शासक-प्रशासक के समक्ष नहीं है। यह नीयत तो उसके सामने है, जो सारे जहान को देखता है, मगर उसे हम नहीं देख पाते। वह सारे सृष्टि का निःस्वार्थ पालन-पोषण करता है, मगर हम नहीं समझ पाते। वह उस प्रलय का मालिक है, जब सारी दुनियां का वजूद खत्म हो जाएगा। मगर वह कायम रहेगा। हम इंन्सानों की मौत तो देखते हैं, मगर प्रलय पर यकीन नहीं रखते। हम भूकम्प, सुनामी, एड्स जैसी भयंकर घटनाओं को देख-सुन कर भी यह नहीं समझ पा रहे हैं कि इतने सारे जिन्दा लोग एक पल में कहां गए? वह ईश्वर बारम्बार हमें सावधान कर रहा है कि ऐ लोगों खुदा से डरो। ऐ लोगों, रोजे-जजा (प्रलय दिवस) से डरो। क्या हम में उस खुदा के पास जाने का डर है? जिसे खुदा का खौफ होगा, वह खुदा के फरमान की नाफ़रमानी नहीं करेगा। **यह खौफ, उस रब के मुहब्बत की एक निशानी है।** हमें जब यह खौफ हुआ कि मेरी जिन्दगी एक सीमित और निश्चित मृत्यु के जंजीरों में कैद है। किस पल मौत आए, किस घड़ी रुह बदन का साथ छोड़ दे, तब हम उस मौत के स्वामी की याद में जरुर लग जाएंगे। जब तक हम अपनी मौत को याद रखेंगे, हमें खुदा याद रहेगा। जहां अपनी जिन्दगी को हमने दुनियां के नशे में डूबोया, मौत को हम भूल जाते हैं। हम खुदा के यकीन से भी काफी दूर चले जाते हैं। **बन्दे को मौत की याद हमेशा रखनी चाहिए। यही जिन्दगी की हकीकत है।** उस पाकजात (पवित्र ईश्वर) ने हमें जिस्म दिया, जान दिया, अक्ल दी, जुबान दिया। अच्छा-बुरा सुनने के लिए कान दिया। इधर-उधर जाने के लिए पैर दिया। स्वावलम्बी बनने के लिए हाथ दिए। अपनी कुदरत की पहचान के लिए आंखे दीं। क्या इस खुदाई कृपा और महादान के एवज में हम उस बेनेयाज रब की प्रशंसा और धन्यवाद भी करने योग्य नहीं हैं। फिर यह भ्रम क्यों पाले रहते हैं कि उस एक प्रभु की याद हम जवानी में नहीं करेंगे? क्या जवानी की उम्र उस प्रभू की दी गई आत्मा से नहीं चलती? क्या जवान नर-नारी के अंग-प्रत्यंग उस

प्रभु ने नहीं बनाए हैं? उनकी जीवन-प्रदायिनी आत्मा, क्या किसी दुनियां की कम्पनी से खरीदी गई है? फिर ईश्वर की पूजा, नमाज के लिए हम किस घड़ी, किस वक्त का इन्तजार करते हैं? क्या नवजवान, बिना बूढ़ा हुए नहीं मरता? मौत वह खुदाई-कानून है, जो ईश्वर के नियमानुसार बच्चे, जवान, वृद्ध की प्रतीक्षा नहीं करती। फिर हम ईश्वर-अल्लाह के सत्य भजन, सच्ची पूजा के लिए देर क्यों करें? इस दुनियां में बुद्धिमान वही है, जो मौत से पहले मौत को याद रखे। मौत से पहले मौत के सफर का सामान तैयार करे।"

सैय्यद साहब ने समझाते हुए कहा- "मौत के सफर का सामान हमारी सत्य पूजा, नमाज, प्रार्थना, उपासना है। हमारे नेक और पुण्यकर्म हैं। हमारे दिए दान, जकात, सदका हैं। इन्हें करने में हम सोचने-समझने की देरी न करें। पहले अपने इन्द्रिय राक्षसों का शमन करें। हम बार-बार कहें- ऐ पाक ईश्वर, मुझे अपनी शरण में ले ले। मुझे शैतान मरदूद के चंगुल से छुड़ा। मुझे तेरी शरण चाहिए। सिर्फ तेरी। क्योंकि तेरे सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। तेरे सिवा कोई अजमत वाला और आला नहीं। हम तेरी ही पूजा करते हैं, क्योंकि हमें तुमने अपना बन्दा बनाया है। हम तेरी प्रशंसा करते हैं, क्योंकि तूने हमें इन्सान बनाया। हमारे लिए हर शय बनायी। तू इसलिए भी प्रशंसनीय है, क्योंकि मेरी जिन्दगी तेरी कृपा-दया से कायम है। यकीनन तू सर्व महान और सर्व शुभ मंगलकारी है। तेरी याद, तेरे जिक्र और तेरी पूजा ही तेरा सच्चा रास्ता है। इसके सिवा हर चीज तेरी गैर है। हमें तू अपनी मुहब्बत से भर दे, अपने गैर की याद और मुहब्बत से हमें हमेशा के लिए खाली कर दे।

जब यह प्रार्थना कोई बन्दा अपने स्वच्छ हृदय से करेगा, तो उसके नफ्स या इन्द्रिय का शैतान मरदूद उसके दिल-दिमाग से मुर्दा हो जाएगा। इसके बाद बन्दा सच्ची नमाज या पूजा में लग कर देखे। उसे ईश्वर की प्रेम कृपा किस तरह नसीब होती है? अच्छी तरह जान लें, सच्ची पूजा और सच्ची नमाज ही इब्लीस मरदूद के लिए अरुचिकर है। वह रस्मी इबादत और फर्जी पूजा-पाठ वाले की तलाश में नहीं रहता। वह खूब जानता है कि जिस पूजा-नमाज में इन्सान अपनी ख्वाहिशों के साथ मशगूल है, वह खुदा के साथ अपने गैर-खुदा या इन्द्रिय बुत की भी पूजा कर रहा है। वह यह भी जानता है कि ऐसी पूजा-नमाज उस एक खुदा या ईश्वर के समक्ष सम्माननीय नहीं है। इसलिए वह ऐसे लोगों का पीछा नहीं करता। **मगर जब बन्दा, गैर-खुदा को त्याग कर उस सच्चे खुदा की इबादत में लगता है, तब इब्लीसी आक्रमण उस पर आरम्भ हो जाते हैं। सच्चा बन्दा उस पर 'लाहौल वला कुव्वत इल्लाबिल्लाहिल अलीऊल अजीम' की मिसाईलें दागता है। खुदा के सच्चे जेहादी उसे- 'नहीं कोई पूज्यनीय' कह कर दौड़ाते हैं, जब 'ईल्लल्लाह' या ईश्वर ही पूज्यनीय है' की मिसाईलें वे छोड़ते हैं, तो वह इब्लीस सरपट भाग खड़ा होता है। इस खुदाई-जेहाद में इब्लीस से निरन्तर युद्ध करने वाला, एक दिन विजयी हो जाता**

है। इसलिए अपनी पूजा-नमाज को पहले सच्ची इबादत के सांचे में ढ़ालें। खुदा की इबादत की नीयत जब आप करते हैं, फिर अपने दिल-दिमाग के गैर को उस वक्त पूरी तरह से दूर रखें। आप जब सच्ची कोशिश करेंगे, तो खुदा आपको फौरन अपनी मदद देगा। आप इसे अनदेखी करेंगे तो खुदा की मदद के आप याचक नहीं हैं। इसलिए अल्लाह की पूजा-इबादत, अल्लाह के निर्देशन में करने का तरीका अख्तियार करें। ताकि आपका यह दावा तो बन सके कि ऐ रब्बुल करीम, हमने तेरी सिफतें और हुक्मों को पहचान कर तेरी नमाज-पूजा की है। मेरे गुनाहों को माफ कर दे। मेरी तौबा कुबूल कर ले। मेरी इबादत को भी कुबूल फरमा। हमें यकीन है कि वह पाक परवरदिगार, जो रहमान भी है, रहीम भी है। हमारी बन्दगी को ठुकराएगा नहीं।"

उन्होंने काफी उत्साह से कहा- "हम उस ईश्वर-अल्लाह के बन्दे हैं। बन्दे पर फर्ज है कि वह *अपने आका के हुक्म और शान के खिलाफ कोई काम न करे। आका हुक्म करता है कि नहीं कोई* माबूद मेरे सिवा। फिर उसके सिवा जो दिल, दिमाग और ख्यालों में है, वही माबूद है। वही नहीं पूज्यनीय है। केवल आका पूज्यनीय है। इसलिए यह गैर-माबूद 'नहीं' की तलवार निरन्तर चलाने से निर्जीव होंगे। ऐसा जिस बन्दे ने किया, उसी ने तो अपने आका के हुक्म को माना। वही सच्चे बन्दे, तो आका की नजर में माने जाएंगे। काश ! हम सभी सच्चे बन्दे बन कर, उस एक जग-आका की पूजा-नमाज करते। वह मेरा मालिक इतना रहीम व गफ्फार है कि अपने सच्चे बन्दे को कभी दुःख, संकट, विपत्ति में नहीं डालता। जिस बन्दे के दिल में उसकी याद जिन्दा होती है, वह अपने रहमत की बारिश से उसे तरोताजा रखता है। वह अपने सच्चे सेवक की मायूसी बर्दाश्त नहीं कर सकता। वह उसे अपनी दीदार की दौलत भी अता करता है। तब बन्दे की मायूसी हमेशा के लिए खुशहाली में बदल जाती है। अब वह बन्दा, सिर्फ बन्दा नहीं रह गया, वह तो मकबूले बारगाहे खुदा हो गया। जो बन्दा, सच्ची बन्दगी से मकबूल बन जाता है, वही सच्चा खुदा का बन्दा है।

सच्ची बन्दगी में इसीलिए इब्लीस अपनी टांगें अड़ाता रहता है। क्योंकि वह नहीं चाहता कि इन्सानी बन्दा, अल्लाह की बारगाह में मकबूल बने। सच्ची बन्दगी से बन्दे को दूर करना, इब्लीस की प्रमुख कार्य-पद्धति है। इब्लीस के महाजाल में मोहमाया, धन-सम्पत्ति और औलाद की मुहब्बत आदि अग्रणी-हथकण्डे हैं। सच्ची इबादत में कभी सांसारिक मोहमाया बाधा डालेगी, कभी धन-सम्पत्ति हमें नाना-प्रकार से उलझाएगी। बन्दा सच्चा है, तो इस इब्लीसी-चाल को पहचान कर फौरन दिल से पुकारेगा- ऐ अल्लाह, शैतान मरदूद से मैं आपकी पनाह चाहता हूं। वह धन-दौलत, मोहमाया के छद्म भेष में छिपे इब्लीस को फौरन पहचान कर कहेगा- ऐ मेरे रब, इन शैतानों के पनाह में मैं नहीं जा सकता, मुझे तू अपनी पनाह दे। इब्लीस भागेगा, वह समझ जाएगा कि यह तो सच्चा ही नहीं, खुदा का पक्का बन्दा है। अगर यह कच्चा बन्दा होता, तो हमारी चाल को नहीं पहचान पाता।"

उन्होंने कहा- "सच्चा बन्दा, हम सच्ची बन्दगी से बनते हैं। सच्ची बन्दगी के लिए सच्चे खानकाह, मठ, कुटी या आध्यात्मिक आश्रम में हमें जाना चाहिए। ऐसे सच्चे मकाम पर भी इब्लीस जाने नहीं देता। जहां-जहां इब्लीस के महाजाल से वाकिफ लोग हैं, वहां-वहां इब्लीस जाने में रुकावटें पैदा करता है। वह वली-औलिया, कामिल पीर से दूरी पैदा कराने के लिए बुद्धि-ज्ञान के तर्क देता है। उसे उन सारे लोगों से द्वेष है, जिन्हें खुदा ने मकबूल किया है। उसे उन लोगों से भी बेहद नफरत है, जिन्हें अल्लाह ने अपने ईनाम से सम्मानित किया है। केवल वह उन लोगों से प्यार करता है, जो कच्चे नमाजी, कच्चे रोजेदार, झूठे पूजापाठी, नकली पीर, फर्जी ईश-पूजक हैं। वह लोगों को कुफ्र, शिर्क, बिदअत की झूठी परिभाषा बता कर, खुदा के सच्चों से दूर कराता है। खुदाई हुक्म को गलत ढ़ंग से लोगों के मन-मस्तिष्क में बिठाता है। खुदा के सारे एक बन्दे को वह धर्म-मजहब के नाम पर टुकड़े-टुकड़े में बांटता है। **वह इब्लीस ही है, जिस ने एक प्रभु, अल्लाह और गॉड के बन्दों में अलग-अलग नामों के खुदा मानने की प्रवृत्तियां उत्पन्न की हैं।** वह इब्लीस इसलिए सफल है, क्योंकि हम ईश-आदेश के परिपालन में सावधानियां नहीं बरतते। बन्दा जब ईश्वर के बताए नियम के अनुसार चलेगा, तो, इब्लीस की योजना रसातल में चली जाएगी। **इब्लीस हमारे मन के लोभों की कमजोरी पकड़ कर हमें अपना अनुयायी बनाता है।** इसीलिए खुदा ने उसे शिकस्त देने के लिए अपने महामन्त्र में प्रारम्भिक शब्द 'ला' यानी 'नहीं' को रखा। इब्लीस सुझाएगा कि जो प्रिय है, वह पूज्यनीय है। खुदा ने बताया- 'नहीं कोई पूज्यनीय ईश्वर के सिवा।' यही सत्यता जानने वाला तब तक 'लाईलाहअ' (नहीं कोई पूज्यनीय) पढ़ता है, जब तक की दुनियां की समस्त प्रिय-अप्रिय वस्तुएं उसके मन-मस्तिष्क और हृदय से नष्ट न हो जाएं। इब्लीस, उसी बन्दे से हारता है। क्योंकि ऐसा बन्दा, जब हर सांसारिक वस्तु को 'नहीं कोई पूज्यनीय' कह कर ठोकर मारता है, तो इब्लीस फौरन जान जाता है कि यह 'ईल्लल्लाह' के दल का सक्रिय सदस्य है, इसे वह बहका नहीं पाएगा। उसके इरादे पर पानी फिर जाता है। उसे वहां से भागने के सिवा कोई रास्ता नहीं बचता। कामिल पीर, इब्लीस के सारे क्रिया-क्लापों से परिचित होते हैं। इब्लीस इसलिए इनसे खौफजदा रहता है। उसे ऐसे धर्माचार्य, गुरु, महाराज, पीर, स्वामी, आलिम, मुफ्ती, फादर, विशप से कोई डर नहीं हैं, जो उसे जानते-पहचानते तक नहीं हैं। इसलिए शैतान और इब्लीस को 'ला' (नहीं) करके या कामिल पीरों के बताए विधि से इतना हमला करें कि वह निष्क्रीय बन जाए। जहां वह निष्क्रीय हुआ, वहां- अल्लाह, प्रभु, गॉड आपके सामने होगा। बन्दे के पास अब सच्चा खुदा आ गया, अब वह ईश-आगमन के कारण ईश-शक्ति पाता रहेगा। यही प्रक्रिया निरन्तर चलती रही तो उसे ईश-दर्शन भी मिल सकता है। **यही है हमारी सच्ची पूजा और सत्य नमाज की हकीकत। जो खुदा पर नहीं, बन्दे के सत्य पूजा कर्म पर निर्भर है।** बन्दा, जब सच्चा बन्दा बन जाएगा, तब ईश्वर,

अल्लाह की सच्ची कुव्वत और सच्ची मदद उसे हासिल हो जाएगी। हमारी बन्दगी अगर रस्मी है, तो यह हमें बन्दगी में तो लाकर रखेगी। मगर झूठ, दगा, फरेब, हिर्स-हवा, लालच, अहंकार, घमण्ड, प्रतिशोध जैसे घिनौने काम को भी हम 'अल्लाह का शुक्र' समझ कर करते रहेंगे। न हम में ईमान की सच्ची खुश्बू होगी और न हम सच्चे इन्सान के रुप में जाने जा सकते हैं। **हममें बेईमानी की बूबास जरुर होगी। क्योंकि हम उस पाक परवरदिगार की इबादत में बेईमान हैं। हममें शैतानियत की बदबू जरुर मिलेगी, क्योंकि हमारी इबादत में नफ्सी शैतान शामिल रहता है। हममें लालच इसलिए भरी होगी, क्योंकि हमारी इबादत में हमारी ख्वाहिशें भी शानदार ढंग से शरीक रहती हैं।** भला ऐसी इबादत खुदा के नाम पर हम बेखौफ हो कर कैसे करते रहते हैं? क्या अब भी हम अस्तगफार और कल्मा रद्दे कुफ्र को दिल से पढ़कर सच्ची इबादत की राह अख्तियार नहीं करेंगे?"

[20-A] ईश्वर का व्यापार

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने साफ-साफ कहा- "ऐसे इबादतगुजार बन्दे या ईश-पूजकों की हिम्मत देखकर मैं शर्मिन्दा हूं। दुनियां के कोने-कोने में आजकल अल्लाह, भगवान, गॉड के ढोल पीटने वाले संगठन काफी सक्रिय हैं। वे इस प्रचार में पुण्यकर्मी बने हुए हैं कि मेरे ही पार्टी का ईश्वर-अल्लाह या गॉड सर्वशक्तिशाली तथा सर्व पूज्यनीय हैं। वे यह भी प्रसारित करते हैं कि मैं जिस ईश-दूत को मानता हूं, उसके सिवा कोई ईशदूत, सर्वमान्य नहीं हैं। वह कहते हैं मेरी पूजा देखो। दूसरे बताते हैं कि मेरा प्रेयर देखो। कोई कहता है कि मेरी नमाज देखो। तुम्हें यकीन नहीं तो मेरे ईश्वर-खुदा के समर्थकों की भींड़ देखो। पहचानो मुझे मैं कौन हूं। अगर मेरे ईश्वर-अल्लाह की शक्ति देखना चाहते हो, तो हम दंगा-फसाद करके यह सिद्ध कर देंगे कि वाकई अल्लाहो अकबर बड़ा है या जय श्री राम अथवा जेसस क्राईस्ट। **ऐसी मानसिकता, जिसमें ईश्वर को ही दो-चार माना जाए। ऐसे कर्म जिसमें ईश्वर का ईशदूत, हर किसी का व्यक्तिगत दूत बन जाए। क्या यही ईश्वर या ईशदूत के प्रति श्रद्धा और सम्मान की सच्ची प्रक्रिया है?** ऐसे लोग इस तरफ ध्यान कब देंगे कि हम सत्य ईश पूजा या सच्ची प्रार्थना अथवा पाक नमाज पढ़ने के लिए अपने आप से संघर्ष करें। सच्ची ईश पूजा की प्रोन्नति प्रथम आवश्यक है अथवा ईश पूजाहीनता का प्रचार। धर्म-मजहब की मान्यता का यह अर्थ हमने कैसे समझ लिया कि यह धर्म या वह मजहब हमारी निजी विश्वस्त संस्था या संगठन है। ईश सत्य सन्देश को सारी दुनियां तक पहुंचाने के लिए ईश्वर-अल्लाह या गॉड ने अपने अवतार, नबी, रसूल या मेसेन्जर को भेजा। क्या किसी व्यक्ति, संस्था या संगठन को किसी भी ईश-दूत ने यह अधिकार हस्तानान्तरित किया है कि वे अपने-अपने

धर्म-मजहब की मान्यतानुसार ईश्वर-अल्लाह या गॉड का 'प्रतिस्पर्धा कार्यक्रम' चलाते रहें। अगर नहीं, फिर हम सब किस ईश्वर या कौन से अल्लाह अथवा किस गॉड की पार्टी बनाकर जन-प्रदर्शन में जुटे रहते हैं? हम ईश्वर-अल्लाह के दर्शन से कोरे हैं। हम अवतार, नबी, पैगम्बर, मेसेन्जर को भी देखे नहीं। हमें न ईश्वर-खुदा की एकता का ज्ञान है और न किसी भी ईशदूत की पहचान है। फिर यह कैसी धर्म- मजहब की वाद-विवाद प्रतियोगिताएं हैं, जिसके नाम पर हम मानवता से दानवता के पुण्यकर्म में लगे हुए हैं। हमारे कार्यक्रमों की रुपरेखा यह सन्देश दे रही है कि ईसाई का गॉड अलग है। मुसलमानों का अल्लाह, खुदा कोई और है। हिन्दू या सनातनधर्म का प्रभु, ईश्वर बिलकुल अलग है।

आखिर हमें यह सत्य स्वीकारने में एतराज क्यों है कि धरती-आकाश का स्वामी एक है। हमें यह मानने में आपत्ति क्यों है कि समस्त सृष्टि का पालनकर्ता एक है। हमें यह कहने में संकोच क्यों होता है कि समस्त ईशदूत, उसी एक जग-विधाता ने भेजे हैं, इसलिए सारे ईशदूत एक हैं। क्या सत्य स्वीकारने से हमारा परम पूज्यनीय एक निरंकार खफा हो जाएगा? श्री राम या श्री जेसस क्राईस्ट अवतार या मेसेन्जर हैं, यह कहने पर क्या हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को पसन्द नहीं आएगा? **आश्चर्य है, जिनसे हमारा सम्पर्क या भेंट है ही नहीं, उनके नाम पर संगठन या जमात या मिशन बनाकर हम ईश्वर के ही बन्दों में फूट डालें, यह कार्य आखिर किस ईश्वर के पक्ष में है?** सम्पूर्ण मानवजाति को ईश्वर अपना बन्दा मानता है। सम्पूर्ण मनुष्यजाति को बिना किसी धर्म, वर्ग, जाति भेद के वह पालन करता है। सम्पूर्ण मानवजाति की पैदाईश और मृत्यु के नियम-विधान उसने एक ही बनाए हैं। फिर हम धर्म-मजहब की लकीरें खींच-खींच कर किसके धर्म, मजहब की उन्नति और जन-जागरण कार्य में आनन्दित हैं? क्या उस एक ईश्वर, अल्लाह या गॉड की एक पार्टी या संगठन बना लेने से हमारा या ईश्वर का कोई अहित होगा? सबसे सुन्दर पार्टी ईश्वर की दृष्टि में यह होगी, जो उसके बन्दे को ईश्वर-अल्लाह की एकता, सर्वप्रेम, समभाव, समदृष्टि की सत्यता सिखलाए। ईश पूजा या नमाज ऐसी बताये, जिससे ईश-मिलन हो और ईशदूतों का साक्षात्कार होने लगे। यही ईश्वर की सच्ची सेवा है। इसी को कहते हैं ईश्वर के प्रति अज्ञानता रुपी अन्धेरे से ईश्वर के बन्दों को ईश्वरीय प्रकाश में लाना। यह कार्य सत्य कामिल पीरों या सच्चे आध्यात्मिक सद्गुरुओं का है। इनके संगठन प्रचार-प्रसार के बल पर या किसी जन संगठन या जमात के सहारे पर जीवन-यापन नहीं करते। वे सद्गुरु बनकर कोई सामाजिक या धार्मिक आन्दोलन का भी संगठन नहीं चलाते।"

उन्होंने कहा- "ईश्वर का वह नेकबन्दा, जो ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा से निरन्तर पुरस्कृत है, वही सद्गुरु या कामिल पीर है। हज करना, नमाजें पढ़ना, रोजे रखना, पूजा करना, यज्ञ करना आदि ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा का पुरस्कार नहीं है। यह तो हर बन्दे पर फर्ज या अनिवार्य है कि

वह प्रभू-खुदा की सच्ची पूजा करे। ईश-पुरस्कृत व्यक्ति ही ईश-पूजा का ज्ञानी होगा। इसलिए वह अधिकृत है कि ईश्वर के बन्दों को शिष्य या मुरीद बनाकर ईश्वर के सीधे मार्ग पर चलाए। धर्माचार्य, धर्मगुरु, आलिम, अल्लामा, मुफ्ती से हम धर्मज्ञान ले सकते हैं, किन्तु ईश्वर की पूजा-नमाज करने का सत्य ज्ञान कामिल पीर या ईशकृपा प्राप्त सद्‌गुरु ही दे सकता है। बिना ईश-सम्पर्क के ईश-कृपा नहीं मिलती तथा बिना ईशकृपा के कोई कामिल पीर या सद्‌गुरु कहलाने का अधिकारी नहीं है। नकली पीर या फर्जी गुरु बनने वाले आज सामाजिक शोषण में मशगूल हैं। उन्हें हर प्रकार की भोग-कृपा का ज्ञान है। बस ईश-सम्पर्क कृपा वे नहीं जानते। ऐसे ज्ञानी, जब ईश मन्त्र देते हैं तो उनके शिष्य नाना-नाना प्रकार के सांसारिक भोग-विलास के सम्पर्क को प्राप्त करते रहते हैं।

ईशकृपा प्राप्त गुरु या पीर जब ईश-ज्ञान देते हैं, तो सर्वप्रथम शिष्य या मुरीद की सांसारिक भोगलिप्सा विलुप्त हो जाती है। ईश पूजा की नियमितता उन्हें सांसारिकता से दूर करके ईश्वर के शरण में पहुंचा देती है। ईश-ज्ञान लेने का मार्ग, ईशकृपायुक्त कामिल पीर या ईश-ज्ञानी गुरु से ही लेनी चाहिए। क्योंकि वह ईश्वर से परिचित है। जो ईश्वर से परिचित है, वही ईश्वर तक पहुंचने की सच्ची पूजा या सत्य नमाज की विधि बता सकता है। यह आज के दौर में कितनी विचित्र बात है कि लोग सच्चे पीरों से भी सम्पर्क केवल इसलिए रखते हैं ताकि सांसारिक सुख-सुविधा पा सकें। उन्हें ईश-ज्ञान की चाह नहीं। शायद ऐसे लोग यह मानते होंगे कि ईश-ज्ञान कोई पारस पत्थर प्राप्ति तो है नहीं, जो लोहे को सोना बनाए। ईश्वर, अल्लाह की पूजा-नमाज में जो कुछ पढ़ा जाता है, वह सभी ज्ञान तो हम रखते हैं। इससे अलग ज्ञान, जो कुछ है, वही ज्ञान तो बिदअत है। ईश्वर एवं ईशदूत के ज्ञान एवं कार्य में नवीन कार्य जोड़ने का नाम ही तो बिदअत है। मैं कामिल पीर के सच्चे ज्ञान को क्यों लूं? हमें ईश्वर का पूजा ज्ञान जो ज्ञात है, वह सत्य है। पीरों का ज्ञान जन कल्याण या दोआ-तावीज के लिए सत्य हो सकता है, ईश्वर के लिए नहीं। ऐसे परमज्ञानी इतने बुद्धिमान होते हैं कि इनके आगे बड़े-बड़े विद्वान घुटने टेक दें। अपने परम ज्ञान से इनमें अपनी समस्या सुलझाने की शक्ति तो नहीं है, तभी तो किसी पीर या गुरु की शरण में वे सिर झुकाए, दांत निपोरे आते हैं। उन्हें कामिल पीर की दोआ से लाभ मिलता है, परन्तु यह भी जानने का प्रयास वे नहीं करते कि वही दोआ, वह रोज पढ़ते हैं, उससे उन्हें लाभ क्यों नहीं मिलता? यह लाभ व्यापार से भी यह महसूस नहीं कर पाते कि दोआ में असर इसलिए हुआ, क्योंकि वह ईश-ज्ञान से परिचित है। हमारे पढ़ने का प्रभाव इस कारण नहीं मिला, क्योंकि हम लाभ-ज्ञान के विद्वान हैं।"

सैय्यद साहब ने खुलकर बताया- "आजकल दोआ, तावीज, तन्त्र, मन्त्र के अत्याधिक विद्वान गांव-शहर में बाबा, महाराज, गुरुदेव, जनाब, हजरत बनकर जन-सेवा कार्य में व्यस्त रहते हैं। वे काफी परिश्रमी होते हैं। उन्हें जनता से अत्यन्त प्यार होता है। वे सदैव भीड़ जुटाने के प्रयास में रहते

हैं। आखिर उन्हें जनसेवा करनी है, जब जन ही नहीं होंगे तो वे सेवा कार्य किसके साथ करेंगे? इसलिए वे अपने प्रचार-प्रसार से जन-जन को अपनी शक्तिप्राप्ति का ज्ञान बांटते हैं। अगर जन की संख्या घटी या समाप्त हुई तो वे फौरन जन-प्रेम में स्थान परिवर्तन करते हैं। जनता यदि उनके नाम बदलने से प्रभावित हुई, तो वे नाम, रुप-रंग सभी बदल डालते हैं। आखिर उन्हें जन-सेवा करनी है। कुछ ऐसे ही जन-सेवक चर्चित मजारों पर भी जनसेवा कार्य में शिथिलता नहीं बरतते। मजारों पर जनता दूर-दराज की भारी संख्या में आती है। ऐसी जनता की भींड़ ही उन्हें प्रिय है, जन सेवा कार्य के लिए जनता जहां ज्यादा मिले, वहीं वे अपनी जनसेवा दूकान तत्काल खोल देते हैं। उनका पेशा यही है। मगर वे जनता के सम्मुख शर्माते हुए बताते हैं- जनता का दर्द तो हमें देखा नहीं जाता। मैं लेन-देन वाला बाबा नहीं हूं। मुझे आपने पहचाना नहीं। मैं जन-सेवक हूं। जन कल्याण की शक्ति ईश्वर ने एक रात मुझे स्वप्न में दे दी। प्रभु बोले- जा, संसार का कल्याण कर। किसी से कुछ लेना नहीं। दान ले सकते हो। पूजापाठ शुल्क भगवान के नाम पर ले लेना। अपने दर से किसी को भी बिना कुछ लौंग, भभूत दिए खाली मत लौटाना। इस तरह के जन-सेवक कभी पीर बन जाते हैं, कभी त्यागी बाबा। अब इन्हें भी कोई मूर्ख ईशकृपा प्राप्त या ईश-पुरस्कृत पीर समझे तो हम क्या करेंगे?

आज ठगी, शोषण की घटनाएं ऐसे लोगों द्वारा नए-नए रुपों में जारी है। उन्हें यह इल्म भी नहीं कि कामिल पीर भी किसी को दोआ-तावीज देता है, मगर वह दूकानदारी में मशगूल नहीं रहता। वह ईश-ज्ञान बांटने के लिए तो भरपूर समय लगाता है। मगर भींड़ जुटाने से उसे नफ़रत होती है। कामिल पीर का भी कोई पीर होता है। उसकी पीर-वंशावली होती है। इस तरह की तमाम ऐसी बातें हैं, जिससे कामिल पीर या पूर्ण सद्गुरु को हम पहचान सकते हैं।"

ईश-सन्त श्री महमूद रजा साहब के इस खुलासे ने अवाम की आंखें खोल दीं। वे काली कॉफी की चुस्की लेते हुए बोले- "आज लोग जाने कैसे अल्लाह का कलाम पूरी तरह पढ़ लेते हैं। मेरे अजीज दोस्त सर इकबाल अली अहमद हैं। वह आज 24 साल 9 माह 10 दिन से अंग्रेजी जुबान में- 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम, बिस्मिल्लाहहिर्रमानीर्रहीम' का भावार्थ पढ़ा रहे हैं। अनुमान है अभी दस साल इसी की विवेचना चलती रहेगी। उन्हें हैरत है कि कुरआन किसी सामान्य मनुष्य की वाणी या शब्द नहीं हैं। फिर आम इन्सान उसे कैसे इतनी जल्दी पढ़ लेता है। वे यह भी कहते हैं कि उसके अनुवाद करके नाना-नाना प्रकार की गम्भीर भूलें करने वाले भी आज सीना ठोंक कर दावा पेश करते हैं। जिन्हें ईश्वर की पहचान नहीं, वह ईश्वर के सन्देश को कैसे समझेगा? सर इकबाल ने मुझसे कहा कि कुरआन के सारे वाक्य वार्तालाप के रुप में हैं। वार्तालाप का सत्य अर्थ ज्ञान कोई शाब्दिक-अनुवाद से सही अर्थ या भाव कैसे ले सकता है? ईश्वर और नबी या ईशदूत के मध्य वार्तालाप जो हुए हैं, कुरआन नाम उसी संग्रह का है। सामान्य मनुष्य ईश्वर और नबी के मध्य बिना ईश्वर या नबी से

सम्पर्क किए क्या उस वार्ता को समझने का दावा कर सकते है? अगर नहीं, तो फिर वे कौन से लोग हैं, जो ईश–कथन के गलत और भ्रामक अर्थ प्रस्तुत करने में अपना पुण्यकर्म समझते हैं? हमारी मजहबी मान्यताएं क्या यह एजाजत किसी इन्सान को देती है कि वह ईश्वर के कथन की गलत व्याख्या करे तथा ईश्वर के ही बन्दों को गुमराह करे। सर इकबाल ने कहा कि यह कार्य कोई करे मगर वह ईश्वर का बन्दा है, यह कहना गलत होगा। ईश्वर का बन्दा, ईश्वर के सन्देश की सत्यता का बिना सत्यापन किए यदि असत्य भावार्थ करता है, तो वह ईश्वर–विरोधी आचरण का दोषी है। वह ईश–बन्दा भी नहीं कहला सकता। क्योंकि बन्दा वह है, जिसका सर्वस्व मालिक का है। बन्दे को यह अधिकार कहां, जो अपने मालिक के कथन या आदेश को असत्य रुप में प्रचारित–प्रसारित करे। अगर बन्दा ऐसा करने लगें तो यह प्रमाणित होता है कि वह अपने स्वामी के प्रति वफादार नहीं है। वह अपने स्वामी का बन्दा भी नहीं रहा, क्योंकि बन्दे ने स्वामी की अवमानना की। यह ईश्वर के प्रति सर्वाधिक घृणित कर्म है। ऐसे काम बन्दे तो नहीं मगर ईश्वर के शत्रु कर सकते है।"

सैय्यद महमूद साहब ने इब्लीस एवं शैतान के सन्दर्भ में अनेक रहस्यमय बातें बतायीं– "हम उस एक ईश्वर–रब की पूजा में हैं। मगर हमारे जेहन, विचार और दिल में तरह–तरह के ख्याल आते रहते हैं। इस तरह के ख्याल को ही नफ्स या इन्द्रिय का शैतान कहा गया। ईब्लीस और शैतान में फर्क है। इब्लीस, जिन्नात कौम का व्यक्ति है तथा खुदा का एक नाफरमान बन्दा है। अल्लाह के बन्दे अधिकतर नमाज या पूजा में जब नाना प्रकार के विचारों में घिरते रहते हैं। कोई उनसे पूछे कि आपकी नमाज या पूजा में एकसूई कायम रहीं? वह फौरन कहते हैं कि मैंने नमाजें अदा की। हमने उस मालिक की पूजा कर लीं। वह यह नहीं बताते कि नमाज या पूजा करते समय कौन–कौन से विचार या दृश्य या बातें मन में आती रहीं। जबकि यही सत्य या असत्य नमाज या पूजा की एक छोटी और प्रत्यक्ष पहचान है। सत्य–असत्य नमाज या पूजा हमने कह दिया। यह बात कैसे समझी जाएगी? जरा नमाज की नीयत पर ध्यान दें। नमाज की नीयत में हम मूल बात यही कहते हैं– "नीयत की मैंने दो रेकात नमाज फर्ज, वास्ते अल्लाह तआला (ईश्वर) के। मुंह मेरा काबा शरीफ की तरफ। अल्लाहो अकबर।"

नीयत हमारी नमाज की है, जो केवल ईश्वर या अल्लाह के लिए है। स्पष्ट है जो नमाज हम पढ़ने जा रहे हैं, वह अल्लाह के लिए ही है। सवाल यह है कि नमाज़ में जो कुछ पढ़ा जाता है, वह हमें याद है। हमने अरबी भाषा में नमाज की सारी बातें पढ़ लीं। यहां मसला यह है कि नमाज की नीयत उस पवित्र और सबसे महान ईश्वर के लिए है। इसलिए हमारी जुबान पर नमाज़ में पढ़ी जानेवाली अरबी आयत या दोआ हो, मगर दिल, दिमाग, मन, विचार में 'अल्ला–हो–अल्ला' हो। उस अल्लाह के सिवा कुछ भी न हो। अल्लाह के वास्ते पढ़ी जाने वाली नमाज की वास्तविक स्थिति यही है। मगर हम अपने दिल, विचारों में नमाज के वक्त उभरते विचारों को गलत नहीं मानते। हम जाने कैसे यह भूल जाते हैं

कि जुबान तो नमाज की अरबी दोआ-आयत के पढ़ने में मशगूल है, परन्तु इस बीच हमारे मन-हृदय, विचारों में नजर आने वाले ख्याल, हमारी नमाज की नीयत में खलल डाल रहे हैं। खुदा के लिए पढ़ी जाने वाली नमाज में अल्लाह के सिवा जो भी विचार, ख्याल आते हैं, यही हमारी नमाज को पूरी तरह सच्ची नमाज बनने में रुकावट है। क्योंकि नमाज़ जुबान से तो पढ़ी गई, मगर अन्दर छिपे दिल, दिमाग और विचारों में अल्लाह का जिक्र या ख्याल की जगह, अन्य विचार उठते रहे। इन विचारों को ही नफ्स या ईन्द्रिय कहा गया। इन्हीं इन्द्रिय या नफ्स की वासना, चाहत, ईच्छा आदि को शैतान कहा जाता है।

जिन-जिन्नात, भूत-प्रेत, आसेब का नाम शैतान नहीं बताया गया। बल्कि **शैतान वह, जो रहमान की पूजा-नमाज में खलल (बाधा) डाले।** यह खराबी हमारी नफ्स या इन्द्रिय की मानी जाती है। नफ्स या इन्द्रिय से अल्लाह का हर बन्दा जुड़ा है। इस श्रेणी में हमारे पैगम्बर, नबी, रसूल, ऋषि, तीर्थकर तथा फकीर, सन्त अपने प्रकट काल से ही नहीं आते है। इन्द्रिय या नफ्स के साथ कोई मुरीद या आध्यात्मिक शिष्य रहता है। परन्तु अपने पूर्ण गुरु के बताए तरीके से वह नफ्सकुशी करता है। जब वह फनाफिल शैख, फनाफिर्रसूल तथा फनाफिल्लाह की मन्जिल पाता है, तो उसे खुदा का ईनाम मिलता है। ईनाम पाने वाले बन्दे में नफ्स या इन्द्रिय के खुराफात खत्म हो चुके होते हैं। उन्हें ही अल्लाह अपना ईनाम देकर वली-औलिया या ईश-योगीराज, घोषित करता है। इसलिए वली भी नफ्स के प्रकोप से पाक-साफ होते हैं। कामिल पीर भी अपने नफ्स से जेहाद करके फनाफिल शैख, फनाफिर्रसूल तथा फनाफिल्लाह के मकाम तक जाते हैं। फिर उन्हें अल्लाह अपने ईनाम से नवाज देता है। यह भी भेद खुला की कामिल पीर भी अपने नफ्स को मारते हैं। यह जानकारी यह साफ बता रही है कि पीर, वली-औलिया को ईनाम, अल्लाह तभी देता है, जब वे नफ्सकुशी करके अल्लाह की पूजा-नमाज और जिक्र-अजकार करते हैं। यह सच्चाई बता रही है कि नफ्स का मामूली अंश भी अगर बन्दे में है, तो उसकी पूजा-नमाज का महत्व अल्लाह की नजर में काबिले-कूबूल नहीं है। इसलिए नमाज या जिक्र-अजकार के पहले हमें नफ्सकुशी करनी होगी। इस नफ्स कुशी का तरीका कामिल पीर जानते हैं। नफ्सी शैतान एक दिन या दस दिन में शिकस्त नहीं होता। इसके लिए जेहादे अकबर अर्थात- सर्व महान ईश्वर प्राप्ति हेतु युद्ध करना पड़ता है। जब तक अल्लाह ही अल्लाह या ओम-ओम दिल, मन, विचार, मस्तिष्क पर अंकित न हो जाए, यह बड़ा जेहाद, ईश्वर के बन्दे को निरन्तर नियमानुसार करनी पड़ती है। अपने नफ्स को शत्रु मानकर उस पर 'लाईलाहअ' (नहीं कोई पूज्यनीय) के हथौड़े से प्रहार किया जाता है। जब नफ्स मुर्दा होने लगता है तो 'ईल्लल्लाह' के ईत्र का अपने दिल में स्प्रे किया जाता है। इसे करते रहने से एक दिन हमारे दिल, दिमाग, विचारों में सिर्फ 'ईल्लल्लाह' की ही खुश्बू बच जाती है। अब हमने अपने नफ्स को गैरुल्लाह या अल्लाह के गैर से

पाक किया। यह दिल की पवित्रता या पाकी हर बन्दे के लिए अनिवार्य है। अल्लाह पाक है, इसलिए उसकी नमाज या इबादत के लिए हमारे जिस्म के अन्दर की चैतन्य वस्तुएं हटाकर दिल को पाक-साफ रखना पड़ेगा। उस पाक को पाने के लिए अपने दिल को पाक रखना जरुरी है।"

फकीरे-हक़ श्री सैय्यद साहब ने ईश-पूजा की सत्यता बेनकाब करते हुए आगे कहा- "यही तरीका कामिल पीरों का है। उन्हें यह ज्ञान ईल्मे सीना के रुप में पीर दर पीर मिलता आ रहा है। इनके पीरों के शेजरे में एक नम्बर पे ईश्वर के ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम का नाम है। यह नाम रसूल वाले कहलाने के लिए नहीं है। वास्तव में अल्लाह की सच्ची इबादत का ईल्म रसूल, नबी, पैगम्बर, तीर्थकर, ऋषि आदि सारे ईशदूतों को होती है। यह ज्ञान, जो योग्य होते हैं, ईशदूत उन्हें ही देते हैं। मेरी इस बात को ध्यान से समझ लें। ईशदूत तो वे ईश्वर के सारे बन्दों के लिए हैं, मगर ईश-मिलन का ज्ञान वे अपने उसी अनुयायी को बताते हैं, जिनके दिलों में ईश-मिलन की सच्ची तड़प होती है। यह ईश-ज्ञान का गुप्त रहस्य सभी बन्दों के लिए नहीं है। एक सूफी पीर ने कहा है-

मुहब्बत के लिए कुछ खास दिल मख्सूस होते हैं।
ये वो नगमा है, जो हर साज पर गाया नहीं जाता।।

ईशदूत की यह गोपनीय ईश-विद्या, सभी को प्रदान की जा सकती है, मगर ईश्वर का सच्चा प्रेमी उसे पहले बनना होगा। ईशदूत, ईश-ज्ञान देने के लिए ही आए हैं, वे सच्चे-ईश प्रेमियों को ईश-ज्ञान से वंचित नहीं करते। यही वह गुप्त ईश रहस्य विज्ञान है, जो ईशदूत द्वारा हजरत अबू बकर सिद्दीक, हजरत उमर फारुके आजम, हजरत ऊषमान गनी तथा हजरत अली करमुल्लाह वजहू को प्रदान की गई। ईशदूत ने वही ज्ञान असहाबे-सुफ्फा आदि को दिया। ईश-दूत को जो-जो ईश-प्रेमी दिखे, उन्होंने इस ईश गुप्त ज्ञान को उनमें बाखुशी बांटा। इसी कारण यह ईश्वर का सत्य ईश-सम्पर्क मार्ग, छिपे तौर पर कुरआन और हदीस में मौजूद है। यह नमाज, रोजा, हज, जकात, तौहीद या अजान या कल्मे की तरह प्रकट नहीं किया गया। इसीलिए मेरे दोस्तों में प्यारे दोस्त श्री साधु बाबा बारम्बार दुनियांवालों से फरमाते रहते हैं-

यह ईश्क नहीं आसां, इतना तो समझ लीजै।
एक आग का दरिया है, और डूब के जाना है।।

फकीर सैय्यद साहब वहदत की मस्ती में फरमाते रहे- "खुदा का ईश्क आसान नहीं है। अगर समझना है तो बस इतना समझ लीजिए कि ईश्के खुदावन्दी की राह एक आग की जलती नदी है, अगर कोई उस पाकजात खुदा तक पहुंचना चाहता है तो उसे पहले यह ईल्म जानना होगा कि आग की नदी में डूबकी मारकर किस तरह जाया जाता है। मेरे साधु बाबा के कहे इस शेएर का ताल्लुक सीधे-सीधे अल्लाह के नबीए अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व सल्लम की ओर ईशारा कर रही है।

खुदाई आग की नदी किस तरह डूब कर पार करें कि उस वहदहू ला शरीक से मिलन हो जाए। यह ज्ञान कौन बताएगा कि ईश्वर मिलन एक अल्लाह के आशिक बन्दे को कैसे हासिल हो। अल्लाह के रसूलल्लाह हैं, अल्लाह के नबीअल्लाह हैं। जरा शब्द पर ध्यान दें, वह रसूलल्लाह यानी अल्लाह के रसूल हैं। वह नबीअल्लाह यानी अल्लाह के नबी हैं। हम फिर यह कैसे नहीं समझते हैं कि जो अल्लाह का है, वह अल्लाह के पास है। जो पास रहेगा, वह अल्लाह से कोई कैसे मिले, यह बात खूब जानता है।

जाहिर हो गया कि अल्लाह के प्रेम-विरह में पागल प्रेमी अगर अल्लाह से मिलन चाहता है, तो पहले अल्लाह के नबी-रसूल से मिलना होगा। अगर वह मिल गए, फिर तो उनसे ईश-मिलन की राह हमें हासिल हो जाएगी। अब नबी या रसूलल्लाह से हम कैसे मिलें? उन्हें तो दुनियां से छिपे आज 1429 हिजरी (सन् 2008 ई0) में 1418 वर्ष बीत गए हैं। वे ग्यारह हिजरी में दुनियां से परदा फरमाए हैं। जब बन्दा इस तरह की मुश्किल में फंस जाएं तो उसे कामिल पीरों से तत्काल सम्पर्क करना चाहिए। जानते हैं क्यों? कामिल पीरों के शेजरा शरीफ (गुरु वंशावली) में अव्वल नम्बर पर हजरत नबीए-पाक मौजूद हैं। दूसरे नम्बर पर उनके प्यारे खलीफा हज़रत अली करमुल्लाह वजहू मौजूद हैं। इस तरह अल्लाह पाक का ईल्म रसूले पाक को मिला। और रसूले पाक का ईल्म हजरत अली हुजूर को मिला है। उनसे वही मखफी ईल्म (गुप्त ईशज्ञान) उनके खास मुरीदों को प्राप्त हुआ। इस तरह अल्लाह पाक तक पहुंचने का वही सम्पूर्ण पोशीदा ईल्म आज के मौजूद पीरों तक पहुंचता आ रहा है। यह ईल्म किताबों की शक्ल में नहीं मिलेगा। इस ईल्म का जिक्र अगर कहीं पढ़ने में आता है, तो उस ईल्म से नबीए पाक और अल्लाह पाक नहीं मिल पाएंगे। उसी ईल्म की वह किताब शत-प्रतिशत खरी हो तो भी प्राप्ति नहीं हो सकती है। आप सोचेंगे क्यों? हम किसी पुस्तक से वही ज्ञान पढ़कर अमल करें तो ईशदूत और ईश् मिलन क्यों नहीं होगा? कारण मात्र इतना है कि जो कामिल पीर है, उन्हें यह ईल्म उनके पीर ने हुक्म के साथ सहर्ष प्रदान किया है। यह ईल्म, नबीए पाक ने हजरत अली हुजूर को भी हुक्म के साथ दिया है। यह हुक्मी-ईल्म (आदेशित ईश ज्ञान) है। यह अध्ययन या पुस्तक से प्राप्त ईल्म नहीं है। इसलिए पुस्तक से पढ़कर यही ज्ञान मिलन नहीं करा सकता। जब कामिल पीर उसी ईल्म को आज्ञा के साथ किसी को प्रदान करते हैं, तो वह मुरीद लाभान्वित होने लगता है। इसी गोपनीय इबादत को आज के दौर में हमें कामिल पीरों की खानकाहें देती आ रही हैं। खूब होश में रह कर जान लें, कामिल पीरों की निस्बत पहले रसूलल्लाह से है, फिर अल्लाह से। इनके सम्पर्क में दोनों हैं। इसीलिए इनकी जिम्मेदारी में है कि वे अल्लाह के आशिक बन्दों को अल्लाह तआला और उनके पैगम्बर के सीधे और सच्चे रास्ते पर चलाएं। कामिल पीर इस शैतानी दौर में भी सच्चे खुदाई रास्ते के रहनुमा हैं। इनसे निस्बत रखना, अल्लाह के सीधे रास्ते पर चलना है। कामिल पीर की दुनियां में इज्जत, शोहरत क्यों है? यह राज़ की बात तो है, मगर है सौ फीसदी सत्य। कामिल पीरों की गुप्त

खुदाई तालीम के बल पर दुनियां में अल्लाह के वली-औलिया आते रहते हैं। हकीकत में यही अल्लाह के नेकबन्दे, ईमानवाले बन्दे और वली-औलिया के उत्पादक हैं। आप दुनियां के किसी वली पर नज़र डाल लें। सभी पहले अपने पीर के ही मुरीद हैं।"

सैय्यद साहब ने इब्लीस के सन्दर्भ में दिल-दिमाग को हिला देने वाला सवाल पैदा किया। वह बोले- "इब्लीस के नाम पर हम अपनी कमियां, गल्तियां और हरकतें करके खुद को पाक-साफ बताते रहते हैं। अगर हम नमाज नहीं पढ़ते, हम रोजा नहीं रखते तो कह देते हैं कि इब्लीस ने हमें रोक दिया। हमने जुआ खेली, शराब पी, चोरी किया, हत्या किया, तो साफ यह कहते हैं कि हम क्या करें, इब्लीस मरदूद ने हमें बहका दिया। इस तरह के न जाने कितने हमारे गन्दे काम हैं, मगर हम कभी कुबूल नहीं करते कि हमने किया। हमारे हर गन्दे काम के लिए बचाव का मार्ग, इब्लीस तो है ही। मुझे इस तरह की बातें सुनने में अजीब लगता है। इब्लीस का शरीर आग से है। वह जिन्नात कौम का एक सदस्य है। यह उस दौर का जिन्नात है, जब इन्सान की उत्पत्ति नहीं हुई थी। इब्लीस था तो जिन-परिवार का, मगर ईश्वर की इबादत खूब करता था। हजरत आदम की पैदाईश के बाद से ही नस्ले-आदम का आरम्भ माना जाता है। तबसे आदमी के रुप में ही अल्लाह ने अपने सारे नबी पैगम्बर, ऋषि, अवतार आदि को अपनी सच्चाई बताने के लिए भेजा। इब्लीस नामक जिन तो आदम से काफी पहले का है। कहते हैं कि उसने छः लाख साल से भी ज्यादा इबादत उस एक पाक रब की की है। अल्लाह पाक उसकी इबादत से जब खुश हुआ, तभी तो उसे अपना ईनाम दिया। इब्लीस को अल्लाह ने अपने नूरानी फरिश्तों का उस्ताद बनाया था। यही इब्लीस पर अल्लाह का ईनाम है। यह सवाल उठता है कि अल्लाह की वह कौन सी इबादत इब्लीस ने की थी, जिससे अल्लाह राजी हो गया था। वह इब्लीस की इबादत क्या थी? दुनियां के सारे इस्लाम के विद्वानों से मेरी यह अपील है कि वह इब्लीस की इबादत क्या थी? इस बात की जानकारी सम्भव हो तो आप हमें बताएं। जवाब आप 'खानकाह' के पते पर भेज सकते हैं?"

उन्होंने इब्लीस के बारे में कहा- "इब्लीस का नाम हम अपने हर बुरे काम के साथ जोड़ देते हैं। उसकी आड़ में इन्सान अपना बचाव तो कर लेता है। मगर यह कैसे मान लिया जाए कि वही सारी इन्सानी बुराई की जड़ है? इब्लीस है कौन? वह खुदा का हुक्म न मानने वाला एक नाफरमान और गुस्ताख बन्दा है। उसे जब सजा दी गई तो बोला था कि ऐ पाकजात मैं तेरे बन्दे को तुझसे बहकाऊंगा। अल्लाह पाक ने कहा था- तू मेरे खास बन्दों को नहीं बहका सकता। इब्लीस यह बखूबी जानता है कि अल्लाह के किस बन्दे को बहकाने से अल्लाह खफा होगा। जब बन्दा अपने दिल-दिमाग से नफ्सीयाती शैतान को हटाकर अल्लाह की सच्ची नमाज या पूजा में मशगूल होता है, तो ऐसे बन्दे के पीछे इब्लीस लगता है। इब्लीस उन बन्दों की परवाह नहीं करता, जो नफ्सीयाती शैतान के निर्देशन

पर चलते हैं। इसलिए वह बन्दे, जिन्हें ख़ुदा का सच्चा जिक्र या सच्ची नमाज अदा करनी नहीं आती, वह उनका चक्कर नहीं काटता। इब्लीस से भी ज्यादा खतरनाक हमारा नफ्सी शैतान है। वह दिलों में छिपता है। उसे जाहिर में हम नहीं देख पाते, मगर वह हमारे हर पूजा, नमाज में शरीक रहता है। इसीलिए पहले अन्दर के शैतान को मुर्दा करें। इब्लीस से लड़ने के लिए अल्लाह ने बहुत से हथियार हमें दिए हैं। अपने नफ्स के शैतान का आरोप, इब्लीस के सिर पर मत डालें। नफ्स पालने, बढ़ाने और उसे ताकत देने में हम शामिल हैं। हर गल्तियां हम अपने नफ्स की ख्वाहिश पर करते हैं। इसलिए नफ्सी शैतान के महाजाल को काटकर उसे अपने अन्दरुनी घर से हमेशा के लिए भगाईए। इसी को नफ्सकुशी कहते हैं। इसी **नफ्सकुशी का दूसरा नाम जेहादे अकबर है।"**

सैय्यद साहब कुछ पल खामोश रहे। उन्होंने इस दौर की इबादत का एक नक्शा पेश किया– "हमें अल्लाह पाक की इबादत करने वालों पर बजाहिर अफसोस होता है। नीयत तो वह नमाज की करते हैं। मगर उनके दिलों के बुत इतने सक्रिय होते हैं कि वह नमाज में भी लाभ–हानि, कार–फ्लैट, लोभ, ईच्छा आदि के तमाम कारोबार करते रहते हैं। अकेले की नमाज में तो हम और स्वतन्त्र हो जाते हैं। बाजमात पढ़ी जाने वाली नमाज में हमें नमाज की नीयत में यह भी कहना पड़ता है कि 'पीछे इस इमाम के'। यानी अब इमाम साहब के पीछे हमें आमीन कहनी है। नमाज तो वह पढ़ा रहे हैं। हमारे कान उनके 'केरत' (पढ़ना) को सुनते जा रहे हैं। दिल–दिमाग के शैतान कभी हमें चिन्ता सुझाते हैं, कभी परेशानी से निकलने की तरकीब बताते हैं। रुकू, सजदा के सारे अरकान हो रहे हैं। बाहर से कोई देखे तो कहेगा कि हम खुदा की इबादत में समर्पित हैं। मगर हम समझते हैं कि हमने सलाम फेरने तक अपने तमाम काम इधर–उधर दौड़ कर निबटा लिए। आखिर ऐसी नमाज पढ़ने–पढ़ाने की ट्रेनिंग हमने किससे ली है? नबीए पाक की नमाज की बात हीं क्या है। उनके खलीफा हजरत अली करमुल्लाह वजहू की नमाज को हमने सुनी है या नहीं। पांव में तीर चुभा है। निकालने पर काफी दर्द हो रहा है। लेकिन जब वह नमाज में थे तो वही तीर निकाल लिया गया। वाह रे नमाजे आशिकी, वह नमाज कैसी थी, कि उन्हें जिस्म से तीर के निकालने का पता ही नहीं चला। वह किस तरह बन्दगी में इतने मुस्तगरक (डूबे) हो गए कि उन्हें तीर के निकलने का दर्द तक न हुआ। आज हमारी नमाज में ऐसे खुदाई ईश्क का जज्बा कहां चला गया? हमारे सहाबा एकराम की नमाजें क्या ऐसी ही थीं, जो आज हम अदा कर रहे हैं? आखिर हमारी नमाजें, पूरी तरह से उस पाक परवरदिगार की बारगाहें पाक में क्यों नहीं होती हैं? नमाज में हजरत अली हुजूर हैं, वह उन्हीं आयात (ईश–सन्देश) की तिलावत (पाठ) में हैं, जो हम सभी पढ़ते हैं। फिर वह नमाज में कहां थे कि उन्हें जिस्म से निकाले जाने वाले तीर का पता नहीं चला? यह साफ बात है कि वह दिल, दिमाग से दुनियां में नहीं थे। जिस्म दुनियां है। मन, विचार भी दुनियां है। अगर हम दुनियां में हैं, तभी दुनियां की यादें, दर्द, दुःख, कष्ट, चिन्ताएं हमें

महसूस होतीं हैं। जिस्म में चुभे तीर का निकलना, अगर हजरत अली को मालूम न हुआ, तो यह बात सत्यापित है कि वह न तो दुनियां में थे और ना ही दुनियां के साथ थे। वह फिर नमाज में कहां थे? यह कैफियत हमें दावे के साथ यह कहने पर मजबूर करती है कि वह सचमुच उस पाक जात और बेनेयाज रब की बारगाह में थे। जिसकी पूजा की नीयत उन्होंने की थी, वह उसी के सामने थे। वह उसे देखकर उसी की तारीफें बयान कर रहे थे। 'सब्हानअ कल्ला हुम्मअ व बेहम्देकअ व तबारकस्मोकअ व तआला जद्दोकअ व लाएलाह गैरोकअ।' वह कह रहे थे कि ऐ मेरे प्यारे रब तेरी जात ही यकीनन पाक और पवित्र है। यकीनन तू तो सारे आलम में सबसे पाक है। सब से आला है और तू ही तो सबसे बड़ों में सबसे बड़ा और शानदार है। हम तेरी खूबियों को देख-देख के हैरान हैं। हम तेरी बरकतों पे कुर्बान हैं। ऐ मेरे रब जितना मैं समझता हूं यकीनन आप उससे भी ज्यादा खूबियों वाले हैं। ऐ मेरी जिन्दगी के हर एक सांसों के मालिक, आप मेरे ईल्म से भी ज्यादा बरकत देने वाले हैं। सच, आपके सिवा कोई यकीन के लायक नहीं। ऐ मेरे रब, सच कहूं आपके सिवा कोई मौजूद नहीं। आपके सिवा मेरी नज़रों में कोई मन्जूर नहीं। आपकी तारीफें बयान करने की किसमें कुव्वत है, जब सब-सब और सारी-सारी तारीफें आप ही की हैं। आप ऐसे तारीफ के मालिक हैं, जो हमेशा से कायम है और हमेशा रहेगा। ऐ मेरे रहमान, मैं आपके रहमो-करम पे नाजां हूं। ऐ सारे आलम के गफ्फार, अगर आप सबसे बड़े रहीम और करीम न होते, तो सारी दुनियां का वजूद आज न होता।

--तो यह है उस नबीए-पाक के एक कामिल खलीफा हजरत अली करमुल्लाह वजहू की नमाज। इससे जाहिर है कि बन्दा, जब नमाज की नीयत करे तो उस पाक रब्बल आलमीन की बारगाह में हो। उसके सामने उसकी 'सना' (प्रशंसा) करे। उसके सामने उसकी प्रशंसा करे। उसी से शुरु करके उसी से उसका सीधा रास्ता मांगे। उसी को देखकर वह पुकार उठे- अल्लाहो अकबर। फिर उसी के सामने झुके (रुकू) फिर सजदा करे। यही हकीकी नमाज है।

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने बताया- "हम मकतब, मदर्सा या घर में या किसी भी जगह नमाज के तरीके सीखते हैं। नमाज में पढ़ने वाली दोआएं जब हम याद कर लेते हैं तो फिर हमें अब चाहिए वह व्यक्ति, जिससे सच्ची नमाज अदा करने का सलीका हम सीख लें। सच्ची नमाज की हकीकत हुजूर नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम को मालूम है। उन्होंने वह सच्चा तरीका अपने सहाबा हजरात को बतायी है। उनसे यह ढ़ंग हजरत इमाम हसन एवं हजरत इमाम हुसैन सरकार तक पहुंचा। इन के जरिए हजरत इमाम जैनुल आब्दीन अलैहिस्सलाम तक आया। फिर खुदा की सच्ची नमाज और सच्चे इबादत का ईल्म हमारे बारह इमाम, चौदह मासूमीन तक आया। आज पीरों के सिलसिले में वही ईल्म तरोताजा है। यही वजह है कि अल्लाह पाक ने पीरी-मुरीदी के रास्ते को खत्मे-नबूवत (ईशदूत आगमन समाप्ति) के बाद भी जारी रखा है। ताकि उसे चाहने वाले सच्चे बन्दों को सच्ची राह हमेशा

उनसे ही मिलती रहे। खत्मे-नबूवत उसे कहते हैं कि ईश्वर की तरफ से अब कोई ईशदूत मानव के रूप में धरती पर नहीं आएंगे। यह नबूवत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम पर खत्म हुई। यानी ईश्वर के अन्तिम ईशदूत वह हैं। अब कोई नबी, पैगम्बर, रसूल इस मानव-धरती पर नहीं आएंगे। अगर कोई खुद को खुदा का अवतार या नबी या पैगम्बर, तीर्थंकर या मेसेन्जर ऑफ गॉड होने का दावा करे, तो वह झूठा है।

दुनियां में कुछ लोग ऐसे हैं, जो अपनी विद्वता और चतुरज्ञान से नबी, अवतार, रसूल या पैगम्बर बनने की कवायदें करते रहते हैं। कुछ तो अपने को वली या कामिल पीर भी समझने लगते हैं। उनकी शैतानी-समझ यह होती है कि मानव समाज उनकी सत्यता नहीं पहचान पाएगी। पर उनका भेद खुल जाता है। इसलिए झूठे नबी या झूठे रहनुमा से सावधान रहें। आजके दौर में ऐसे झूठे दावेदारों की आंधियां तेजी पर हैं। नमाज के अन्दर क्या-क्या पढ़ा जाए? सोने के पहले या सोने के बाद कौन सी दुआएं पढ़ी जाएं। खाना खाने के पहले और बाद में क्या-क्या दोआएं पढ़ी जाती हैं। सफर की दोआएं क्या हैं? इस तरह की तमाम दुआएं हमें पढ़ाई-बतायी जाती हैं। पर अफसोस आज कोई यह नहीं बताता कि इन दुआओं के पढ़ने से पहले हम अपने दिलों को पाक कैसे करें? गुस्ल, वजू से बदन पाक हो सकता है, दिल-दिमाग नहीं। हम जुबानी अरबी, संस्कृत या अंग्रेजी में पूजा-प्रार्थना, नमाज, नाम-जप, जिक्र-अजकार तो कर सकते हैं, पर दिल को किस तरह पाक करके हम उसे पवित्र ईश्वर की याद में लगाएं, यह ज्ञान तो हमें लेना पड़ेगा। कामिल पीरों का समुदाय सत्य जुबानी जाप, हृदय जाप, आंत्मिक जाप तथा गुप्त जाप एवं दर्शन-जाप के ज्ञाता हैं। उन्हीं के सम्पर्क से ईश-प्राप्ति ज्ञान की प्राप्ति सम्भव है। ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने, ईश-सम्पर्क ज्ञान, हजरत अली करमुल्लाह वजहू को प्रदान किया। हजरत अली करमुल्लाह वजहू के मुरीदों ने उसी सच्ची इबादत को उनसे सीखा है। आज सच्चे पीरों की खानकाहें, मठ, कुटी, आश्रम इसीलिए कायम हैं। **क्योंकि बन्दा सूरह फातेहा पढ़कर अल्लाह पाक से सीधा और सच्चा ईनाम वाला रास्ता मांगता रहता है,** अल्लाह पाक अपने कामिल पीरों के जरिए आज वही रास्ता दिलाता है। अल्लाह के बन्दे बारम्बार शैतान मरदूद से पनाह मांगते रहते हैं। कामिल पीर को यह ईल्म है कि शैतान मरदूद को खत्म किस तरह करें और कैसे उस पाक रब की बारगाह में हाजरी दें। हम कहते हैं कि वह पाक परवरदिगार एक है, उसका कोई साझीदार नहीं। कामिल पीरों के पास वही ईल्म है, जो अल्लाह के एक होने का तसदीक करा देती है। कामिल पीरों को अल्लाह और नबीए पाक सल्ले अला व सल्लम की कुर्बत हासिल है। ऐसी कुर्बतें पाने के लिए ही वह अल्लाह पाक के बताए इल्म से, फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह की मन्जिलें हासिल करते हैं। हर मुरीद या शिष्य अल्लाह की इबादत करते-करते जब अपने पीर में फना हो जाता है, तो इसी का नाम 'फनाफिल शैख' की मन्जिल

है। वहीं मुरीद जब यह तीनों मन्जिलें पा जाता है, तो इसके बाद अल्लाह तआला अपने ईनाम से उसे सरफराज करता है। अल्लाह का ईनाम जब मिला, तो वह खुदा का बन्दा, जो मुरीद हुआ है अब वही पीर बन जाता है। अल्लाह के बन्दे ने जब यह ईरादा किया कि उसे अल्लाह पाक के ईनाम वाले सीधे रास्ते पर चलना है, तो यहीं उसका मुराद या संकल्प है। कामिल पीर के सम्पर्क में, खुदा को पाने के मुराद (ईच्छा) से आया ऐसा व्यक्ति मुरीद कहलाता है। जो भी जिस पीर का मुरीद है, जरा अपने दिल से पूछे कि वह किस की मुराद के लिए मुरीद (शिष्य) हुआ है। यह जिम्मेदारी मुरीद की है। वह 'ईलाहअ' (कोई पूज्यनींय) को 'ला' (नहीं) करके 'ईल्लल्लाह' (अल्लाह, ईश्वर ही पूज्यनींय) को पाना चाहते हैं या वे पीर को इसलिए पकड़े हैं कि मुझे दुनियां को 'ला' (नहीं) नहीं करना है। मैं तो अपना 'ईलाहअ', यानी दुनियां की तरक्की के लिए मुरीद हुआ हूं। अगर हमें 'ईलाहअ' को ही पढ़ना है, हमें 'ला' (नहीं) नहीं करनी है, तो फिर हमारी मुराद बेहतर नहीं है। ऐसे मुरीद, उस पाकजात के पाने का ईल्म नहीं चाहते, तो वह मुरीद कहलाने के योग्य कहां है?''

उन्होंने आगे फरमाया– ''कामिल पीर आज भी हैं और इनके सिलसिले या पीर-वंशक्रम कयामत तक जारी रहेंगे। ऐसा क्यों होगा? वजह सिर्फ इतनी है कि इस जमीन पर कामिल पीरों का सिलसिला, ईश्वर की सच्चाई बताने के लिए मौजूद है। आज हम नकली पीरों या झूठे रहनुमाओं की पैरवी और निर्देशन में इधर-उधर भटक रहे हैं। जिनके ईल्म से केवल पूजा, नमाज, इबादत का जुबानी-ईल्म हासिल हो, ऐसी रहबरी करने से हमारे नफ्स के शैतानों की संख्या बढ़ती है। नफ्सकुशी या इन्द्रिय निग्रह जेहादे-अकबर (सर्वश्रेष्ठ जेहाद) है। अल्लाह को पाने के वास्ते जेहादे-अकबर का ईल्म किसी कामिल पीर से सीखें। नकली पीर आज बहरुपिए की शक्ल में आने लगे हैं। वे खुद को बड़ा जानकार दिखाने के लिए– जिक्रे लेसानी (जिह्वा जाप), जिक्रे-कल्बी (हृदय जाप), जिक्रे रुही (आत्मिक जाप) तथा जिक्रे सिर्री (रहस्य जाप) एवं जिक्रे-खफी (गुप्त जाप) का नाम खूब लेते हैं। मगर वे खुद इस ईल्म की सच्ची कैफियत से नावाकिफ होते हैं। ऐसे बेअमल-ईल्मवालों से भी बचना चाहिए। कामिल पीर की अलामत (लक्षण) तर्क (त्याग) है। वह नफ्स के शैतानों से प्यार नहीं करते। उन्हें प्यारे नबी सल्ले अला व सल्लम की मार्फत (सम्पर्क या सान्निध्य) हासिल है। वह अल्लाह तआला की मार्फत भी रखते है। वह अपने कामिल पीर की भी मार्फत से मालामाल है। खुदा के जिस बन्दे को यह तीनों मार्फत बखूबी हासिल है, वही कामिल पीर है। उस पीर से ही हमें नमाज का वह तरीका हासिल होगा, जिसके पढ़ने पर मेराज (ईश-मिलन) होती है। उस पीर से हमें शैतान को शिकस्त देने का वह ईल्म मिलेगा, जिससे बन्दे का दिल गैर-खुदा या बुत से पवित्र होता है। पीरी-मुरीदी का मार्ग हमारे ईशदूत या नबी का बताया सच्चा रास्ता है। यह रास्ता हमारे नबीए पाक के चार यार और तमाम सहाबा एकराम का है। यह रास्ता हजरत इमाम हसन व हजरत इमाम हुसैन

का है। यही सच्ची राह है। जिसके लिए सूरह फातेहा में जिक्र आया है। हमारा बातिन नफ्सी शैतान से पाक हैं तो वह इबादत सच्ची है। ऐसी इबादत जिन्हें हासिल है, वही अल्लाह की पनाह में हैं। जिस जिक्र-अजकार से अल्लाह के जल्वे और नबीए पाक के रुखे अनवर का दीदार होने लगे, वही इबादत सच्ची है। मगर यकीन जानिए, यह पाकीजा इबादत बिना कामिल पीर की रहबरी के मुश्किल है। आप अल्लाह पाक से यह कहकर कैसे पनाह पाएंगे कि ऐ पाकजात, हमने तेरी नमाज पढ़ी, तेरी इबादत की, तेरा हज किया अब तेरी मर्जी तू कुबूल करे या न करे।"

उन्होंने सख्ती से कहा- "अगर रब्बे जुलजलाल (पवित्र ईश्वर) ऐसे लोगों से पूछे कि तुमने मेरे हुक्म और मेरे नबी के बताए ईल्म से मेरी इबादत क्यों नहीं की? तब जवाब क्या होगा? क्या हम यह कहकर बच जाएंगे कि ऐ पाक परवरदिगार मुझे ईल्म नहीं था। अल्लाह ने अगर यह फरमाया कि ऐ बन्दे, हमने तो अपने नबी के जरिए तुम्हें यह खबर दे दी थी कि मुझ तक पहुंचने के लिए वसीला (माध्यम) तलाश करो। तुमने न मेरे नबी से मुहब्बत की और न मेरे दोस्तों से। फिर तुम्हें मुझ तक पहुंचने का वसीला कहां मिला? हमारे नबी ने तुम्हें सच्ची नमाज, सच्ची इबादत बतायी है। हमारे नेकबन्दों ने उसी इबादत के सहारे मेरी दोस्ती पायी है। बजाहिर मेरे नबी आज नहीं दिखाई देते, मगर मेरे दोस्त तो हैं। उन्हें देखकर भी तूने वह ईल्म क्यों नहीं लिया, जिस पर अमल करने वालों को मैं मकबूल कर देता हूं। **बन्दा, जब मेरी मुराद की खातिर मुरीद होता है तो मैं उसे कुबूल कर लेता हूं। जब वह मेरे नबी के सच्चे ईल्म से मुझ तक पहुंचता है, तो उसे मकबूल कर देता हूं।"**

उन्होंने कहा- "हम अगर खुद को खुदा का बन्दा मानते हैं, फिर खुदा की बन्दगी, खुदा के नियमों के अन्तर्गत ही करनी होगी। बन्दा तो वह है, जिसका सब कुछ अपने मालिक पे कुर्बान हो। अगर बन्दे ने सिर्फ जुबानी पूजा की, अपने दिल-दिमाग को मालिक के हवाले न किया, फिर इस जुबानी पूजा-इबादत का उसके मालिक के समक्ष क्या कोई महत्व है? **नमाज में खड़े होकर, झुककर, बैठकर और सजदे में जाकर अरबी भाषा में क्या-क्या पढ़ना है, सिर्फ इसी जानकारी का नाम नमाज की अदायगी नहीं है।** आज हम यह भी जानने की कोशिश नहीं करते कि अरबी भाषा में हम जो कुछ पढ़ रहे हैं, उसके मायनी या मतलब क्या हैं? हम सना पढ़ने में क्या कह रहे हैं? हम सूरह फातेहा पढ़ कर क्या मांगते हैं? हम रुकू और सजदे में क्या कहते हैं? हम अत्तहियात व दरुद शरीफ तथा दोआ पढ़ कर क्या कह रहे हैं? हम सलाम कर रहे हैं, तो इसके मायनी क्या हैं? जिस तरह नमाज की दोआएं अरबी में हम याद करते हैं। उसी तरह उसके मायनी-मतलब की सही जानकारी भी हमें लेनी चाहिए। जब हमें पक्की जानकारी हो जाए, तब चाहिए हमें एक कामिल पीर। जो हमें सच्ची नमाज और अल्लाह पाक के सीधे रास्ते पर चलने का ईल्म दे।"

उन्होंने गम्भीरता से बताया- "आज हम ऐसे लोगों की पैरवी में हैं, जिन्हें ईश्वर, अल्लाह या निरंजन के सम्बन्ध में केवल जुबानी या रस्मी ज्ञान है। अगर उनसे पूछा जाए कि परमानन्द-ज्ञान हमें ऐसी दें कि मेरा हृदय उसी में निमग्न रहे, तो वह नाना-नाना प्रकार के जुबानी ईश-नाम जप को बताते रहेंगे। हम जब उनके दिए ज्ञान की पैरवी करेंगे, तो क्षणिक सुख तो अनुभव होगा, परन्तु परमानन्द नहीं मिलेगा। परम का आनन्द, परमानन्द है। परम, परमेश्वर है और उसका दर्शन, आनन्द है। जहां परम का दर्शन नहीं, वहां परमानन्द नहीं। परम ही प्रिय है, परम ही पवित्र है, परम ही प्रशंसनीय है। परम ही परमश्रेष्ठ है। परम ही परम पूज्यनीय है। परम के सिवा सब कुछ परम सम्माननीय नहीं। परम की पूजा से परम की प्राप्ति करना, परमानन्द है। प्रकट हुआ कि इस शब्द परमानन्द का संकेत परम परमेश्वर के एक प्रेममय नाम का ही रुप है। सारे ईशदूत ईश्वर के परम प्रिय हैं। सारे सच्चे सन्त-फकीर ईश्वर के परमप्रिय हैं। सारे वली-औलिया, ईश-योगी, ईश योगीराज, मलंग, कलन्दर, दरवेश उस परम के परम मित्र हैं। समस्त कामिल पीर उसी परम के परम कृपा प्राप्त हैं। इसलिए परमात्मा या परमेश्वर का प्रेम और कृपा पाने के लिए उसके सारे परम से प्रेम और श्रद्धा का परम-सम्बन्ध हृदय से रखना होगा। ईश्वर के भेजे ईशदूतों ने ईश्वर से चिरस्थाई सम्पर्क के कारण ईश-सन्देश पाया। जो ईश्वर का ईश-सन्देश पाए तथा ईश्वर से वार्तालाप करे, वह किसी ईश्वर के बन्दे को ईश-सम्पर्क कराने में क्या सक्षम नहीं है। इसलिए ईश्वर को पाने के लिए ईश्वर के किसी ईश-दूत से हार्दिक एवं आत्मिक प्रेम करना सर्वप्रथम अनिवार्य है। ईश्वर की दया, कृपा, क्षमा भी ईशदूत के प्रेम के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। सच्ची बात तो यह है कि ईशदूतों के प्रेम से ईश्वर को पाना सरल है। इसलिए परम ज्ञानी लोगों ने ईशदूत का सम्मान किया तथा उनका खूब गुणगान किया। वह यह जानते हैं कि यदि हमने उनसे पवित्र प्रेम किया, तो ईश्वर की प्रेम कृपा हमें मिल जाएगी। जिसने ईश्वर के सच्चे सन्त-फकीरों को जाना-पहचाना, उनसे पूर्ण श्रद्धा प्रेम रखा, वह भी ईशप्रेम कृपा पाने लगेंगे। जो परम के परम मित्रों से प्रेम करे, उससे ईश्वर प्रेम करने लगता है। ईश्वर के कृपा प्राप्त सद्गुरु या कामिल पीरों से जो ईश्वर के वास्ते प्रेम करे, वह ईश प्रेम अवश्य पाएगा। यह प्रेम मार्ग है, जो ईश प्रेम तथा ईश कृपा एवं दया पाने का सरल मार्ग है। पर यह शर्त है कि यह प्रेम भी जुबानी या वैचारिक बुद्धि का न हो। यह प्रेम यदि हार्दिक-आत्मिक होगी, तो परमानन्द की अनुभूति होगी। हमारा प्रेम सत्य तभी होगा, जब हम अपने समस्त सांसारिक प्रियजनों या प्रियवस्तुओं से भी अधिक परमेश्वर या ईशदूतों या सन्तों-फकीरों अथवा वली-औलिया या कामिल पीरों से प्यार करें। ईश्वर के प्रियजनों का प्रेम, ईश्वर से ही प्रेम है। ईश्वर के परम प्रिय की प्रशंसा, ईश्वर की ही प्रशंसा करना है। इसका कारण क्या है? ईशदूत, सन्त-फकीर, वली-औलिया और कामिल पीर में अटूट परम प्रेम ईश्वर से है। जिन्हें ईश्वर की प्रेम, कृपा, ईनाम प्राप्त है, उनकी प्रशंसा यदि हम करते हैं, तो वह प्रशंसा ईश्वर द्वारा प्रदान की गई, प्रेम

कृपा और सम्मान का ही तो हुआ। ईशदूत, सन्त–फकीर, वली, पीर ईश्वर के हैं। वे ईश्वर के कारण हैं, इसलिए इनकी प्रशंसा, स्तुति, तारीफ, गुणगान सभी तो ईश्वर की ही प्रशंसा हुई। इसलिए अरबी भाषा में सूरह फातेहा के अन्दर ईश्वर कहता है– 'अलहम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन' अर्थात– सारी प्रशंसाएं उसी की हैं, जो सारे सृष्टि का पालनहार है।

मैं उन लोगों की अक्ल पर हैरान हूं, जो नबी, पैगम्बर की प्रशंसा पर मुंह चिढ़ाते हैं। सन्त–फकीर की तारीफ करने पर मुंह बनाते हैं और वली–औलिया या कामिल पीर से निस्बत रखने वालों को गिरी नजरों से देखते हैं। यह नज़र और नजरिए के फर्क का मामला नहीं है। यह हमारे दिल–दिमाग में छिपे शैतानों के साथ इब्लीस की साजिश है। जब कोई बन्दा अपने दिल में पोशीदा इन्द्रिय शैतानों के साथ ईश्वर की पूजा करता रहेगा, तो ईश्वर के साथ–साथ वह अपने निजी शैतानों की भी पूजा करता रहेगा। इस पूजा–नमाज से अल्लाह, ईश्वर की कृपा की जगह, हमें अपने गुप्त शैतानों की खूब कृपा मिलेगी। इन गुप्त शैतानों के माध्यम से इब्लीस हमें तार्किक राय देगा कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं है, इसलिए नबी, रसूल या ईशदूत से सम्पर्क रखना शिर्क है। वह बताएगा कि सन्त–फकीर से प्रेम या श्रद्धा तो ईश्वर–प्रेम में गैरुल्लाह की शिरकत है, इनका नाम मत लो। वली–औलिया में कोई खुदाई कुव्वत होने का सवाल नहीं, यह तो बशर हैं, अगर खुदा का ईनाम उन पर होता तो वे मरते क्यों? ये मुर्दा हैं। मुर्दों की ताजीम, खुदा की शान में गुस्ताखी और कुफ्र भी है। इसलिए उन्हें जो माने वह मुसलमान नहीं। वली–औलिया, पीर से सम्पर्क रखना, गैरुल्लाह या ईश्वर के गैर से सम्पर्क रखना है। इस वजह से इनसे हमेशा के लिए दूरियां बनाए रखो।

नफ्सीयाती शैतान को इब्लीस का निर्देशन तरह–तरह से मिलता रहता है ताकि बन्दा, खुदा के सच्चों से दूर हो कर गुमराह बन जाए। आज इसी गुमराही ने हमें इन्सान से शैतान बना दिया है। उस परमात्मा ने इसीलिए बारम्बार कहा कि शैतान मरदूद से मेरी पनाह मांग लो। हम शैतान मरदूद के साथ रहकर 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' जुबानी पढ़ते रहते हैं। अल्लाह की पनाह की जगह शैतान की पनाह में रहते हैं। ध्यान रखें। शैतान है हमारी नफ्स। वह इब्लीस नहीं है। मगर नफ्स के शैतान से इब्लीस का गहरा रिश्ता है। अगर हमारे दिल के शैतान मुर्दा हो गए, फिर इब्लीस का रास्ता हम से बन्द हो जाता है। जो खुदा के सच्चे बन्दे हैं, इसीलिए वह नफ्सकुशी (इन्द्रिय निग्रह) 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' को एक विशेष ढंग से पढ़कर करते हैं। नफ्स मरा, तो शैतान मुर्दा हो गया। अब एक इब्लीस नहीं एक सौ करोड़ इब्लीस भी उस बन्दे को खुदा की पनाह से दूर नहीं कर पाएंगे। बन्दा जब इबादत करेगा तो वह अल्लाह की पनाह में है, इसलिए अल्लाह की कुर्बत का लुत्फ उसे हासिल होता रहेगा। यही बन्दा अपनी नमाज, इबादत से एक दिन मकबूले–खुदा बन जाएगा। उसे खुदा की दया, कृपा, प्रेम सब हासिल होती जाएगी। अन्ततः एक दिन वह दीदारे–ईलाही से भी मालामाल हो जाएगा।"

उन्होंने कहा– "आज हम फर्ज नमाजें अदा करके भी ईश्वर से अपनी दुनियां की जरुरतें मांगते रहते हैं। यह तरीका सही नहीं है। फर्ज नमाजें हैं, पांच वक्त की। इसे फर्ज या अनिवार्य क्यों कहते हैं? यह बन्दे का उस पाक रब के सामने बन्दा होने का इकरार है। यह बन्दगी साक्ष्य है कि हम जिन्दा हैं, उस पवित्र प्रभु की कृपा से। वह हमें हर सांस की कुव्वत देकर यह बता रहा है कि मेरे बन्दे मैं तेरा वही रब हूं, जो सांसे देकर जिलाता हूं, सांसे छीनकर मारता हूं। मैं तेरी जिन्दगी का स्वामी हूं। तेरी हर धड़कन में जीवन मेरी कृपादृष्टि से है। मैं तेरी हर सांस के साथ तुझसे करीब हूं। तू मुझे पहचान। मेरी दया और कृपा हर पल तेरे साथ है। इसलिए मैं तेरा हर तरह का रब हूं। तेरा हर प्रकार से पालनहार हूं। तेरी हर एक सांसों का ताल्लुक मुझसे है। तेरे दिल की हर धड़कनें मेरी रहमो–करम पर कायम हैं। मेरे ही कारण तेरी बदन की कद्र व कीमत है। मेरी ही वजह से दुनियां तुम्हें जिन्दा कहती है। फिर मेरी प्रशंसा, महानता, मान–प्रतिष्ठा और खूबियां बयान करके मेरी बारगाह में अदब से सजदा किया करो। अपने हर तरह के गुनाहों से तौबा करके मेरी पनाह में आओ। मैं ही पूज्यनीय हूं, क्योंकि मैं ही तेरा रब, तेरा रज्जाक, तेरा रहमान और तेरा गफ्फार हूं। मेरे सिवा, जिन ख्वाहिशों, तमन्नाओं और हाजतों में तू दिल से हर वक्त मुबतला रहता है, वही तेरा माबूद है। वही मेरा गैर है। वही मेरे सिवा, तेरा बुत है। वही गैर–खुदा है। इसी को गैरुल्लाह कहते हैं। इन बुतों की पूजा मत करो, क्योंकि यह मेरी पूजा नहीं है। इसीलिए हमने तुम्हें 'लाईलाहअ' पहले कहने को कहा। पहले अपने सारे गैर–खुदा को जो तेरे दिल के बुत हैं, उन्हें 'ला' (नहीं) करो, जब तुमने सचमुच 'ला' (नहीं) कर दिया तो 'ईल्लल्लाह' कहना सच्चा होगा। मैं तेरे सामने आ जाऊंगा। बस 'ईलाहअ' के पर्दे को 'ला' (नहीं) के सच्चे तलवार से चाक करो, मैं ही पूज्यनीय हूं, तुम हमें पहचान जाओगे।"

उन्होंने आगे बताया– "फर्ज नमाजें, बन्दे की सिर्फ बन्दगी है। इसके पढ़ने के बाद भी हम उस रब से दोआएं अपनी जरुरतों का मांगने लगते हैं। यह तरीका तो बेहतर नहीं है। हमें पंजवक्ता नमाज के बाद सिर्फ यह कहनी चाहिए कि "ऐ पाकजात, हमने तेरी बन्दगी जैसी करनी चाहिए, नहीं कर सका। तू मेरी नमाज को अपने रसूले पाक सल्ले अला व सल्लम के सद्के में कुबूल फरमा ले। अपनी सच्ची इबादत की हमें तौफीक दे।' दुनियां की हाजत के लिए नफिल नमाजें अलग से अदा करके कोई बन्दा, जब चाहे दोआ मांग ले। आज और कल हर वक्त के लिए यह जरुरी है कि हम सच्ची नमाज, सच्ची पूजा करने के लिए पहले से तैयारी करें। देखा–देखी नमाज या दिखावे की इबादत के पीछे हमारे नफ्स के शैतान शामिल रहते हैं। इन्हें ही 'ला ईलाहअ' पहले करने की जरुरत है। 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह'– हमारे जिस्म के भीतर छिपे बुत रुपी शैतानों से दिल–दिमाग, ख्याल को पाकीजा करने की सर्वोत्तम और सर्वमहान औषधि है। 'अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम' वह शैतान

या राक्षसे की प्रतिरोधक- औषधि (Antibiotic Shaitanic medicine) है। जब 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' का भरपूर खुराक बन्दा ले लेगा, तो शैतानी-रोग भाग जाएगा। उस के बाद प्रतिरोधक- औषधि- अऊजोबिल्लाहे मेनश्शैतानिर्रजीम (मैं अल्लाह पाक की पनाह मांगता हूं, शैतान मरदूद से) की खुराक सामान्य ढ़ंग से लेते रहें। वह शैतान मरदूद आपसे दूर रहेगा। क्योंकि आप 'ईल्लल्लाह' के साथ हैं, 'लाईलाहअ' आपका दुरुस्त हो चुका है। फिर से शैतान मरदूद आ न सके, इसलिए आपको यह नमाज में कहना पड़ता है कि 'मैं अल्लाह पाक की पनाह मांगता हूं, उस मरदूद शैतान से। मतलब यह कि ऐ मेरे पाक रब मुझे आपकी पनाह चाहिए। क्योंकि मैं अब आपके नाम से आपकी अताकर्दा दोआ सूरह फातेहा पढ़ने जा रहा हूं। आपकी पनाह में मैं हूं तो मेरी दोआ, मेरी बन्दगी जरुर कुबूल होगी। शैतान मरदूद का लेशमात्र भी साथ इस पाक पूजा में नहीं है, क्योंकि उसकी जर्रा बराबर भी शिरकत होगी, तो आपके नाम से शुरु करने का मेरा दावा गलत होगा। फिर मेरी बन्दगी झूठी हो जाएगी।' यही है उस पवित्र ईश्वर-अल्लाह की सच्ची पूजा का तरीका, जो हमें सच्चा बन्दा बनाता है और सच्चे अल्लाह की कुर्बत का लुत्फ अता करता है। अल्लाह तआला की सच्ची इबादत का रहस्य, उसकी पूजा-नमाज वाले शब्दों में जाहिर है। हम दिल लगाकर उसे बखूबी समझें। हम उस पाकजात के अजमत और आला मकाम को पहचान कर उसकी तरफ दिल झुकाएं। वह अपनी हकीकत खुद बताने के लिए तैयार है।"

उन्होंने काफी गम्भीर रुप से कहना शुरु किया- "इस्लाम क्या है? यह प्रत्यक्ष रुप से एक मजहब का नाम दिखता है, किन्तु वास्तव में यह एक ईश्वर, खुदा, गॉड, प्रभू की 'रहस्यमय सत्यता का दर्पण' है। यह अरब में आया, इसलिए अरब भाषा भाषियों का मज़हब है, यह हम कैसे कह सकते हैं? वह पाकजात रहमान, पवित्र ईश्वर, पायस गॉड (pious God) क्या केवल अरब के लोगों का ही पालनहार है? वह जब सारे आलम का रब है, तो उसका मजहब और उसके ईशदूत सारे आलम या सम्पूर्ण सृष्टि के हुए। अरबी भाषा मात्र यह पहचान है कि उसके पैगम्बर या नबी, अरब की धरती पर प्रकट हुए। ईश्वर ने अरबी में उनसे वार्ता की ताकि उसके ईशदूत जहां जाहिर हुए हैं, वहां के लोग ईश-सन्देश को सुगमता से समझ लें। यदि यही ईशदूत भारत के अवध में आते तो ईश्वर उनसे अवधी भाषा में बात करता। यदि अमेरिका या लन्दन में आते तो वहां की भाषा में ईश-सन्देश देता। अब कोई अरबी किसी अन्य भाषा-भाषी से कहे कि इस्लाम नामक मजहब मेरे देश का है, इस पर मेरा सर्वाधिकार है, तो दुनियां का कोई समझदार व्यक्ति क्या यह मान लेगा। अरबी भाषा के अल्लाह, रब, रहमान, रहीम, रज्जाक आदि शब्दों का सम्बोधन अरब के लिए हो सकता है, लेकिन वही अल्लाह सिर्फ अरब का ही रब है, यह कोई नहीं मान सकता।

[20-B] सलामत और सलामती

ईश-सन्त श्री स्वामी मुदलियार ने फरमाया- ''सबकी सलामती' क्या है? सलामत वाकई कौन है? यूं सलामत में अमर जीवन है। सलामत का भावार्थ चिरस्थाई जीवन भी माना जा सकता है। सलामत तो केवल ईश्वर है। इसलिए लोग अपनी और अपनों की सलामती ईश्वर से मांगते रहते हैं। यह स्पष्ट हुआ कि ईश्वर में या ईश्वर सम्पर्क में ही सर्वमानवजाति की सलामती है। इसी सलामती को प्राप्त करने के लिए ईश्वर द्वारा अधिकृत तथा ईशदूत द्वारा सत्यापित (verified) समूह (जमात) को 'कामिल पीर' कहते हैं। ईश्वर के पास अनन्त सृष्टि का सम्पूर्ण अन्तःज्ञान (ईल्म-गैब) है। वह अपने बन्दों की सलामती यदि न चाहता तो अपने ईशदूत को शिष्य बनाने का निर्देश न दिया होता। ईशदूत लगभग एक लाख चौबीस हजार कमोबेश ईश्वर ने भेजा है। किन्तु अन्तिम ईशदूत ही को शिष्य बनाने का निर्देश ईश्वर ने दिया? कारण क्या है? यह कारण नहीं, बल्कि ईश-बन्दों की 'सलामती' का मसला है। ईश्वर जानता है कि अगर मेरे ईशदूत शिष्य बनाएंगे, तभी ईश-रहस्य ज्ञान उसे देंगे। वे मेरे केवल ईशदूत ही रहेंगे तो ईश रहस्य-ज्ञान की परम्परा उन तक ही समाप्त हो जाएगी। मेरे ईशदूत जब एक सद्गुरु की भूमिका भी निभाएंगे, तो सद्गुरु (कामिल पीर) परम्परा से ही प्रलय तक ईश रहस्य ज्ञान अथवा ईश-सम्पर्क ज्ञान या सर्वमानवजाति की सलामती का ज्ञान कायम रहेगा। क्योंकि आज से प्रलय तक के लिए वही तो अन्तिम ईशदूत हैं। कोई व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि पीरी-मुरीदी परम्परा ईश नियम के विरुद्ध है अथवा यह परम्परा ईशदूत द्वारा प्रमाणित नहीं है। ईशपूजा या ईश-सेवा, ईश्वर का नियम है तथा ईशदूत उसे क्रियात्मक रुप से करके या कहके सत्यापित अथवा प्रमाणित करते हैं। चूंकि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने बैय्यत (शिष्य बनाया) ली। उनके ईश-परिपूर्ण खुल्फाओं ने भी बैय्यत ली। उन्होंने जिन्हें ईश रहस्य ज्ञान में परिपूर्ण पाया, वह भी बैय्यत लेने लगे। यह ईश-परिपूर्णता ही मुरीद (शिष्य) को एक दिन कामिल पीर की कुर्सी पर आसीन करा देती है। यही ईश-प्रदत्त ज्ञान ईशदूत के माध्यम से आज तक कामिल पीर की जमात देती रहती है। आज जिसे सलामती या इस्लाम चाहिए वह कामिल पीर (ईश-सम्पर्क से पूर्ण सद्गुरु) से 'बैय्यत' (शिष्यत्व) ग्रहण करे। कामिल पीरों में भेदभाव नहीं। धर्म, जाति, वर्ण, रंग, नाम का विवाद नहीं। उनकी दृष्टि में राम प्रसाद और फैजुल्लाह तथा जार्ज एलिस सभी ईश-बन्दे हैं। ईश्वर सभी का, कामिल पीर फिर किसी एक समूह या एक जमात के लिए ही कैसे सुनिश्चित किए जाएंगे? यह तो ईशदूत के सेवक हैं। ईशदूत ने सबकी सलामती का धर्म दिया। इसलिए आज वे भी सबकी सलामती (इस्लाम) का ठोस प्रमाण बने हुए हैं। कामिल पीर हजरत ख्वाजा गरीब नवाज, हजरत कुतुबद्दीन बख्तियार काकी बाबा, हजरत अलाऊद्दीन साबिर कलियरी, सैय्यद निजामद्दीन औलिया, हाजी वारिस अली

शाह आदि बेशुमार हैं। वह सशरीर सलामती बांटते रहे और अब तक उनके दरगाहों, मजारों से सबकी सलामती बंट रही है। इन पीरों ने इतने पीर उत्पन्न किए कि सबकी सलामती का ईशदूत द्वारा प्रसारित ईश-रहस्य ज्ञान आज भी अमरत्व के रुप में जीवित है। जहां सबकी सलामती नहीं, वहां सच्चा इस्लाम नहीं। जिससे सबकी सलामती कायम है, वह कोई भी हो, वही तो इस्लामी है। सबकी सलामती ईश्वर से, इसलिए इस्लाम का दूसरा नाम यदि ईश्वर ही कहें तो निरर्थक नहीं होगा।"

फकीर मौलाना अलीमद्दीन चिश्ती ने कहा- "इस्लाम के पालनकर्ता मुसलमान कहलाते हैं। मुसलमान में सबकी सलामती का गुण तब विकसित होगा, जब वह 'सबकी सलामती' वाले पीर के प्रशिक्षण में पलेगें। क्योंकि इस्लामी सलामती के अधिकृत आपूर्तिकर्ता इस दौर में कामिल पीर हैं। इन्हें ईशदूत का ईश रहस्य ज्ञान इनके पीरों के अमली-ईल्म के माध्यम से इन्हें मिला है। इनका ज्ञान, किताबी-ईल्म (पुस्तकीय ज्ञान) नहीं है। यह सुना-सुनाया ईल्म भी नहीं है। यह वह क्रियात्मक ईल्म है, जो ईश्वर और ईशदूत का दीदार कराता है। यहीं इस्लामी सच्चाई है। ईश्वर को पाना सलामती की निशानी है। ईशदूत का मिलन ईश्वर के भेद और ज्ञान रहस्य को पाना है। इसी भेद और रहस्य ज्ञान के परीक्षण में सफल व्यक्ति 'ईश-सलामती' पा जाता है। सबकी सलामती जिसमें है, वही कामिल पीर है। अब हम स्वयं को देखें कि हम में 'इस्लाम' कितना है? अथवा हमारा इस्लाम क्या है? हम इस्लाम के मुताबिक सलामती में हैं या सलामती हमसे छिन चुकी है? इस्लाम की सलामती में अमनो-आमान और शान्ति भी है। क्या हम से शान्ति है? क्या हममें शान्ति है? क्या हम अमनो-आमान में जी रहे हैं? हमसे क्या अमनो-आमान समाज में है? अगर है, तो महाशान्ति के इस्लाम से सबकी सलामती है। अपनी सलामती तो हर कोई चाहता है। क्या गैरों के लिए भी सलामती मुझसे है। अगर नहीं, तो हम इस्लाम के सच्चे पैरवीकार कैसे हो सकते हैं? गड़बड़ी मात्र इतनी है कि हम इस्लामी जमात में तो हैं, मगर इस्लामी-गुण और विशेषता मुझमें नहीं है। क्या इस्लामी गुण-विशेषता के बिना भी हम इस्लामी दावेदार कहला सकते हैं? इस्लामी शान्ति और ईश्वर के समक्ष पूर्ण आत्म-समर्पण का क्रियात्मक-ज्ञान किसी भी कामिल पीर से लेकर हम सत्य इस्लामी मुसलमान बन सकते हैं। हम आज बिना कामिल पीर की रहनुमाई में इस्लाम की पढ़ाई कर रहे हैं। हम विचार करें कि इस्लाम के कल्मे तथा नमाज़, रोजा, जकात, हज् और तौहीद पे बाअमल रहते हुए भी अशान्ति में हैं, तो वजह क्या है? वह कारण क्या है कि कामिल पीर के इस्लामी प्रशिक्षण से अल्लाह (ईश्वर) अपने बन्दे को वली-औलिया बनाता है?

दुनियां में वली-औलिया की मजारें हैं, मगर उनमें वहीं ईश-सम्मान प्राप्त विभूतियां हैं, जो अपने शारीरिक जीवन में कामिल पीर के रुप में कार्यरत रहे। इस्लाम की सच्ची पढ़ाई से कामिल पीर पैदा होते रहे। यहीं वह वली-औलिया की जमात है, जिन पर चिरस्थाई ईश-कृपा (वेलायत) है। क्या हर

मुसलमान या आलिम या मोहद्दिस या मुफ्ती या हाफिजे-कुरआन आदि पर ईश्वर की ऐसी कृपा है? आखिर क्यों नहीं? सभी तो इस्लाम के ही सम्मानित अफराद हैं। सिर्फ कामिल पीर के नक्शे-कदम (पद्-चिन्हों) पर चलने वाले को ही अल्लाह तआला (सर्वमहान ईश्वर) अपनी वेलायत (चिरस्थाई यशकृपा) क्यों देता है? यह सन्देहरहित प्रमाणित सत्य है कि कामिल पीर ही इस्लाम का सच्चा रहनुमा या मोअल्लिम या इस्लामी अमीरे जमात है। अगर हम मुसलमान हैं तो अपने इस्लामी रहनुमा (कामिल पीर) को पहचान कर उनसे ईश रहस्य ज्ञान ग्रहण करें। मुसलमानों ने जब-जब अपने काल के कामिल पीरों की रहनुमाई अख्तियार की, वे कामिल मुसलमान बन गए। जब वे कामिल पीरों के अतिरिक्त किसी गैर की रहनुमाई में कदम बढ़ाए, तो दुनियां में फिरकाबन्दी, फित्ना, गिरोहबन्दी, तरह-तरह की भ्रामक और झूठी मान्यताएं परवरिश पाने लगीं। इस्लाम जब एक है, फिर इस्लामी अकायद में फर्क कहां से उत्पन्न हुआ? इस तथ्य पर गम्भीर चिन्तन जरुरी है। हम सभी को आत्म-परीक्षण करनी चाहिए।''

[20-C] ईमान और बेईमान

खुदा के फकीर हजरत हजारी बाबा ने फ़रमाया- ''ईमान, इस्लाम की रुह है। इस्लाम की जुबान में ईमान क्या है? आईए- पहले कामिल पीर और ईशदूत के कुंवर हाजी वारिस अली शाह (देवा शरीफ, जिला-बाराबंकी, उ0प्र0) से पूछ लें। वे कहते हैं कि जिसको तसदीक (सत्यापन) नहीं, उसका ईमान नहीं। तसदीक किसकी अनिवार्य है ताकि हम ईमानवाले हो जाएं? प्रथम तसदीक ईश्वर की दूसरी तसदीक ईशदूत की। अगर दोनों की तसदीक किसी मनुष्य को है तो वही ईमानवाला है। अर्थात- कल्मा शहादत हमको तसदीक का हुक्म दे रही है ताकि हम ईमान वाले हो जाएं। लेकिन हम इसे केवल पढ़कर ईमानवाले होने का दावा करते हैं, तसदीक की तरफ हमारी नजर क्यों नहीं जाती। ऐसा क्यों? क्या किसी ने क़ल्मा-शहदत पढ़ने का तरीका किसी कामिल पीर से सीखा? अगर नहीं तो इसका मतलब तो यह है कि हम 'ईमानवाले' बनना नहीं चाहते?

हम मुसलमान होकर भी बेईमान हैं, तो इसमें इस्लाम का दोष क्या है? इस्लाम को लफ्जी (शाब्दिक) या किताबी-ईल्म बनाने वाले कौन हैं? ईश्वर चाहे की मेरा बन्दा सच्ची शहादत दे, मगर बन्दा बिना देखे शहादत देने पर यकीन कर लिया है। क्या हुक्मे-इलाही की अवमानना हम नहीं कर रहे हैं? आप खुद को देखें कि तसदीक वालों की जमात (संगठन) में हैं या बिना तसदीक वालों की जमात में? आप अपने रहनुमा से पूछते क्यों नहीं की वह तसदीक वाली नमाज बता दें? उनसे पूछिए की कल्मा तैय्यब और कल्मा-शहादत हमें ऐसी बताएं, जिससे तसदीक हो सके? अगर वे इस ईल्मी -कुव्वत से खाली हैं, फिर उनके साथ अपना वक्त लगाकर किस खुदा की खिदमत में हम खुश हैं? बिना तसदीक का यह कौन सा इस्लाम है, जो इस्लामी हकीकत से दूर होकर भी आज फल-फूल रहा है?

यजीद बजाहिर मुसलमान था, मगर तसदीक की दौलत से महरुम था। जाहिर है कि वह बेईमान मुसलमान था। तसदीक होती तो वह बाईमान मुसलमान होता। ईमान और बेईमान के बीच यह तसदीक ही है, जो अन्तर बताती है। अब अगर हम बेईमान हैं तो हममें झूठ-दगाबाजी, फरेब और मक्कारी जरुर पायी जाएगी। क्योंकि हमको तसदीक नहीं है। बताईए बिना खुदा की तसदीक किए हम सजदा कहां करें? बिना तसदीक हम हज में तलबिया (अल्ला हुम्मअ लब्बक) ऐ अल्लाह मैं तेरे लिए हाजिर हूं, कैसे पढ़ें? यकीन और तसदीक में भारी फर्क है। तसदीक से कामिल यकीन होता है। यक़ीन से तसदीक नहीं होती। यकीन से कुछ अर्सा काम चल सकता है, मगर ईल्मे-तसदीक किसी कामिल पीर से हासिल करने की तड़प शामिल हो। तसदीक की दौलत अगर मयस्सर (प्राप्त) न हुई, तो क्या हम खुद को ईमानवाला कह सकते हैं? फिर ऐसे लम्हे में मौत आई, तो हमारा खात्मा क्या ईमान पर होगा? क्या हम इस्लामी मौत पा जाएंगे? इस्लाम में रहना और इस्लाम को खुद में दाखिल करना, ये दोनों दो बातें हैं। अफसोस की हम गौर नहीं करते? इस्लाम बाईमान होकर कायमी जिन्दगी पाने का नाम है। इस्लाम बातिल (झूठ) और बेईमानी से पवित्र है। इसीलिए इस्लाम का एक नाम हक़परस्ती (सत्यासत्य की पूजा) भी है। ईश्वर-अल्लाह का एक नाम 'हक़' (सत्य) भी है। वह सत्य है, फिर उसका इस्लाम असत्य कैसे होगा? जहां सत्य है, वहां इस्लाम है। वहीं शान्ति है। सत्य और सत्यता में शान्ति इसलिए है, क्योंकि हमारा जीवन जिस आत्मा से है, वह सत्य से ही उत्पन्न है। सत्य में सत्य की आत्मा-रुह शान्त होती है, तब हमें महसूस होती है शान्ति। यही इस्लामी सत्य है। असत्य से इस्लाम का नाता नहीं। झूठ, बेईमानी, दगा-फरेब, जुल्म-जफा व स्वार्थसाधना का रिश्ता इस्लाम से कत्तई नहीं है। जिनमें ऐसी असत्यता है, वहीं तो गैर-इस्लामी या अल्लाह के गैर हैं। यही गैरुल्लाह हैं। वह इस्लाम में हों या इस्लाम के बाहर वे ईश्वर-अल्लाह के गैर हैं। ईश्वर-अल्लाह के अपने वह हैं, जो सत्य के साथ हैं तथा जिन्हें सत्य की तसदीक है। वली-औलिया, कामिल पीर और फकीर; दरवेश, मलंग आदि अल्लाह वाले हैं। इन्हें अल्लाह की तसदीक भी है और यह हक़परस्ती में जीते हैं। यही जमात बाईमान की है और यही लोग अल्लाह तआला के खास हैं। यानी सच्चा इस्लाम इनके पास है। फिर इनसे मुहब्बत रखना नाजायज या हराम कौन कहता है? अगर ऐसे बदकलाम करने वालों में दम है तो कल्मा-शहादत की सच्ची शहादत खुद क्यों नहीं दे पाते? वे अपने लोगों को तसदीकी-शहादत देने का सलीका क्यों नहीं बता पाते? हैरत है कि बेईमान शख्स (व्यक्ति) बाईमान वाली जमात पर ऊंगली उठाए? बातिल इस्लाम की पैरवी में लगा शख्स हक्की इस्लाम को क्या उद्घाटित कर सकता है? यह सम्भव नहीं। इसलिए ईमान वालों के साथ रहिए बेईमानों से बचिए।"

फकीर श्री हजारी बाबा ने कहा- "कल्मा शहादत पढ़ना इस्लाम में दाखिल होने के लिए हुजूर नबीए अकरम ने सर्वप्रथम बतायी है। जो कल्मा शहादत हम अरबी में सरलता से पढ़ते रहते हैं, उस

कल्मे को पढ़ने का सही विधि–विधान हमें अभी सीखना पड़ेगा। जब तक सच्ची शहादत देने का ईल्म हमें हासिल न हो जाए, हमें यह महसूस करना चाहिए की लोगों की नज़र में हम इस्लामी तो हैं, मगर वास्तव में अभी इस्लाम में पूर्णरुपेण हम दाखिल नहीं हैं। इस्लामी दाखिले की प्रारम्भिक स्थिति बता रही है कि पहले ईश्वर–अल्लाह की गवाही दो, फिर ईशदूत की गवाही दो। सत्य बात यह है कि पहले उस ईश्वर और ईशदूत (नबी) को देखने का ईल्म सीखो, जब देख लो फिर डंके की चोट पर गवाही दो। कल्मा शहादत या अन्य कल्मे के पढ़ने और याद करने की सीख तो सभी देते हैं, मगर देखकर गवाही कैसे दी जाती है; यह ज्ञान तो केवल इस्लामी कामिल पीरों से ली जा सकती है। अब अगर हम कामिल मुसलमान बनना चाहते हैं, तो कामिल पीर से निस्बत (सम्पर्क) रखनी होगी। कल्मा शहादत पढ़ने की तरकीब क्या है, ये तरीका वे बखूबी जानते हैं। इस्लाम के हर सत्य ज्ञान और हर एक कायदे–कानून से यही पीरों की जमात पूरी तरह से वाकिफ है। यही हैं सच्चे इस्लामी जमात के अमीरे जमात, जिन को दुनियां 'कामिल पीर' कहती है। कल्मा शहादत को सही पढ़ने और अमली अदायगी करने के लिए ही हजरत ख्वाजा सैय्यद मुईनद्दीन हसन चिश्ती ने कामिल पीर हजरत उषमान हारुनी से बैय्यत लीं अर्थात शिष्य बने। ख्वाजा सैय्यद निजामद्दीन औलिया ने सच्चे इस्लाम में दाखिल होने के लिए ही बाबा फरीदगंज शकर से मुरीद हुए। यही तो इस्लाम में खुल्फा–ए–राशेदीन से तब्बे–ताबईन तक का तरीका रहा है। हम जिन्हें वली–औलिया कहते हैं, यह जमात ही तो कल्मा शहादत को सही ढ़ंग से पढ़ने और पढ़ाने वाली हैं। अल्लाह और रसूलल्लाह की सच्ची तसदीक इन्हीं के पास है। इसलिए यही सच्चे मुसलमान और सच्चे मोमिन हैं। तसदीक हकीकत में ईमान की शर्त है। ईमान नहीं तो मुसलमान नहीं। दहशतगर्दी जैसे हर अपराधों की जड़ में तसदीक (सत्यापन) न होने का ही मूलभूत कारण है। यह तसदीक ही तो कल्मा–शहादत है। मगर अल्लाह तआला और अपने रसूलल्लाह की तसदीक करना हम नहीं चाहते? हमें सच्चे इस्लाम में आखिर दाखिल होना क्यों पसन्द नहीं है?

अगर हमें कामिल पीर ने कल्मे पढ़ा दिए। उन्होंने हमें शहादत देने के लायक बना दिया। अब पंजगाना नमाजें हम दुरुस्त पढ़ने लगेंगे। हमें अब तसदीक हो चुकी है कि सजदा हमें कहां और कैसे करना चाहिए? हमें कामिल पीर ने यह तसदीकी ईल्म दे दिया है कि नमाज की सच्ची नीयत किसे कहते हैं? नमाज की अदायगी किस तरह की जाए ताकि मेराजे–खुदा हो। अब तक कयाम, रुकू, सजदा वगैरह अरकान अदा करने के ही हम पाबन्द थे। नमाज का केवल ढ़ंग हम जानते रहे। मगर सच्ची नमाज की अदायगी कैसे की जाए, इसे कामिल पीर ने हमें सिखला दिया। कल्मा–शहादत देखकर गवाही देना है और कल्मा तैय्यब (लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह) हकीकत में खुदा की पहचान और कुर्बत पाने का जरिया है। मगर हम तो अरबी भाषा में कल्मा, नमाज पढ़ लेने में खुश

हैं। हम खुश हैं कि कल्मा, नमाज सभी कुछ पढ़ लेते हैं। इसी का नाम तो इस्लाम है। हमारी जानकारी वाली शरीयत की पाबन्दी, हमें मुसलमान कहलाने के लिए काफी है। मगर हम यह नहीं समझते की रसूलल्लाह ने कल्मा और नमाज पढ़ने का तरीका क्या बतायी है? हम रसूले-पाक के ईल्मे-शरीयत को तो जानते हैं, मगर अमली-शरीयत उन्होंने क्या बतायी है, इस सच्चाई की तहकीक (खोज) हम नहीं करते?

हजरत अबु बकर सिद्दीके अकबर से हम पूछें कि आपने रसूले-पाक से कल्मा तैय्यब (लाईलाहअ ईल्ललाह) को किस तरह पढ़ी? वह तरीका तो बता दें कि हम भी कल्मा दुरुस्त कर लें? यह प्रमाणित सत्य है कि कल्मा तैय्यब तभी पढ़ी जा सकती है, जब अल्लाह के सिवा हर शय (वस्तुएं) को हमं दिल-दिमाग से हमेशा के लिए निकाल दें। यह शय हैं, हमारी दुनियावी मुहब्बत में कैद कराने वाली मालोजर, औलाद और शानो-शौकत, लालच, तकब्बर वगैरह। कल्मा तैय्यब इन्हें ही 'एलाहअ' (माबूद या पूज्यनीय) कहता है, जिन्हें 'ला' यानी नहीं के तलवार से काटना होगा। जहां 'एलाह' का वजूद दिलो-दिमाग से निकला, तब 'ईल्लल्लाह' (अल्लाह ही है माबूद या पूज्यनीय) कहना सही होगा। यही है उनकी अमली शरीयत। जिसे रसूलल्लाह के प्यारे खलीफा हजरत अबु बकर सिद्दीके अकबर ने अपने अमल से जाहिर कर दी। वे अपने प्यारे 'एलाहअ' (मालोजर आदि) को अपने कामिल पीर और अपने रसूले पाक की कदमों में डाल दिये। यह है अमली-शरीयत जिससे 'ला ईलाहअ' की तसदीक होती है। जब रसूले पाक ने पूछा कि आप ने अपने और अपने परिवार के लिए क्या छोड़ा है? तो सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने फरमाया- "अल्लाह और उसके रसूल।"

देखा आपने 'लाईलाहअ' ने घर की सारी दौलत को ठुकरा दिया। 'ईल्लल्लाह' पर ईमान इसी का नाम है। कल्मा तैय्यब उनके कौल (वचन) में है तो उनके फेएल (आचरण) में भी कल्मा तैय्यब मौजूद है। सैय्यदना सिद्दिके अकबर ने यह क्यों नहीं कहा कि या रसूलल्लाह, हमनें खुद को और अपने अहलो अयाल को सिर्फ अल्लाह के भरोसे पर छोड़ा? उन्होंने अल्लाह तआला के साथ रसूलल्लाह पर भी भरोसा क्यों रखा? रसूले-पाक ने तो उनसे यह नहीं कहा था कि घर की सारी दौलत मेरे कदमों में डाल दें और अल्लाह व रसूलल्लाह के भरोसे चुपचाप बैठे रहिए? उन्होंने बिना हुक्मे-रसूल के अपना मालोजर और हर दुनियावी असाईश और अपने वक्त की कुर्बानी क्यों पेश किया? रुपए-पैसे, ईज्जत, शोहरत आदि को खाक में मिलाना, उन्हें इसलिए जरुरी हो गया, क्योंकि कल्मा तैय्यब इन सारी शय को 'ला' (नहीं) करने का हुक्म दे रही है। रसूलल्लाह के महबूब खलीफा ने अपने रसूले पाक और कामिल पीर को यह संकेत दिया कि अबु बकर ने 'लाईलाहअ' पढ़ ली है। उन्हें सिर्फ 'ईल्लल्लाह' चाहिए और रसूलल्लाह चाहिए। क्या इस तरह कल्मा तैय्यब 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' हम पढ़ते हैं? उन्होंने अल्लाह और रसूल के भरोसे अपने और अपने परिवार को छोड़ा।

उन्होंने रसूल पर भरोसा क्यों रखा? इसलिए क्योंकि अल्लाह तआला की कुर्बत 'लाईलाह' से मिलती है और हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम की निस्बत 'मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' कहने से हासिल होती है। पूरी कल्मा तैय्यब- 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' है। सैय्यदना सिद्दीके अकबर का यह अमल अल्लाह व रसूल पर कामिल ईमान रखने का सबूत है। यही कल्मा तैय्यब की अमली अदाएगी है।

जब अल्लाह तआला के कल्मे में अल्लाह और रसूल दोनों हैं, फिर वह सिर्फ अल्लाह तआला कहकर रसूलल्लाह को 'ला' (नहीं) कैसे करते? जहां-जहां अल्लाह है, वहां-वहां रसूलल्लाह भी तो हैं। सैय्यदना अबू बकर हुजूर सिद्दीके अकबर के लकब (उपाधि) से नवाजे गए हैं। यानी वह सारे सच्चों में सबसे बड़े सच्चे हैं। सच्चे ने इस्लामी सच्चाई को प्रकट कर दिया। और हम यही समझते रह गए कि उन्होंने अपनी सारी दौलत को रसूले-पाक के कदमों में डाल दिया। अगर इस वाकए की बुनियाद पर गौर करें तो मालोजर को रसूलल्लाह की खिदमत में पेश करना, सिद्दीक अकबर (सर्वश्रेष्ठ सत्यवादी) उपाधि (लकब) के लिए पूर्ण समर्थन नहीं करती। इनके इस अमल (क्रियात्मक कर्म) ने सन्देश दिया कि अपने मालोजर की मुहब्बत (यानी एलाहअ) को रसूले पाक की तालीम से उन्होंने पूरी तरह से 'ला' (नहीं) कर दिया। 'एलाहअ' को 'ला' करना इस्लाम की सच्चाई है और इस पर कौली-फेएली तरीके से वे बाअमल हो गए, इसलिए वह 'सिद्दीक' (सत्यवादी) हैं। रसूले पाक ने 'सिद्दीके अकबर' की सनद उन्हें इसलिए दी क्योंकि वे कल्मा तैय्यब के मजहर (प्रकटकर्ता) बन गए थे। कयामत तक इस्लाम में 'सिद्दीक' तो होते रहेंगे, मगर 'सिद्दीके अकबर' सैय्यदना अबू बकर के सिवा कोई नहीं होगा?''

[20-D] इस्लाम में सच्चे कौन ?

महान ईश-सन्त श्री निर्मल महाराज ने फरमाया- ''आपने सुना कि रसूले-पाक ने इस्लाम में 'सिद्दीक' किसे कहा और क्यों कहा है? 'लाइलाहअ' को जिसने अमली सूरत में अख्तियार किया, वही 'सिद्दीक' है। वही सच्चा इस्लामी मुसलमान है। उसे सिद्दीक इसलिए भी कहा जाएगा, क्योंकि वह सच्चे अल्लाह तआला के सिवा किसी भी शय (वस्तु) का तलबगार नहीं। अल्लाह सच्चा और जो उसे ही चाहे वह भी तो सच्चा है, यानी वही है सिद्दीक। सैय्यदना अबु बकर रजि0अ0 'सिद्दीके अकबर' इसलिए भी हैं, क्योंकि उन्होंने कल्मा तैय्यब 'लाईलाह ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' को पूरी तरह से अपने आप में दाखिल किया। वह तालिबे खुदा हैं और खूब जानते हैं कि ईश्के-रसूल की मार्फत (सम्पर्क) से ही खुदा की मार्फत और दीदार मुमकिन (सम्भव) है। उन्हें यह भी ईल्म है कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को कल्मे में या नमाज, रोजा, हज, तौहीद में तर्क करने या उन्हें 'ला'

(नहीं) करने का हुक्म अल्लाह तआला ने कभी नही दिया है। सच्चाई भी है कि ईल्मे-खुदा के सरचश्मा रसूले खुदा हैं। इन्हें किसी ने तर्क किया तो उसने ईल्लल्लाह को भी तर्क (परित्याग) किया।

तर्क या ला (नहीं) जिसने रसूलल्लाह की की, उसने अल्लाह को भी तर्क किया। कैसे? अल्लाह तआला तक रसाई क्या किसी बन्दे को बिना रसूलल्लाह के आज तक मिली है? अल्लाह के रसूल जो हैं, वह क्या अल्लाह तक पहुंचने या किसी भी बन्दे को पहुंचाने की कुव्वत या ईल्म नहीं रखते? मेराजे-खुदा वह कर सकते हैं, फिर अपनी उम्मत को दीदारे-खुदा क्या वह नहीं करा सकते? खुदा का इस्लाम जिनसे दुनियां में जाहिर हुआ, क्या उनकी निस्बत-मुहब्बत को छोड़कर हम मुसलमान कहलाने के अधिकारी हैं? हमारे दिलों में ईश्के रसूल नहीं, तो हम इस्लाम से खाली हैं। जब इस्लाम नहीं तो क्या हम मुसलमान बने रह सकते हैं? वह रसूलल्लाह हैं। यानी रसूल वह अल्लाह के। देखिए उनके रसूल पदनाम के साथ अल्लाह है। जिस रसूल के साथ अल्लाह है, उन्हें छोड़ने का मतलब है कि अल्लाह का पता-ठिकाना जिससे मिलेगा, वह रास्ता भूल गया। आज इसी भूल-भुलैया में मुसलमान राहे-खुदा को भूल गए। जिसने रसूलल्लाह से ईश्क रखा और यादे रसूल व यादे खुदा में डूबा, वह वलीअल्लाह हो गया।

वलीअल्लाह। सुबहानल्लाह ! रसूलल्लाह की निस्बत और ईश्क की बदौलत एक खुदा का अदना बन्दा वलीअल्लाह बन गया। किसी बन्दे के साथ अल्लाह लफ्ज़ तब जुड़ा, जब उसने अपने नफ्सी बन्दा को तर्क किया और खुदा ने उसे अपना नेकबन्दा तसलीम कर लिया। वही नेक बन्दा तो वलीअल्लाह है। तर्क खुदी उसने 'लाईलाह' से पायी। उस बन्दे ने हुक्मे इलाही को तालीमे रसूल के मुताबिक पढ़ा। उसने तर्क खुदी की तो अल्लाह ने उस नेक बन्दे को 'वलीअल्लाह' नाम से शोहरत दे दी। जरा गौर से देखें कि वह अल्लाह तो अपने रसूल के साथ है। वही अल्लाह तो अपने औलिया के साथ है। तभी तो हम कहते हैं- नबी अल्लाह और वली अल्लाह।

यह कितनी प्रमाणित और सत्यापित बात है कि अल्लाह पाक ने खुद रसूल अल्लाह और वलीअल्लाह की सनदें दी हैं। अल्लाह तआला ने जिन्हें स्वयं सम्मानित किया, क्या हम उन्हें सम्मान देकर शिर्क और बिदअत में गिरफ्तार हो जाएंगे? कुरआन जैसे पाकीजा कलामे इलाही में क्या रसूलल्लाह और वलीअल्लाह की शिरकत नहीं है? इनकी शिरकत अगर शिर्क होती तो कलामे-खुदा में इनकी अजमत और सिफात (गुण-विशेषता) का उल्लेख स्वयं अल्लाह पाक क्यों करता? हमें हैरत है कि ऐसे मामूली बन्दे, जिनमें इस्लामी कल्मा तैय्यब और कल्मा-शहादत ही मौजूद नहीं, वह किस ईल्मे-तकब्बर से रसूलल्लाह और वलीअल्लाह की खुदाद शान में अहानत (अपमान) करते हैं? अल्लाह पाक (पवित्र) है। उसने अपने रसूल और वली-औलिया को पाक (पवित्र) रखा है। रसूले पाक और अल्लाह के पाक वली-औलिया की निस्बत और ईश्क को जो नापाक मानते हैं, वह बजाते खुद

क्या अल्लाह तआला की तरफ से पाक (पवित्र) करार दिए गए हैं? अगर नहीं तो वह पहले अपने नापाक ईल्म और नापाक कौल-फेएल को किसी कामिल पीर के जरिए पाक क्यों नहीं कर लेते? बिना जाहिर-बातिन पाक हुए परवरदिगार की निस्बत (सम्पर्क) मोहाल है। पाक रब को नापाक बन्दा कैसे पा सकता है? जबकि उसमें पाक रसूल और पाक वली के ही बारे में नापाक ख्यालात गर्दिश करते रहते हैं? यही वजह है कि पाक बाअमल कल्मे, ऐसे नापाक दिलों में दाखिल नहीं होते?

जिसने अल्लाह तआला और रसूलल्लाह को देखा, वह पाक हो गया। कल्मा-शहादत बन्दे को हर हाल में पाक बनने का एलान है। चौदह सौ 41 सालों से यह एलान कायम है। कयामत तक के लिए यह एलान जारी व सारी है। मगर हम इस एलान की अमली पैरवी नहीं करते। हम कल्मा, नमाज, तौहीद को सिर्फ पढ़ते हैं। सिर्फ जुबानी पढ़ने को अमल करना हम कब तक समझते रहेंगे? क्या सच्चे इस्लाम में दाखिल होने से कोई नुकसान है? पहले कल्मा-शहादत को अमली तरीके से पढ़कर इस्लामी मुसलमान तो बनें। इस शहादत के पहले कल्मा तैय्यब है ताकि बन्दा अल्लाह तआला और रसूले-खुदा की शनाख्त कर सके। जब तक पूर्णरुपेण अल्लाह व रसूल की पहचान नहीं होगी, हम शहादत कैसे देंगे? यही ईल्म तो हमें चाहिए। सच्चा कल्मा सहाबा एकराम और अहले-सुफ्फा एकराम ने अपने कामिल पीर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के निर्देशन में पढ़ी। हम जानते हैं कि सारे सहाबा रसूलल्लाह की कुर्बत में रहे, मगर इस पर गौर नहीं करते कि रसूले-पाक ने दो प्रमुख भूमिकाएं निभायी है। वह रसूलल्लाह की हैसियत से कलामुल्लाह पाए और अवाम में दिए।

उन्होंने कभी खुद फरमाया, कभी अल्लाह ने जो कुछ उनसे कहा, उसे भी बताया। खुद का फरमान 'हदीस' है और कौले-खुदा, जिसे रसूले पाक ने दोहरायी, वही 'हदीसे कुदसी' कहलाती है। यह कलामुल्लाह और हदीसें अल्लाह के रसूल की तरफ से हैं। जब उन्होंने अल्लाह तआला के हुक्म से सहाबा एकराम से 'बैय्यत' ली, उस घड़ी वह कामिल पीर की भूमिका में रहे। अल्लाह के कलाम, कल्मा, नमाज और हज, जकात, रोजा, तौहीद को आपने बखूबी पढ़ायी। आप कह सकते हैं कि 'कामिल पीर' नाम से रसूलल्लाह का जिक्र कहीं नहीं मिलता? वह रसूलल्लाह हैं, उन्हें कामिल पीर कैसे तसलीम किया जाए? अल्लाह तआला की सच्ची तालीम जो जाने, वही कामिल (पूर्ण) है। जिसे अल्लाह तआला अपनी तालीम देने को अधिकृत करे, वही पीर है।"

21 - बैय्यत : पीरी - मुरीदी

मशहूर सन्त सर जॉन डि० डिसूजा ने कहा- "आईए, इस बात पर गौर करें कि कल्मा पढ़कर सारे सहाबा जब इस्लाम में दाखिल हो गए थे, फिर उन्हें 'बैय्यत' करने की जरुरत पेश क्यों आयी?

अल्लाह तआला ने यह क्यों फरमाया कि बेशक जो आपसे (रसूलल्लाह) से बैय्यत लेते हैं, वह अल्लाह तआला से ही बैय्यत लेते हैं। आपका हाथ अल्लाह तआला का ही हाथ है। इस प्रसंग में यह प्रमाणित हो रहा है कि रसूलल्लाह द्वारा बैय्यत लेना, अल्लाह तआला की मार्फत की शर्त है। इस मामले से यह भी जाहिर होता है कि जो बैय्यत ले रहे हैं, उनमें फनाफिल्लाह की मार्फत आनी चाहिए यानी अल्लाह की पहचान, वार्ता, दीदार करने में वहीं सक्षम (कामिल) हो सकते हैं। इस्लामी कायदे-कानून की सच्ची सीख के लिए 'बैय्यत' एक शर्त बन गई। बैय्यत लेकर ही कल्मे और नमाज आदि की सच्ची तालीम दी जाए। इस बैय्यत से पाक रब का यही कानून जाहिर हुआ। सच्चे इस्लामी मोअल्लिम या तालीम देने वाले को ही तो 'कामिल पीर' नाम से हम पुकारते हैं। जो सहाबा सच्ची तालीम में खरे उतरे, उन्होंने भी रसूले पाक के बाद 'बैय्यत' ली। यह बैय्यत ही इस्लामी रुह है जो रसूलल्लाह से खुल्फाए राशेदीन और अहले-सुफ्फा में और उनसे अहले बैत एकराम में फिर उनसे ताबईन और तब्ब-ताबईन में आयी। अल्लाह तआला का फरमान रसूलल्लाह ने दिया, मगर फरमाने-खुदावन्दी की सच्ची पैरवी कैसे की जाए, इसके लिए रब्बल ईज्जत ने 'बैय्यत' शर्त कर दी। यानी हक्की (सर्वाधिक सत्य) इस्लाम सीखने-जानने और अमल करने के लिए रसूलल्लाह से बैय्यत जरुरी है। इस्लाम का कानून रसूले पाक ने दे दिया। अब बैय्यत उनसे लेकर इस्लाम को खुद में दाखिल करो। बैय्यत लाजिम इसलिए हुई ताकि आनेवाली नस्लें यह जान सकें कि रसूलल्लाह हैं। हम उनके उम्मती हैं। वह बैय्यत होकर जिनका बताया कल्मा पढ़ते हैं, उन्हें देखकर तसदीक कर लें कि आखरी नबी जो मेरे हैं, वह कैसे हैं? हक्की इस्लामी तालीम पाने के लिए बैय्यत पहली शर्त हुई, फिर मिला कल्मा तैय्यब पढ़ने का तरीका। तालीमे-हक् देने वाले को ही कामिल पीर या पीरो-मुर्शिद नाम से पुकारा जाता है। सहाबा कितने खुशनसीब हैं कि उन्हें रसूले खुदा और कामिल पीर दोनों हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के रुप में मिले। बैय्यत लेने वाले तालिबे-हक् यानी मुरीद कहलाए और रसूलल्लाह को अपने रु-ब-रु पाए तो उम्मती भी बन गए।

यही बैय्यत जब तालीमे-हक् से मालामाल हुई तो सहाबा ने अल्लाह तआला और रसूलल्लाह की शहादत देखकर पेश की। यही सिलसिला आगे बढ़कर चौदह खानवादों में चला। बाद में वही कादरिया, चिश्तिया, नक्शबन्दिया और सोहरवर्दिया के नाम मशहूर हुआ। हम बैय्यत लेने की जगह इस्लामी रहनुमाओं के पीछे-पीछे घुमते हैं। यह पैरवी अल्लाह तआला के नाम पर चलायी जाती है। क्या कुछ वक्त के लिए घर-बार छोड़कर मसजिद दर मसजिद घूमने से आज तक अल्लाह और रसूलल्लाह का दीदार और साक्षात्कार किसी मुसलमान को हासिल हुआ है? जिन रहनुमा की कयादत में हम हैं, अगर उन्हें फनाफिल शैख, फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह की मन्जिलें प्राप्त होतीं, तो वह इधर-उधर न भटकते और न मुसलमानों को भटकाते।

आप हजरत बेलाल को जानते हैं। उनके एक दिन अजान न देने से सबेरा नमूदार न हुआ। दिन-रात पर कब्जा तो अल्लाह का है। बेलाल नामी शख्स अजान न दें और सवेरा अल्लाह न करे, यह बात तो समझ में नहीं आती। बेलाल न नबी हैं और न अल्लाह के रसूल। वह एक मोअज्जिन (अजान देने वाला) हैं। हां, एक बात जरुर है कि वह रसूलल्लाह के प्यारे मोअज्जिन हैं। रसूलल्लाह के प्यारे मोअज्जिन ने अगर एक सुबह फ़जिर की अजान नहीं दी, किसी दूसरे ने दे दिया, तो इसमें सवेरा न होने का मामला क्या है? अजाने-फजिर दी गई है,बस बेलाल ने नहीं दी है। उन्हें कुछ लोगों के एतराज पर रसूले-खुदा ने रोका है कि आज अजान कोई और देगा। अजान दी गई, नमाजे फजिर हुई। अल्लाह तआला के रसूल की इमामत में सब कुछ हुआ। फिर बात क्या है कि सवेरा न हुआ? अल्लाह के हबीब के हुक्म पर अजान, नमाज पूरी हुई है। लेकिन सवेरा नहीं हुआ? आखिर क्यों? आखिर अजान तो वही दी गई जिसे बेलाल देते हैं। नमाजें वही हैं, जिसे रसूले पाक पढ़ाते हैं। मगर ये राज तब खुला जब जिबोल अमीन फरिश्ते पैगामे-खुदावन्दी लेकर आए। पैगामे हक सुनकर सभी अश! अश ! कर उठे। फरमाने इलाही था कि जब तक हजरत बेलाल अजान नहीं देंगे, सुबह नहीं होगी। अल्ला-अल्ला क्या आशिके मुस्तफा की अजान से रब्ब जुलजलाल को भी प्यार है? क्या जाते-पाक बेलाल हब्शी की पूरी अजान सुनते रहे? यह वाकया शाहिद है कि रब्बे कायनात को उससे प्यार है, जो उसके महबूब रसूल से प्यार करता है। यह घटना हमें यह भी सन्देश दे रही है कि मुहब्बते-रसूल के बगैर खुदा की इनायत मुमकिन नहीं। और ईश्के रसूल के लिए पहले ताजीमे रसूल दिल में लानी होगी। यह रास्ता हमें उनसे मिलेगा, जो रसूले पाक के शाहिद हैं। जिन्हें अल्लाह तआला की मार्फत और दीदार हासिल है। यही वो जमात है, जिन्हें कामिल पीर नाम से दुनियां जानती है। यह ईल्मे खुदा के राजदार हैं। यह रसूले खुदा के जरिए दीने-इस्लाम के प्रमाणित शिक्षक और प्रशिक्षक हैं। हम इनसे इस्लाम की हकीकत क्यों नहीं पूछते? हम इनसे 'बेय्यत' क्यों नहीं लेते? इनके दिलों में रसूलल्लाह की बतायी सच्ची तालीम है। यह खोलफाए-राशेदीन के नक्शे कदम पर हैं। इन पर अल्लाह तआला की एनायतें हैं। इन्हीं पर रसूले पाक की रहमते-खास निरन्तर रहती है। यह नफ्सीयाती शैतान को मुर्दा करके अल्लाह तआला के दीदार में जिन्दा रहते हैं। दुनियांदारी को तर्क करके यह यादे-इलाही में मसरुफ रहते हैं। यह गांव, शहर और बस्ती-बस्ती घूम कर इस्लामी प्रचार या इस्लामी रहनुमा बनने की कवायद नहीं करते। कामिल पीर की कुर्बत से इस्लाम दिलों में दाखिला लेता है। यह सच्चे इस्लाम के रहबर हैं, जो कल्मा तैय्यब और कल्मा-शहादत को अपने कौल-फेएल से जाहिर करते रहते हैं। पाक रब की सच्ची इबादत यही जानते हैं।"

22 - सच्चे इस्लामी रहनुमा

अब सत्संग के लिए सैय्यद महमूद रजा अली शाह आए। उन्होंने कहा- "कामिल पीरों की जमात की निशानियां आज भी जग-जाहिर है। इराक में हजरत पीराने पीर दस्तगीर, हजरत जुनैद बगदादी, हजरत सिरी सोकती, हजरत ख्वाजा हसन बसरी आदि कामिल पीर ही तो हैं। इन्होंने जिसे *इस्लामी तबलीग दी, वह खुदा के वली हो गए। आखिर हम किस तब्लीग में लगे हैं कि अब तक* मालोजर, अहलो अयाल और ख्वाहिशे नफ्स की मुहब्बत दिल से दूर न हो सकी। हम इस्लाम में हैं तो हमें अपने कल्मा तैय्यब 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' को दुरुस्त करना होगा। यह दुरुस्त तभी हो सकता है, जब आपका अमीरे जमात कल्मा तैय्यब और कल्मा-शहादत पर दुरुस्त हो। वह अमीरे जमात हकीकत में कामिल पीर के सिवा दूसरा कोई नहीं हो सकता।

तर्के दुनियां, जिस शख्स में सैय्यदना अबू बकर सिद्दीके अकबर, हजरत उमर फारुके आजम व हजरत उषमान गनी और हजरत अली करमुल्लाह वजहू तथा असहाबे-सुफ्फा की तरह न हो, उसने 'ला ईलाहअ' दरअसल पढ़ा ही नहीं। जो 'लाईलाहअ' की अमली सूरत न रखे, वह 'ईल्लल्लाह' की हकीकत क्या जानेगा? इन दिनों ऐसे ही इस्लामी नुमाईन्दे कसीर तादाद में हर तरफ नजर आ रहे हैं।

हम कल्मा पढ़कर दिली सुकून क्यों नहीं पा रहे हैं? हम पंजगाना नमाजें अदा करके भी किसी न किसी मसले में क्यों बेचैन हैं? इस्लाम तो अमन-शान्ति और सलामती का दूसरा नाम है। फिर हमें सुकून, चैनो-करार इस्लाम में रहकर भी अल्लाह पाक क्यों नहीं देता? क्या अल्लाह तआला हमारे हर हाल से वाकिफ नहीं है? सचमुच वह तो वाकिफ है। मगर हम उसके इस्लाम के सच्चे पैरवी से वाकिफ नहीं हैं। हम यह गौर भी नहीं करते कि इस्लाम की सही जानकारी किससे लें? हम इस्लामी कायदे-कानूनं को जब इस्लामी अमल ख्याल करते हैं, तो यहीं से गड़बड़ी में पड़ जाते हैं। हमें जुबान और जिस्म से इस्लामी अरकान को अदा कर लेना तो आता है, मगर तसदीकी इस्लामी ईल्म पर हमें चलने की फिक्र नहीं है। जबकि इस्लाम तसदीक का नाम हैं। नबीए पाक के पहले न जाने कितने नबी अल्लाह तआला ने औलादे-आदम की हिदायत के लिए भेजे। सभी ने कहा कि ईश्वर, अल्लाह, गॉड है। उसी की पूजा करो, उसे ही अपना माबूद कहो। मगर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम जब आए तो अल्लाह ने फरमाया कि ऐ मेरे महबूब आओ मेराज हो जाए। यह मेराज (ईश-मिलन) अल्लाह तआला की तसदीक है। जन्नत, दोजख, फरिश्ते, अम्बिया एकराम (ईशदूत समूह) आदि की तसदीक भी मेराज ही में हुई। नमाज की तसदीक तो खुद खुदाए-पाक ने की है। रसूले-खुदा ने जब कहा- अल्लाहो अकबर (ईश्वर सर्वमहान है) तो रब्बल आलमीन महबूब की आदाबे-बन्दगी पर मचल उठा। जब रसूले खुदा ने सना (प्रशंसा, स्तुति) की- "सुबहानअ कल्ला हुम्मअ व बेहम्देकअ व तबारकसमोक

व तआला जद्दोकअ व लाएलाह गैरोकअ" यानी- ऐ खालिके कायनात (ईश्वर) तेरी जात पाक (पवित्र) है और खूबियों वाली है और तेरा नाम बरकतवाला है और तेरी शान (प्रतिष्ठा) ऊंची है और तेरे सिवा कोई माबूद (पूज्यनीय ईश्वर) नहीं।

--- तो यह अदाए-बन्दगी खुदा को इतनी पसन्द आयी की उसने अदाए-नबी को नमाज बनाकर हर औलादे आदम पर फर्ज कर दिया। इस्लाम तसदीकी (सत्यापित) है। इसलिए हर बन्दे पर फर्ज है कि वह तसदीक करके कल्मा पढ़े। तसदीक के साथ नमाजें पढ़ें। तसदीक करके हज करे। रोजा, जकात और तौहीद में भी तसदीक जरुरी है। हम जिसके बन्दे हैं, उसकी तसदीक क्या जरुरी नहीं है? हम अल्लाह तआला के सिवा किसी को अपना माबूद नहीं मानते। हम नमाजें भी अल्लाह पाक के वास्ते पढ़ते हैं। हमारा पक्का यकीन अल्लाह पाक पर है। हमारा सजदा अल्लाह के लिए है। फिर तो हम पर फर्ज है कि अपने पाक माबूद को देखें और उसे पहचान कर उसकी बन्दगी करें। इसी का नाम तसदीक (सत्यापन, **verification**) है। जब तक तसदीक नहीं होगी, हम ईमानवाले नहीं बन सकेंगे। तो क्या यह कहना गलत होगा कि बिना तसदीक हम बेईमान हैं। हमारी सलामती और अमनो-अमान तथा कल्बी सुकून (हार्दिक शान्ति) तसदीक में है। इस्लाम में बाअमल होना, तसदीकी अमल में बाअमल होने का नाम है। मगर हम तसदीक के ईल्म और अमल के लिए फिक्रमन्द नहीं रहते। फिर यह कैसे माना जाए कि हम शरीयत और सुन्नते-रसूल पर बाअमल हैं। हम कैसे कहें कि खोल्फाए-राशेदीन की पैरवी हम करते हैं?"

उन्होंने कहा- "रसूले-पाक की सुन्नत पढ़-सुन के हमने जान लिया कि यह-यह तरीका सुन्नते-रसूल है। हमने यह जानने-पहचानने की कोशिश क्यों नहीं की कि मेरे रसूलल्लाह कौन हैं और कैसे हैं? उन्होंने बाअमल तरीका अपने सहाबा को किस तरह बतायी है। क्या दीदारे रसूलल्लाह के बगैर हम उनके उम्मती होने या उन्हें अपना रसूल कहके इत्मीनान कर लेंगे? क्या पहले हर मुसलमान के लिए यह लाजिम नहीं है कि वह अपने रसूलल्लाह को देखें और पहचाने। वह हमारे रसूल हैं, तो मिलेंगे। अपने उम्मती से वह क्यों नहीं मिलेंगे? उम्मती उनसे मिलने की सच्ची तड़प पहले दिल में पैदा करके तो देखे। रसूले पाक के गुम्बदे खिजरां को बातसव्वुर देख-देखकर दरुदो सलाम पढ़ने वालों से पूछिए। उन्होंने क्या उन्हें देख लिया? अगर हमने अपने रसूले पाक को देखा, तो हमें तसदीक हो गई कि वह मेरे रसूल हैं और हम हैं उनके उम्मती। यही तसदीक ईमान है। जब हम रसूले खुदा को देखने लगे, फिर तो यही अमल दीदारे खुदा भी करा देगी। **शबे मेराज में उन्हें दीदारे इलाही हुई है। उनकी सुर्मई आंखों में रब्बुल आलमीन का नूरी अक्स कायम है। मुझे यकीन है कि चश्मे रसूले खुदा में अगर आशिके रसूल देखे तो नूरे खुदा का दीदार पा सकता है।** हम जानते हैं कि मेरे नबीअल्लाह ग्यारह हिजरी में परदा फरमाए। मगर परदा फरमाने के

574 साल बाद हजरत ख्वाजा मुईनद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी ने उन्हें देखा और उनसे कलाम किया। यह मुराकबा और ख्वाबो-ख्याल की मुलाकात नहीं है। सन् 1189 ई0 (585 हिजरी) में ख्वाजा साहब अपने पीरो-मुरशिद ख्वाजा उषमान हारुनी के साथ मदीना शरीफ गए थे। उन्होंने जब सलामी पेश की तो रसूले पाक ने कलाम किया। उन्हें यह सनद दी- "वालेकुम अस्सलामो कुतुबुल मशायखुल फ़िल्-हिन्द व नायबे रसूल फिल हिन्द।" अर्थात- सलाम तुम पर, ऐ हिन्दुस्तान के सारे मशायखों के सरदार और हिन्दुस्तान में मेरे नायब।"

कामिल पीर हजरत उषमान हारुनी ने ख्वाजा मुईनद्दीन हसन चिश्ती को कौनसी इस्लामी अमल करायीं कि उन्हें रसूले पाक ने 'नायबे रसूल और कुतुबुल मशायखुल फिल हिन्द' के एजाज़ से नवाजा? आज ख्वाजा गरीब नवाज को दुनियां से परदा किए 796 साल हो गए। रसूले-पाक की अताकर्दा सनद कितनी स्थाई और मजबूत है, जो आज भी दुनियां के दिलों को उनकी तरफ खींचकर सुकूनो-करार दे रही है। अब तक अनगिनत लोगों ने 'या गरीब नवाज' कहके उनसे अल्लाह व रसूल का सदका पाया। यह कैसी रसूले पाक की एनायत है कि गरीब नवाज पर्दे से पहले और पर्दे के बाद भी दोनों हाथों से अल्लाह तआला की रहमत और बरकत लुटाते जा रहे हैं। उनके फैजाने इलाहिया का खजाना घटने के बजाए दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। क्या रसूलल्लाह की अताकर्दा सनद पर अल्लाह तआला भी राजी है? क्या रसूले पाक जिससे राजी हों, अल्लाह पाक भी उससे राजी हो जाता है? ख्वाजा गरीब नवाज के इस जिन्दा करामत से तो यही साबित हो रहा है।

ख्वाजा गरीब नवाज से वाकिफ हर खुदा का बन्दा यह मानता है कि गरीबनवाज हैं, वह जिन्दा हैं। वरना अब तक अरबों-खरबों लागों की फरियाद वह सुनते कैसे? हम सोचते हैं कि हिन्दुस्तान में रसूलल्लाह के नायब भी 21 मई, 1229 ई0 (6 रजब 627 हिजरी) को परदा कर गए। पर उनकी हुकूमत कायम है। उनका फैजाने-इलाहिया (चिरस्थाई यशस्वी ईशकृपा) कायम है। क्या किसी इन्सान को यह कुव्वत हासिल है कि उसके मृत्यु के बाद भी उससे ईश-कृपा का जुहूर (प्रकटीकरण) उसी तरह कायम रहे, जैसा शारीरिक जीवन में कायम था? अगर नहीं, तो हम ख्वाजा गरीब नवाज को किस तरह मुर्दा कहें? यह साबित हुआ की रसूले पाक की अताकर्दा सनद स्थाई है और सांसारिक जीवन-मृत्यु से पाक (पवित्र) है। उनके द्वारा प्रमाणित नायबे रसूल और कुतुबुल मशायखुल हिन्द जिन्दा है और जिन्दा रहेगा। वली-औलिया के पास अल्लाह तआला की वेलायत भी तो है। अल्लाह की वेलायत जिन्दा है, फिर अल्लाह के वली मुर्दा कैसे होंगे? वली जिन्दा हैं, यह प्रमाण तो ख्वाजा गरीब नवाज के परदा फरमाने पर अल्लाह तआला ने उनकी पेशानी (ललाट) पर दर्ज करा दी थी। जब लोगों ने उनकी पेशानी पे यह कलाम देखा- "हबीबल्लाह माता फी हब्बल्लाह" यानी अल्लाह का महबूब अल्लाह की मुहब्बत में फना हो गया। अर्थात-, हजरत ख्वाजा बुजुर्ग मरे नहीं हैं,

वह अल्लाह तआला के ईश्क में फना हैं। अल्लाह के ईश्क में फना, होना जिन्दा जिन्दगी का नाम है। अल्लाह वाले और दुनियांवाले में यही तो फर्क है।''

[22-A] जिन्दा नबीअल्लाह

सैय्यद साहब ने कहा– ''जब अल्लाह के वली–औलिया ईश्के खुदा में फना हैं, फिर अल्लाह के रसूल क्या अल्लाह में फना नहीं हो सकते? वली अल्लाह जब जिन्दा हैं, फिर अल्लाह के रसूल को मुर्दा कहने की जुर्रत कौन करेगा? इसी हकीकत को सैय्यदना उमर फारुके आजम ने नबीए पाक के पर्दा फरमाने के बाद एलानिया तौर पर तलवार निकालकर फरमा दी कि अगर किसी ने कहा कि रसूले पाक की मौत हो गई तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा। इस कथन में यह भविष्य का संकेत भी है कि रसूलल्लाह के परदा फरमाने के बाद ऐसे लोग भी होंगे, जो उन्हें मुर्दा तसलीम करेंगे। इसी कैफियत और मुस्तकबिल के हालात को मुशाहेदा करने के बाद उनकी हक जुबान बोल पड़ी। उनकी जुबान हक है। वरना हजरत उमर रजि0अ0 के बारे में रसूले खुदा यह क्यों कहते कि 'हक़ उमर की ज़ुबान पर बोलता है।' रसूले पाक़ यह क्यों कहते कि– 'हर अम्बिया के दौर में मोहद्दिस हुए हैं, मेरी उम्मत के मोहद्दिस उमर हैं।'

रसूले पाक के फ़रमान से यह साबित हुआ कि हजरत उमर रजि0अ0 हमारे मोहद्दिसे आजम हैं और उनका कौल हक़ (सत्य) है। तब से अब तक वह इस्लामी मोहद्दिस या आलिम कौन है? जो रसूलल्लाह को मुर्दा कहे? वह कौन है? जो रसूलल्लाह के फनाफिल्लाह होने को उनकी मौत आना तसलीम करे। कल्मा तैय्यब और कल्मा–शहादत की सही अदायगी करने वाला मुसलमान, कभी भूल से भी नबीअल्लाह और वलीअल्लाह को मुर्दा नहीं कह सकता। दरअसल इन दो कल्मे की सही अदायगी कोई जान लें तो वह अल्लाह तआला और रसूले पाक के दीदार से मालामाल हो जाएं। मगर परेशानी की बात तो यह है कि हम किसी कामिल पीर से बैय्यत लेने में शर्म महसूस करते हैं। हमें नफ्स बहकाता है कि पीरी–मुरीदी तो शिर्क व बिदअत की जड़ है। बताओ जिन्दा नबी की मिलादुन्नबी और जिन्दा वली–औलिया के उर्स का एहतमाम शिर्क व बिदअत बढ़ाने का जरिया कौन कहेगा? अगर ऐसे ख्यालात में हम मब्तला हैं, तो इसका मतलब तो यही निकलता है कि हम जुबानी ईल्लल्लाह और नुमाईशी सुन्नते रसूल की पैरवी करते हैं? हमें मोमिन नहीं बनना है और ना ही पाकजात की सच्ची इबादत करना है? क्या हमें अपने रसूलल्लाह से मिलने की तमन्ना नहीं है? उनसे बिना मिले उनके उम्मती होने का दावा हमारा सच्चा होगा या झूठा? हम अगर यकीन पर अल्लाह तआला और रसूलल्लाह को मानते हैं। तो क्या इस यकीन को हम कामिल नहीं बना सकते? रसूले पाक को देखना इसलिए भी जरुरी है कि हम खुद को इस्लामी मुसलमान कहते हैं। अल्लाह तआला का पता

तो हमें हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने बतायी है। हमारे कल्मे और इस्लाम में वह रसूलल्लाह हैं। सहाबा एकराम के ईल्म और अमल में रसूलल्लाह हैं। क्या कोई खुदा का बन्दा हमें यह बताएगा कि उसके सामने अल्लाह ताअला ने नमाज, रोजा, हज, तौहीद, जकात और कुरआन की तालीम दी है? कल्मा खुदा का, कलामुल्लाह खुदा का, हुक्म खुदा का, सारी बातें ख़ुदा कीं, मगर हमें तो खुदा की सच्चाई रसूले पाक ने बतायीं। राजे-खुदावन्दी क्या है? निजामे-कुदरत किसे कहते हैं? यह सारी हकीकत रसूलल्लाह जानते हैं। इसलिए उन्होंने एलान किया- "मैं ईल्म का शहर हूं और अली उसके दरवाजा हैं।" एक बात यहां चौंकाने वाली है। ईल्म का दायरा तो बेपनाह है। इसका मतलब कीं हमारे रसूले पाक हर-हर खुदाई ईल्म के राजो-न्याज (रहस्य भेद) से वाकिफ हैं। और उनके ईल्म को पाना है तो ईल्मी शहर के दरवाजा यानी हजरत अली करमुल्लाह वजहू की निस्बत पहले जरुरी है। अब बताओ, जो खुदाई ईल्म के शहर हों, उन्हें इल्मे-गैब नहीं होगा? खुदा का सारा ईल्म तो इल्मे-गैब ही है?"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने ईश-रहस्य खोला- "हमारा ईल्म अगर ईल्मी दरवाजे से गुजर कर इल्म के शहर से प्राप्त नहीं है, फिर वह ईल्म कैसे प्रमाणिक होगा? ईल्मे-दीन की प्राप्ति के लिए यही तो सच्ची राह है। अब ईल्मे दीन के काबिल हजरात यह गौर करें कि किताबी ईल्म लेने से कब्ल (पहले) या लेते वक्त क्या उन्होंने हजरत अली करमुल्लाह वजहू से राब्ता कायम किया है? अगर नहीं तो ईल्मे खुदा लेने के मसले में रसूलल्लाह से राब्ता कायम कैसे होगी? ईल्म के शहर अर्थात विद्या ज्ञान भण्डार को एक मकान में यदि कैद मानें तो बिना दरवाजे से गए हम ईल्म के शहर में दाखिल नहीं हो सकते। यह फरमाने रसूलल्लाह हमें साफ बता रही है कि इल्मी शहर के इल्मी दरवाजे से आने पर ही हमें सही ईल्म हासिल होगा। **वास्तव में यह हदीसे पाक कामिल पीर के पीराने-तरीकत की मजबूत कड़ी है। बैय्यत के बाद कामिल पीर जो शेजरा-शरीफ देते हैं। उसमें अव्वल नम्बर पर ईल्म के शहर का नाम होता है और दूसरे नम्बर पर हजरत अली करमुल्लाह वजहू का नाम हैं।** कुछ शेजरा शरीफ कामिल पीर के नाम से शुरु होकर हजरत अली हुजूर और हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के नाम पर खत्म होता है। हकीकत सिर्फ इतनी है कि ईल्म के शहर का ईल्म हजरत अली हुजूर को पूरी मिली। उनसे वही ईल्म हजरत इमाम हसन व हजरत इमाम हुसैन और हजरत ख्वाजा हसन बसरी तथा हजरत कमील इब्ने जेहाद को हासिल हुई। कामिल पीरों तक ईल्मे रसूले खुदा पीर दर पीर पहुंचा है। यानी बात साफ है कि **आज या मुस्तकबिल (भविष्य) में जो भी कामिल पीर आते रहेंगे, उनके पास रसूलल्लाह का ही ईल्म मौजूद होगा। यही वजह है कि कामिल पीरों को खुदा और रसूले पाक की तरफ से ईल्मे-खुदावन्दी को अवाम में पहुंचाने-सिखाने का अधिकार दिया गया है।** इसी अधिकार और आदेश के तेहत कामिल पीर शिक्षण-प्रशिक्षण (दर्स व तदरीस) देते हैं। वे खुदा और रसूल की तरफ से इसी सेवा कर्म हेतु

नियुक्त होते हैं। ऐसे खुदाई हुकूमत के अधिकृत प्रतिनिधि से शिक्षा लेकर हम खुदाद जिन्दगी और बातिल जिन्दगी को देख सकते हैं। हम यह भी देख सकते हैं कि आज भी रसूलल्लाह की रेसालत जिन्दा है। खोल्फाए राशेदीन जिन्दा हैं। अहले-सुफ्फा, अहले बैत एकराम, ताबईन, तब्बे ताबेईन एकराम और वली-औलिया जिन्दा हैं। **मुर्दा नजर को जिन्दा करने वाली तालीम हमने नहीं हासिल की। इसलिए हम अल्लाह तआला की अताकर्दा दायम व कायम जिन्दगी को नहीं देख पाते।** कुसूर देखने और न देख पाने का है। मुर्दा नजर, मुर्दा इबादत, मुर्दा शहादत और मुर्दा ख्यालात में जो माहिर है, उन्हें जिन्दा भी अगर मुर्दा नज़र आए तो यह हैरत की बात नहीं है। जो अल्लाह ताअला की एनायत और नजरे करम से जिन्दा हैं, उन्हीं की महफिलें सजायी जाती है। उन्हीं का जश्न मनाया जाता है। उन्हीं का उर्स और जलसा आयोजित होता है। ईल्म के शहर और ईल्म के दरवाजे से जिनका ताल्लुक नहीं, वह अपने ईल्म और अमल की रौशनी में खुद को परख सकते हैं।"

[22-B] पीरे-हक़ में तालीमे-हक़

उन्होंने कहा- "हम इस्लाम के हर अरकान और दीनी-एहकाम से वाकिफ हैं। मगर हमें जाहिर-बातिन दोनों शक्ल में क्यों सुकून नहीं हैं? हर मुसलमान नमाजें पढ़ता है। बाद नमाज दोआएं भी मांगते हैं। कभी दोआ कुबूल होती है, कभी नहीं? ऐसा क्यों? अल्लाह तआला हमारी नीयत और दिलों से वाकिफ है। वह कारसाज है। सारे आलम का रब है। हर जिन्दा बेजुबान-शय और सारी कायनात का पालन-पोषण वह रब्ब-करीम ही तो करता है। क्या उसे एक बन्दे की फरियाद सुनने-पूरी करने में कोई दिक्कत है? हमें यह गौर करना होगा कि हमारी इबादत में कहीं कोई कमी तो नहीं है? आखिर इबादत में कमी का जायजा हम किस तरह लें? कैसे हम यह जानें कि हमारी इबादत दुरुस्त होती है या नहीं? हमारी इबादत की परख करेगा कौन? क्या हमें मालूम है कि अल्लाह तआला और रसूलल्लाह सल्ले अला व सल्लम के आदेश और निर्देश पर कायम कामिल पीरों की जमात खुदाए-बरहक की हकीकत से आश्ना (परिचित) है। इनसे पूछें कि हमारी नमाज़ में असर क्यों नहीं है? हमारी इबादत में वह कमी क्या है, जिससे दोआएं कुबूल नहीं होतीं? नमाज की पाबन्दी, रमजान के रोजे और तिलावते कुरआन (कुरआन-पाठ) आदि सभी कुछ तो हम कर रहे हैं। फिर भी रोजी रोज़गार की दिक्कत, शादी-ब्याह की समस्याएं, घर-परिवार में तनाव, तरह-तरह की घरेलू अशान्ति आदि हमें अन्दर-बाहर से उलझन में डाले हुए है। जहां जिक्रे-इलाही हो, जहां अल्लाह तआला की पाक नमाजें वक्त की पाबन्दी के साथ अदा की जाएं। कलामुल्लाह की तिलावत जिस घर-मकान या फ्लैट में हो, वहां अमनो-अमान और खैरो-बरकत न हो, यह तो गौरो-फिक्र करने का मकाम है। जरुर ऐसी कोई बात तो है, जो हमारे ईल्म में नहीं है, वरना हम इबादते-इलाही के बावजूद

परेशान क्यों रहते?. हम मुसलमान हैं। इस्लाम हमारा मजहब है। वही इस्लाम जिसे अल्लाह तआला अपना मुकम्मिल दीन (परिपूर्ण धर्म) फरमा रहा है। ऐसे परिपूर्ण मजहब में दाखिल इन्सान दुनियांवी उलझनों में घिर कर परेशान हो, यह बात तो गले के नीचे नहीं उतरती। हम जब अल्लाह तआला से दोआएं मांग कर थक जाते हैं, तो किसी दोआ-तावीज के जानकार की खिदमत में हाजिर हो जाते हैं। वहां से भी जब मुस्तकिल सुकून नहीं मिलता तो किसी वली-औलिया या शहीद, गाज़ी के मजारात पर हाजरी देने लगते हैं। आखिर ऐसे वजूहात पैदा क्यों होते हैं? हम यह क्यों नहीं सोचते कि हम तो इबादत की पाबन्दी में हैं, फिर हमें तरह-तरह की दिक्कतें क्यों झेलनी पड़ती हैं? आईए कामिल पीरों से पूछें कि दरअसल इसमें बात क्या है? हमारा माबूदे हक, वह पाक ज़ात खुदा है। पाक की इबादत हमें जाहिर-बातिन से पाक होकर ही करनी चाहिए। गुसल (पवित्र स्नान) से हमने जिस्म को पाक किया। लेकिन दिल-दिमाग और मन की पाकीजगी के लिए किस पानी से और कैसे गुसल किया जाए? आखिर पाकीजगी का वह तरीका क्या है? क्या हमने इस पर गौर किया? उपरी जिस्म पाक कर लिया, अन्दरुनी दिल की पाकी का तरीका अल्लाह तआला ने हमें बतायी है या नहीं? ज़ब हम रसूले पाक से पूछेंगे तो यह जवाब मिलेगा कि जाहिर-बातिन का दोनों पाक-गुसल तो 'लाईलाहअ' में अयां है। कुल मिलाकर यह कहना ही पड़ेगा की हमारे इबादत के तरीके में कहीं न कहीं गल्तियां हो रही हैं? परेशानी का मूल कारण यही है।''

[22-C] बशर ने सूरज पलटाया

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने फरमाया- ''हमारे नबीए पाक सल्ले अला व सल्लम की शान कितनी निराली है। यह इस सच्चे वाकए (घटना) से जाहिर हो रही है। उन्होंने हजरत अली करमुल्लाह वजहू की सच्ची नमाज के लिए डूबे सूरज को पुनः पलटाया था। खिदमते-रसूले पाक (ईशदूत की सेवा) में हजरत अली करमुल्लाह वजहू की असिर की नमाज छूट गयी। हुआ यह था कि हुजूर मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम हजरत अली हुजूर के जानू पर लेटे हुए थे। नमाजे असिर का वक्त हो गया। सूरज डूबने लगा। हजरत अली हुजूर ने ताजीमे-रसूलल्लाह में उन्हें जगाया नहीं। सूरज डूब गया। नमाज छूटने के गम में हजरत अली हुजूर की आंखों से आंसू टपकने लगे। हजरत नबीए पाक फौरन उठ बैठे। पूछा तो हजरत अली ने नमाजे-खुदा के छूट जाने का दर्द बयान किया। तब नबीए पाक ने अपनी एक ऊंगली डूबे सूरज की दिशा में करके फरमाया- ऐ शम्स (सूर्य), मेरे पाक परवरदिगार के हुक्म से फिर जाहिर हो जा। इतना सुनना था कि डूबा सूरज पुनः पलटा। हजरत अली हुजूर ने नमाजें अदा कीं। मैं हैरत में हूं कि सूरज ने नबी की बात कैसे सुन ली? आज के किसी बशरी बन्दे या किसी भी ईमाम या दीनी-रहेनुमा में यह कुव्वत है, जो गए वक्त को पुनः ला सके ताकि किसी बन्दे की छूटी

नमाज कजा नहीं, अदा हो जाए? वह कौन सी कुव्वत अल्लाह के नबीए पाक में थी, जिसे अल्लाह के बनाए सूरज ने अपने निकलने-डूबने के नियम को तोड़कर, उनके हुक्म को मानने पर मजबूर हुआ? सूरज, कुदरत के कानून में बंधा है। उसे हर रोज प्रातः पूरब दिशा से निकलना है और पश्चिम दिशा में डूब जाना है। यह घटना उसके डूबने के समय में हुई। ईश्वर का हुक्म वह हर रोज नियमानुसार बजा लाता है। मगर उस दिन ईश-आदेश के विपरीत उसने क्यों किया? खुदा के हुक्म को तोड़ने का भय सूरज को क्यों नहीं हुआ? वह एक बशर और बन्दे के कहने पर डूब कर वापस क्यों निकला? उसे तो अल्लाह के नियम पर कायम रहना चाहिए था? उसने हजरत मुहम्मद इब्ने हजरत अब्दुल्लाह की बात क्यों मानी? खुदा के हुक्म से पैदा सूरज, खुदा के एक बशर या बन्दे के हुक्म को अगर मानता है, तो इसका मतलब साफ है कि उसने खुदा के कानून को तोड़ा और कुदरत की तौहीन की?

---लेकिन सूरज से कोई पूछे तो वह चीख कर कह उठेगा- "ऐ लोगों ! हमने अपने पाकज़ात की तौहीन नहीं की। मैं हजरत मुहम्मद इब्ने अब्दुल्लाह को नहीं जानता। मैं खूब जानता हूं कि यह मेरे पाक परवरदिगार के महबूबे पाक हैं। यह मेरे रब के साथ तबसे हैं, जब मेरी ही नहीं, जमीन-आसमानों की भी पैदाईश नहीं थी। यह तब से हैं, जब से मेरा रब हैं। यह मेरे रब के महबूब हैं। जो रब का महबूब है, वह रब से दूर कैसे रहेगा। हमने खूब जाना है कि रब के महबूब का हुक्म टालना, रब के ईश्क और अदब की तौहीन है। हम यह भी जानते हैं कि मेरा पाक रब, जिनसे बेइन्तहा प्यार करता है, अगर उनके हुक्म को हमने नहीं माना, तो वही तौहीने-खुदावन्दी है। इसलिए रब्बजुलजलाल की कसम हमने उसके महबूब की ताजीम किया। क्योंकि महबूबे-खुदा की ताजीम, असल में ताजीमे-खुदावन्दी है। हम फौरन इसलिए दौड़े-दौड़े आए कि कहीं मेरा रब यह सवाल न कर दे कि ऐ शम्स (सूरज) तुमने मेरे महबूब के हुक्म को बजा लाने में देरी क्यों की? मुझे यह खौफ भी था कि वह अल्लाह के महबूब रसूल हैं। अल्लाह पाक यह बार-बार कहता है कि मेरे महबूब की अताअत (पैरवी), अल्लाह की अताअत है। मैं यह भी जानता हूं कि अल्लाह के नबीए पाक, अल्लाह के नूर से हैं। वह बशर और बन्दे के लिबास में जरुर हैं, मगर वह नूरे-खुदा हैं। उसी खुदाई नूर से मैं भी सारे जहान को रौशन करता हूं। फिर नूरे-खुदा के हुक्म पर मैं एक अदना नूर भला उनकी ताजीम कैसे नहीं करता। उन्होंने बुलाया, मैं हाजिर हुआ। उन्होंने कहा मैं लौट गया। लेकिन मैं महबूबे-खुदा की ताजीम करके खुदाई मस्ती में झूम रहा हूं। हमने देखा उस रब के महबूब को। हमें उन्होंने किस पाक नीयत से तलब किया था। हमारी आमद महबूबे पाक ने तो इसलिए चाही कि उस पाक परवरदिगार की सच्ची इबादत की जा सके। महबूबे खुदा ने अपने महबूब हजरत अली-ए-पाक की मकबूल-इबादत के लिए हमें तलब किया। ऐ लोगों, खुदा के महबूब ने अपने महबूब खुदा की सच्ची इबादत के ईश्क में हमें हाजिर किया। ताकि

सारी दुनियां देख ले कि अगर कोई सच्ची पूजा उस पाक प्रवरदिगार की करता है, तो एक सूरज ही क्या, सारे चांद, सितारे भी उसकी ताजीम में हाज़िर हो सकते हैं।"

सैय्यद साहब ने आगे कहा- "तो यह है सूरज के पलटने की हकीकत। अब जो नबीए पाक को अपने दिल-दिमाग से अपनी तरह बशर और बन्दा तसलीम करते हैं, वह ऐसे नापाक ख्यालातों से तौबा कर लें। नबी या ईशदूत के मानव रुप को अपने रुप के अनुरुप समझना, यह तो उस पाक रब के पाक महबूब की शान में बहुत बड़ी गुस्ताखी है। नबी, अल्लाह के नबी हैं, बशर अल्लाह का बन्दा है। नबी को अल्लाह से गहरी निस्बत है। बन्दे को अल्लाह से निस्बत पैदा करने के लिए उसे कठोर इबादत-रेयाजत से गुजरना पड़ता है। फिर भी यह भरोसा नहीं है कि बन्दा उस पाक रब से निस्बत कायम कर पाएगा या नहीं। फिर हम अपनी पूजा-नमाज तथा ईश-ज्ञान के बल पर नबी-रसूल या ईशदूत बनने की नापाक कोशिशें क्यों करते हैं? हमें उस पवित्र ईश्वर के ईशदूतों का हार्दिक सम्मान, इसलिए करना ही होगा, क्योंकि उन्हें सर्वमहान परमेश्वर सम्मान देता है। हमें उस एक प्रभु की सत्यता का ज्ञान तो ईशदूतों द्वारा हुई है। फिर हमें इनसे निःस्वार्थ प्रेम किए बिना, ईश्वर का सत्य पथ कैसे प्राप्त हो सकता है? आज जिस तरह के हालात हम देख रहे हैं, वैसे हालात कम या ज्यादा ईशदूतों के प्रकट काल में भी रहे हैं। उन्हें सहजता से उस दौर के लोगों ने भी कुबूल नहीं किया था। हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के दौर में अबु जेहल का नाम काफी चर्चित है। वे बशरी रिश्ते में हजरत पैगम्बर साहब के चचा या काका या अंकल थे। मगर थे बड़े काम के। उनके तर्क और बुद्धिवादी ज्ञान का लोहा उनके कबीले के लोग मानते थे। क्योंकि उन्होंने देखा था कि जो अपने को खुदा का रसूल कहते हैं, वह तो मेरे भाई हजरत अब्दुल्लाह के घर में उनके पुत्र के रुप में पैदा हुए हैं। अबु जेहल ने उनका बचपन, जवानी देखा था। आंखों से देखने के बाद भी वह कैसे कहते कि मेरे परिवार का बालक ईश्वर का ईशदूत है। उनका दिल-दिमाग यह मानने को तैयार नहीं था कि हजरत आमना के लाल को ईश्वर का प्रियदूत कैसे स्वीकार करें। इसी कारण वे उन्हें ईश-ऋषि की तराजू में अपनी बुद्धिवादी तार्किक ज्ञान से तौलते रहते थे। अबु जेहल के कारण आज हम सभी को यह प्रमाण मिला की ईशदूत में ईश प्रदत्त गोपनीय विशेषताएं भी होती हैं।"

[22-D] बशर ने चांद को तोड़ा

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने आगे कहा- "अबु जेहल ने एक बार आजमाने के लिए कह दिया कि अगर आप ईश्वर के ईशदूत हैं तो चांद के दो टुकड़े करके दिखाएं। यहां यह प्रकट है कि अबु जेहल का दिल-दिमाग यह स्वीकारता था कि सूरज, चांद, सितारे, जमीन, आकाश सभी कुछ का स्वामी कोई एक सर्वमहान ईश्वर ही है। इसलिए अगर यह ईश्वर के ही भेजे ईशदूत हैं तो

ईश-निर्मित वस्तुओं पर भी इनका अधिकार होना चाहिए। अबु जेहल का यह भी चिन्तन था कि ईशदूत के परीक्षण के लिए वही विषय उचित है, जिसका सम्बन्ध ईश्वर से हो। उन्होंने ऐसे सत्य परीक्षण के लिए ही ईशदूत के समक्ष चन्द्रमा के दो टुकड़े करने का प्रस्ताव रखा। इस परीक्षण के लिए अबु जेहल ने अपने समर्थकों की काफी भीड़ भी जुटायी। सभी मौजूद थे। ईशदूत के मानने वाले भी वहां काफी संख्या में उपस्थित थे। ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने चांद को प्यार से एक नजर देखा। उन्होंने उसकी ओर अपने दाहिने हाथ की एक ऊंगली से ईशारा करते हुए फरमाया- "ऐ कमर (चांद) दो टुकड़े हो जा।"

चांद फौरन दो भागों में बंट गया। अबु जेहल के समर्थक अश ! अश ! कर उठे। उन्हें यह घटना संकेत दे रही थी कि हजरत अब्दुल्लाह के बेटे तो यह जरुर हैं, मगर यह आम व्यक्ति नहीं है। जिस चांद को कोई इन्सान निर्मित नहीं कर सकता, उस चांद को दो टुकड़े में कोई साधारण मानव कैसे कर सकता है? निश्चित रुप से चांद का जो भी निर्माता है, उससे इस टुकड़े करने वाले इन्सान का निश्चित रुप से काफी गहरा रिश्ता है। कहते हैं, जो निर्माता है, वही संहारकर्ता या संचालक होगा। अगर निर्माणकर्ता दिखाई नहीं देता, मगर कोई मानव रुप वाला व्यक्ति संचालक का कार्य करे, तो या तो वह मानव निर्माणकर्ता ही है अथवा उस निर्माणकर्ता का वह भेद जानने वाला ईश-शक्तियुक्त विशिष्ट प्रियजन है।"

सैय्यद साहब बोले- "अबु जेहल के समर्थकों को दिल से यह विश्वास हो गया था कि जिसे हम साधारण मनुष्य के रुप में देख रहे हैं, वह तो असाधारण है। अगर चन्द्रमा को निर्मित करने वाला वही उनका ईश्वर-अल्लाह है, फिर तो यह साधारण मानव दिखने वाला, असाधारण भी है और ईश्वर का दूत भी। अबु जेहल की ईशदूत न मानने वाली पार्टी का ह्रदय परिवर्तन आरम्भ होने लगा था। यह स्थिति भांपकर अबु जेहल ने बुद्धिवादी तर्क दिया- "चांद के दो टुकड़े हो गए, यह सत्यता है, किन्तु ईशदूत मानने से पूर्व अभी यह प्रमाण भी जुटाना होगा कि यह टुकड़े में बंटने की घटना अरब के अतिरिक्त अन्य देश के लोगों को भी दिखाई दिया या नहीं? वैसे फिलहाल यह घटना हमें जादू प्रतीत होती है.....।"

इस घटना की पुष्टि अरब के अतिरिक्त अन्य देश के लोगों ने भी की। अबु जेहल ने सब कुछ जाना-सुना, मगर उन्हें ईश्वर के ईशदूत होने से इन्कार किया। कारण मात्र इतना ही था कि जो अपने को ईशदूत बता रहा है, वह तो हमारे जैसा बशर या मनुष्य ही तो है। वह अगर यह कहता है कि ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं, तो मैं कहां इन्कार करता हूं। मैं प्रत्यक्ष बुतों की पूजा ईश्वर ही समझ कर तो करता हूं। मैं ईश्वर की ही तो पूजा कर रहा हूं। आगे जो मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के दूत हैं, तो मेरी दृष्टि में वह ईशदूत नहीं, बल्कि वह हजरत अब्दुल्लाह के बेटे हैं। अबू जेहल

के आन्तरिक अहंकार ने हमेशा यही कहा कि ईश्वर मेरा अलग है। जिसे ईशदूत कहते हैं, वह ईशदूत मानव के रुप में नहीं हो सकता। इसलिए अगर कोई मानव यह कहे कि वह ईश्वर का दूत है, तो निस्सन्देह वह झूठा है तथा उसका ईश्वर भी इस तर्कशास्त्र पर झूठा है।"

सैय्यद साहब ने तर्क दिया– "अबु ज़ेहल की घटना हमें यह बता रही है कि ईशदूत को मानव या बशर के रुप में आने के कारण वह उसे ईशदूत नहीं मानते थे। परिणामस्वरुप वह सत्य ईश्वर से भी काफी दूर हो गए। बुद्धि–ज्ञान और तर्क का रिश्ता मानव के मस्तिष्क और चिन्तन से है। सप्रमाण यदि सत्य का साक्षात्कार हो रहा है, तो इसे स्वीकारने में हर्ज क्या है? लेकिन सत्य स्वीकारने का सबसे बड़ा नुकसान हमारे अहंकार का होता है। यह नफ्स हमें इसलिए अन्धा बना देती है, क्योंकि सत्य के आगे हमारे आन्तरिक गर्व, अहंकार एवं मान–सम्मान का मजबूत पर्दा पड़ा रहता है। अबु जेहल की आत्मा कहती थी कि यह ईश्वर के ही ईशदूत हैं, मगर उन्हें अपने ज्ञान–बुद्धि का अहंकार यह सत्य स्वीकारने नहीं देता था। इसलिए इन्द्रिय दोष या नफ्सपरस्ती का महाजाल बिना तहस–नहस किए, हम ईश्वर की सत्य–पूजा नहीं कर सकते हैं। अबु जेहल ने सत्य का अनुमोदन नहीं किया। इसके पीछे उनका नफ्सीयाती शैतान था। जो उन्हें बारम्बार बता रहा था कि ईशदूत मानव या बशर हैं। कुछ लोग कुरआन से यह दलील देते हैं कि ईश्वर जिसे चाहे हिदायत दे और जिसे चाहे न दे। अबु जेहल को ईशदूत ने ईश्वर की हिदायत दी थी। उन्हें प्रमाणित करके बताया भी कि मैं ईशदूत हूं। तो क्या इसका अर्थ यह हुआ कि ईश्वर नहीं चाहता था कि अबु जेहल उसकी पूजा करें? सच्ची बात तो यह है कि ईश्वर अपने ईशदूत के कार्यकाल में या हमेशा अपने सारे बन्दों से चाहता है कि वह मेरे ईशदूत के कथनानुसार मेरी ही पूजा करें। जिन्होंने अपने नफ्सी शैतान से तौबा कर ली थीं, वे हिदायत पा गए। जो अपने शैतान की पूजा में थे, वह ईश्वर की हिदायत से दूर हो गए। आज की दशा भी वही है। भविष्य में भी ईश–पथ पर चलने या न चलने की बातें इसी प्रकार आती रहेंगी।

ईश्वर की 'हिदायत' नबी के पास है। ईश–सन्देश ही तो ईश्वर की हिदायत है। नबी ने जन–जन तक उसी ईश–आदेश को पहुंचाया। अब जो अबु जेहल की भांति अपने नफ्स की पैरवी में होगा, वह हिदायत नहीं पाएगा, जिसने अपने नफ्स को तर्क किया, उसके लिए हिदायत का दरवाजा खुला है। **वह पाक रब, अपने सारे बन्दों को हिदायत देता है, अब यह बन्दे के उपर निर्भर है कि वह हिदायत लेगा या नहीं?** अबु जेहल की घटना यह भी सन्देश देती है कि ईश्वर के ईशदूत के कहने–सुनने पर भी, तब तक हम ईश्वर की सत्यता स्वीकार नहीं कर पाएंगे, जब तक हममें अपवित्र इन्द्रिय रुपी विष मौजूद रहेगा। यह विष निष्क्रिय तब होने लगेगा, जब हम ईश्वर के पूर्व ईशदूत को दिल से स्वीकार करेंगे। अबु जेहल अगर ईशदूत को स्वीकार कर लिए होते, तो ईशदूत उन्हें 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह' पढ़ने का वह गुर सिखा देते, जिससे सारे नफ्सी शैतानों का निर्मूलन होता है।"

फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ सर विलियम ने बताया– "अबु जेहल से जुड़ी तमाम बातें हैं। एक घटना यह भी है कि उन्होंने हाथों में कंकड़ियां लेकर अपने पीठ के पीछे छिपा ली। वह हजरत पैगम्बर से बोले– "अगर आप खुदा के भेजे नबी–रसूल हैं, तो बताईए मेरे हाथों में क्या है?"

यह घटना भी नबी–रसूल या ऋषि की गुप्त ईश विशेषता को प्रदर्शित कर रही है। तमाम लोग तरह–तरह की बुद्धिवादी ज्ञान से हमें यह बताते हैं कि ईश्वर के ईशदूत को गुप्त बातों का ज्ञान नहीं रहता। इसी को उर्दू भाषा में ईल्म–गैब या गैब का ईल्म अथवा ईश्वरीय गोपनीयता का ज्ञान हम कह सकते हैं। अबु जेहल जैसे लोग लगभग हर ईशदूत के कार्यकाल में जरूर रहते हैं। ऐसे लोगों के माध्यम से ईश्वर अपने सर्वप्रिय ईशदूतों का रहस्य मानवसमाज में प्रकट करता रहता है। कुछ लोग ईशदूत पर यह आरोप भी लगाते हैं कि वह ईल्म गैब नहीं रखते। वे हर किसी को ईश–पथ पर नहीं चला सकते। ऐसे लोग इसके पीछे यह तर्क देते हैं कि ईश्वर के सिवा ईल्म–गैब किसी नबी, रसूल, ऋषि, मेसेन्जर आदि को तथा ईश–योगी या वली–औलिया को बिलकुल नहीं होता। उनके पास इस बात के भी प्रमाण होते हैं कि ईश्वर ही हर जगह हाजिर–नाजिर है। हाजिर का अर्थ होता है– मौजूद तथा नाजिर का अर्थ हैं– देखने वाला और जानने वाला। उनका इस शब्द के पीछे यह विश्वास रहता है कि सारे ईशदूत तथा सारे औलिया को हाजिर–नाजिर कहना या मानना गलत है। क्योंकि ईश्वर–अल्लाह के सिवा कोई हाजिर–नाजिर नहीं। वह कई प्रकार के प्रमाण भी देते हैं। अगर कोई इनसे पूछे कि हाजिर–नाजिर, जिस अल्लाह को मानते हो, उसे हम तो कहीं भी अपनी बशरी आंखों से हाजिर और नाजिर नहीं देख पाते हैं। फिर यह कैसे साबित करोगे की अल्लाह सचमुच हाजिर भी है और नाजिर भी। यकीनन इसके जवाब में उन्हें यह कहना पड़ेगा कि हमारा कामिल यकीन और ईमान है कि अल्लाह हर जगह हाजिर और नाजिर है। उसी यकीन से कोई अल्लाह के नबी और अल्लाह के वली और फकीर को अगर हाजिर और नाजिर मानता है तो वह न तो शिर्क करता है और ना ही कुफ्र। जो अल्लाह में ही है, वह अलग से अल्लाह में शरीक कैसे माना जाएगा। अल्लाह की सिफतों में हाजिर–नाजिर और ईल्म–गैब की भी सिफत आती है।

अगर अल्लाह अपने नबी, पीर, फकीर और वली में अपनी यह सिफतें डाल दे तो बोलो हम बशर उस खुदा को क्या रोक सकते हैं? हम कितने अन्धे हैं कि यह देखकर भी की वह अल्लाह के नबी हैं। वह अल्लाह के फकीर हैं। वह अल्लाह के वली हैं। इसके बाद भी नहीं समझते की अगर वह अल्लाह की सिफतों से खाली रहेंगे, फिर वह तो बशरी नबी, बशरी फकीर और बशरी वली कहलाएंगे। अल्लाह ने इसी वजह से अपने कलाम में उन्हें नबीअल्लाह, रसूलल्लाह और वली–अल्लाह कहा। ताकि दुनियां का हर बन्दा उन्हें अल्लाह से जुड़ा जान ले। नबी जो बशर के रुप में है, वह जब अल्लाह की नबूवत से

नजर डालेंगे, तो वह ईल्म गैब को जाहिर करेंगे। जब बशरी नजर से देखेंगे, तो उन्हें पूछना पड़ेगा कि वहां क्या है? तुम कौन हो? यह कैफियत नबूवत में रहने या न रहने की है। इसके मायनी यह कहां होता है कि उन्हें ईल्म-गैब नहीं है। वेलायत की भी यही स्थिति है।

[22-E] कंकड़ियों ने नबी कहा ?

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने आगे फरमाया- "आईए अबु जेहल की कंकड़ी वाली घटना को देखें। ईश-दूत ने कहा कि ऐ अबु जेहल अगर तुम्हारे हाथों की ही छिपी वस्तुएं बता दें कि मैं कौन हूं तो मुझ पर और उस एक खुदा पर यकीन करोगे? अबु जेहल मुस्कराया- "क्या अच्छी बात कहा। अगर मेरे हाथों की पोशीदा चीजें बोलती हैं, तो मैं तुझे ईशदूत मान लूंगा तथा तेरे उस खुदा पर भी यकीन कर लूंगा, जिसे तुम पूजते हो।" ईशदूत हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ने फौरन कहा- "अबु जेहल अपने कानों से सुन, तेरे हाथों की कंकड़ियां क्या कह रही हैं...?" उसी वक्त बेजान कंकड़ियों में जैसे जान आ गई। कंकड़िया बोल उठीं- "अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह। अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदुर्रसूलल्लाह।" अर्थात- हम गवाही देते हैं कि नहीं कोई पूज्यनीय, सिवाए ईश्वर के तथा हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम ईश्वर के रसूल या ईशदूत हैं।

अबु जेहल ने इस विचित्र घटना के बावजूद उन्हें ईश्वर का ईशदूत नहीं माना। सारे संसार को यह घटना सन्देश दे रही है कि ईशदूत में ईल्म-गैब या ईश्वर की गुप्त वस्तुओं का ज्ञान भी होता है। पूर्व की सूर्य एवं चन्द्रमा की घटनाएं हमें यह ज्ञान दे रही हैं कि ईश्वर से निर्मित या उत्पन्न वस्तुएं, ईशदूत को पहचानती हैं। इसीलिए वह ईशदूत के आदेश को तत्काल पूरी करती हैं। हम यह भी देख रहे हैं कि ईशदूत के पास ईश्वर का सन्देश आता है। ईश्वर अपने किसी बन्दे को सीधे अपना सन्देश नहीं देता। ईश्वर के सन्देश में ही बन्दों के लिए हिदायत या शुभ सूचनाएं आती हैं। बन्दों को शुभ सूचनाएं या ईश्वर की हिदायत देने का कार्य ईशदूत का है। बन्दे हिदायत ग्रहण करें या नहीं, यह तो बन्दे की जिम्मेदारी है। ईश्वर के कुरआन में आए कथन का अर्थ भी तमाम विद्वान अपने विश्वासी ज्ञान के आधार पर लगाते रहते हैं। उनका यह कहना है कि ईश्वर के चाहने पर ही बन्दा हिदायत पा सकता है। यानी बन्दे को हिदायत के लिए कोई चिन्ता-फिक्र करने की आवश्यकता नहीं है। वह चोरी करे, डाका डाले, नकली जेहादी बन कर कत्ले-आम करे, व्यभिचार आदि गन्दे काम करता रहे। ऐसे बन्दे को सुधरना नहीं चाहिए, क्योंकि जब ईश्वर उन्हें हिदायत करेगा, तो सुधर जाएंगे। ईश्वर को ही सीधे अगर हिदायत करना होता, तो वह नबी, पैगम्बर को बन्दों के बीच भेजता क्यों? दुनियां में कामिल पीरों को हिदायत के लिए ही तो अल्लाह ने कायम रखा है। हम यह कैसे जान गए कि ईश्वर की हिदायत के इन्तजार में बेईमानी, जालसाजी, हत्या, रिश्वतखोरी, बलात्कार आदि कुकर्मों की हमें

छूट हासिल है। इस मान्यता से तो हमें लगता है कि ईश्वर की हिदायत जिन्हें हासिल नहीं है, उन्हें ईश्वर ही कुकर्मी बनाने में रुचि ले रहा है? ईश्वर की हिदायत ईशदूतों के माध्यम से दुनियां के कोने-कोने में पहुंच चुकी है। अब जिम्मेदारी बन्दे की है कि वह ईश-पथ पर चले या अपने बुद्धि-ज्ञान के पथ पर। जिसने ईशदूत को ईशदूत माना, उसे ईश-सन्देश का पालन करना होगा। अबु जेहल की घटना के पीछे एक यह रहस्य भी है कि ईशदूत की उपस्थिति में भी ऐसे बन्दे होते हैं, जो सब कुछ जान-सुनकर भी न ईश्वर को मानेंगे और ना ही ईशदूत को। वह पवित्र ईश्वर यह भी प्रमाण दे रहा है कि ईशदूत मानव के रुप में जिस परिवार में प्रकट होंगे, उस परिवार के सदस्य भी उसे ईशदूत मानने से इन्कार कर सकते हैं। जब ऐसी परिस्थिति ईशदूत के कार्यकाल में सम्भव है, तो बाद में भी ऐसे लोग आते रहेंगे, जो ईशदूत से भी इन्कार करेंगे तथा ईश्वर से भी। इसलिए ऐ लोगों ऐसी परिस्थितियां जब भी दिखाई दें, तुम आश्चर्य मत करना। तुम ईशदूत को हृदय से स्वीकार करके ईश-सन्देश के अनुसार चलोगे तो ईश्वर की हिदायत पा जाओगे।''

[22-F] अपने-अपने ईश्वर को सपोर्ट दो

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने यह स्पष्ट कहा- ''ईशदूत या नबी के लिए बन्दा और बशर की मान्यता को अपने दिल-दिमाग से ठोकर मार कर भगाएं। सबसे पहले अपने स्वच्छ हृदय से यह कुबूल करें कि नबी या रसूल अथवा ईशदूत ईश्वर के हैं। ईश्वर की महानता के साथ ईशदूत को स्वीकारें। जब यह भावना आपमें स्थायित्व पाएगी, तो नफ्सी शैतान कमजोर पड़ जाएगा। जब हम ईशदूत को उनके प्रकट जीवन के साथ जोड़ेंगे, तो मन में दुविधा बनी रहेगी। आपकी नज़र में आएगा कि ईशदूत अमुक के पुत्र हैं। वे तो हमारी तरह ही जन्म लिए। हमारी तरह ही खाते-पीते रहे। हम जैसों की तरह ही मर गए। ऐसी भावनाएं जब हम दिल में लाएंगे, तो हम अपने आपकी समानता में ईशदूत को भी रखेंगे। फलस्वरुप वह ईशदूत, ईश्वर के भेजे न होकर, हमारी तरह मां-बाप की सन्तान बन जाएंगे। फिर तो हमने न ईश्वर को समझा और न ईशदूत को। हम सत्य से असत्य मार्ग पर चलने लगेंगे। उसके बाद हमीं यह शिकायत भी करेंगे कि ईश्वर की पूजा से लाभ नहीं। यह पूजा-नमाज सब निरर्थक है। सामान्य मानव को ईशदूत कहना गलत है। किसी ईशदूत में यह शक्ति नहीं है, जो हमारी बिगड़ी बना सके। वह मनुष्य हैं, ईशदूत नहीं। अबु जेहल शैली की ऐसी कार्य-पद्धति से हम ईशदूत से दूर हो जाते हैं। ईशदूत से दूर हुए तो ईश्वर से हम उतना ही दूर हो गए।

आज इसी धर्म-मजहब बढ़ाओ अभियान में हम कमर कसकर जुटे हुए हैं। हम मानते हैं कि सारे ईशदूत तो हमेशा के लिए मर चुके हैं। वे अब पुनः आने वाले नहीं। हमारी मान्यता का ईश्वर भी तब तक निष्क्रीय है, जब तक हम उसके धर्म-मजहब के प्रसार के लिए न जूझें। अगर धर्म-मजहब की

रक्षा और विस्तार हम सभी ने नहीं किया, तो ईश्वरीय मान्यता धरती से उठ जाएगी। इसलिए हर बन्दे पर फर्ज है कि वह अपने-अपने मान्यता वाले धर्म संगठन के लिए आत्म-समर्पित हो। इसलिए धार्मिक भेदभाव के बिना ईश्वर या ईशदूत की इस कलि-काल में सुरक्षा सम्भव नहीं है। हम इसी कारण हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि के संगठन बनाते हैं। क्योंकि हमारी नजर में धर्म-रक्षा प्रथम करनी चाहिए। इससे जन-जन में अपने-अपने ईश्वर को मजबूती मिलती है। इस पुण्यकर्म से दुनियां में हमें मान-सम्मान भी तो मिलता है। लोग हमारे धर्म-संगठन शक्ति से भयभीत भी रहते हैं। हम धर्म रक्षा या धर्म जागरण मंच से जब ललकारते हैं, तो विपक्षी संगठनों में काफी उत्साह जागृत होती है। वे भी अपना धर्म शक्ति प्रदर्शन जलसा, इस्तमा और जुलूस से करते रहते हैं। इन प्रदर्शनों से आनन्द ही आनन्द मिलता है। लोग इतने सजग हो जाते हैं कि रातों को जाग-जाग कर अपने-अपने घरों की रखवाली करते रहते हैं। यह सारे क्रिया-क्लाप धर्म, मजहब के नाम पर होते हैं। क्योंकि हमारी यह सोच है कि ईश्वर के इतने सारे धर्म-मजहब की सुरक्षा, हम बन्दों के सिवा कौन कर सकता है? हम यह भी मान लेते हैं कि हर धर्म -मजहब, रिलीजन का ईश्वर तो आज शक्तिहीन है। अगर हम सभी अपने-अपने धम-मजहब की सुरक्षा और विस्तार के प्रति चौकस नहीं हुए तो ईश्वर-अल्लाह के समक्ष हम क्या मुंह दिखाएंगे। आखिर सारे जग का ईश्वर तो तभी जिन्दा रह सकता है, जब उसके धर्म को हम जिन्दा करें। वाह, क्या चिन्तन संघर्ष है। आज ईश्वर की जिन्दगी, हम जैसे बन्दों के संगठन-संघर्ष पर निर्भर हो गई है। सच, आदिकालीन ईश्वर कब तक जिन्दा रहेगा। उसे कभी तो बन्दों का सपोर्ट चाहिए। उसे नवजीवन देने के लिए हम खूब मन्दिर, मसजिद, चर्च या कोई भी धर्मस्थान बनाते रहते हैं। इस धर्म -उत्साह में हम भूल जाते हैं कि हमने साधन तो बढ़ाया मगर साध्य हमारे दिलों से कोसों दूर रह गया। हम इस जोश में होश खो बैठते हैं कि ईश्वर-अल्लाह या गॉड सारे धमां और धर्म साधनोंसे बड़ा है। हम यह भी नहीं सोच पाते हैं कि पहले ईश्वर की प्राप्ति का अभियान चलाएं या धर्मस्थल या धर्म-समुदाय बढ़ाने का। हम यह आत्म चिन्तन भी नहीं करते हैं कि ईश-कृपा प्राप्ति से ईश्वर खुश होगा या धर्म संगठन या धर्म साधनों के प्रसार से? जब तक हम ईश्वर से दूर हैं, तब तक ईश धर्मों एवं ईश साधनों के चमकाने में यूंही हमारा बहुमूल्य समय नष्ट होता रहेगा।

अब निर्णय हमीं को करना है कि हम ईश-पूजा की सत्यता पा कर ईश्वर कृपा पा लें या ईशकृपाहीन स्थिति में हम धर्म-मजहब की केवल नाम-कृपा में अपनी जिन्दगी गुजारते रहें। हम धार्मिक या मजहबी प्रचार के अभियान को चलाने का अर्थ, 'ईशकृपा' समझते हैं, जबकि ईश-कृपा का तात्पर्य धर्म-कृपा या धर्म प्रसार की कृपा से नहीं है।"

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने फरमाया- "ईशकृपा, उसे कहते हैं, जो ईश्वर के साक्षात्कार से हमें प्राप्त हो। ईशकृपा का स्वरुप कई प्रकार का है। ईशकृपा सारी दुनियां पर है। ईशकृपा से

मानव जीवित है। ईशकृपा से सम्पूर्ण सृष्टि चल रही है। ईशकृपा के कारण सम्पूर्ण जीवों का जीवन है। ईश कृपा का एक रुप जीवन है तो दूसरा रुप मृत्यु भी है। इन सारी कृपाओं को देने वाला वह एक ईश्वर ही है। अगर सच्ची पूजा से वह हमें मिल जाए, तो उसका दर्शन-मिलन एवं साक्षात्कार ही ईश-बन्दे पर ईश-कृपा है। ईश-कृपा न तो ईश-दान है और ना ही ईश-भिच्छा है। यह वास्तव में ईश्वर का एक ईनाम है। ईश्वर कृपा पाने के लिए हमें परिपूर्ण ईश-पूजा की तपस्या करनी चाहिए। यही तपस्या, ईशकृपा की स्वप्राप्ति हेतु उपासना है। ऐसी उपासना, जो केवल ईश्वर की प्राप्ति के लिए की जाए। इस कठिन तपस्या में संसार की ईच्छाएं नहीं आतीं। इसमें स्वर्ग या मुक्ति की कामनाएं भी नहीं होती है। बस, ईश्वर के लिए, ईश्वर की आराधना होती है। इसी के फलस्वरुप मिलती है, वह अमर 'ईशकृपा' जो प्राप्तकर्ता को हर हाल में जीवित रखती है। यह वह ईशकृपा है, जो जीवन-मृत्यु के चक्रों से खण्डित नहीं होती। उसमें तो जीवन ही जीवन है। ऐसा शाश्वत जीवन, जो करोड़ों को नवजीवन देती है। ऐसे परमानन्द का जीवन, जिसकी ताजगी में दुनियां की मुरझाई खुशियां भी सुखदायी बन जाती है। वह ऐसी 'ईशकृपा' है, जो धर्म-धर्म के रस्मो-रिवाज से पवित्र है। यह वह पवित्र कृपा है, जो अपवित्रों का भी कल्याण करती रहती है। वह ऐसी कल्याणकारी और महाशक्तिशाली कृपा है, जो धर्म-धर्म के भेदभाव से पवित्र होती है। यह ईशकृपा वह समदृष्टि वाली है, जिसके नेत्रों में समूचा मानव संसार ईश्वर के एक बन्दे दिखाई देते हैं। वही तो सर्वशुभमंगलकारी ईशकृपा है, जो बिना किसी भेदभाव के सब का शुभ करती है। पता चला कि **'ईशकृपा' किसी भी धर्म की कृपा नहीं है। जो धर्म-धर्म के मानव को पहचान कर कल्याण करे।** वह तो सर्वधर्म के लिए कल्याणकारी है। सर्वमानव समाज के लिए शुभलाभकारी है। इसी कारण यह कृपा ईश्वर के समक्ष हर धर्म-मजहब की कृपा से श्रेयस्कर है। ईश्वर सर्वमहान तो उसकी कृपा भी सर्वमहान। ईश्वर सर्वप्रशंसनीय, तो उसकी कृपा भी सर्वप्रशंसनीय। ईश्वर ही जिलाता-मारता है। ईश्वर ही हमेशा से जिन्दा है और वही हमेशा रहेगा। इसी कारण उसका कृपा प्राप्त भी हमेशा जिन्दा रहता है। ईश्वर ही के कारण ईश्वर वाले का हमेशा के लिए सम्मान कायम रहता है। अब आप पहचान लें कि ईशकृपा क्या है तथा ईशकृपा प्राप्त कौन-कौन हैं? ईश्वर सचमुच है महान, मगर हम जान-समझ कर भी हैं नादान। हमारी नादानी हमें ईश-बन्दा बनकर जीने नहीं देती, फिर हम किस बलबूते पर ईशकृपा पाने का मार्ग प्रप्ति कर सकते हैं? ईश-कृपा के पूर्व हमें तो ईशबन्दा बनना पड़ेगा। वही सच्चा बन्दा, जो ईश्वर के सिवा किसी की चाह में न हो।"

[22-G] यह निराले बशर और बन्दे

श्री सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने यह भेद खोला- "ईश बन्दे तो सभी हैं, फिर ईशबन्दा बनने

की बात इसमें कहां से आयी? कौन दुनियां में है, जो ईश्वर के सिवा किसी और का बन्दा हो। यही हमारी मान्यता हमें भ्रम में डाले रहती है। हम यह ध्यान नहीं देते कि हम बन्दे, जिसके हैं तो उसके आज्ञानुसार हम चलते हैं या नहीं। हम पूजा-नमाज, हज, जकात, दान, व्रत, रोजा आदि करने को यह समझते हैं कि हमें बन्दा कहलाने के लिए काफी है। हमें देखना है कि हम उस एक प्रभु के किस प्रकार के बन्दे हैं। यानी हम उसके हर समय के बन्दे हैं या कुछ खास-खास समय के। यह ध्यान रहे कि हम ईश्वर के बंदे हैं। फिर तो हर समय उसकी याद में ही हमें लगे रहना पड़ेगा। यदि ऐसा नहीं हो पाता है तो हम जब-जब पूजा या नमाज करते हैं, बस उतने ही समय के बन्दे हुए। बन्दे का काम तो बन्दगी में लगे रहना है। बन्दा, जहां उसकी याद से गाफिल हुआ, फिर तो वह ईश्वर के गैर के साथ है। जितने वक्त तक वह दुनियां के काम में है, वह ईश्वर का बन्दा तो नाम का है, जब बन्दगी में लगा तब वह काम का बन्दा बन गया। यह ईश्वर की महानता है कि वह बन्दगी या गैर-बन्दगी करने वाले सभी को अपना बन्दा माने। मगर हमें तो पहचान रखनी होगी की हम बन्दे के नियम पर कितने सही हैं? ईशदूत को भी पुनः जान लें। ईशदूत में ईश्वर के अनेक गुण होते हैं। क्योंकि वह ईश्वर के सम्पर्क में रहते हैं। वह शरीर धारण करके आएं या सशरीर हमें न दिखाई दें, इससे उनके ईश-सम्पर्क और ईश-गुण में कोई कमी नहीं आती। जो ईश्वर के साथ है, वह ईश्वर के ज्ञान का ईल्म गैब भी जानता है। जो ईश्वर हर जगह मौजूद है, तो उसके ईशदूत भी जहां चाहें, मौजूद हो सकते हैं। यह बात क्यों नहीं समझते कि ईश्वर जब हर जगह मौजूद है, तो ईश्वर के नबी, रसूल, ऋषि आदि ईश्वर को छोड़कर कहां रहेंगे? जो ईशदूत है, वह ईशगुणों के साथ है। **जो ईशदूत नहीं, वही तो ईश्वर का बन्दा है। बन्दे को मौत है, क्योंकि वह ईश्वर के साथ नहीं रहता। अगर कोई बन्दा भी ईश्वर के साथ रहने लगे, तो वह भी ईश्वर के गुणों के साथ जिन्दा रहेगा।** ईश्वर हमेशा से जिन्दा है, ईश्वर के साथी भला मुर्दा कैसे होंगे? जो दुनियां के साथ है, जिसे दुनियां से प्यार है। वह दुनियां के साथ है, इसलिए वह मुर्दा होगा। **जो दुनियां में रहकर ईश्वर के साथ जीने लगे, वह ईश्वर के कारण जिन्दा रहेगा। वली-औलिया, दरवेश, मलंग, कलन्दर आदि आज भी जिन्दा हैं, क्योंकि वह ईश्वर के साथ हैं।** अगर वे दुनियां की पूजा में रहे होते, तो आज भी वे उन मुर्दों की भांति हो जाते, जो दुनियां में रोज मरते हैं। ऐसे मुर्दों को कोई ईश्वर का वली या औलिया अथवा ईश-योगी नहीं कहता। यह अन्तर भी जानने की हम कोशिश क्यों नहीं करते?

[22-H] बशर जो कामिल पीर बना

एक बन्दा, जब ईश्वर की सच्ची पूजा-नमाज और इबादत जानने के लिए किसी कामिल पीर से मिलता है, तो यह नीयत ही उसे 'बैय्यत' या मुरीद (शिष्य) बनाती है। किसी भी व्यक्ति का इरादा

यदि ईश्वर तक पहुंचने का है, तो यही सच्चे शिष्य या मुरीद की पहचान है। वह कामिल पीर से यह सीखने लगता है कि अपने दिल-दिमाग के विचारों को दुनियां के प्रेम से हटाकर ईशप्रेम में कैसे लगाएं। उसे कामिल पीर या ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु जब बताता है कि ईश्वर के सिवा अन्य सांसारिक वस्तुएं पूज्यनीय नहीं है। तो यह पूजा-विधि करके वह साक्षी बनने लगता है कि सचमुच ईश्वर तो एक है। वही पूज्यनीय है। जब शिष्य इस पूजा विधि में डूबता है, तब वह एक ईश्वर की सत्यता जान जाता है। अब उसकी पूजा, नमाज या इबादत सभी उस एक पवित्र ईश्वर के लिए होने लगती है। जब सद्गुरु से वह हृदय-जाप की विधि सीख लेता है, तब वह निरन्तर अपने एक खुदा को हृदय में बसाने के लिए साधनारत् हो जाता है। इस साधना से अन्दर के सारे बुत या शैतान दूर भाग जाते हैं। अब वह आत्मिक-जाप की क्रिया में तन्मयता से लग जाता है। जो आत्मा या रुह ईश्वर से सीधे सम्पर्क में है, वह ईश्वर के भजन में मस्त होने लगती है। अब मुरीद ध्यान करने लगता है। उसके बाद ईश्वर के गुप्त-जाप में लग जाता है। निरन्तर इस सच्ची पूजा में लगा रहने वाला शिष्य एक दिन ध्यान की अवस्था में सफलता पा जाता है। कामिल पीरों का यह ईश-पूजा ज्ञान उनके पैगम्बर हजरत मुहम्मद मुस्तफा सलललललाहो अलैहे व सल्लम के बताए गुप्त ईश्वरीय ज्ञान पर है। यह वही ज्ञान है, जिसे उनके चार प्रमुख सहाबा जानते थे। उसी ईश-ज्ञान को हजरत पैगम्बर साहब ने अपने अहले-सुफ्फा हजरात को भी दिया था। इसी कारण यह ज्ञान 'ईल्म सीना' कहलाता है। अर्थात- हृदय का ईश-ज्ञान। ऐसा ईश-ज्ञान जो ईश-याचक को ही प्रदान किया जाता है। यह ज्ञान जाहिर ईल्म की भांति ईशदूत ने सभी को प्रदान नहीं किया। यही कारण है कि इस ईल्म के लिए दुनियां के हर व्यक्ति को कामिल पीर की जरुरत होती है। जिन्हें हम कामिल पीर कहते हैं, उनकी निस्बत अपने कामिल पीर से तथा रसूलल्लाह से और अल्लाह से निरन्तर होती है। यह भेद आम आदमी नहीं जानता।

अगर कामिल पीर अपने कामिल पीर में फना न हो तो वह आगे की मन्जिलें तय नहीं कर सकता। जब वह अपने पीर को ध्यान या मुराकबे के सही तरीके से देखने लगता है, उस दिन वह पीर की हकीकत से वाकिफ हो जाता है। वह कह उठता है कि सच्चा पीर तो जिस्म के साथ जरुर है, मगर वह अल्लाह पाक में फना है। इस हकीकत को न समझने वाले पीरी-मुरीदी को गुमराही का रास्ता समझते हैं। यह उनकी गल्ती भी नहीं है। रस्मी इबादत की जो जानकारियां ऐसे लोग रखते हैं, उन्हें सच्ची इबादत की राह जरुर भारी लगेगी। जिस पूजा-नमाज में अपने निजी विचारों को शामिल करके हम इबादत करते रहते हैं, वैसी आसानी कामिल पीर के रास्ते में नहीं है। हमें दुनियांवी लज्जात के साथ-साथ खुदा की इबादत पसन्द है। कामिल पीर जब तक 'लाईलाहअ' (नहीं कोई पूज्यनीय) को अपनी जाहिर-बातिन की जिन्दगी में पूरी तरह दुरुस्त नहीं कर लेता है, वह 'ईल्लल्लाह' (ईश्वर ही पूज्यनीय) नहीं कहता। हम 'लाईलाहअ' की सच्चाई अपने आप में दाखिल किए बिना,

'ईल्लल्लाह' पढ़ते रहते हैं। खुदा के हुक्म की और शरीयत की सच्ची पाबन्दी करने वाले समूह का नाम कामिल पीर है। यह वह गिरोह है, जिसे अल्लाह व उसके रसूले पाक की सच्चाई का बखूबी ईल्म है। यह मसजिद-दर-मसजिद घूम कर रस्मी इबादत के प्रचारक नहीं हैं। इनके पास अगर अल्लाह पाक की मार्फत है, तो रसूले पाक की इनायत भी है। यह अन्धे इबादतगुजार भी नहीं है। यह वह गिरोह है, जो नमाज की मेराज से वाकिफ है। यह अगर अल्लाह की सच्ची इबादत में न होते, तो इनके पास फैजाने इलाहिया (ईश यशकृपा) का खजाना कहां से आता। इन्हें कामिल पीर तभी कहा जाता है, जब यह अल्लाह पाक और रसूले पाक को देखकर शहादत देते रहते हैं। हम नमाज के पढ़ने को मोमिन की मेराज सिर्फ ख्याल से तसव्वुर करते हैं। जब कि सच्ची नमाज की अदायगी में दीदारे-हक का दूसरा नाम मेराज है। हम 'अश्शहोदअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह, अश्शहोदअन्नअ मुहम्मदुर्रसूल्लाह' को पढ़कर यह दावा करने लगते हैं कि हमने अल्लाह के एक होने और पूज्यनीय होने तथा हेजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को अल्लाह के रसूल होने की सच्ची गवाही दे दी है। मगर कामिल पीर बिना उन दोनों को देखे, झूठी या यकीन की गवाही नहीं देता। नमाज, मेराज है। मेराज में ही रसूले पाक ने अल्लाह पाक को देखा है। इसलिए हमारी मेराज तो नमाज में तभी मानी जाएगी, जब हम भी नमाज में उस एक पाक परवरदिगार को देखें। हम नमाजें अदा करने में क्या अल्लाह पाक को देखते हैं? अगर हां, तब तो नमाज हमारी मेराज वाली है। अगर नमाज मेराज से खाली है, फिर हमारी नमाज क्या सच्ची नमाज मानी जा सकती है? इसी नमाज को तो हम रस्मी नमाज कहते हैं। इसी रस्मी नमाज और रस्मी इबादत को हक्की नमाज या सच्ची नमाज बनाने का ज्ञान इस दुनियां में कामिल पीर देते हैं। वही सच्चे रहबर और सच्चे रहनुमा हैं। उन से मिलने में हमें कभी नफ्स का शैतान रोकता है, तो कभी इब्लीसी गिरोह।''

[22-I] बशर में नेकबन्दे कौन?

श्री सैय्यद महमूद रजा अली शाह कहते हैं- ''हमारा नफ्सी शैतान हमें बताता है कि कामिल पीरों की जमात तो कब्र पूजने वालों की जमात है। यह शिर्क-बिदअत करने वाले लोग हैं। यह तो इब्लीस के चेले हैं। यह तो काफिरों की जमात है, जो खुदा की पाकजात में अल्लाह के गैर को शामिल करते रहते हैं। इनसे दूर रहो। इनके न्याज-फातेहा में शिरकत मत करो, वरना कुफ्र करोगे। यह पीरों को 'या पीर' या वली-औलिया को 'या' कह कर पुकारते हैं। 'या' कह के पुकारने का हक तो अल्लाह के सिवा किसी को भी नहीं है। मुसलमानों का यह एक ऐसा समूह है, जो यजीद के दौर से ही नबीए पाक और उनके आले-पाक से दूरी बनाए रखने के लिए दीनी काम में मशगूल है। यह उनसे भी दूर करने की कोशिश में परेशान रहते है, जो नबीए पाक और उनके आले पाक से दिली मुहब्बत

रखते हैं। यह उन कामिल पीरों और वली-औलिया के भी मुन्किर हैं, जो खुदा के नेक बन्दे हैं और जिन पर खुदा का ईनाम है। रस्मी बन्दगी और जुबानी शरीयत के यह पैरवीकार कामिल पीरों से दूर इसलिए रखते हैं, क्योंकि इनकी झूठी इबादत की कलई न खुले।

यह पंजवक्ता नमाज़ में 17 रेकात फर्ज, 20 रेकात सुन्नत, 8 रेकात नफिल और तीन रेकात वित्र की नमाजें पढ़ते हैं। इनसे पूछो की जब नमाजें अल्लाह के लिए हैं, तो इसमें नबीअल्लाह की 20 रेकात सुन्नत क्यों पढ़ते हो? जरा गौर करो कि पूरे पांच वक्त में फर्ज नमाज सिर्फ 17 रेकात है। सुन्नत तो फर्ज नमाज़ से तीन रेकात ज्यादा है, ऐसा क्यों? सुन्नत पढ़ते हो, सुन्नते-रसूल समझ कर, मगर नीयत में तो यह कहते हो की यह सुन्नत नमाज़ अल्लाह तआला के वास्ते। फर्ज नमाज़ तो अल्लाह तआला के वास्ते है, यह रसूले पाक की सुन्नत भी क्यों अल्लाह के वास्ते हुई? नबीए-पाक को अल्लाह तआला का गैर मानो और बीस रेकात सुन्नत भी पढ़ो। यह कैसा अकीदा है? सुन्नत नमाज नबीए-पाक की मगर वास्ते अल्लाह तआला के? यानी नबीए-पाक की सुन्नत को अल्लाह तआला ने अपनी परस्तिश में कुबूल किया है। अल्लाह तो लाशरीक है, उसने नबीए-पाक की नमाज़ को अपनी खास पूजा में कैसे शरीक किया? यह नमाज में नबीअल्लाह की शिरकत अल्लाह तआला को शिर्क क्यों न लगी? शिर्क, बिदअत पढ़ाने वाले बताएं की पाक नमाज में नबीए-पाक कैसे शरीक हैं? इन्हें अल्लाह तआला ने अपना खासुलखास माना है, तभी तो। फिर बताओ की उन्हें गैरुल्लाह (अल्लाह का गैर) कैसे कहते हो? फर्ज, सुन्नत, नफिल, वित्र नमाजें बैतायी रसूलल्लाह ने और तुम उन्हीं को गैरुल्लाह कहने लगे? तौबा-अस्तगफार कर लो अपने झूठे और नापाक अकीदे पर। अपनी नमाजें फिर से दुरुस्त करो। नबीए-पाक को जब अल्लाह अपना शरीक नहीं मानता, फिर किसी के गला फाड़ने से 'शिर्क' कौन मन्जूर करेगा? बताओ 'शिर्क' अल्लाह जिसे कुबूल करे, वह होगा या गैरुल्लाह जिसे 'शिर्क' समझे, वही अल्लाह मान लेगा? इब्लीसी-फरेब से तौबा करो। शाने-नबीअल्लाह की कायमी अल्लाह ने की है। इसे झुठलाने का मतलब है खुद खुदाई कानून से बगावत करना। खुदा का बागी, खुदा का बन्दा नहीं रह सकता, फिर उसे मुसलमान कौन मानेगा? इस्लामी हर शरीयत में नबीए-पाक हाजिर हैं। बताओ, जो हाजिर है, वह नाजिर नहीं हो सकता? खुदा जिन्हें अपने में रखे, वह खुदा में शरीक कहां है? नबी उसके अल्लाह में। उसके वली अल्लाह में। फिर अल्लाह में रहना शिर्कत कहां है? इसीलिए गैरुल्लाह उसे कहते हैं, जो अल्लाह में न हो। अल्लाह में जो नहीं, उसकी अल्लाह के नमाज, जिक्र-अजकार या इबादत में शिरकत अगर होती है, तो वही 'शिर्क' है। अल्लाह में नबूवत और वेलायत है। इसलिए नबूवत और वेलायत जिसे मिली है, वह नबी, रसूल और वली अल्लाह में है। वह फनाफिल्लाह है। वह अल्लाह में फना है। वह अल्लाह में शरीक नहीं है। इसलिए अल्लाह तआला ने नबी और वली की खुद में फनायित को शरीक नहीं माना।

यही वजह है कि इनकी मिलादुन्नबी, उर्स, फातेहा, नज़र-नियाज, मिन्नत-मनौती और इनसे मदद मांगना न तो शिर्क है और न बिदअत। जिनके पास अल्लाह की नबूवत और वेलायत नहीं हैं, वही गैरुल्लाह हैं। ऐसे गैरुल्लाह का नमाज में ख्याल आना शिर्क है। अल्लाह के अपने खास नबी और वली हैं, इनके सिवा सभी अल्लाह के गैर हैं।"

फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने कहा- " हम हर वक्त नमाज में नबीए पाक और उनके आले-पाक को सलाम करते रहते हैं, मगर यह नहीं सोचते कि अल्लाह पाक की सच्ची इबादत में हम इन्हें शरीक क्यों करते हैं? हम अत्तहियात नमाज में रोजाना पढ़ते रहते हैं, मगर यह गौर नहीं करते कि किन नेकबन्दों की सलामती की दोआएं हम मांगते रहते हैं? पांच वक्त की कुल नमाजें 48 रेकात होती हैं। इसमें एक दिन में हम नमाज में 25 बार अत्तहियात और 17 बार दरुद शरीफ पढ़कर नबीए पाक और उनके आले पाक तथा नेकबन्दों को याद करते हैं।"

श्री सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ श्री झरना शाह बाबा ने फरमाया- "हैरत है कि हम नमाजें पढ़ने के बाद भी नबीए पाक और उनके आले-पाक तथा अल्लाह के नेकबन्दों से बुग्ज व कीना रखते हैं? यह कैसी नमाजें हम पढ़ते हैं कि हमारे दिल में शिर्क, कुफ्र चली आती है। इसी तरह की नमाजें तो यजीद और उसके लश्करी भी पढ़ा करते थे। वरना मैदाने कर्बला में नबीए पाक के शहजादे, जो आले-पाक हैं, उन पर जुल्म न करते। यजीद कुरआन भी वही पढ़ता था, जो कुरआन आज है। उसने नमाजें भी उसी तरीके से पढ़ीं, जिस तरह हम आज पढ़ते हैं। इसी तर्ज पर कुरआन, हदीस और नमाजें भी यजीद के लश्करी पढ़ा करते थे। जरा सोचो कि हजरत इमाम हुसैन को प्यारे हबीब सललललाहो अलैहे व सल्लम ने अपने पंजतन पाक में शामिल किया है, क्या यह सच्चाई यजीद को मालूम नहीं थी? एक चादर में हजरत रसूले पाक, हजरत अली, सैय्यदा बीबी फातमा, हजरत इमाम हसन तथा हजरत इमाम हुसैन एक साथ मौजूद हैं। हुजूर मुहम्मद मुस्तफा सल्ले अला व सल्लम फरमाते हैं कि ऐ अल्लाह पाक, यह हैं मेरे पाक पंजतन। यजीद यदि सच्ची नमाज पढ़ता होता, तो नमाज के अत्तहियात में उसे नबीए पाक जरुर दिखाई देते। अगर वह नबीए-पाक को अपना नबी कुबूल करता होता, तो बखूबी जानता कि जिसे कत्ल कराने की वह साजिश में है, वह तो नबीए-पाक के पाक पंजतन में से हैं तथा नबीए पाक के चैनो-करार हैं। यजीद और उसके नापाक सिपाहियों में अगर अल्लाह और रसूले पाक के लिए जर्रा बराबर भी मुहब्बत रही होती, तो वह शहजादए रसूल हजरत इमाम हुसैन सरकार की ताजीम करते। हैरत है कि वे अपने को मुसलमान तो समझते थे। मगर वे दिल से यह कुबूल नहीं करते थे कि शहजादए रसूल और नबीए पाक की आल हजरत इमाम हुसैन हैं। जो नमाजें वह पढ़ते हैं, उसे तो उनके नाना जान हजरत रसूले पाक ही ने बतायी हैं। उन्हीं रसूले पाक पर नाजिल (ईशद्वारा प्राप्त) कुरआन की वह तिलावत (पाठ) भी करते हैं। वह यह भूल गए कि

उनको नबी बिना कुबूल किए, वह मुसलमान भी नहीं हो सकते हैं। फिर यजीद कौन सा मुसलमान था, जो आज वाली कुरआन और आज ही वाली नमाजें पढ़कर भी उस शहजादए रसूल का कत्ल कराया, जो हकीकत में नबी के वारिस हैं।

यह घटना प्रमाण दे रही है कि यजीद जुबानी कल्मा पढ़ता था। उसकी नमाजें भी जुबानी थीं। उसकी तिलावत भी जुबानी थीं। वह मुसलमान के रुप-रंग में था, मगर वह नकली और झूठा मुसलमान था। अगर उसकी नमाज, उसके नफ्स के साथ न होती, तो वह अपने सत्ता सुख के घमण्ड में चूर न रहता। जिस नमाज के दरुद में वह नबीए पाक और उनके आले पाक के लिए रहमत व बरकत अल्लाह तआला से मांगता रहता था, उसी नबी के आले-पाक का बेदर्दी से कत्ल उसने किस अल्लाह के हुक्म की तामील में किया? हमें हैरत है, यजीद की नमाज पर और लानत ही लानत है यजीद के अकीदे वाले इस्लाम पर। यह अमानुषिक वीभत्स काण्ड हमें यह बताती है कि जब बन्दा नकली मुसलमान होगा, तो वह नमाज, रोजा, तिलावत, इबादत, हज आदि सभी की रस्मी पैरवी करता रहेगा। वह अपने नकली और नुमाईशी दीनी काम को इतना बेहतर समझने लगेगा, जैसे वह नबी या नायबे नबी बन गया हो। ऐसे झूठे इबादतगुजार बन्दे खुद को अपने नफ्सी हुक्म से अल्लाह का वली भी समझने लगते हैं। इब्लीस ने तो एक ही खता की थी, मगर ऐसे बन्दे इब्लीस से भी बड़े इब्लीस बन जाते हैं, मगर वह खुद को मुसलमान ही समझते रहते हैं। आज हम कैसे मुसलमान हैं, यह तन्हाई में हमें अपने दिल से पूछ लेने की जरुरत है। हम यजीद की तरह नमाजें पढ़ रहे हैं या हम हुसैनी नमाज की पैरवी में हैं? नमाज़े-हुसैनी वह है, जो नबीए पाक और अलीए पाक ने पढ़ी और पढ़ाई है। इमाम हुसैन की नमाज वह है, जो उन्होंने लाखों जालिमों के घेरे में रह कर भी बिना किसी खौफ और ख्वाहिश के मैदाने कर्बला में अदा की। उसी नमाज की सच्ची पैरवी करने वाले जमात का नाम कामिल पीर या वली-औलिया है। आज भी सच्चे पीरों का सिलसिला अल्लाह तआला ने इसीलिए कायम-दायम रखा है ताकि दुनियां के लोग यजीदी नमाज से तौबा करके, सच्ची नमाज पढ़ना सीख लें। जिसने उस रब की सच्ची नमाज और सच्ची पूजा सीख ली, वह खुदा का कामिल बन्दा बन सकता है। कामिल बन्दे को जब दीदारे-खुदा और दीदारे-नबी नसीब हो जाएगी, तब वही नेक बन्दा बन जाएगा। नमाज़ में वह नेकबन्दे कौन हैं, जिनकी सलामती की दोआएं हम रोज़ करते रहते हैं। बन्दा, नेक कब होता है? नेक बन्दा वह जो अल्लाह के सिवा, गैर की पूजा न करे। अल्लाह को जो बन्दा देख लेगा, वही तो कहेगा कि अल्लाह ही पूज्यनीय है, बाकी गैर हैं। ऐसा बन्दा, जो अल्लाह की सना (प्रशंसा) अल्लाह को देखकर उसके सामने करे। अल्लाह की पनाह में रहकर अल्लाह से शुरु करे अल्लाह की सिफतों का बयान। वही बन्दा नेक है। वह नेक बन्दा तब कहलाया, जब वह सारी दुनियां के साथ सबसे बड़ी नेकी करने वाले उस पाकजात को देखा और पहचान गया।

जिसने अपनी बन्दगी से उस पाक परवरदिगार को देखा और पहचाना, वहीं बन्दा नेक है। कामिल पीर, वली-औलिया, नेक हैं, उनकी इबादत से खुदा खुश है, इसलिए वही नेक बन्दे हैं। इन्हीं पर खुदा के वेलायत का यह ईनाम भी है कि खुदा की पाक नमाज में हर बन्दा उनकी सलामती चाहता है। वरना उस पाक रब की नमाज में नेकबन्दे का जिक्र आता कैसे? अब वली-औलिया या कामिल पीरों से जाहिर-बातिन में अदावत रखने वाला नमाजी गौर करे कि वह कौन सी नमाज पढ़ता है? क्या नमाज से अत्तहियात और दरुद शरीफ को निकाल दिया जाए या न पढ़ा जाए तो हमारी नमाज पूरी होगी?''

[22-J] कायम नमाज क्या है?

हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ सर विलियम जे0 थामस ने कायम नमाज के बारे में यह फरमाया- ''कुरआन में अल्लाह का फरमान है कि कायम करो नमाज, बेशक नमाज बेहेयाईयों और बुराईयों से रोकती है। जरा इस फरमाने-ईलाही (ईश-आदेश) पर गौर करें। अल्लाह हमें नमाज कायम करने का हुक्म दे रहा है। वह यह भी बता रहा है कि उस नमाज को कायम करो, जो बिना किसी शक या सन्देह के बेहेयाई और बुराईयों से रोकती है।

हम नमाज के लिए तैयार हैं,मगर क्या दिल और दिमाग से हमारी बेहेयाई और बुराई निकल चुकी है। हमारे अन्दर की बेहेयायी और बुराई अगर निकल जाए तो फिर जाहिर में भी हम ऐसे गलत काम नहीं कर सकते हैं। हम अगर यह मानते हैं कि नमाज कायम करने से यह गड़बड़ियां रुक सकती हैं, तो फिर नमाजे पढ़ने के बाद भी हम बुराईयों और बेहेयाईयों में कैसे जुड़ जाते हैं? बात काफी साफ है, मगर हम ध्यान नहीं देते। हम पांच वक्त के नमाज को ही नमाज कायम करना समझते हैं। जरा शब्द 'कायम' पर गौर करें। 'कायम' शब्द अखण्डता को बता रहा है। ऐसी नमाज जो खण्डित न हो। वरना खुदा यह भी कह सकता है कि नमाजें पढ़ो, बेशक नमाज बेहेयाई और बुराईयों से रोकती है। मगर उस पाक रब ने प्यार से फरमाया- ''कायम करो नमाज'' अर्थात- वह नमाज पढ़ो जो अखण्डित हो। वह नमाज पढ़ो, जो टूटने या छूटने वाली न हो। उस नमाज को कायम रखो, जो कभी कजा नहीं होती है। वह अखण्ड नमाज पढ़ो, जिससे तुम्हारी बेहेयाई और बुराई खत्म हो जाए। वह ऐसी नमाज हो जो हमेशा कायम रहे। जिसमें हर पल उस पाक रब की नमाज ही नमाज होती रहे। 'कायम' शब्द में जीवन है। 'कायम' में विश्राम कहां है। खुदा हमेशा से कायम है। इसलिए वह हर बन्दे से हमेशा कायम रहने वाली नमाज चाहता है। अरबी भाषा में ईश्वर 'अकीमुस्सलात' कहता है। यानी नमाज कायम करो। हमने नमाज सुबह पढ़ी। जब तक पढ़ते रहे, नमाज कायम रही। सलाम फेरा, फिर टूट गयी। अब जोहेर, असिर, मगरिब, ईशा में बताए वक्त के मुताबिक हमने नमाजें

कायम कीं। मगर यह नमाजें तो मोसलसल (निरन्तर) कायम नहीं रहीं।

हर नमाज के बाद हम दूसरी नमाज़ के वक्त तक अपनी दुनियां में मशगूल हो जाते हैं। यानी -हमने हर नमाज के बाद नमाज की कायमी नहीं रखी। तो क्या हम पंजवक्ता (पांच समय) नमाज के साथ निरन्तर नफिल नमाजें पढ़ते रहें। घर या मसजिद में सुबह की नमाज के बाद नफिल की नमाजें जुहर की नमाज तक पढ़ते रहें। इस तरह हर फर्ज नमाज के बाद हम निरन्तर नफिल नमाजें पढ़ते रहें, तो क्या हमारी नमाज कायम मानी जाएगी? अब वह नमाज हम कौन से दीनी रहबर से पूछें, जो हमेशा कायम रहती है। हमेशा कायम रहने वाली वह नमाज कैसी है, इसकी जानकारी कामिल पीरों को रहती है। जिनके नाम से ही इब्लीस के होशो-हवास फाख्ता हो जाते हैं। इन कामिल पीरों से इब्लीस के वह चेले भी घबराते हैं, जिन्होंने नमाज को रस्म-रिवाज और नुमाईशी तमाशा बना रखा है। नमाज हकीकत में अल्लाह और बन्दे के बीच का एक खास राज (रहस्य) है। मगर इस राजदारी की नमाज की हकीकत कौन बताएगा। जिन्हें अपने आप की पहचान नहीं, वह खुदा की सच्ची नमाज की अदायगी क्या जाने। वह लफ्जी कुरआन और लफ्जी हदीस जिस तरह जानते-पढ़ते हैं, उसी तरह लफ्जी नमाज की अदायगी भी कर लेते हैं। जो अल्लाह और रसूले पाक की हकीकत से आगाह नहीं, वह अल्लाह तआला की नमाज और अल्लाह तआला के सन्देश (कुरआन) को क्या समझेगा। जो रसूले पाक से रु-ब-रु नहीं, वह उनकी हदीसे पाक को भी कैसे समझेगा। ऐसे रहनुमाओं से बच कर रहें। अल्लाह तआला से उसकी मार्फत के लिए किसी कामिल पीर की रहनुमाई मांगते रहें। आपकी नेक नीयत को वह पाक रब कुबूल फरमाएगा। सच्ची ईशपूजा से सच्ची ईश-कृपा पायी जा सकती है, मगर कामिल पीर के बिना सम्भव नहीं है। कामिल पीर बजाहिर खुदा का बन्दा है, मगर वह नेक बन्दा है। उसने अपने कामिल पीर की नूरानी सूरत को अल्लाह के जिक्र-अजकार के जरिए मुराकबे में देखा है। उसे सलाम किया है, उससे बातें भी करता है। इसी कैफियत को 'फनाफिल शैख' या अपने ब्रह्मज्ञानी गुरु में डूबना कहते हैं। वह खुदा का ऐसा सच्चा जिक्र करता है जिसके जरिए मुराकबे की हालत में वह रसूलल्लाह का दीदार पा जाता है। वह उन्हें सलाम करता है, उनसे कलाम (बातचीत) भी करता है। तो यह 'फनाफिर्रसूल' की मन्जिल कहलाती है। अर्थात- ईशदूत में विलय हो जाना। इसके बाद जब वह उस पाक परवरदिगार का दीदार पाता है, तो यह मन्जिल 'फनाफिल्लाह' कहलाती है। अर्थात- ईश्वर में विलय हो जाना।

इन तीनों मन्जिलों से गुजरने वाला, कामिल पीर के ईनाम से सम्मानित होता है। वह ईश-रहस्य से पूर्ण परिचित है। इसी कारण वह खुदा का नेकबन्दा है। यह तीनों दर्शन-मिलन और साक्षात्कार ही ईशकृपा की सत्यता है। यही ईश-कृपा है। दूसरे शब्दों में ईश और ईशदूत मिलन का नाम ईशकृपा है। अब कोई बताए, जो ईशकृपा में है, उसे 'या' कहने पर वह सुनेगा या नहीं? वह ईश्वर में फना

है, वह ईश्वर के मिलन में है, फिर उसकी जिन्दगी कायम है या मुर्दा? मुर्दा तो ईश्वर में फना नहीं होता। यदि ईश्वर को समुद्र मान लें और उसके नेकबन्दों को पानी का कतरा (बूंद) तो कतरा अगर समुद्र में मिल जाए तो वह कतरा (बूंद) कतरा रहा या समुद्र का पानी बन गया। ईश्वर रुपी समुद्र क्या है और ईश-प्रेमी रुपी बूंद बनने की स्थिति क्या है? यह ज्ञान कामिल पीर के सिवा किसी को नहीं होता। ईश्वर में उसके किसी बन्दे का फना होना यह तो अविश्वसनीय कथन प्रतीत होती है। फना या विलय या डूब जाना, यह बात किसी के दिल-दिमाग में फौरन हजम नहीं हो पाएगी। ईश्वर-अल्लाह का पता ही नहीं की वह कहां है? और हम चले उसमें फना होने? यह बात पूरी तरह झूठी लगती है की नहीं? फना होने वाला प्रकट रुप से तो बन्दा है, पर वह कामिल पीर है। उसने कामिल या परिपूर्ण ईश्वर को देखा है। वरना उसे हम पाबन्दे शरीयत या पक्का नमाजी या मुत्तकी परहेजगार या फखरे इस्लाम जैसे तमाम अलकाब (सम्मानोपाधियों) से नवाजते रहते। मगर हम असीदराज से इस समूह को 'कामिल पीर' ही कहते आ रहे हैं। जब यही कामिल पीर नबी, रसूल के दीदार में फना होते हैं, तो यह नबीए-पाक के सम्पर्क और हुक्म को 1418 साल बाद भी पाते रहते हैं। इसी को मार्फते रसूल भी कहा जाता है। इसी कारण रसूले पाक की अव्यक्त या बातिनी कायम जिन्दगी देख कर वह रेसालत की तजल्ली में चिल्लाते हैं- (आला हजरत बरेलवी के अनुसार)

तू जिन्दा है वल्लाह, तू जिन्दा है वल्लाह।
मेरे चश्मे-आलम से छिप जाने वाले।

वह देख रहे हैं- नबीए पाक सल्ले अला व सल्लम को। वह उनसे पूछ रहे हैं कि या मेरे आका, कुरआन की फलां सूरह में अल्लाह ने आपसे क्या कहा है? वह पूछते हैं या मेरे महबूबे पाक, आपने यह जो हदीसे पाक बयान फरमायी है, वह सच्ची है या झूठी? अगर सच्ची है तो इस पाक फरमान का हमें मतलब समझाने की एनायत फरमाएं। वह कामिल पीर, उनके दीदार में इस तरह डूबे रहते हैं, जैसे अहले सुफ्फा हजरात बजाहिर रसूले-पाक को देखा करते थे। इसी निरन्तर दीदार या दर्शन और उनसे बातचीत करते रहने का नाम 'फना' है। जिनको इस खुदाई ईल्म की जानकारी नहीं, वही गला फाड़ते रहते हैं कि नबी तो मर चुके। वली-औलिया मर गए। नबी, वली सारे बशर, फिर इनके चक्कर में पागल बनने वाला, जो हो, वह तो मुशरिक बशर है। वह तो काफिर बशर है। अगर अल्लाह पाक व रसूले पाक में 'फना' होने का ईल्म उन्हें रहता, तो वह ऐसी गुस्ताखियां हरगिज नहीं करते। मगर वह तो उस पाकजात के पाक साथियों के पाक मजारात को भी आम बन्दे की कब्र या कब्रिस्तान ही समझते हैं। उन्हें यह अक्ल है कि नबी, रसूल और वली-औलिया आम बन्दे में शुमार नहीं हैं। मगर अपनी झूठी इबादत और नकली दीनदारी को अवाम में असली दिखाने के लिए, वे हर आम बशर में नबी, वली को भी जोड़ते रहते हैं ताकि दुनियां उन्हें भी किसी नबी या वली से कमजोर न समझे।

हैरत यह है कि जिन्होंने शिर्क, कुफ्र, मुनाफिक, बिदअती और नकली इबादतगुजारों से अल्लाह के बन्दों को पहचान करायी। उन्हें शिर्क व कुफ्र से बचाया, वही पीर और वली आज इनकी नज़र में कुफ्र–शिर्क के मकाम दिखाई देते हैं। इनकी जुबान तो खूब पढ़ती है– 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह', मगर इनका दिल भी उसी तेजी से पढ़ता रहता है– 'ईलाहअ–ईलाहअ'। जो 'ला' (नहीं) करना न जाने और अपने 'ईलाहअ' में फना रहे, वह भला 'ईल्लल्लाह' में फना होना क्या जानेगा? अगर अल्लाह पाक व रसूले पाक में 'फना' होने का ईल्म उन्हें रहता, तो वह ऐसी गुस्ताखियां नहीं करते। मगर एक बात तो है कि यह किसी को भी अपनी 'ईलाहअ' में 'फना' करके, अपनी खुदी में कायम रहते हैं। असहाबे–सुफ्फा और हुजूर सल्ले अला व सल्लम के चारो खुल्फा और न जाने कितने लोग इस 'फना' के ईल्म में डूबे थे। अवैस करनी वहीं थे। हजरत सलमान फारसी, हजरत हुजैफा, हजरत जाबिर, हजरत जैद आदि न जाने कितने 'फनाफिल रसूल' थे, जिनकी गिनती करना मुश्किल है। उनके बारे में यह अपनी आंखों की रौशनी से पढ़ लेते हैं। मगर ऐसे नेकबन्दों को यह अपनी अक्ल की रौशनी से भी नहीं पहचान पाते कि यह आम बशर, रसूले पाक के किस ईश्क और ईल्म से खुदा के खास बन गए। यह गौर नहीं कर पाते कि नबूवत से मोजजे और रेसालत से एजाज का जुहूर कैसे होता है? यह आज तक नहीं समझ पाए कि वेलायत वह खुदाई सनद है, जिससे खुदाई करिश्मे–करामत जाहिर होते हैं। नबी और वली को आम बशर और आम बन्दे की तरह ख्याल करने वाले, ये अदना बशर, जरा अपनी गिरेबान में झांके कि उनसे किसी तरह के मोजजे या करामत भी क्या जाहिर होते हैं???

अल्लाह में 'फना' या रसूलल्लाह में 'फना' होने की कुव्वत नफ्सपरस्त या गैरुल्लाह में नहीं होती। पाक रब की पाक इबादत से जब उस पाक का दीदार हो। उस पाक से गुफ्तगू भी हो, तो यही पाक–निस्बत 'फना' होना कहलाती है। अब वह न आम बशर है और ना ही आम बन्दा। वही है खुदा का नेकबन्दा। यही कैफियत 'फनाफिल्लाह' की है। जो ईश्वर में फना है, वह बाकी है। जो बाकी है, वह जिन्दा है। जो जिन्दा है, वही कामिल पीर या वली–औलिया है। वह बदन के साथ है या नहीं, वह जिन्दा है। उनकी जिन्दगी अल्लाह पाक में फना होने से कायम है। अब 'या पीर' अथवा 'या वली' जो भी पुकारे, वह सुनते है। पुकारने वाले किसी वली या पीर को पुकारते हैं, मगर वह अल्लाह में फना है, इसलिए अल्लाह की रहमत से वह सुनते है। वह बन्दे की सिफत (गुण) के साथ होते, तो नहीं सुनते। वह खुदा की सिफत के साथ है, इसलिए 'या' कहने पर हाजिर भी है और नाजिर भी। वह अल्लाह की कुदरत में फना है, इसलिए अल्लाह की कुदरत से मदद भी पहुंचाते है।''

23 – अल्लाह की नबूवत

कामिल फकीर और रुहे–इस्लाम के रहबर जनाब सैय्यद फैजल शाह उर्फ श्री साधु बाबा ने फरमाया– "इस्लाम का दूसरा नाम तब्लीगे–हक़ है। इस्लाम तो पैगामे–हक़ है। हक़ का पैगाम जब हक़ में दाखिल रहनुमा सिखलाए तभी हम हक के इस्लाम में दाखिल हो सकते हैं। एक बात तो आप जानते हैं कि कौले रसूलल्लाह सल्ले अला व सल्लम है कि मेरी उम्मत के मोहद्दिस हजरत उमर रजिअल्लाह तआला अन्हो हैं। यह सनद किसने दी? उस रसूले–पाक ने दी है, जो इस्लाम के बानी हैं। वह रसूले पाक जो अल्लाह और कलामुल्लाह के शाहिद हैं। वहीं रसूले पाक, जिन्होंने जो किया, जो कहा, वह तबलीगे हक बन गई। हुजूर रसूले–पाक के ईल्म और अमल का दूसरा नाम इस्लाम है। जो महबूबे–खुदा ने अमल (आचरण) किया, वह इस्लाम की शरीयत बन गई। इस मजलिस में कोई हमें बताएगा कि नमाज, रोजा, हज, तौहीद और जकात की पाबन्दी इस्लाम में क्यों है? अगर रसूले–खुदा सल्ले अला व सल्लम इनको न करते तो आज इस्लाम की शरीयत में यह अमल क्या दाखिल होता? कहो सुबहानल्लाह ! बोलो हक़ अल्लाह !

हजरत उमर को अल्लाह के रसूल और इस्लाम के संस्थापक ने इस्लाम का मोहद्दिस घोषित कर दिया है। उन्हें तो रसूले–पाक ने यह भी सनद दे दी– "हक़ उमर की जुबान पर बोलता है।" अल्लाहो अकबर ! क्या शान है मेरे महबूब के महबूब खलीफा की। अल्लाह की प्रमाणित सनद रसूले–पाक के पास। रसूले पाक की सनद हजरत उमर के पास। क्या इस्लामी दुनियां का कोई मुहद्दिस, कोई आलिम, कोई शैखुल हदीस आज तक पैदा हुआ, जिसे खुद रसूले–पाक ने मोहद्दिस की सनद दी हो? तबलीगे–हक़ के सच्चे रहनुमा तो रसूले पाक हैं। और हजरत उमर हैं, इस्लाम के रहबरे–हक़। जरा गौर तो करो, रसूले पाक फरमा रहे हैं कि हक़ उमर की जुबान पर बोलता है। अल्ला–अल्ला, ऐ मेरे महबूबे आलम हक़ तो खुदा है, तो क्या खुदाए–पाक हजरत उमर की जुबान पर बोलता है? यकीनन आप उस पाकजात (ईश्वर) के शाहिद (साक्षी) हैं, आपने उस रब्बे–कायनात (ईश्वर) को देखा है। आपने उस प्यारे खुदा की बोली भी सुनी है। आप से बेहतर है कौन जो हक़ (खुदा) की हकीकत जाने। ऐ सुर्मई आंखों वाले अल्लाह के महबूब, कलामे–इलाही तो जिब्रील लाते रहे। आपको कलामे–खुदा वह सुनाते रहे। मगर आपने यह कभी नहीं कहा कि हक़ जिब्रील की जुबान पर बोलता है। जबकि जिब्रील तो हक की बोली ही आपको सुनाते थे। ऐ मेरे पाक परवरदिगार के महबूब नबी, आपने हजरत उमर की बोली में यकीनन हक़ की बोली ही सुनी है, तभी तो फरमा दिया कि हक़ उमर की जुबान पर बोलता है।तबलीगे–इस्लाम के दावेदार अगर रसूलल्लाह से निस्बत नहीं रखते तो क्या हक्की उमर रजि0 अ0 से उनकी निस्बत है? अगर नहीं, तो इस्लाम के मुहद्दिसे बरहक की रजा के

बगैर हक्की तब्लीग कैसे होगी? तबलीगे इस्लाम के लिए मुहद्दिसे-इस्लाम हजरत उमर हुजूर की इजाजत क्या जरुरी नहीं है? वह इस्लाम के बानी की तरफ से उम्मते मुहम्मदिया के मोहद्दिस मुकर्रर हैं। दीने-इस्लाम को उम्मत में फैलाने की इजाजत किसी इस्लामी रहनुमा को तो वही दे सकते हैं। क्या तबलीगें-इस्लाम के कारकुन (कार्यकर्ता) अवाम को यह बताएंगे कि उन्हें तबलीग का हुक्म मोहद्दिसे रसूल हजरत उमर हुजूर ने कब दी है? इजाजत हमारे पास न अल्लाह तआला की तरफ से है और न रसूले खुदा से। हमें इजाजत हजरत उमर फारुके आजम ने भी नहीं दी है, फिर हमारी तबलीग क्या हक कहलाएगी या नाहक? नाहक तबलीग से क्या अल्लाह तआला की खुश्नूदी हासिल हो सकती है? हक और नाहक की पहचान हमने क्या वाकेयाते कर्बला में नहीं देखी है? यजीदी तबलीग अगर रजाए-इलाही होती तो शहजाद-ए-रसूल का नाहक खून मैदाने कर्बला में कैसे बहता? यजीद मर्दूद के नाहक इस्लामी अकीदे में जब रसूलल्लाह के शहजादे हजरत इमाम हुसैन के खून की जरुरत थी, फिर तो नाहक तबलीगे-इस्लाम से यजीदी अकीदे की ही बदबू आएगी? आज इस्लामी-तबलीग की शक्ल में हर तरफ यजीदी अकायद (यजीद समर्थित विश्वास) के बीज बोए जा रहे हैं। नाहक-तबलीग में लगे लोग हकपरस्ती की बातें जरुर करते हैं। क्योंकि उन्हें पता है कि यजीद परस्ती के नाम पर दुनियां उन्हें दुत्कार देगी।

मैं हैरत में हूं कि वे किस मुंह से सुन्नते रसूल पर बाअमल होने का दावा करते हैं? वे कैसे कहते हैं कि शरीयत पे हम पाबन्द हैं? सुन्नते-रसूल और शरीयते-इस्लाम क्या है? क्या उन्हें मालूम है? जो जमात 'लाईलाहअ' (नहीं कोई माबूद या पूज्यनीय) की हकीकत खुद में दाखिल करने से मजबूर हो, वह जमात 'ईल्लल्लाह' (ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं) की परस्तिश क्या जानेगी? मैं पूछता हूं उनसे क्या रसूलल्लाह को मानना, उनके गुम्बदे-खिजरां को देखना, उनका नमाज में ख्याल आना कैसे शिर्क व बिदअत है? तबलीगे-इस्लाम के रहनुमा बने हो, तो अवाम को बताओ कों क्या हजरत मुहम्मद मुस्तफा सल्ले अला व सल्लम की निस्बत उस पाक परवरदिगार से नहीं है? अवाम को बताओ कि उन्हें रसूलल्लाह, अल्लाह ने कहा या, मक्का के लोगों ने उन्हें अल्लाह का रसूल घोषित किया? वह बशर हैं, वह सैय्यदुल बशर हैं, ये मानते हो, फिर बताओ सिर्फ हजरत मुहम्मद नामी बशर को ये शर्फ क्यों और कैसे हासिल हुई कि अल्लाह पाक ने उन्हें ही अपना आखरी पैगम्बर कहा? मक्का शहर में उस वक्त नबी के लिए क्या हजरत मुहम्मद एक ही बशर थे? अबू सूफियान, अबू जेहल, उतबा, वलीद, शीबा, उमरद वगैरह क्या बशर नहीं थे? अरे, बशर तो हजरत अब्दुल्लाह, हजरत मोतल्लिब भी थे, मगर अल्लाह तआला को हजरत मुहम्मद ही क्यों अपने रसूल के लिए पसन्द आए? ईमान से बोलो, नबूवत उन्हें ही क्यों मिली? क्या अल्लाह तआला को हजरत मुहम्मद की इबादत पसन्द आयी? पाक रब ने उन्हें क्या अपना नबी उनकी सबसे सुन्दर सूरत को देखकर बनाया? या

वह अरब में सबसे नेक, मुत्तकी, परहेजगार और इबादतगुजार हैं, इसलिए इन्हें नबी बनाना सबसे बेहतर लगा? मेरे प्यारे ओलमा बोलो कि नबूवत मिन्जानिब अल्लाह है की नहीं? बताओ रेसालत और नबूवत अल्लाह की है, फिर ये रेसालत-नबूवत गैरुल्लाह को अल्लाह तआला कैसे अता करेगा? हजरत आदम, हजरत मूसा, हजरत ईसा, हजरत नूह, हजरत सुलेमान, हजरत युनूस, हजरत इब्राहीम, हजरत ईस्माईल, हजरत जकरिया जैसे सारे पैगम्बर गैरुल्लाह हैं या अल्लाह के खासुल-खास? तुमने इस्लाम को किताबी ईल्म समझकर पढ़ा है। अगर हक्की इस्लाम में दाखिल होते तो बिला शक-शुबहा कह देते कि नबूवत तो अल्लाह के खास को ही मिलती है। नबूवत अल्लाह की राजदारी का नाम है। यह बशरी सूरत में जिसे मिली, वह जाहिर में तो बशर है। मगर बातिन में वह अल्लाह का नबी है। हजरत खिज्र अलैहिस्सलाम बशर की सूरत में तो नहीं आए हैं, फिर उन्हें पैगम्बर या नबी कैसे मानते हो? अगर हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम भी हजरत खिज्र की तरह रहते तो उन्हें तुम क्या नबीअल्लाह नहीं मानते?

मियां ओलमाए नाहक, किस ईल्म और अकीदे के फरेब में उलझे हो? नबी की नबूवत बशर की मुहताज नहीं होती। नबूवते-खुदा के लिए बशरी जिस्म जरुरी नहीं। सच्ची बात तो यह है की सारे बशर के तबलीगे-हक के लिए बशरी लिबास पहने नबी जरुर आए। नबूवत नबी के लिए मुकर्रर है। नबी पहले से मुकर्रर हैं। वह अपने नबूवत का एलान बशरी सूरत में आकर करें या चालीस साल की उम्र में, वह एलाने-नबूवत से नबी नहीं बनते। नबी वो पहले से हैं। नबी वह रहते हैं, चाहे वह दुनियां में बशर की सूरत में जाहिर हों या नहीं? तुम मोहद्दिसे-इस्लाम हजरत उमर फारुके आजम के कौल (कथन) को भी भूल गए। हक बोलने वाले अपनी जुबान से उन्होंने नबूवत की हकीकत तो खोल दी है। जब हाथों में नंगी तलवार लिए उन्होंने फरमाया- "खबरदार ! अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई, तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा।"

एक एतराज या नासमझी मैंने सुनी है। काबा शरीफ के पाक-मकाम पर एक इस्लामी-तबलीग देने वाले उस्ताद मोहतरम की सुनिए। वह कहते हैं कि रसूलल्लाह के विसाल पर हजरत उमर रजि० तआला का यह कौल इसलिए था, क्योंकि "उनको धोखा लगा कि नबी पर मौत नहीं आती, क्योंकि उन्होंने कभी किसी नबी की मौत नहीं देखी थी।" उस्ताद मोहतरम ने इस मौके पर हजरत सैय्यदना अबु बकर सिद्दीके अकबर के खुतबे को भी नजीर बना कर पेश किया है। हमें हैरत है कि काबातुल्लाह का वह कैसा उस्ताद है, जिसने खुतबा-ए-सिद्दीके अकबर का मतलब नहीं समझा? सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने यह फरमाया- "खबरदार ! जो हुजूर सल्ले अला व सल्लम की परस्तिश करता था, वह जान ले कि हुजूर का विसाल हो चुका है। और हुजूर के रब की इबादत करता है तो आगाह हो, वह जिन्दा हैं, जिसे मौत नहीं।" इसके बाद उन्होंने कुरआने-पाक की यह आयत पढ़ी- "और

हुजूर तो अल्लाह के रसूल हैं। बेशक आपसे पहले बहुत से रसूल गुजर चुके हैं। तो क्या अब हुजूर इन्तकाल फरमा जाएं या शहीद कर दिए जाएं तो अपनी एड़ियों के बल पलट जाओगे?"

उस्ताद मोहतरम, आपके सामने हजरत सैय्यदना सिद्दीके अकबर के पाक फरमान का मतलब क्या निकलता है? वह साफ तरीके से तो कह रहे हैं कि जो अल्लाह की इबादत करता है, तो रसूले-पाक जिन्दा हैं, उन्हें मौत नहीं। जो रसूले-पाक की परस्तिश करे, वह जान ले की परस्तिश वाले रसूले पाक विसाल कर गए। हमें कोई बताए की रसूले-पाक ने अपनी परस्तिश करने के लिए किसी सहाबा को क्या कभी हुक्म दिया है? नबीअल्लाह ने तो अल्लाह की ही परस्तिश बतायी है। वे चाहते तो नमाज़ की सुन्नत को कह देते की मेरे वास्ते पढ़ना। मगर उन्होंने सुन्नत नमाज को भी कहा कि अल्लाह तआला के वास्ते पढ़ना। हम सैय्यदना सिद्दीके अकबर के इस कौल पर गौर तो करें। आप फरमाते हैं कि नबीए-पाक पर ईमान कामिल रखो की वह जिन्दा हैं, उन्हें मौत नहीं। यह ईमान कामिल, उसे ही नसीब होगी, जो हक तआला की सच्ची परस्तिश करता है। मालूम हुआ कि खुदा की सच्ची परस्तिश करने वाला कभी यह तसलीम नहीं कर सकता कि अल्लाह के नबी मुर्दा हैं। उन्हें मुर्दा तो वही तसलीम करेगा, जो हक़ तआला की सच्ची परस्तिश नहीं करता। कोई कह सकता है कि सैय्यदना सिद्दीके अकबर हुजूर ने सबसे पहले यह क्यों फरमाया की जो नबीअल्लाह की परस्तिश करता था, वह जान ले की उनका विसाल हो चुका है। यह कलाम क्या उन्होंने हजरत उमर फारुके आजम के कौल पर फरमायी? इस खास बात पर आईए गौरो-फ़िक्र कर लें।

नबीए-पाक ने हजरत सिद्दीके अकबर को 'सिद्दीके अकबर' खेताब से नवाजा है। यानी सब सच्चों में सबसे बड़े सच्चे। बड़े सच्चे हजरत सिद्दीक हैं और हक कलाम करने वाली पाक-जुबान हजरत उमर फारुके आजम की है। सच्चे और सच्चाई की निस्बत भी अल्लाह से और हक़ बोलने की निस्बत भी अल्लाह से। ऐसे में नबीए-पाक के दोनों खुल्फ़ा हक पर हैं। सच्चे हजरत अबु बकर ने इस्लामी-जिन्दगी का नक्शा यह पेश किया कि ऐ लोगों, हम नबी अल्लाह की परस्तिश नहीं करते। हमें बखूबी यह ईल्म है कि मेरे नबीअल्लाह, तो अल्लाह में वस्ल कर चुके हैं। यह उनकी विसाल, विसाले-खुदा में है। इसलिए नबीअल्लाह के खुदाई-दीने पाक को कायम रखना। यह मत समझना की नबीअल्लाह हमें नजर नहीं आ रहे हैं, तो हम उनके लाए दीने-हक़ से गाफिल हो जाएं। क्योंकि वह विसाले-हक़ में जिन्दा हैं, उन्हें मौत नहीं। लेकिन ऐसे दीनदार, जिन्हें मार्फते-हक़ नहीं, वह नबीअल्लाह की विसाले-हक की जिन्दगी कैसे देख पाएंगे? इसलिए यह फरमा दिया की जो रसूलल्लाह की परस्तिश करता था, वह जान ले की उनका विसाल हो चुका है। सैय्यदना सिद्दीके अकबर बखूबी जानते हैं कि रसूले-पाक ने सभी को हक़परस्ती का ही सबक दिया है। जो हकपरस्ती पर है, तो रसूले पाक उसके लिए जिन्दा हैं। अपने खुतबे के बाद जो कुरआने पाक की आयत उन्होंने

फ़रमायी वह भी इसी हक़परस्ती की दलील दे रही है। हजरत सिद्दीके अकबर के खुतबे ने हकीकत में हजरत उमर हुजूर की हकगोई (सत्य वचन) को आईने की तरह और साफ कर दिया। हजरत उमर हुजूर की बोली में नबीए-पाक को मुर्दा, जो माने उसकी गर्दन उड़ाने का एलान है। हजरत सिद्दीक हुजूर उसी बात को इस्लामी कानून के अनुसार कहते हैं कि अगर नबीअल्लाह, बजाहिर तुम्हें न दिखाई दें तो क्या तुम उनके लाए खुदाई दीन से अपने एड़ियों के बल पलट जाओगे? उनके कहने का मकसद यह है कि ऐ लोगों, रसूलल्लाह की बशरी जिन्दगी और नूरी जिन्दगी दोनों है। तुम हक़परस्ती पर सचमुच अगर कायम हो, तो वह तुम्हें जिन्दा नजर आएंगे। सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने अपने खुतबे से सारे-आलम को यह पैगाम दिया कि हकपरस्ती से ही रसूले-पाक की जिन्दा जिन्दगी देखी जा सकती है। उनके लिए वह मुर्दा हैं, जिन्हें हक़परस्ती नहीं आती। उनके खुतबे में यह राज भी पोशीदा है कि हजरत उमर फ़ारुके आजम का कौल हक़ है। नबीए-पाक को मौत नहीं आती। हक़परस्ती यह है कि अल्लाह के नबी को मौत नहीं। जो उनके मौत का गुमान करे, उसकी गर्दन उड़ा दी जाएगी। हैरत है कि काबातुल्लाह के अल्लामा उस्ताद की समझ में यह आ गया कि हजरत उमर फारुके आज़म के कौले-हक़ को हजरत सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने अपने खुतबे से काट दिया। मियां, ईश्के-उमर की तरह ईश्के-रसूल हजरत सिद्दीके अकबर में भी मौजे मार रही हैं। वरना वे नबीए-पाक के चेहराए अनवर से चादर हटाकर उनके मुबारक पेशानी का बोसा क्यों लेते?

कौले-उमर में ईश्के रसूले-खुदा तो देख।
सिद्दीक़ बोसा दे रहे, उनकी अदा तो देख।।

हजरत सैय्यदना उमर फारुके आज़म की यह बोली- "खबरदार ! अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा।" क्या गलत कहा हजरत उमर ने? बिलकुल नहीं। रसूले पाक के उम्मत के मोहद्दिस और जिनके ज़ुबान पर हक बोलता है, वह नाहक कलाम इश्किया-जज्बात में भी नहीं कर सकते। उनकी बोली तो पैगामे-खुदावन्दी का मजहर है। अल्लाह के वली जब नहीं मरते, फिर अल्लाह के रसूल को क्या मौत आ सकती है? बताओ मौत क्या अल्लाह के कब्जए-कुदरत से बाहर है? क्या मौत को यह ईल्म नहीं की अल्लाह के महबूब रसूल का मर्तबा क्या है? क्या मौत यह नहीं जानती की अल्लाह के तमामी नबी दुनियां से जाने के बाद भी हकताअला की नबूवत में जिन्दा हैं? मौत ने मेराज (ईश व ईशदूत मिलन) में क्या हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को हजरत मूसा अलैहिस्सलाम से गुफ्तगू करते नहीं देखा? फिर नबीअल्लाह को वह कौन सी मौत छूती है कि उन्हें मौत ही नहीं आती? यह हकीकत मेरे इस शेएर में तुम्हें नज़र आएगी-

राज है ये कुदरत का, जो खुदा खोलता है, हक़ तो उमर की ज़ुबान पर बोलता है।
हक़ कहा सिद्दीक ने भी क्या रसूल मरते हैं?, मौत से हैं पाक नबी, वो खुदा पे मरते हैं।

अदना बशर क्या जाने, हैं नबी फना हक़ में, कौले उमर शाहिद है, हक़ ईमान तौलता है।
राज है ये कुदरत का, जो खुदा खोलता है।।
ईश्के-नबी शाहिद हैं, ईश्के खुदा मस्ताना, देखो हैं उषमान गनी आशिकी के परवाना।
मिल गया नबी बिस्तर ये अली की किस्मत है, मेरे नबी जिन्दा हैं, हक़ कुरआन बोलता है।
राज़ है ये कुदरत का जो खुदा खोलता है, हक़ तो उमर की जुबान पर बोलता है।।

[भावार्थ : फकीरे-रब्बानी और ओलमाए-हक्कानी हजरत सैय्यद फैजल शाह के इस अश्आर में हक़परस्ती के मन्जर जाहिर हैं। आप फरमाते हैं कि हजरत उमर फारुके आज़म की बोली में कुदरत का रहस्य पोशीदा है। कुदरत का रहस्य अल्लाह तआला के सिवा कौन जानता है? लेकिन वह पाक परवरदिगार है। उसे यह अख्तियार है कि वह अपना राजो-न्याज़, जिससे चाहे जाहिर (प्रकट) कर दे। विसाले-हक़ को नबीअल्लाह की मौत कोई बन्दा तसलीम न करे, तभी कुदरत ने हजरत उमर की पाक जुबान से यह चेतावनी दे दी की – 'ख़बरदार ! अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई, तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा।'

फकीर सैय्यद फैजल शाह फरमाते हैं कि– "नबीअल्लाह और रसूलल्लाह मौत से पाक हैं। बशरी सूरत में इन्सान उन्हें अपने जैसा देखकर बशर समझ लेता है। वह कुदरत का रहस्य नहीं जानता। मगर वह खुदा के नबी और खुदा के रसूल हैं। सैय्यद फैजल शाह फरमाते हैं कि राज़े-नबी (ईशदूत रहस्य) राज़े-खुदा (ईश रहस्य) है। और खुदा ही ने हजरत उमर की जुबान से यह कलाम किया कि ऐ लोगों, मेरे महबूब नबी की नूरी और बशरी दोनों जिन्दगी कायम है। उन्हें मौत आ गई यह भूल से भी मत समझना। वरना तेरी गर्दन मार दी जाएगी।"

हजरत उमर रजि0 अ0 की जुबान से हक़ ताअला ने यह कलाम इसलिए जाहिर की, क्योंकि हक़ ताअला के महबूब रसूले पाक ने उन्हें पूरी तरह जांच-परख के बाद यह सनद दी है कि हक़ उमर की जुबान पर बोलता है। हजरत अबु बकर सिद्दीके अकबर सच्चे हैं। हजरत उषमान गनी रजि0अ0 हक़ से गनी हैं। हजरत अली करमुल्लाह वजहू अल्लाह के इल्म के बाब (दरवाजा) हैं। वह अल्लाह की वेलायत के मुख्तार हैं। नबीए-खुदा ने उन्हें अपने दीने-हक़ का इमाम और मौला की सनद दी है। ऐसे में कुदरत ने अपना राज़ हक़ की जुबान से खोल दिया कि नबीअल्लाह को मुर्दा मत समझो, वह अल्लाह तआला से कायम और जिन्दा हैं। गर्दन उड़ा देने का मतलब साफ है। बिना गर्दन का आदमी अगर हो, तो वह मुर्दा ही होगा। कुदरत यह बता रही है कि नबीए-पाक हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को मुर्दा समझने वाला, उसी तरह मुर्दा है, जिस तरह मुर्दे में गर्दन ही न हो। गर्दन के साथ दिमाग है। गर्दन के साथ जिन्दगी देने वाली नाक है। मुंह है, जो खाना-पानी जिस्म को देने का जरिया है। कान है, जो सच-झूठ को सुनती है। आंखें हैं, जो कुदरत की हर शय का नजारा करती हैं।

जुबान है, जो हक़-बातिल की गुफ्तगू करती है। **हज़रत उमर रजि0अ0 के जरिए वह जाते-पाक यह कौल कर रहा है कि मैं गर्दन उड़ा दूंगा। यानी- मेरे महबूब को मुर्दा समझने वाले खबरदार हो जाओ, वरना तुम्हारी अक्ल, जुबान, आंखें, नाक, कान, मुंह से हक़ की सच्चाई और समझ उड़ा दी जाएगी।** यही है हक़ के कौल का गर्दन उड़ाना। यही तो हक़ है, जो उमर की जुबान पर बोलता है। गर्दन जिनकी उड़ गई है, वह क्या हक्की ईल्म और सच्चे इस्लाम को समझ पाएंगे? गौर करें तो पता चलता है कि महबूबें-खुदा का जो महबूब हुआ, उसे ही अल्लाह तआला ने अपने रहमोकरम से नवाजा है। फोकरा महबूबे हक़ हैं, क्योंकि वह महबूबे नूरुल्लाह हैं। वली-औलिया इसलिए मकबूले हक़ हैं, क्योंकि वह महबूबे-खुदा के महबूब हैं। जाहिर हुआ कि महबूब की महबूबियत अल्लाह तआला की तसलीमो-रज़ा है। फिर तो यह कहना ही पड़ेगा की- ऐ महबूबे खुदा, आपने खुदाए-पाक की यह कैसी मुहब्बत पा ली है? वह जाते-पाक तो आपकी रज़ा में ही राजी नज़र आता है। ऐ मेरे रब, क्या इसी वजह से कलामे-खुदावन्दी, कलामे-रसूल की सूरत में दुनियां को एनायत हुई? आपने क्या इसी मुहब्बत में रसूले-पाक की अमली जिन्दगी को शरीयत का कानून बना दिया? **ऐ पाकजात, आपका इस्लाम तो आपके महबूब की चलती-फिरती जिन्दगी का नाम है? यकीनन आपके महबूब, आपके दीने-पाक में जिन्दा हैं।** बेशक, जो उन्हें मुर्दा तसलीम करे, उसकी गर्दन आपने मार दी है। भला मुर्दा जिस्म को अल्लाह के नबी जिन्दा कैसे नजर आएंगें? यही वजह है कि फकीर सैय्यद फैजल शाह कहते हैं कि 'हक़ कहा सिद्दीक अकबर ने क्या रसूल मरते हैं? मौत से हैं पाक नबी, वो खुदा पे मरते हैं।' खुदा पे मरना क्या है? खुदा में फना होने का नाम, खुदा पे मरना हैं। जिसे मामूली बशर नहीं जान सकता। वह यह भी नहीं जान सकता कि नबी अगर अल्लाह में फना न होते तो उन्हें रब्बे-पाक नबीअल्लाह कैसे कहता? वली अगर अल्लाह में फना नहीं रहते तो उन्हें रब्बे-पाक वलीअल्लाह क्यों कहता? हम फिर गौर क्यों नहीं करते कि नबी और वली जिन्हें कहते हैं, वह अल्लाह में फना हैं। अल्लाह तो कायम-दायम है। अल्लाह हमेशा से जिन्दा और तरोताजा है। फिर अल्लाह में फना नबी और वली कायम-दायम और जिन्दा कैसे नहीं रहेंगे? सैय्यद फैजल शाह ने इसीलिए फरमाया कि कौले उमर रजि0अन्हो0 शाहिद है, हक़ ईमान तौलता है?' ईमान क्या है? ईमान आंखों देखी शहादत पर यकीन का नाम है। ईमान तसदीक है। तसदीक बिना देखे नहीं हो सकती। यह भी सच है कि जब हजरत उमर रजिअल्लाह अन्हो को यह तसदीक हुई की पैगम्बरे-खुदा तो हक तआला (ईश्वर) के लिबासे-नूरी में जिन्दा हैं, तब उन्होंने अपने ईमान की शहादत पेश कर दी। अगर हक़ का मतलब हम सच्चाई से लेते हैं, तब भी उनका यह कहना की अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई तो मैं गर्दन उड़ा दूंगा। यह कौल उनके सच्चे ईमान की शहादत है। हक ताअला भी इसीलिए अपने हर बन्दे के ईमान को तौलता

है। वह तौलता है कि मेरे नबी और मेरे वली के बारे में बन्दे का ईमान क्या है? यह ईमान ही सच्चे बन्दे की पहचान है।

सैय्यद फैजल शाह फरमाते हैं कि नबीए-पाक से रब्बे पाक की मुहब्बत गवाह है कि पाक परवरदिगार की कुर्बत में ईश्क ही ईश्क है। ईश्क की मस्तानी बहार में ईश्के-खुदा ने अपने रसूलल्लाह को महबूबे खुदा बना दिया। महबूबे खुदा के ईश्क में हजरत अबु बकर को सिद्दीके अकबर (सर्वमहान सत्यवादी) कर दिया। ईश्के-रसूलल्लाह में पाक रब ने हजरत उमर फारुके आजम को अपनी जुबान दे दी। रब ने अपने पाक-दीन का उन्हें मोहद्दिस भी बना डाला। हजरत उषमान गनी ने भी जब अल्लाह के महबूब नबी (सर्वप्रिय ईशदूत) से ईश्क किया, तो ईश्के-खुदा में वह गनी यानी मालदार हो गए। हजरत अलीए-पाक का ईश्क जब रसूले-पाक के लिए बेचैन हुई,तो इसी बेकरारी ने उन्हें रसूलल्लाह की बिस्तर एनायत की। दुनियां जानती है, हिजरत की यह दास्तान। नबीअल्लाह की जान लेने के लिए मक्का के कुफ्फार पूरे मकान को असलहे के साथ घेरे हुए हैं। महबूबे-खुदा के बिस्तर पर उनके हुक्म से हजरत अली लेट गए। कुफ्फारे-मक्का इस भ्रम में हैं कि नबीअल्लाह मौजूद हैं। उन्हें किस तरह मार डाला जाए? क्या ऐसी नाजुक घड़ी में कोई मुसलमान, रसूले-पाक के जान के बदले में अपनी जान की कुर्बानी देने को तैयार हो सकता है? जरा गौर करें, साफ दिल से। हजरत अली उस घड़ी कुफ्फारे मक्का की नजर में हजरत मुहम्मद रसूलल्लाह हैं। रसूले पाक उनकी नज़रों के सामने से निकल गए, उन्हें वे पहचान न सके? क्या कुफ्फारे मक्का ने हिंजरत की रात नबीअल्लाह को सूंरते हैदरे कर्रार (हजरत अली के रुप में) में देखकर छोड़ दिया?

वह राज क्या है कि नबीअल्लाह चले गए और अलीए-पाक को कुफ्फार नबी-ए-पाक की मौजूदगी समझते रहे? यह हिजरत (एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना) हकीकत में हजरत अली के सच्चे ईमान का खुदा की तरफ से एक जबर्दस्त इम्तहान है। रब्ब-पाक देखना चाहता है कि क्या मेरे महबूब के जान के बदले में हजरत अली अपनी जान की बाजी लगा सकते हैं या नहीं? ईश्के-मुहम्मद अगर हजरत अली में है, तो वह ईश्क अमली तौर पर कितना कायम है? अल्लाह ताअला के इस इम्तहान में हजरत अली ने बाजी मार ली। नतीजतन (फलस्वरुप) वे शेरे-खुदा बन गए।

हजरत सैय्यद फैजल शाह इसी वाकेयात पर गहरी नज़र डाल कर फरमा रहे हैं कि हजरत अली की सच्ची मुहब्बत ने वह किस्मत पाई की उन्हें रसूले-खुदा ने अपने बिस्तर पर सोने का हुक्म दिया। उनके बारे में रसूलल्लाह ने यह फरमान किया- "जिसका मैं मौला, अली उसके मौला हैं। अली की मुहब्बत गुनाहों को इस तरह खा जाती है, जैसे सुखी लकड़ी को आग। अली मोमिनों के अमीर और मुसलमानों के सरदार हैं। अली मुझसे हैं और मैं अली से हूं। अली मेरे लिए ऐसे हैं जैसे मेरा सिर, मेरे बदन के लिए। अली कुरआन के साथ हैं और कुरआन अली के साथ, यह दोनों

हरगिज जुदा न होंगे।'' ऐसी न जाने कितनी बेशुमार नेएमतें हजरत अली करमुल्लाह वजहू को नबीए-पाक के माध्यम से अल्लाह ने उन्हें प्रदान कर दीं। नबीए-पाक के बिस्तर पर हजरत अली को सोने का हुक्म किन भयानक परिस्थितियों में मिला? क्या कोई इन्सान यह जानते हुए भी सो सकता है कि उसकी जान लेने के लिए आज लोगों की कसीर जमात इकट्ठा है? मगर हजरत अली का अल्लाह के नबी पर ईमान तो देखिए। वह बेखौफ होकर सोए? वह बिना जान जाने के भय से कैसे सो गए? जाते वक्त उन्हें रसूलल्लाह ने यह कहा था कि सुबह होने पर अमुक-अमुक लोगों की अमानतें उन्हें दे दीजिएगा। हजरत अली का ईमान कह उठा, की सुबह अमानतें लौटाने का मतलब है, मुझे कोई नुकसान नहीं पहुंचा सकता। इसी वजह से वह रसूले पाक के बिस्तर पर बेखौफ होकर सो गए। अपने नबी के कहने पर इतना कामिल ईमान क्या आज हममें है? नबीअल्लाह पर ईमान किसे कहते हैं, यह अमल कोई उनके खलीफा हजरात से सीखे।

सैय्यद फैजल शाह फरमाते हैं कि कुरआन तो कलामुल्लाह है और यह कलामे-खुदा, दुनियां को रसूले पाक के कलाम (वचन) से मिली है। बताओ, कुरआन में नबीअल्लाह तो जिन्दा हैं। जब कोई तिलावते-कुरआन करता है, तो उसकी जुबान से रसूलल्लाह की बोली हुई कुरआन ही तो निकलती है। इसीलिए सैय्यद फैजल शाह फरमाते हैं की कुरआन हक बोल रहा है। हक की आवाज़ पहचानो। हक़ कुरआन में और कुरआन की जुबान में यह एलान कर रहा है कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम जिन्दा हैं और जिन्दा रहेंगे। सैय्यद फैजल शाह अपने अश्आर में इसी हकीकत को बता रहे हैं कि कुदरत (प्रकृति) का रहस्य (राज), कुदरत ही खोलता है। देखो, यही वजह है कि खुदा, हजरत उमर फारुके आजम के जुबान पर बोलता है। वह फरमाते हैं कि अल्लाह तआला के महबूब नबी हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह की नबूवत और अल्लाह की मेराजे-हकीकत में आलमे-बशरी सूरत में जिन्दा हैं। यह अल्लाह का रहस्य भेद है। इस सच्चाई से वही परिचित हो सकता है, जिसके पास फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह की ईमानी-दौलत हो। वही ईमान की दौलत नूरुल्लाह है, जो अल्लाह, रसूल और अल्लाह के वली-औलिया को जिन्दा दिखाती है। सैय्यद फैजल शाह इसीलिए यह दावा पेश कर रहे हैं कि राजे-खुदावन्दी तो खुली किताब है, मगर हम कुदरत के राज से वाकिफ होना नहीं चाहते। यह स्थिति दुःखद है।]

सैय्यद फैजल शाह ने कलाम जारी रखा- ''नबी को बशरी लिबास में हजरत उमर रजि0अ0 से बेहतर किसने देखा है? प्यारे हबीब के अगर वह खलीफा-ए-खास हैं, तो दूसरी तरफ उनके मुरीद भी हैं। **हजरत उमर फारुके आजम की नजर अपने कामिल पीर पे भी है और अपने रसूल पर भी। वह बखूबी जानते हैं कि अल्लाह के प्यारे और आखरी नबी को मौत नहीं, वरना कयामत तक नबूवत किसकी चलेगी?** वह यह भी जानते हैं कि मेरी मन्जिल फनाफिलशैख और

फनाफिर्रसूल की है। जिस मन्जिल में नूरे मुर्शिद और नूरे रसूलल्लाह, मुरीद के सामने जलवागर होती है। **हजरत उमर फारुके आजम रजि० अ० इसी नूर में फना है। तभी तो उन्होंने कहा कि अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा। ईश्के रसूल की यह मचलती, कसकती बोली को आम बशर क्या समझेगा।** हजरत उमर हुजूर की बोली सच्ची न होती तो अहले बैत एकराम, असहाबे सुफ्फा एकराम, ताबईन एकराम और तब्ब-ताबईन एकराम रसूले पाक को उनके विसाल के बाद भी देखते कैसे? वली-अल्लाह की जमात रसूले पाक से बिला मुलाकात किए आज तक कायम कैसे रहती? आप सूफी, पीर, फकीर की कल्बी नजरों से पूछिए कि क्या वे रसूलल्लाह के परदा फरमाने के बाद भी उनसे गुफ्तगू नहीं करते हैं? **हजरत पीराने पीर दस्तगीर की हुकूमत दुनियां में एलान कर रही है कि अल्लाह है तो नबीअल्लाह को बशरी मौत नहीं? अल्लाह है, तो वलीअल्लाह मुर्दा नहीं हो सकते?** अल्लाह जब हमेशा से कायम और जिन्दा है, तो वह अल्लाह के नबी हैं, उनकी नबूवत कयामत तक के लिए कायम है। फिर जिनकी नबूवत कयामत तक के लिए कायम हो, उसकी दायमी मौत का कयास कोई पागल ही लगायेगा। यह नबूवत तो कायम है नबी से। इसकी कायमी खुदा की तरफ़ से है। इसलिए नबी के जिस्मानी तौर पर रहने या उनकी परदापोशी की जिन्दगी हमें न दिखाई देने का मतलब न फौत है और ना मौत है। नबी का जिन्दा रहना, इसीलिए नबूवते मुहम्मदी यानी इस्लाम की कायमी की शर्त बन गई। जो रसूले पाक ने फरमाया कि- "हक़ उमर की जुबान पर बोलता है।" बाखुदा इस कौले रसूलल्लाह को हजरत उमर ने हक़ फरमा कर साबित कर दी। इनकी औलादों ने भी यानी हजरत इब्राहीम अदहम बल्खी, हजरत बाबा फरीदगंज शकर, हजरत नसीरुद्दीन चेराग दिल्ली आदि ने भी अपने दादाजान के इस कौल को 'वेलायत' पा कर दुनियां में प्रमाणित कर दिया। ताकि आने वाली नस्लें चीख-चीखकर कहती रहें कि नबी अल्लाह जिन्दा हैं, यह हक़ उमर की जुबान पर बोलता है।

हजरत उमर हुजूर के इस कौले-हक़ पर जरा गौर फिर से कर लें। आपके इस कौल में पाकजात की सच्चाई है। नबीअल्लाह को मौत नहीं। कुरबते रसूले खुदा में हजरत उमर हुजूर को यह ईल्म है कि शबे-मेराज में हजरत मूसा अलै०, हजरत ईसा अलै० जैसे तमामी पैगम्बर हुजूरे अकरम से मिले। अगर अल्लाह के नबी मुर्दा होते तो मिलते कैसे? उन्हें यह ईल्म भी है कि हजरत खिज्र अलै० बिना दुनियां में बशर की शक्ल में जाहिर हुए, बशरी सूरत में ही मिलते हैं। दूसरी तरफ वह यह भी जानते रहे कि आखरुज्जमां मेरे रसूल हैं। अब नबी कोई आनेवाला नहीं। खुदा की खुदाई न जाने कब तक कायम रहेगी, फिर तो नबी-ए-अकरम सल्ले अला व सल्लम ही तो नबी रहेंगे। ऐसे में नबीअल्लाह मौत से पाक हैं।

एक खास बात तो यह भी है कि उनकी नज़रें हुजूरे पाक को जिन्दा जावेद देख रहीं थीं। हक़ बोलने वाले हजरत उमर कैसे यह कहते कि हुजूर मुर्दा हो गए। हजरत उमर हुजूर ने नबीए-पाक की जाहिर-बातिन दोनों जिन्दगी को बगौर देखा है। उनका यह जुमला हक़ है, जो ईश्के रसूल और इनके कामिल ईमान की हकीकत में जुबान से जाहिर हो गयी। इसी तहकीके उमर रजि0 अ0 से तो आज इस्लामी हयात कायम है। वरना कोई सूफी, कोई पीर मेराजे-रसूल के लिए आज तक नहीं तड़पता? **नूरे खुदा से महरुम जाहिलों ने यह समझा कि हजरत उमर हुजूर ने हुजूर नबीए-खुदा के विसाल को इसलिए विसाल नहीं समझा क्योंकि वह उनकी परस्तिश करते थे? लाहौल वला कुव्वत ऐसी नाकिस और यजीदी समझ पर !**

नबीअल्लाह की अकीदत और वली-अल्लाह की मुहब्बत के माअनी और मतलब 'परस्तिश' या पूजा या इबादते-इलाही से लगाने वालों पर हमें शर्म आती है। ऐसे लोगों की जिन्दगी में झांका जाए तो यह हस्बे उम अपनी बीवी-बच्चों पर तो जान छिड़कते हैं। कोई धन्धा-कारोबार का दिवाना है। किसी की जेब में मालोजर नहीं, तो उदास रहता है। कोई मालोजर की मुहब्बत में अपने वतन को अलविदा करके दूरदराज शहरों या मुल्कों में जाता है। क्यों ऐसी सारी बातों को 'एलाह' की परस्तिश नहीं कहा जाता? क्या यह 'एलाह' (चीज़) नहीं है? बीवी-बच्चे, अजीजों-अक़ारिब, धन-दौलत और ख्वाहिशे नफ्स से मुहब्बत रखने को 'परस्तिश' क्यों नहीं मानते? काबे के उस्ताद अपना मुल्क छोड़कर अरब में किस लिए गए? क्या उन्हें रुपए-पैसे और दुनियावी शानो-शौकत की चाहत नहीं है? खुदा के सिवा उसके गैर से मुहब्बत ही तो 'बुतपरस्ती' या कुफ्र है? नबीअल्लाह और वलीअल्लाह क्यों और कैसे खुदा के गैर हैं? क्या खुदा अपने गैर को नबी बनाता है? खुदा के गैर पर क्या खुदा की 'वही' (ईश-वाणी) नाजिल होती है? **खुदा के गैर को क्या मेराजे-खुदा (ईश-मिलन) हासिल होती है? खुदा के गैर अगर रसूलल्लाह हैं, तब तो इस्लामी जिन्दगी पर चलना किसी भी मुसलमान के लिए हराम हो जाएगा? नमाज, रोजा, हज, जकात, तौहीद को क्या किसी भी बन्दे को अल्लाह ने बताई है? कलामुल्लाह क्या किसी आलिम या शैखुल हदीस या सद्र शोएबाए शरीयत पर नाजिल हुई है? हज के अरकान अल्लाह ने किए या नबीअल्लाह ने? - फिर नबीअल्लाह की बतायी सारी शरीयत मानोगे? नबीअल्लाह को ही 'एलाह' (चीज़) कैसे मानोगे? अगर रसूलल्लाह को 'एलाह' मानते हो, तब तो तुम्हारी शरीयत और इस्लाम 'एलाह' की शरीयत बन गई? इसे 'ला ईलाहअ' करना पड़ेगा? बताओ, खुदा से शरीयत पाए या खुदा के नबी से? शरीयत और कुरआन पढ़ लेने का मतलब क्या यह समझते हो कि तुम नबी हो गए? मियां, नबीए-पाक ने अगर यह न बताया होता कि खुदा एक है तो सोचो तुम खुद**

कितने खुदाओं की परस्तिश करते? उन्हें अगर खुदा का गैर समझते हो, तो तुम्हारा हर अमल और इबादत गैरुल्लाह की इबादत बन जाएगी? इस्लामी कायदे आज़म को खुदा का गैर समझना तो इस्लाम से खारिज होने की दलील है?

अल्लाह तआला लाशरीक और पाक है। ऐसे पाक परवरदिगार ने प्यारे हबीब सल्ले अला व सल्लम को इस्लाम के हर सांसों में शामिल क्यों रखा? नमाज, हज अगर नबीअल्लाह न किए होते तो क्या आज हम नमाजें पढ़ते या हज करते? अगर नहीं, फिर नबीअल्लाह की शिरकत जब अल्लाह तआला ने कायम फरमायी है, तो हम उसे तोड़कर क्या हुक्मे इलाही या नेजामे-कुदरत की अहानत (अपमान) नहीं कर रहे हैं? अल्लाह तआला है, उसकी आंखों देखी शहादत किसने दी? फरिश्ते, जन्नत, दोजख के शाहिद नबीअल्लाह हैं या कोई इस्लाम का आलिम या मोहद्दिस? क्या दुनियां का कोई शहंशाह, बादशाह, राष्ट्राध्यक्ष यह दावा कर सकता है कि वह ईश्वर-अल्लाह का चश्मदीद गवाह है? फिर अल्लाह के नबी के मुतल्लिक किसी बादशाह या हुकूमत की राय या हुक्म की कद्रो मन्जलत या पैरवी क्या नबी का कोई भी उम्मती करने के लिए मंजबूर है? कोई सच्चा मुसलमान कैसे यह बर्दाश्त करेगा कि उसके नबी को कोई आलिम या मोहद्दिस या मुफ्ती या बादशाह मुर्दा कहे तथा उन्हें आम बशर की तरह मानने को मजबूर करे?

'कल्मा-शहादत' और 'कल्मा तैय्यब' की हकीकत ऐसे लोगों में कितना दाखिल है, पहले इसकी जांच-परख जरूर की जाए। नबी अगर नहीं हैं, तो उनके परदा फरमाने के बाद कल्मा-शहादत में उनकी शहादत हम कैसे देंगे? आज भी कल्मा के शब्द यह नहीं कहते कि रसूलल्लाह थे। कल्मा रसूले-पाक के परदा फरमाने के बाद भी अब तक यही कहता है कि रसूलल्लाह हैं। **क्या कोई आलिम या इस्लामी मुल्क का बादशाह कल्मे को बदलने की कुव्वत रखता है? क्या अजान में से 'अशहदोअन्नअ मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' (मैं गवाही देता हूं कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम अल्लाह पाक के रसूल हैं।) को निकाल कर हम रसूल थे कहने की जुर्रत रखते हैं? फिर क्यों रसूलल्लाह और उनके प्यारे खुल्फाओं की खुदाद शान में बदकलामी और बदअकीदगी का मोजाहेरा (प्रदर्शन) करते हो? रसूलल्लाह हैं, यह मानने से हमारी नमाजें पक्की हो सकती है। वह हैं तो हज है। वह हैं तो नमाज-रोजा, जकात, तौहीद और हराम-हलाल, रहमत-बरकत, शिर्क, बिदअत, कुफ्र वगैरह सभी की कीमत है। वह हैं, तभी तो मिलादुन्नबी है। वह हैं तभी तो हम नमाज के तशहुद में कहते हैं कि सलाम हो आप पर ऐ नबी। उनके होने से फायदा है। न होने से हम आज उम्मती भी नहीं हो सकते?** आखिर बात क्या है कि कुछ लोग नबीअल्लाह को मुर्दा साबित करने के लिए अपने अक्ल के घोड़े दौड़ाते रहते हैं? क्या वह नबीअल्लाह की हक्की तबलीग को अपने

बातिल तब्लीग से मुर्दा करना चाहते हैं? हजरत उमर फ़ारुके आज़म के कौले-हक़ में उनके नबीअल्लाह के प्रति सच्चे ईमान की मजबूती है। यह बोली भी है और हजरत उमर रजि0 अ0 का फ़ेएल भी। देखो ना कि कल्मा-शहादत- "अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदुर्रसूल्ल्लाह" यानी- मैं गवाही देता हूं कि मेरे हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं। मेरे रसूले पाक थे नहीं, मेरे रसूले-पाक हैं। हजरत उमर रजि0 अन्हो का वह कौल कल्मा-शहादत की सच्ची शहादत है। यही वो ईमान है, जिसे उनमें पा कर रसूले पाक ने उन्हें उम्मते-मुहम्मदिया का मोहद्दिस करार दिया। क़ौले-उमर, कल्मा-शहादत पर कामिल ईमान की दलील है। क्या इस्लाम में कोई कल्मागो (कल्मा पढ़ने वाला) मुसलमान, आज तक ऐसा है, जो रसूले खुदा पर उन जैसा कामिल ईमान रखता हो? हजरत उमर फारुके आजम ने सारे आलम को यह सबक दे दिया कि रसूले-पाक पर ईमान कामिल रखने से ही खुदा पर ईमान कायम रह सकता है? उन्होंने रसूलल्लाह की बशरी जिन्दगी और बशरी लेबास में उनकी बक़ा (ईश-जीवन) की जिन्दगी, इन दोनों को देखकर यह फरमान किया। **हजरत उमर फारुके आजम की ईमान की आंखें रसूले-पाक को उसी आलम में देखती रहीं, जिसे दुनियां के लोग बशरी जिन्दगी कहते हैं। काश ! हममें हजरत उमर फारुके आजम जैसा ईमाने-हक़ दाखिल होता, तो आज हम भी कल्मा-शहादत के सच्चे दावेदार बन जाते।** लेकिन एक ईमान की राह हजरत उमर रजि0 अ0 ने हमें जरुर अता कर दी। वो यह कि हम अगर नबीए-पाक सल्ले अला व सल्लम को मुर्दा न समझें, तो ईमान की राह पर हैं। अल्लाह हमें असहाबे-सुफ्फा और रसूले-पाक के चारों खलीफाए-पाक के नक्शे-क़दम पर कायम बाअमल कामिल पीर अता करे, ताकि हम भी नबीअल्लाह की लाफानी हयाते-पाक को देख लें। और हम सभी का कल्मा शहादत पढ़ना दुरुस्त हो जाए। आप कह सकते हैं कि कल्मा-शहादत में 'अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह' अर्थात- मैं गवाही देता हूं कि नहीं कोई पूज्यनीय ईश्वर के सिवा। यह शहादत सिर्फ नबीए-पाक को देख लेने से पूरी कैसे होगी?

दोस्तों, नबीअल्लाह ने मेराजे-पाक में अल्लाह पाक को देखा है की नहीं? बताओ महबूब नबी की प्यारी-प्यारी आंखों में अल्लाह का नूर जल्वागर है या नहीं? अरे मियां, नमाज़ को पच्चास वक्त से पांच वक्त कराने के लिए वह नौ बार पाकजात का दीदार किए और उनसे गुफ्तगू भी की। अल्लाह तआला के रु-ब-रु जब नबीअल्लाह हैं, फिर दीदारे-हक़ से बशरी-लिबास, हक्की लिबास में तब्दील हो गयी। नज़रें-नबीअल्लाह, नज़रे-खुदा बन गयी। अल्लाह में नबूवत फना होती हैं। मगर यहां देखो, नबीए-पाक का बशरी-जिस्म भी मेराज ने अल्लाह में फना कर दी। मेराजे-खुदा ने नबीए-पाक की बशरीयत को हक्की बना डाला। अब नबीअल्लाह की नज़र, अल्लाह की नज़र बन गई। नबीअल्लाह के हुस्नो-जमाल (अत्यन्त सुन्दर) में अल्लाह की सिफाते-हक्की फना हो गई। उनका सरापा बशरी

जिस्म तो अल्लाह में फना हो गया। यही है फनाफिल्लाह की सिफात (गुण)। यह वो सिफते-खुदावन्दी है, जिसे हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के सिवा किसी नबी-रसूल को खुदा ने नहीं अता की है। मियां, अब बताओ दीदारे-मुस्तफा में दीदारे-खुदा पोशीदा है या नहीं? दीदारे-नबी में हमारी नज़र अगर रसूले-पाक की नज़र से मिलती है, तो यकीनन हमें उनकी आंखों में दीदारे-इलाही के जलवे हासिल होंगे। इसलिए दीदारे-नबी पर कल्मा शहादत हम अगर अदा करते हैं, तो हमारी शहादत अल्लाह और रसूल दोनों के लिए दुरुस्त हो जाती है। बताओ, हजरत उमर फारुके आज़म के कौल में ईमान कामिल किस दर्जा पोशीदा है। रसूले-पाक के तसदीकी मोहद्दिस ने आलमे-इस्लाम को हकीकत से आगाह कर दिया। रसूले-पाक की इस पाक-कौल में, की 'हक तो उमर की जुबान पर बोलता है', हमारे लिए सच्चे मोहद्दिस की पहचान भी बतायी गई है। रसूलल्लाह के इस कौल की रौशनी में यह कहना होगा की मोहद्दिसे-इस्लाम वही हक़ पर है, जिसकी जुबान पर हक़ बोलता हो। हक़ तभी बोलेगा, जब हमारे मोहद्दिस रसूले पाक और खुदाए-पाक में फना हों? यानी फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह के बिना इस्लाम के सच्चे मोहद्दिस कहलाने का हक हमें रसूले पाक ने अता नहीं की है। तबलीगे-हक़ की सच्चाई मोहद्दिसे-हक़ के बगैर जाहिर नहीं हो सकती। इस्लाम में फित्ने और फिरके की जड़ इसी हक्क़ी अमल से नावाकिफ लोगों से पैदा हुई। अल्लाह और रसूलल्लाह में फना होना जरुरी क्यों है? फनाफिल्लाह (ईश-दर्शन में विलय) से हमें अल्लाह का सच्चा कलाम यानी कुरआन समझ में आएगा। फनाफिर्रसूल (ईशदूत-दर्शन में विलय) होने से रसूलल्लाह की हदीसे पाक का सही पैगाम हम समझेंगे। सच तो यह है कि अगर हमें 'फनायित' की दोनों मन्जिलें हासिल नहीं, तो हमने इस्लाम की हकीकत अभी तक नहीं समझी है। रसूले पाक के चारो खुल्फा, असहाबे-सुफ्फा, अहले बैत एकराम, ताबईन और तब्-ताबईन एकराम सभी 'फनायित' की मन्जिलें पाए हैं। इनके नक्शे-क़दम पर चलने वाले जब फना हुए, तो वही अल्लाह के औलिया अल्लाह बन गए। यह जाहिर हुआ की सच्चा इस्लाम, एक अदना बन्दे को अल्लाह का वली बना देती है। यही हक़ इस्लाम है। इसीलिए अल्लाह व रसूल में फना शख्स ही कामिल पीर के नाम से तबलीगे-हक का रहनुमा है। हक़ में फना नहीं, फिर तो तबलीगे-हक़ का काम नाहक तबलीग होगी। ऐसी तब्लीग से फित्ने जाहिर होंगे। ऐसे नाहक ओलमा को ही रसूले पाक ने ओलमाए-सू बतायी है। अब हम गौर करें की हमें नाहक तबलीग में रहना है या तबलीगे-हक़ के रहनुमा के साथ?

ऐसे नाहक़ ओलमा ने हजरत सैय्यदना सिद्दीके अकबर के बोसे का राज़ भी नहीं समझा। नबीए-पाक की पेशानी पर उन्होंने बोसा कब दी? बजाहिर रसूले-पाक जब हक़ में वस्ल कर गए हैं। क्या उन्हें यह ईल्म नहीं था कि मेरा बोसा, मुर्दा जिस्मे पाक क़े लिए है या दीदारे-हक़ में फना जिस्मे-पाक के लिए? अल्लाह के सच्चे सैय्यदना हजरत अबु बकर सिद्दिके आजम ने बोसा देकर हर

आनेवाली इस्लामी नस्लों को यह पैगाम दिया कि ताजीमे-रसूलल्लाह मेरी तरह करना। रसूले-पाक के सच्चे नायब ने उम्मते-इस्लाम को ताजीमे-रसूल की तमीज़ सिखाई। आज जो लोग रौजए-अक़दस की जालियां चूमते हैं, यह बोसए-सिद्दिके अकबर की सुन्नत है। **नज़रों से जो गुम्बदे-खिजरां को आंखों से लगाते हैं, यह बोसए-सिद्दिके-अकबर की पैरवी है।** शिर्क और बिदअत का नगाड़ा पीटनो वालों, हमें बताओ क्या बोसए-सिद्दिके अकबर शिर्क और बिदअत है? रसूले पाक के अव्वल और प्यारे खलीफा की पैरवी हम न करें, तो क्या यजीदी और नज्दी पैरवी में हमारा इस्लाम कायम रहेगा? अगर ताजीमे रसूलल्लाह और ईश्के-नबी अल्लाह रखना शिर्क और बिदअत होता, तो वह बोसए-रसूल कत्तई न लेते। क्या अल्लाह के रसूल के प्यारे और सच्चे खलीफा को शिर्क और बिदअत का ईल्म नहीं था? जो रसूले-पाक, अल्लाह में फना हों, उनके पेशानी को बोसा देना शिर्क कैसे? पेशानी, सूरते-पाक का एक जुज या भाग है। अल्लाह ने मेराजे-नबी की घड़ी में अपने महबूब नबी को तो सरापा देखा। फिर तो नूरुल्लाह यानी अल्लाह का नूर नबीए-पाक के सरापा जिस्म में दाखिल हुई। हजरत सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने बोसा, नूरुल्लाह को दिया। बताओ, नूरे-हक़ का बोसा शिर्क कैसे है?

हजरत आदम अलै० के पुश्ते मुबारक में वही तो नूरुल्लाह था। वहां से वही नूर पेशानी मुबारक में आयी। फिर वही नूर उनके दाहिने अंगूठे में मुन्तकिल (स्थानान्तरित) हुआ। नूरुल्लाह के सजदे का हुक्म अल्लाह तआला ने दिया था। फरिश्ते सजदा किए। मगर इब्लीस सजदा इसलिए नहीं कर सका, क्योंकि वह जिस्मे-आदम को ही देख रहा था। कोई बताए की रब्ब-पाक अपना सजदा हजरत आदम के लिए क्यों कराएगा? इब्लीस ने नूरुल्लाह के सजदे को हजरत आदम का सजदा समझ कर इन्कार किया। वह ताजीमे-नूरुल्लाह अगर समझ लेता, तो आज मर्दूद इब्लीस न कहलाता। सैय्यदना सिद्दिके अकबर ने तो नूरुल्लाह को सिर्फ बोसा दिया। अगर वह नूरे खुदा को सजदा भी करते, तो भी अल्लाह तआला की नज़र में शिर्क नहीं होता। गुम्बदे खिजरां में नबी अल्लाह हैं। उनके साथ सैय्यदना सिद्दिके अकबर भी तो हैं। क्या गुम्बदे खिजरां में नबीअल्लाह और खलीफाए-रसूलल्लाह इसीलिए मौजूद हैं कि वह शिर्क और बिदअत को बढ़ावा दें? गुम्बदे-खिजरां को मोनहदम (ध्वस्त) करने का इरादा जाहिर करने वालों, हमें बताओ उस पाक मकामे अकदस को तुम गिराओगे? अल्लाह तआला के कायमशुदा नबी के मकाम को तुम्हें गिराने का हक़ किस अल्लाह ने दिया है?

मियां, फ़तवा देने का कानून क्या तुमने खुद एजाद (खोज) किया है? नबी अल्लाह और खलीफए-रसूलल्लाह के मकाम को गिराने का फतवा तुमने किस इस्लाम से लिया? इस्लाम, रसूले पाक हैं और इस्लाम की जिन्दगी उनके पाक खुल्फाओं से कायम है। फिर तुम किस कुरआन और हदीस को पढ़ते हो, जो कुरआन और हदीस देने वाले नबीअल्लाह के कायम रौजए-अक़दस को

गिराने का हुक्म दे? अगर तुम्हारे ईल्म और अक्ल में ऐसे ख्याल आ रहे हैं, तो जाहिर है कि तुम्हारे नफ्सीयाती शैतान का डायरेक्टर इब्लीस बन गया है। इब्लीस ही तो नूरुल्लाह के सजदे का मुन्किर है। उसकी नज़र में नूरे-खुदा का सजदा शिर्क था, तभी तो उसने सजदा नहीं किया। आज इब्लीस को जब वही सजदा जायज नज़र आने लगा। तब उसने इन्सानी अक्ल और ईल्मे-हक़ में यह फित्ना डाला की बन्दए-खुदा भी हक को शिर्क व बिदअत तसलीम करें। इब्लीस चाहता है कि मेरी तरह खुदा के बन्दे भी खुदा से दूर हो जाएं। उसकी साजिश है कि बन्दे नाहक ओलमाओं की पैरवी में रहकर ताजीमे-रसूलल्लाह करना छोड़ दें। ऐसे ख्यालात में वही नज्दी और यजीदी दीन है, जो इब्लीस की कयादत में परवान चढ़ती जा रही है। दीने-इलाही में फित्ना और फिरकाबन्दी की बदबू इब्लीस के सिवा कौन डाल सकता है?

तुम देखो की आखिरी पैगम्बर के बाद भी दुनियां तो कायम है। इस्लाम का वजूद ताकयामत तक कायम रहने वाला है। यही वो दीने-हक़ है, जिसे अल्लाह तआला ने महफूज रखने की जमानत ली है। यही वो दीने-मुहम्मदी है, जिसे अल्लाह ने अपना मुकम्मिल दीन करार दिया है। फिर सोचो, दीने-हक जब पैगम्बरे आजम हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम से जुहूर (प्रकाश) में आयी, तो पैगम्बरे-दीन की मौत कैसे होगी? नबीए-पाक की मौत जिसे समझते हो, वह मौत उनके लिए न तो बशरी है और न तो नबूवत की मौत है। तुम बखूबी जान लो की नबी की मौत क्या है? **नबी की बशरी नूरी सूरत जब नूरे-खुदा में फना हुई, फिर हमारे नबी पहले की तरह नबूवत में कायम रह गए।** दिल के अन्धों ने समझ लिया कि नबीअल्लाह की मौत हो गई। इसीलिए दिल के अन्धे अवाम को हक़ ने हज़रत उमर की जुबान से चेतावनी दिया कि खबरदार ! अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह की मौत हो गई, तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा। इस्लाम के मोहद्दिस के इस कौल में बाखुदा पाकजात की सच्चाई बोल रही है। रब्ब-कायनात ने जुबाने-उमर से यह एलान करा दी कि मेरे महबूब रसूले पाक को मुर्दा अगर समझोगे तो यहां हजरत उमर गर्दन उड़ा देंगे और मैदाने-हश्र में ऐसे अकीदे वालों की गर्दन मैं उड़ा दूंगा। बोलो अल्लाहो अकबर ! जोर से कहो सुबहानल्लाह।

ऐ मेरे महबूबे खुदा, आपने अपने महबूब यार हजरत उमर फारुके आजम को शरीयत की वह कैसी तालीम दी थी, जिससे हक़ उनकी पाक जुबान से कलाम करने लगा? हजरत अबू बकर सिद्दीके अकबर ने आपसे कैसी शरीयत पायी कि वे इस्लाम के 'सिद्दीके अकबर' बन गए? हजरत ऊषमान ने नबीए-पाक से किस शरीयत की दौलत पायी कि वह हजरत ऊषमान से हजरत ऊषमान गनी हो गए? अल्लाहो अकबर ! अल्लाह से गनी (ईश कृपा से मालदार) यानी रसूले पाक के प्यारे ऊषमान गनी। उधर हजरत अली को देखिए। 09 हिजरी का दौर है। चौदह हजार मोमिनों की मौजूदगी में हुजूर नबी-ए-पाक एलान कर रहे हैं कि मैं जिसका मौला हूं अली उसके मौला हैं। अल्लाहो अकबर !

अल्लाह के नबीए-पाक की बख्शिश पर कुर्बान जाईए। देखो तो सही, की अल्लाह तआला का ईनाम, नबीए-पाक के एलान से बांटी जा रही है। अल्ला अल्ला क्या एख्तियार बक्शी है अल्लाह ने अपने रसूलल्लाह को। बशर को सिद्दीके अकबर, फारुके आजम, उथमान गनी और मौला बनाकर रसूले-पाक ने नूरे-खुदा का लिबास पहना दिया। यह ऐसी एनायतें मौला है, जहां हर-हर जिन्दगी का हर एक लम्हा एक नई सदाबहार जिन्दगी जीती है। इसे एजाजे-रसूल कहें या रजाए-खुदा। इस एनायत, शफकत और मुहब्बत का नाम क्या दिया जाए? ओलमाए-नाहक इस एख्तियारे-रसूल को क्या कहेंगे? बताए कोई की यह एनायतें शिर्क हैं या बिदअत?

मियां अताए-मुस्तफा, अताए-खुदा है। तभी तो पाक रब ने कह दिया कि जो रसूल दें, उसे ले लो। मेरे पाक रसूल की अताअत, खुदा की अताअत है। ऐ पाकजात ! तेरे मानने वाले काबिल ओलमा कहते हैं कि जिनका नाम मुहम्मद और अली है, वह किसी चीज के मालिक और मुख्तार नहीं। तूने अपनी मिल्कियत क्यों हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम को सौंप दी? तुमने अपने अख्तियार का मुख्तार उन्हें क्यों कायम कर दिया? ऐ मेरे परवरदिगार ! ये तेरे मानने वाले ओलमा फिर क्यों तेरे हुक्म की खिलाफवर्जी में मुबतला हैं? हम इन्हें मुनाफिक कहें या मुशरिक? हम इन्हें इस्लाम का दुश्मन कहें या गुस्ताखे-खुदा? तेरे महबूब ने ओलमाए-सू इन्हीं को तो नहीं कहा है? पाक रब के पाक इस्लाम में नापाक अकीदे का फित्ना डालना, यही तो ओलमाए-सू की पहचान है। ऐ पाकजात, नमाज की अदाएगी तैरे महबूब ने खुद की या तूने अपने महबूब को नमाज का सलीका बतायी? ऐ मेरे पाक परवरदिगार ! नमाज़ तो सबसे अव्वल में तेरे महबूब ने अदा की। तूने अपने महबूब की अदाए-बन्दगी को नमाज करार देकर अपने बन्दों पर फर्ज क्यों कर दिया? मैं तो हैरान हूं तेरी रहमो-करम को देखकर। अपने महबूब की आदाबे बन्दगी को तू पूरी तरह कुबूल कर लिया। क्या इसका मतलब यह माना जाए कि तेरी बारगाह में तेरे महबूब की हर-हर अदाएं मकबूल हैं? ऐ पाक रब ! हमें तो तेरी रज़ा, तेरे महबूब की अदाओं में शामिल दिखती है। वरना तू अदाए-महबूब को अपनी इबादत के लिए पसन्द कैसे फरमाता? आदाबे-महबूब को नमाजे-हक बना कर ऐ मेरे पाक अल्लाह, आपने अपने बन्दों को यह पैगाम दे दिया कि किरदारे मुस्तफा, रजाए खुदा है। रजाए-मुस्तफा, रजाए इलाही है। जिसमें महबूबे खुदा राजी, उसमें खुदा राजी। जिससे महबूब नाखुश, उससे खुदा नाखुश ! जिसे महबूब नवाजें, उसे खुदा नवाजें। जिस नमाज में महबूबे-हक का ख्याल नहीं, वह नमाज मकबूले बारगाह नहीं। जिस महबूब की नमाज को रब ने पसन्द फरमायी, वह नमाज बिना महबूब के शामिल हुए अल्लाह तआला कैसे पसन्द करेगा?

हर अदाए-बन्दगी, ईश्के नबी का नाम है।
हर शरीयत में, नबी के साथ ही इस्लाम है।।

कर्बला में देख ली है, हक़परस्ती की रज़ा।
एक तरफ इमामे बरहक़, एक तरफ शैतान है।।
उल्फते आले-नबी, ईश्के पयम्बर के बिना।
हर शरीयत और सुन्नत का फकत एक नाम है।।

हजरत सैय्यद फैजल शाह बाबा की इस तकरीर पर महफिल ईश्के-रसूलल्लाह में झूम-झूम कर दरुदो-सलाम का नज़राना पेश करने लगीं। उन्होंने पाक बन्दगी के सन्दर्भ में यूं फरमाया- "नमाज़ें अल्लाह तआला के वास्ते, लेकिन इस नमाज़ का तरीका तो रसूले-पाक ने दुनियां को सिखलाई। हज अल्लाह तआला के वास्ते, लेकिन अदा की रसूले-पाक ने। रोजा पाकजात के लिए, मगर रोजा रखने का सलीका दिया नबीए-पाक ने। नबी अल्लाह के हर-हर अमल को अल्लाह पाक ने इस्लामी शरीयत बना दिया। इस्लामी बुनियाद और इस्लामी कवानीन (नियमों) के पीछे बताओ कौन है? फिर रसूलल्लाह को ही तर्क करने से क्या इस्लाम में कुछ बाकी बचेगा? इस्लाम रसूले पाक से। शरीयत रसूले पाक से। नमाज, हज और रोजा, जकात और तौहीद के सारे अरकान रसूले-पाक से। ताकमयात के लिए पैगम्बरी रसूले पाक की। सारे आलम की रहमत रसूले पाक। कलामुल्लाह में रसूले-पाक। कल्मे की जान में रसूले-पाक। हर अजान में रसूले पाक। नमाज के हर-हर अरकान में रसूले पाक। कयाम, रुकू, सजदे को मकबूले-खुदा बनाया रसूले पाक ने। हज के नाम और एक-एक अरकान में रसूले-पाक। फिर ऐसे रसूले पाक की खुदाद शान में गुस्ताखी करना, यह शाने-खुदावन्दी में गुस्ताखी है या नहीं? बोलो गुस्ताखे रसूलल्लाह को तुम मुसलमान कहोगे या काफिर? उसे मोमिन कहोगे या मुनाफिक? वह इस्लामी है या गैर-इस्लामी? फिर ऐसे नबी अल्लाह की मजारे अकदस को तोड़ने का फितना क्या कोई इस्लामी शख्स कर सकता है? अरे ! ऐसी बदतमीजी तो गैर-इस्लामी शख्स भी नहीं कर सकते?

मियां यही तो गैरुल्लाह हैं। बताओ अल्लाह के गैर कौन? जिन्हें रसूलल्लाह से बैर है, वही तो अल्लाह तआला के गैर हैं। रसूले-पाक ही से जब इस्लाम की हर-हर सुन्नत जिन्दा है, फिर रसूलल्लाह को तुम जिन्दा क्यों नहीं समझतें? रसूलल्लाह से नमाज़ें जिन्दा, रसूले-पाक से हज और रोजा, तौहीद, जकात जिन्दा। क्या ऐसी जिन्दगी मेरे रब ने किसी बशर को एनायत की हैं? मियां 'लाईलाहअ' पढ़ते हो, मगर खुद में 'एलाहअ' कायम क्यों रखते हो? क्या रसूले पाक के दिए कल्मे को 'ला ईलल्लाह' करके पढ़ते हो? 'ला' (नहीं) करो अपने नफ्स को, तुम्हारी नफ्स ही 'एलाहअ' है। मगर तुम तो 'ला रसूलल्लाह', 'ला खलीफए रसूलल्लाह' और 'ला अहले बैते रसूलल्लाह' तथा 'ला ताबईन' व 'ला तब्ब ताबईन' पढ़ते-पढ़ते 'ला वलीअल्लाह' भी पढ़ने लगे। मियां, हमें बताओ ऐसे 'लाएलाह' की तालीम तुम्हें किस ओलमाए नाकिस ने दी है? आखिर ऐसे लोग अपने शैताने-नफ्स

को 'ला' क्यों नहीं करना चाहते? 'एलाहअ' किसी भी शय को जिसे माबूद बनाया जाए, उसी को कहते हैं। फिर वह कौन सी शय है, जिसे रब्बे पाक ने 'ला' करने को कहा? मियां, उस पाकजात की इबादत में अल्लाह के जितने गैर हैं, वही तो 'एलाहअ' हैं। नबीअल्लाह, वलीअल्लाह, खुल्फाए-रसूलल्लाह, असहाफे सुफ्फा, अहले बैत एकराम, ताबईन व तब्बे ताबईन एकराम तो अल्लाह के खास हैं। अल्लाह और उसके खास के सिवा तो सब कुछ गैरुल्लाह है। फिर तो अल्लाह के खास के साथ जो बुग्जो कीना रखे, वह भी गैरुल्लाह हुआ। मियां, तौबा-अस्तगफार दिल से कर लो। वरना तेरी शैतानियत 'एलाहअ' बन कर तुझे 'ईल्लल्लाह' में शरीक करेगी। मियां, मुशरिक बनने के लिए तुम्हे नफ्सीयाती शैतान बहका रहे हैं, वह खुद 'ला' होना नहीं चाहते, इसलिए रसूलल्लाह और वली अल्लाह को ही 'लाईलाहअ' करने को उकसाते हैं?

नमाज़ में ख्याले रसूले खुदा का आना क्यों जायज है? क्योंकि नमाज की बका रसूलल्लाह हैं। नमाज की अदा रसूलल्लाह हैं। अल्लाह की नमाज में नबीअल्लाह फना हैं, इसलिए उनका अल्लाह में फना होना, अल्लाह में शरीक होना नहीं होता। दुनियांवी ख्यालात अल्लाह में फना नहीं, इसलिए वह शिर्क है। रौजए-रसूले पाक और गुम्बदे खिजरां क्यों कायम है? क्योंकि इनकी कायमी में अल्लाह के आखरुज्जमां पैगम्बर की शाने-जिन्दगी है। जब इस्लामी जिन्दगी को अल्लाह तआला ने अपने महबूब की जिन्दगी तसलीम कर ली है। फिर दुनियां में वह कौन सा शख्स है, जो रसूले-पाक की कायम-दायम जिन्दगी को मुर्दा माने? इस्लाम जिन्दा है, क्योंकि उसके रसूल जिन्दा हैं। रसूले-पाक को जिसने मुर्दा तसलीम किया, उसमें जिन्दा इस्लाम दाखिल कैसे होगा? रसूले-खुदा नहीं तो हज, नमाज़ कैसे करोगे? वह नहीं हैं तो रोजा, जकात और तौहीद अमल का तुम्हारा तरीका मकबूले-खुदावन्दी क्या हो सकती है? मियां, अगर इस्लामी मुसलमान हो तो नबी अल्लाह के वजूद से। तुम्हें मालूम क्यों नहीं है कि कामिल इस्लाम तो नक्श-ए-महबूबे खुदा है। तुम्हें रसूले-पाक के हक्की जिन्दगी पर शक क्यों है? तुमने देखा नहीं की नबीए पाक जब खुदाई पर्दे में गए, तो हजरत अबू बकर सिद्दीके आजम ने हुजूरे पाक के पेशानीए मुबारक पर बोसा दिया। ईश्के-रसूल में डूबा यह लबे-सिद्दीक का बोसा, रसूले-पाक की विदाई का है या जुदाई का? मियां, वह सिद्दीक हैं। नबीअल्लाह के सिद्दीके अकबर। अल्लाह के नबी ने उन्हें सिद्दीके अकबर की सनद दी है। उनके बोसे में कुछ तो बात है? यह बोसा उम्मते रसूलल्लाह को बता रही है कि ऐ मुसलमानों, रसूले पाक से ईश्क, ईश्के सिद्दीक की तरह रखना! जब-जब पैगम्बरे खुदा याद आएं, उनके रौजए अकदस को तुम भी बोसा देते रहना। क्योंकि तेरे ईमान की खैर ईश्के-रसूल में है। तेरे हज व नमाज़ की कुबूलियत रजाए-मुस्तफा में है। रसूले पाक तो पाकजात में वस्ल कर गए हैं। इसी का नाम विसाले-महबूब है। यही तो नबूवत की विसाले-जिन्दगी है। यही महबूबे खुदा की विसाले खुदा है। इसी का नाम महबूब का मोहिब में वस्ल

करना है। मियां, अल्लाह में वासिल को क्या मौत आती है? रब्ब–कदीर जब जिन्दा है फिर रब्बे पाक में वासिल क्या मुर्दा हो जाएगा? गुम्बदे खिजरां की हरियाली यह शहादत दे रही है कि अल्लाह के महबूब हमेशा के लिए हरे–भरे हैं। मजारे–अकदस की सुनहरी जालियां इन्तजार करती हैं कि लबे सिद्दीक अकबर की सुन्नत, उम्मते रसूल कितना निभाती हैं? ईश्के रसूल में सिद्दीके अकबर अगर कामिल नहीं होते, तो उन्हें महबूबे–खुदा अपने रौजए–अकदस में कैसे रखते? बोसए–सिद्दीके अकबर ने ईश्के रसूल की तड़प को जाहिर कर दी है। आज वही पाकीजा ईश्के रसूल, नबी अल्लाह और वली अल्लाह की ताजीमे–मुहब्बत बन गई। अब बताओ हमें की बोसए–सिद्दीके अकबर की पैरवी शिर्क है या बिदअत? मियां, ईश्के रसूल के बिना ईश्के खुदा की मन्जिल नहीं मिलती।'' हजरत सैय्यद फैजल शाह बाबा की इस तकरीर पर अवाम ने नार–ए–तकबीर अल्लाहो अकबर बुलन्द किया। अवाम में से एक शख्स ने खड़े होकर अल्लामा इकबाल का यह शेएर ऊंची आवाज में कई बार पढ़ा।

तेरे बोसे को देते हैं बोसे।

वरना पत्थर में क्या रखा है मुसलमां के लिए।।

जब महफिल खामोश हुई तो हजरत सैय्यद फैजल शाह हुजूर ने कलामे–हक शुरु किया– ''काबातुल्लाह के हिज़रे अस्वद को हम इसलिए बोसा देते हैं, क्योंकि हमारे रसूलल्लाह ने बोसा दिया। हम मानते हैं कि यह सुन्नते रसूले पाक है। अगर रौजाए रसूले पाक को हम नज़रों या होठों से बोसा दें, फिर क्यों नहीं मानते की यह सैय्यदना हजरत सिद्दीके अकबर की सुन्नत है। वह इस्लाम के सिद्दीके अकबर हैं, उनके कौल–फेएल में क्या शिर्क और बिदअत होगी? प्यारे रसूलल्लाह की शरीयत के मजहर सैय्यदना सिद्दीके अकबर हैं या इस्लामी शक्ल में छुपे ओलमाए–सू? इस्लाम किसी भी ओलमा या मुसलमान के जाती अकीदे का तो मजहब नहीं है। ये रब्बे पाक का वह पाकीजा दीन है, जो अकीदा, फिरका और फित्ने से पाक है। इसीलिए इस्लाम के पैगम्बरे–खुदा पाक हैं। पाक अल्लाह का पाक दीन इसीलिए पाक नबी की मार्फत से ही दुनियां को बख्शी गई।

पाक नबी का रौजा भी पाक है। यह मजारे अकदस कायम इसलिए है कि ताकयामत जो भी पाक इस्लाम में दाखिल हो, वह नबीए–पाक के गुम्बदे खिजरां को देख–देख कर यह शहादत देता रहे कि 'अश्शहदो अन्नअ मुहम्मदुर्रसूलल्लाह।' वह नबीअल्लाह को देख न सकें तो रौजाए नबी अल्लाह को ही देखकर दरुदो सलाम का नजराना पेश कर सके। अपने रसूले पाक को कोई आज का मुसलमान न देखे, फिर कैसे कहेगा कि वह इस्लामी मुसलमान है? हमें बताओ बिना रसूले पाक को देखे कोई मुसलमान उनका उम्मती कैसे कहलाएगा? क्या मालूम है कि बारम्बार गुम्बदे खिजरां को देखने वाला मुसलमान, यह सुबूत देता है कि वह उम्मते मुहम्मदिया का एक आशिके रसूल उम्मती है। दौरे–इस्लाम में गुम्बदे खिजरां नबीअल्लाह के कायम–दायम रहने की पाक निशानी है। उनके मजारे

अकदस का एजाज तो यह है कि वह मदीना में हैं, मगर उनकी सूरते पाक हर सच्चे मोमिनों के सीने में महफूज है। यही एजाजे-रसूलल्लाह है। यही तो ईश्क है, जो ईश्के नबीअल्लाह है। गुम्बदे खिजरां को देखना ईश्के-रसूलल्लाह है। और रसूलल्लाह को देखना मार्फते-नबीअल्लाह है। गुम्बदे खिजरां तो ईमान की निस्बत है। और यही निस्बत जब दीदारे मुस्तफा करा देती है, तो एक मुसलमान, मोमिन बन जाता है।

बताओ गुम्बदे खिजरां में अल्लाह तआला का एजाज नबी अल्लाह की सूरत में पोशीदा है या नहीं? अब बताओ शिर्क तुम में है या गुम्बदे खिजरां में? बुत तुम में दाखिल हैं या नबी अल्लाह के पाक मजारे अकदस पर? अपने अन्दरुनी बुतों यानी 'एलाहअ' को 'ला' के तलवार से फना क्यों नहीं करते? अल्लाह तआला का यह कल्मा तुम्हें पैगाम दे रहा है कि अपने नफ्स के शैतानों को जब तक 'ला' (नहीं) नहीं करोगे, ईल्लल्लाह यानी माबूदे हक अल्लाह को नहीं समझ सकते। जिसने 'ईल्लल्लाह' को जाना, उसने मुहम्मदुर्रसूलल्लाह को पहचाना। कल्मा तैय्यब 'लाईलाह ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' हमें यही पैगामे हक् देती है। अगर हमने 'इलाहअ' को अपने नफ्स के साथ रखा, फिर तो ये कल्मा सही ढ़ंग से हमने नहीं पढ़ी। अगर अपने 'एलाहअ' को 'ला' हमने नहीं किया फिर तो वही 'ला' चुपके-चुपके ईल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलल्लाह को 'ला' कर देता है। हम समझते हैं कि कल्मा पढ़ रहे हैं। मगर 'एलाहअ' हाजिर रहता है और हमारा कल्ब पढ़ता है कि 'नहीं अल्लाह तआला माबूद। नहीं है मुहम्मद सल्ले अला अल्लाह के रसूल।' मियां इसीलिए 'ला' से कल्मा शुरु है। ताकि हर बन्दा 'ला इलाहअ' के दरवाजे को पहले पार करे, फिर मिलेगा ईल्लल्लाह व मुहम्मद रसूलल्लाह। मियां, गुम्बदे खिजरां को गिराने की नीयत और रसूले पाक का नमाज में ख्याल आने पर एतराज जिन्हें है, वह जरुर अपने 'एलाहअ' के साथ रहकर 'ला ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' ही पढ़ते होंगे? अगर वे 'लाईलाहअ' किसी कामिल रहनुमा से पढ़ लेते तो उनमें ऐसे ख्यालात ख्वाब में भी न आते। वह ऐसे गुस्ताखाना ख्यालातों से जीते जी तौबा भी नहीं कर सकेंगे, क्योंकि 'एलाहअ' उनके साथ है। ऐसे ख्यालात जो अल्लाह व रसूल की मुहब्बत से हमें दूर करे, वही ख्यालात तो 'इलाहअ' है। यह 'इलाहअ' सिर्फ जुबान तक नहीं रहता। इस 'इलाहअ' का घर इन्सानों के दिलों में हैं। दिल से 'इलाहअ' निकालने की कुव्वत और अमली तालीम जिसमें हो, वही तो है ओलमाए-हक्। वही तो रहनुमा हैं तबलीगे हक् के। हक् जिस कल्ब में दाखिल हो, वही तो हक् को बताएगा? कल्ब में 'एलाहअ' है, तो यही है नाहक एलाह वाले। भला ऐसे ख्यालात के लोग तबलीगे-हक् कैसे देंगे? उनकी तब्लीग तो तबलीगे-नाहक होगी। नाहक क्या है? मियां, नाहक् का दूसरा नाम ही तो 'इलाहअ' है। पाक परवरदिगार ने सबसे पहले अपने बन्दों से इसीलिए 'ला ईलाहअ' करने को कहा है। नमाज, हज, रोजा, तौहीद, जकात में लगने से पहले 'लाईलाहअ' कर लो। वरना ईल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलल्लाह तक रसाई मुमकिन नहीं।''

[23-A] बैय्यत की हकीकत

फकीर सैय्यद फैजल शाह ने 'बैय्यत' के मौजूं पर फरमाया- "हुजूरे पाक सल्ले अला व सल्लम ने हुक्मे-इलाही पर बैय्यत क्यों ली? इसीलिए की बन्दा 'लाईलाहअ' की तालीम लेकर ईल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलल्लाह को पा जाए। रसूले खुदा से बैय्यत सहाबा एकराम ने ली। इसी बैय्यत ने सैय्यदना सिद्दीके अकबर को अपना मालोजर कुर्बान करने पर आमादा किया। इसी बैय्यत ने हजरते उमर फारुके आजम को ऐसी नूरे खुदा एनायत की कि वे विसाले रसूलल्लाह में बकाए-रसूलल्लाह देखकर बोल उठे- "खबरदार, अगर किसी ने कहा कि रसूलल्लाह को मौत आ गई, तो मैं उसकी गर्दन उड़ा दूंगा।" बैय्यत अल्लाह तआला की रजा पाने का जरिया है। रजाए-इलाही बैय्यते-रसूलल्लाह में पोशीदा है। बैय्यते रसूलल्लाह से जो सरफराज होना चाहे, वह बैय्यते कामिल पीर में दाखिल हो। यह बैय्यत ही अल्लाह तआला के दीदार का सीधा रास्ता है। यही वो सीधा रास्ता है जो हर नमाज में सूरह फातेहा पढ़कर हर मुसलमान मांगते रहते हैं। अफसोस है कि हम सीधा रास्ता खुदा से तलब तो करते हैं, मगर सीधा रास्ता बताने वाले कामिल रहनुमा से दूर रहते हैं?

तबलीगे हक़ का हक्की दावेदार कामिल पीर के सिवा दूसरा कोई नहीं। सिर्फ हक़ को बताने का नाम तबलीगे-हक़ नहीं है। तबलीगे हक वो, जो हक़ से मिला दे। अब देखना यह है कि जिस तबलीग के हम मुरीद हैं या पैरवी में हैं, उस तबलीग ने दीदारे-इलाही और दीदारे मुस्तफा कितने बन्दों को करायी हैं? अगर उसमें दीदारे-हक़ और दीदारे-रसूल कराने की कुव्वत दरअसल नहीं है। फिर कल्मा शहादत हम कैसे पढ़ सकेंगे? शहादत तो आंखों देखी होती है। शहादत में यकीन, गुमान और अकीदे का दावा नहीं चलता। कल्मा शहादत इस्लाम में दाखिल होने के लिए एक अहम इम्तहान है। इसे हम इस्लाम में प्रवेश लेने के लिए प्री-टेस्ट भी कह सकते है। इस की तैयारी के लिए हमें पहले कामिल पीर की कोचिंग क्लासेज में पढ़ाई करनी होगी। ये पाक रब की तरफ से मुकर्रर किए गए इस्लामी मोअल्लिम हैं। वही तो ट्रेनिंग देते हैं कि 'एलाहअ' को 'ला' करके किस तरह ईल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलल्लाह तक हम पहुंचें। बिना इस्लामी प्री-टेस्ट में कामयाब हुए, हम इस्लाम से बाहर है, फिर तबलीगे-हक़ की जगह तबलीगे गैर-इस्लाम ही तो करेंगे? किताबी-ईल्म तो केवल 'थीयरी' है, प्रैक्टिकल का नाम इस्लाम है। मगर हम बिना सच्चे गाईड या रहनुमा के थीयरी-प्रैक्टिकल दोनों शुरु कर देते हैं। खुद हम तबलीगे-इस्लाम भी नेक अमल समझ कर करने लगते हैं। इस गड़बड़-इस्लाम के तबलीग का नतीजा क्या निकलता है? यही की रसूलल्लाह और वली अल्लाह को 'ला' करो। अपने मकसद के लिए 'ईल्लल्लाह' को भी 'ला' कर दो। ऐसे अकायद की पैरवी में लगे लोग ही आगे बढ़कर रोज एक नया गुल खिलाते हैं। जब उन्हें जेहादे नफ्स करना मुश्किल लगता है, तो इसे वह 'ला' यानी नहीं कर देते। वह कत्ले-इन्सानी करके बताते रहते हैं कि हमीं तो हैं इस्लामी जेहाद के

जांबाज सिपाही। यही है तबलीगे-नाहक़' का अन्जाम। तबलीगे-हक़ ने तो वली अल्लाह बनाया है। तबलीगे-नाहक़ ने हमारे शैतानों को ताकतवर बनाकर दरिन्दा बना डाला। तबलीगे हक़ के सच्चे अमीरे जमात तो कामिल पीर हैं और तबलीगे-नाहक़ के अमीरे जमात इब्लीसी मर्दूद हैं। हमें कैसी तबलीग चाहिए, ये फैसला अब हमें ही करना है। तबलीगे नाहक़ के पेशवा की पहचान क्या है। वह सिर्फ शक्लो-सूरत के मुसलमान हैं। उनकी नमाज़ें 'एलाहअ' के साथ होती हैं। 'ला ईलाहअ' वह पढ़ते हैं, मगर इनके दिलों में छिपा 'एलाहअ' मुस्कराकर इनकी निगहबानी करता रहता है। यह 'इलाहअ' नफ्स है। यहीं तो शैतान है। जिसे दूर करके रहमान और रहीम के हबीब नबी मिलते हैं। अगर हम तबलीगे-हक़ में जाते नहीं, फिर हमारे दिल में बैठा शैतान या गैरुल्लाह हमें अक्लें एनायत करता है। सबसे बड़ा ईल्म वह हमें यह देता है कि अपनी खुदी को कायम रखो, यहीं हक़परस्ती है। नमाजें अगर बैल, गदहे और रोजी रोजगार के ख्याल में अदा हो रही हैं, तो यही सच्ची नमाज़ है। उनकी अक्ल उन्हें तसल्ली देती है कि भला इन्सान दुनियां में रहकर दुनियावीं ख्यालात से पाक कैसे होगा? इसलिए अल्लाह तआला की नमाज़ में सब जायज़ है। नाजायज है सिर्फ यह कि रसूलल्लाह न आने पायें? क्योंकि हमारी नमाज़ में उनसे क्या लेना-देना? अल्लाह तआला की इबादत में शरीक हमारी आले-औलाद, मालोजर, कारोबार, ग़म, फ़िक्र और ख्वाहिशों के ख्यालात रह सकते हैं, इसे शिर्क हम नहीं मानते। मियां, इसीलिए कहता हूं कि नाहक ओलमा की पैरवी छोड़ो। वह अपने नफ्सी शैतानों की परस्तिश में अल्लाह तआला की परस्तिश करते हैं। 'शिरकिया इबादत' का अमल इसी का नाम है। ऐसी इबादत में मुब्तला शख्स क्या मुशरिक नहीं है? अब ऐसा मुशरिक ही तो कहेगा कि नमाज में रसूले-पाक के ख्यालों से बचो, यह शिर्क है। गुम्बदे खिजरां को देखना गुनाह है, क्योंकि इससे रसूलल्लाह की याद आती हैं? मिलादुन्नबी मनाना छोड़ो, नबी अल्लाह याद आते हैं। अगर नबीए-पाक याद आते हैं, तब तो हर मुसलमान गुनाह में मुब्तला है। पहले इस्लाम छोड़ो, क्योंकि इसे पाने व लाने वाले नबी अल्लाह हैं? नमाजें बन्द करो, क्योंकि पच्चास वक्त से पांच वक्त उन्होंने करायी है? हज कैसे करोगे, इसे हज की अजमत दिलाने वाले तो रसूलल्लाह हैं? कुरआन मत पढ़ना, क्योंकि कलामे खुदा रसूले पाक से जुहूर में आयी? बताओ दरुदो सलाम तो सीधे रसूलल्लाह और आले-रसूलल्लाह के लिए रहमत-बरकत मांगने की बात करता है, इसे भी बन्द क्यों नहीं करते? मियां रसूलल्लाह के ख्याल को तो अल्लाह तआला ने कायम दायम रखा है। किसी भी इन्सान में यह कुव्वत कहां हैं कि उनके ख्यालों से दूर रहकर वह मुसलमान बना रह सके? यादे-मुस्तफा को गुनाह इब्लीसी अक्ल बताती है। इब्लीस यह कैसे पसन्द करेगा कि औलादे आदम नफ्सकुशी सीखें। वह कैसे तबलीगे हक़ के रहनुमाओं से हमें मिलने देगा? अगर हममें हक़परस्ती आ गई, फिर यही तो इब्लीस की शिकस्त है। इब्लीस को यह बखूबी ईल्म है कि पैगम्बरे आजम और

हजरत अली करमुल्लाह वजहू अल्लाह के कौन हैं? वह जानता है कि नबीए-पाक की हिजरत जिस रात हुई, अलीए पाक आपकी बिस्तर पर लेटे थे। वह यह भी जानता है कि नबी अल्लाह के वसी और वली हजरत अली हैं। उसे पता है कि ईल्म के शहर रसूले-पाक हैं, तो ईल्म के दरवाजा अलीए पाक हैं। उसे यह ईल्म भी है कि अलीए-पाक की मुहब्बत गुनाहों को इस तरह खा जाती है, जैसे सूखी लकड़ी को आग।

यही वजह है कि इब्लीस ने नफ्से-शैतानी को उभार कर यह एलान कराया कि जिनका नाम हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम है और हजरत अली करमुल्लाह वजहू है, वह किसी चीज़ के मालिक और मुख्तार नहीं। गौर करिए- शैतानी नफ्स में छिपकर इब्लीस ने किस तरह अपने अकायद को जाहिर किया। नबी अल्लाह क्या इस्लाम के मालिक और मुख्तार नहीं हैं? अल्लाह पाक उन्हें अपने दीन का मालिक व मुख्तार बनाए और इब्लीस कहे कि 'ला मुहम्मदुर्रसूलल्लाह'। हजरत अली की पैदाईश काबा में हो और अल्लाह उस मकाम को काबातुल्लाह करार दे। बताओ अल्लाह के घर में यह मुख्तारी अल्लाह ने बख्शी या रसूलल्लाह ने? हजरत अली की नमाज़ के लिए डूबा सूरज, फिर पलट के निकल पड़े, यह मालिक व मुख्तारी अल्लाह तआला ने उन्हें अता की या किसी मुनाफिक और मुशरिक ने? **मियां, रसूले पाक कहते हैं कि अलीए-पाक की मुहब्बत गुनाहों को इस तरह खा जाती है, जैसे सूखी लकड़ी को आग।** एक बात बताओ गुनाहों की सजा तो अल्लाह ताअला देगा। गुनाहों की माफी भी अल्लाह पाक की मर्जी पर है। फिर हजरत अली हुजूर से मुहब्बत रखने में हमारे गुनाह सूखी लकड़ी की मानिन्द कैसे जल जाते हैं? क्या अलीए पाक को मिनजानिब अल्लाह यह शर्फ हासिल है कि उनसे जो दिली मुहब्बत रखे, अल्लाह तआला उसकी गुनाहों को जला डालता है? ओलमाए-सू तुम पूछो न उस रहमान और रहीम से कि उसने उन्हें यह मुख्तारी क्यों कर अता की? यह मुख्तारी पाक रब ने किसी दीनी रहबर या आलिम व मुफ्ती को क्यों नहीं अता की? ईश्के-रसूले पाक में जो हजरत अली अपनी जान की कुर्बानी देने के लिए रसूलल्लाह के बिस्तर पर सोए, वह अली जब शेरे-खुदा हैं, फिर उनकी मुख्तारी पर शको-शुबहा किसी मुनाफिक को ही होगा?

अल्लाह के नबीए-पाक और खुदा के शेर को हक़तआला ने क्या-क्या अता किया है, यह ईल्म नाहक ओलमा को कैसे होगी? अल्लाह पाक ने अपने महबूब नबी और प्यारे अलीए पाक को मालिक और मुख्तार किन-किन चीजों का बनाया है, यह हकीकत तो ओलमाए-हक जानते हैं। मियां, तुमको अल्लाह तआला की न कुर्बत हासिल है और ना ही मार्फत, फिर तुम कैसे जान गए कि वे किसी चीज के मालिक व मुख्तार नहीं हैं? क्या कलामे खुदा करने की तुममें कुव्वत है? **मियां, अली वो हैं जिनसे लाखों वली पैदा हुए और कयामत तक पैदा होते रहेंगे। अली की**

मुहब्बत खुदाई इल्म का ऐसा दरवाजा है, जिसमें दाखिल हुए बगैर ईल्मे-हक़ दाखिल नहीं हो सकती। जो अलीए-पाक के ईल्मी दरवाजे से दूर है, वही ओलमाए सू भी है और ओलमाए-नाहक भी। क्योंकि हक़ अली के साथ है और अली हक़ के साथ है। अल्लाह तआला के खिरकए खेलाफत के मालिक हजरत अली। अल्लाह की वेलायत दिलाने के मुख्तार हजरत अली। नबीअल्लाह ने जिसे अपनी मिल्कियत का मुख्तार एलानिया बनाया हो, उनके खुदाद शान में शक करने वाला काफिर है या मुशरिक? यह अब अवाम बताए? मियां लाहौल पढ़ो, ऐसे तबलीगी अकीदे पर।"

हजरत सैय्यद फैजल शाह के इस खिताब ने महफिल को पुरलुत्फ बना डाला। अवाम पांच मिनट तक नार-ए-तकबीर अल्लाहो अकबर, नार-ए-रेसालत- या रसूलल्लाह और नार-ए-हैदरी या अली की सदाएं बुलन्द करती रहीं। एक नौजवान ने नातिया कलाम का नज़राना बारगाहे रेसालत में पेश किया। कामिल फकीर हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह उर्फ श्री झरना शाह बाबा के इस कलाम को एक नौजवान ने तरन्नुम से पेश किया-

मेरे नबी की शाने-नबूवत न पूछिए।
ईश्के-खुदा की बात है, रहमत न पूछिए।।

उनसे कलाम रब ने किया, बन गया क़लाम।
उनकी लबों की गुफ्तगू, कहलाता है इस्लाम।।
देखा नहीं तो शाने-हकीकत न पूछिए।
ईश्के खुदा की बात है, रहमत न पूछिए।।

देखा बशर के रंग में हमने खुदा का नूर।
नूरे-नबी से खुल्फा में अल्लाह का जुहूर।।
नज्दी, यजीदी कौम की हरकत न पूछिए।
मेरे नबी की शाने-नबूवत न पूछिए।। ईश्के खुदा की बात....

मेरे नबी का मर्तबा अल्लाह जानता।
इस्लाम हैं मेरे नबी, कुरआन मानता।।
मेराजे-हक़ की शाने-मुहब्बत न पूछिए।
ईश्के-खुदा की बात है, रहमत न पूछिए।। मेरे नबी की शाने.........

मेरे नबी की ज़ात के शाहिद हैं हर फकीर।
शम्सो-क़मर बताएंगे, अल्लाह के नज़ीर।।
'महमूद' शम्मे-नूर की उल्फत न पूछिए।

ईश्के–खुदा की बात है, रहमत न पूछिए।।
मेरे नबी की शाने नबूवत न पूछिए।।।

[भावार्थ :– फकीरे–बरहक, ईश्के–लाफानी, जनाब सैय्यद महमूद रजा अली शाह के इस अशआर में ईश्के–रब्बानी की खुश्बू हर ईमाने–कल्ब को मोअत्तर कर रहीं है। वे फरमाते हैं कि मेरे प्यारे महबूब हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेहीं व सल्लम की नबूवत की शान क्या है? ऐ बन्दगाने खुदा ये मत पूछो? ऐसे महबूब–नबी की रेसालत क्या है? ऐ लोगों तुम पूछकर क्या समझ पावोगे? पाक रब्बे करीम ने उन्हें क्या–क्या रहमतें अता की हैं, ये समझना इन्सानी अक्लो–गुमान से बाहर है। क्यों? शाह महमूद रजा कहते हैं कि मेरे नबीए–पाक की नबूवत, रेसालत, रहमत, एनायत, अजमत, शान इतनी आलीशान उस रब्बे कदीर ने बनायी है, जिसे लफ्जों में ब्यान करना मुमकिन नहीं। फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह फरमाते हैं कि रसूले–पाक की शाने–नबूवत तो ईश्के–खुदा है। यह ईश्के–खुदावन्दी की बात है, जो शाने–महबूब की हकीकत हर बन्दा नहीं समझ सकता। नबीए–अकरम को जो–जो रहमतें पाक परवरदिगार ने एनायत की है, वह ईश्के–खुदा की रहमत है। ईश्के–खुदा में ईश्के रसूल का मकाम आम बशर क्या समझेगा। इसलिए ऐ लोगों, महबूब नबीअल्लाह में तुम्हें जो कुछ नजर आ रहा है, वह ईश्के–खुदा की बात है। ईश्के–खुदा में दखल क्या किसी इन्सान के वश की बात है? इसलिए शाने–नबीअल्लाह का मुकाबला किसी बशर के बशरी–शान से मत करो। क्योंकि महबूब नबी की शान, खुदा के सिवा कोई बन्दा नहीं समझ सकता।

वह आगे कहते हैं कि शाने–नबीअल्लाह को तो देखो कि कलामे–रब ने जब रसूले–पाक के जुबाने–पाक से कलाम किया, तो कलामे–खुदा कुरआन बना। रसूले–पाक की गुलाब से भी नाजुक लबों ने जब–जब गुफ्तगू की वही हदीसे पाक बनी। उनके हर पाक कौल–फेएल का नाम ही तो इस्लाम है। ऐ लोगों दीने–हक जिसे हम देख रहे हैं, वह हकीकत में अल्लाह तआला ने दीने–नबी की शक्ल में हमें अता की है। तुम्हें क्या अब भी यह एहसास नहीं की नबीए–पाक की शाने–हकीकत क्या है? नबीए–पाक के दीदार के बिना, तुम उनके दीने–पाक में कैसे रहोगे, जब दीने–खुदा का दारोमदार उन पर है। सैय्यद महमूद रजा अली शाह फरमाते हैं कि हैरत है उस इन्सान पर, जो नबी अल्लाह की शाने–हकीकत का तालिब हो, मगर नबीअल्लाह को देखा ही न हो? अपनी हकीकत की नज़र से देखकर वह कहते हैं कि नबीए–पाक की लिबासे–बशरीयत में नूरे–खुदा जल्वागर है। उसी नूरे–हक ने नबी अल्लाह के चारो खलीफा (हजरत सैय्यदना अबुबकर सिद्दीके अकबर, हजरत उमर फारुके आजम, हजरत ऊषमान गनी और हजरत अली करमुल्लाह वजहू) को फ़नाफिल्लाह बना दिया। यही फनाए–इलाही, अल्लाह का जुहूर है। वे फरमाते हैं, अल्लाह के महबूब नबी को आम बशर या सिर्फ सैय्यदुल बशर समझना? उन्हें अपना रसूल कहके भी उनसे अपनी इबादत और तबलीग का

मुकाबला करना। उनकी अता शाने-खुदावन्दी में खुद को शरीक करना? उनकी मिसाल, अपने दीनदारी से देना? उनके ख्याल और रौजए-अकदस की तरह-तरह से तौहीन करना? यह सारी हरकतें तो नज्दी और यजीदी हरकतों से मेल खाती हैं। शाने-नबीअल्लाह के मुन्किर का दीन क्या इस्लामी दीन कोई तसलीम करेगा? दीने-हक़ तो दीने-मुहम्मदी की शक्ल में हम पाए। क्या कोई बन्दा यह दावा कर सकता है कि उसे दीने-इस्लाम, अल्लाह तआला के जुबान या हाथों से मिली है? इसलिए शाने-नबी को शाने-खुदा की अमानत तसलीम क्यों नहीं करते? उनको नबी अवाम ने नहीं, अल्लाह पाक ने कायम रखा है, वे ही इस्लाम के बानीए-हक़ हैं। उनका मर्तबा क्या अल्लाह के कुरआन से साबित नहीं होती? जिन्हें अल्लाह ने मेराज़े-हक़ के लिए खुद दावत दी है, क्या किसी बशर को ये दीदारे-ईश्क आज तक हासिल है? मेराज़े-हक़ की हकीकत पाक रब्बे करीम की शाने-मुहब्बत है। फिर क्यों नहीं समझते की रसूले-खुदा की हर-हर सीरत और सूरत, ईश्के-खुदा की दलील है। जो इसे तसलीम न करे, वह पाकजात की बारगाहे-हक़ में जलील है। सैय्यद महमूद रजा अली शाह फरमाते हैं कि हजरत रसूले अकरम की जाते पाक के शाहिद अल्लाह के बेशुमार फकीर हैं। जाते-नबीअल्लाह की शहादत डूबे सूरज ने जाहिर कर दी। क्या कोई बशर अल्लाह के सूरज को पलटाने की कुव्वत रखता है? आखिर जाते-नबीअल्लाह में यह कुव्वत अल्लाह तआला ने क्यों कायम फरमायीं? यहीं तो ईश्के-खुदा का राज है। अल्लाह का चांद, नबीअल्लाह के एक ईशारे पर दो टुकड़ों में कैसे बंटा? चांद है अल्लाह का और वह नबीअल्लाह के इशारे पर चले? नबीअल्लाह क्या अल्लाह हैं, जो चांद-सूरज उनके इशारे पर चले? नबी अल्लाह क्या अल्लाह हैं, जो चांद-सूरज उनके इरादे के मोवाफिक (अनुसार) कानूने-कुदरत को तोड़ दें? अल्लाह के ये फरमाबरदार चांद, सूरज यह शहादत की नजीर पेश कर दिए कि नबी लिबासे बशरी में हों या लिबासे-हक्की में, वह महबूबे-इलाही हैं। उन्हें यह एख्तियार पाक रब ने अता की है कि अल्लाह की कुदरत को वह जैसे चाहें इस्तमाल करें। हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह अपने अश्आर के आखिर में यह राज़ अयां (प्रकट) करते हैं कि मेरे नबीए-पाक तो पाक रब के नूर की शमां हैं, उनसे रब्बे-पाक किस दर्जा उल्फत, मुहब्बत करता है, यह हकीकत रब्बे-कदीर के सिवा कोई नहीं जानता।]

24 - नबूवत और वेलायत

तबलीगे-हक़ कान्फ्रेन्स के सद्र हजरत सूफी दीदार शाह चिश्ती ने फरमाया- "सामयीन-एकराम इस तबलीगे-हक़ की महफिल में फोकराए हक़ की तशरीफ आवरी ने आपको दौलते-खुदा से मालामाल कर दिया। आईए अब आपके सामने फकीरे-लासानी, राजदारे रब्बानी और शम्माएं-मार्फते-खुदा हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह तशरीफ ला रहे हैं। उनकी ताजीम में नार-ए-हक़ बुलन्द करें।"

महफिल में हजारों लोगों ने एक साथ– "अल्लाहो अकबर" का नारा बुलन्द किया। सैय्यद महमूद रजा अली शाह साहब ने मजलिस पर एक गहरी नजर डाली। फिर बोले– "बारगाहे रसूले पाक और बारगाहे आले रसूले पाक में आईए पहले दरुदो सलाम का नज़राना–ए–अकीदत पेश करें।"

सभी ने झूम–झूम कर सैय्यद साहब के साथ दरुदे पाक पढ़ी।

उन्होंने इस तरह खिताब शुरु की– "हमने दरुदे पाक पढ़ी या दरुदे पाक को पेश की। हजरात गौर से बताएं कि दरुदे पाक बारगाहे–रसूलल्लाह में आप पढ़ते हैं या पेश करते हैं? आपको फरमाने खुदावन्दी याद है न। मेरे पाक रहमान ने फरमाया– "ऐ लोगों मैं और मेरे फरिश्ते अपने महबूब रसूले पाक पर दरुदो सलाम भेजते हैं, तुम भी भेजो।"

गौर करो, वह पाक रब्बे करीम दरुदे पाक को अपने महबूबे पाक तक भेजता है। अल्लाह पाक दरुदो–सलाम भेजे और हम सभी को हुक्म करे कि तुम भी भेजो। फिर बताओ तुम दरुदे पाक पढ़ते हो या भेजते हो? अल्लाह तआला और उसके फरिश्ते मोसलसल दरुदे पाक भेज रहे हैं, फिर तुम गिनती कर कर के दरुदे पाक क्यों पढ़ते हो? पढ़ते हो तो भेजते हो या नहीं? बताओ सरकारे मदीना सल्ले अला व सल्लम तो अरब के शहर मदीना में हैं। तुम हिन्दुस्तान, अफ्रीका, अमरीका, आस्ट्रेलिया, चीन, जापान वगैरह मुल्कों में रहकर दरुदे पाक कैसे भेजोगे? किसी उस्ताद ने दरुदे पाक भेजने का तरीका क्या तुम्हें बतायी है? पढ़ने का सलीका तो अपने उस्ताद से सीख लिया, मगर भेजने का तरीका तुम्हें ओलमाए–हक़ बताएंगे। ओलमाए–हक़ वही तो हैं, जिन्हें तुम कामिल शैख या मशाएखे–हक़ कहते हो। इस्लामी हदीस, कुरआन, नमाज, रोजा, हज, जकात, तौहीद, फेका वगैरह की सारी तालीमें ले लो। मगर इस तालीम की अमली अदायगी के लिए तुम्हें सबसे पहले चाहिए एक कामिल पीरो–मुर्शिद। आईए– कामिल पीरों से पूछें कि अल्लाह तआला के हुक्म के मुताबिक दरुदो सलाम कैसे भेजें? हमें कामिल ओलमाए–हक़ बताते हैं कि दरुदे पाक जाहिर बातिन से पाक होकर पेश करनी चाहिए। जब भी दरुदे पाक पढ़ें तो दिलो–दिमाग में गुम्बदे खिजरां का ख्याल कायम रखें। जुबान कहेगी– 'अस्सलातो अस्सलामन अलैका या रसूलल्लाह।' दिल पुकारे– 'अस्सलातो अस्सलामन अलैका या हबीबल्लाह' और रुह अपनी जुबान से कहे– 'अस्सलातो अस्सलामन अलैका या नबीअल्लाह।' हम खड़े होकर तसव्वुरे गुम्बदे खिजरां करते हुए, जब दरुदे पाक पेश करते हैं, तो उम्मती कहीं भी हो, उस वक्त वह सरकारे मदीना सल्ले अला व सल्लम की बारगाहे–अकदस में बबातिन हाजिर है। यही है सलाम भेजो। हम बैठ कर भी दरुदो सलाम पेश करें अगर दिल और जेहन रसूलल्लाह के मजारे–अकदस के तसव्वुर में है, तो आपने सलाम भेजा ही नहीं, पेश भी किया।

कामिल पीर कहते हैं कि– "बाखुदा दिवाना बाशद, बा मुहम्मद होशियार।" यानी– पाकजात के जिक्रे पाक में दिवानगी चल सकती है, मगर जब नामे मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम आए

तो बाअदब होकर होशियार रहना। ताजीमे-नबीअल्लाह बाअदब हर उम्मती पर लाजिम है। तुमने कलामुल्लाह में नहीं देखा, खालिके कायनात ने अपने महबूब नबीए-पाक को कहीं यासीन कहा, कहीं ताहा। कहीं या मुजम्मिल कह के कलाम फरमा रहा है। अल्ला-अल्ला, ऐ रब्बे कदीर आप अपने हर कलाम में अपने महबूबे पाक का नाम क्यों नहीं लेते? बताईए इसमें राज़ क्या है? आपके बन्दे तो आपके महबूबे-पाक का नाम इस तरह लेते हैं, जैसे वह आपके रसूल ही न हों? ऐ पाकजात आपके वे बन्दे कैसे हैं, जिन्हें दुनियांवी हाकिमों की ताजीम तो आती है, मगर वह अपने आखरुज्जमां पैगम्बर की शाने-पाक में शदीद और सरीह गुस्ताखियां करते रहते हैं? आखिर वे बेअदब और गुमराह कैसे हो गए?

आईए- इस गुमराही और बेअदबी का जायजा लें। आखिर उम्मते रसूलल्लाह में फित्ने की तबलीग आयी कहां से? खूब गौर से देखें। नबीए-पाक का ईल्मे-हक़ किन्हें हासिल हुआ? आप कहेंगे उनके चार यार को। आप कहेंगे अहले-सुफ्फा हजरात की जमात को। फिर वह ईल्म किन्हें मिला? अहले बैत एकराम को और उनसे पाए ताबईन एकराम। ताबईन एकराम से वही ईल्मे-हक़ तब्बे-ताबईन हजरात ने हासिल की। वली-औलिया की जमात इसी सच्चे इस्लाम के मजहर हैं। असहाबे-सुफ्फा मसजिदे नबूवी में इबादते-इलाही में मसरुफ हैं। हुजूर नबीए पाक को रब्बे करीम ने इन अल्फाजों में उनकी तरफ खास तवज्जा देने का हुक्म दिया- "जो लोग दिन-रात अपने रब की इबादत करते हैं और उसकी रजा चाहते हैं, आप उन पर तवज्जए-खास मबजूल फरमाएं।"

हुजूर नबी-ए-पाक ने असहाबे-सुफ्फा हजरात से यूं कलाम किया- "ऐ असहाबे-सुफ्फा तुम को और मेरी उम्मत के हर उस शख्स को जो तुम्हारी सिफत पे खुशदिली से कायम हों, बशारत दी गई है कि तुम जन्नत में मेरे रफ्का रहोगे।"

अल्लाहो-अकबर ! असहाबे-सुफ्फा को इबादत का वह कैसा ईल्म रसूले-पाक ने एनायत की, जिससे अल्लाह तआला राजी हो गया। तभी तो उसने उनका ख्याल रखने का हुक्म रसूले-पाक को फरमायी। सारे अहले-सुफ्फा हजरात रसूले खुदा से बैय्यत थे। हज़रत उमर फारुके आज़म के भाई हजरत जैद बिन खत्ताब इनमें शामिल हैं। हजरत बेलाल बिन रबाह, हजरत अबु अब्दुल्लाह सलमान फारसी, हजरत अबु हुरैरा, हजरत मआज़ बिन हारिस, हजरत काब बिन उमर, हजरत अब्दुल्लाह बिन उमर, हजरत सहीब बिन सनान वगैरह तमामी असहाबे सुफ्फा हजरात हैं। ये वही असहाबे-पैयम्बर हैं, जिनके ईल्म और पैरवी ने सूफिया एकराम को हक्की जिन्दगी एनायत की। ताबईन एकराम में हजरत अवैस करनी, हजरत ख्वाजा हसन बसरी आदि का नाम आता है। हजरत अवैस करनी रजि० अ० का कौल है- "वहदत में सलामती है।" हजरत ख्वाजा हसन बसरी फरमाते हैं कि "बदों की सोहबत, नेकों से बदगुमानी पैदा करती है।" तब्बे-ताबईन में हजरत हबीब अज्मी, हजरत मालिक बिन दीनार,

हजरत हबीब बिन असलम राई, हजरत अबु हाजिम मदनी, इमामे आजम अबु हनीफा वगैरह हैं। इनमें गौर करें की सभी ने बैय्यत ली और बैय्यत के बाद ईल्मे-हक़ पे बाअमल हो गए। क्या कामिल पीर के बिना ईल्मे हक़ पाना और इस्लामी मोमिन बनना मुमकिन है?

[24-A] कामिल पीर : वलीअल्लाह

कामिल पीर क्या है? जिसने अपने 'एलाहअ' को 'ला' करके ईल्लल्लाह और रसूलल्लाह को पा चुका हो। जो कल्मा-शहादत कभी भी पढ़े तो देखकर कहे- अश्शहदोअन्नअ लाईलाह ईल्लल्लाह, अश्शहदोअन्नअ मुहम्मदुर्रसूलल्लाह। नाकिस पीरों में कल्मा तैय्यब और कल्मा शहादत की सही बूबास नहीं होती। तमाम लोग सिर्फ बैय्यत लेते हैं, तालीमे-हक़ पर कायम नहीं रहते। ऐसी बैय्यत भी किस काम की। गुमराही और नाकिस ईल्म का फित्ना आज दुनियां में इसी लाईल्मी से पैदा हुई और होती रहती हैं। हमने कुरआन पढ़ ली, नमाजें जान ली, मगर कुरआन के मालिक और बन्दगी के रब्बे-कायनात को जानने-पहचानने की कोशिश नहीं की? हमने हदीसे पाक पढ़ ली, शरीयत और सुन्नते-रसूल को जान लिए, लेकिन हम जिनके उम्मती हैं, उनसे मिलने की चाहत दिल में पैदा नहीं की? आखिर क्यों हम अल्लाह तआला और रसूलल्लाह से मिलना नहीं चाहते? कल्मा 'लाईलाह ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' पर क्या हमारा ईमान है? आप कहते हैं कि जी हां, फिर तो मैं पूछूंगा कि मजलिस में वह कौन मोमिन है, जिसे दीदारें-इलाही और दीदारे-नबीअल्लाह हासिल है? ईमान, यकीन और अकीदे का नाम नहीं है। **मोमिन बनने के लिए दीदारे-मुस्तफा और दीदारे-इलाही दोनों लाजिम है। कामिल पीर में यह दीदार की सिफत नहीं, तो वह नाकिस पीर है। दीदार का होना मोमिन की पहली सिफत है। जिससे दीदार हो, उससे गुफ्तगू का होना दूसरी सिफत है। जब चाहे दीदार हो और गुफ्तगू भी होती रहे, यह ईमान कामिल की सिफत है। इन सिफ़ातों में जो अकमल है वही मोमिन है। अगर सच्चा मोमिन नहीं, तो कामिल पीर बनने की कुव्वत उसमें नहीं।** बाईमान होना कामिल पीर की पहली शर्त है। दीदारे-मुस्तफा और दीदारे-इलाही का होना, बाईमान की शनाख्त है। जिसे दीदार की दौलत हासिल नहीं, वह बेईमान है। अब पहचान लो अपने रहबरे-इस्लाम को। अगर बेईमान है, तो रसूलल्लाह और आले-रसूलल्लाह की शान में गुस्ताखियां जरुर करेगा। नबीअल्लाह की मजारे-पाक से उसके दिल में रन्जिश होगी। मिलादुन्नबी में उसका शिर्क और बिदअत आईने की तरह झलकेगा। वलीअल्लाह की मजार और उर्स-फातेहा में उसके शिर्क-बिदअत उसे नफरत सिखाएंगे। क्योंकि वह बाईमान नहीं, वह है बेईमान। ऐसे बेईमानों को क्या आप इस्लाम में देखना पसन्द करेंगे?"

मजलिस में एक शोर उठा- 'जी नहीं।'

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने अवाम से पूछा- "क्यों नहीं? मैं खूब समझ रहा हूं कि दुनियां का कोई मुसलमान अपने नबीए-पाक की शान में अहानत बर्दाश्त नहीं करेगा। हर मुसलमानों के नबीअल्लाह हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम हैं। हम उनके उम्मती हैं। उम्मते-मुसलमां का कोई फर्द ऐसे अकीदे के दीन में कैसे शामिल होगा, जिसमें नबीए-पाक, आले-रसूले पाक और वली-औलिया की शान में बातिल शिर्क-बिदअत की आड़ लेकर तौहीन की जाए? अब आप लोग बताएं कि नमाज़ पच्चास वक्त की पांच वक्त में तब्दील ऐसे बदअकीदे वाले इस्लामी ओलमा ने करायी है या रसूलल्लाह ने? इनसे पूछिए की जिस नमाज़ की पाबन्दी में ये लगे हुए हैं, वह इबादते-पाक इनके नमाज पढ़ने से कायम है या रसूले खुदा से कायम है? फिर- रसूले-पाक के कायम रहने के बारे में ऐसे लोग क्यों नाक-भौं चढ़ाते हैं? क्या वे नबी को मुर्दा साबित करके, खुद नबूवत के दावेदार बनना चाहते हैं? अगर उनकी ऐसी मंशा है तो वह नबीए-पाक की सुन्नत को क्यों नहीं छोड़ देते? वे कुरआन, नमाज़, हज, जकात, रोजा, तौहीद, हदीस सब कुछ तर्क क्यों नहीं करते? वह एलान कर दें कि इस्लाम मेरा दीन नहीं, मेरा दीन है- तबलीगे-नाहक़? वाकेयाते कर्बला शाहिद है कि तबलीगे-हक़ और तबलीगे-नाहक़ के दो अफराद दुनियां में मौजूद थे। शहजादए रसूल हजरत इमाम हुसैन और उनके 72 अफराद तबलीगे-हक़ पर कायम थे। यजीद और उसकी शैतानी फौज तबलीगे-नाहक़ की पैरवी करते थे। जिसने तबलीगे-हक़ को कुबूल किया, वह उम्मते-मुहम्मदिया का फर्द बन गया। जिसने यजीदी तबलीग की पैरवी की वह इब्लीस का साथी कहलाया। बताओ तुम किस तबलीग में रहोगे? इस्लाम तो हजरत इमाम हुसैन और 72 शहीदाने-कर्बला के साथ है। जरा गौर तो करो हजरत नबीए-पाक ने अपने अहले बैत और शहजादए-पाक के मोताल्लिक क्या-क्या नहीं फरमाया है। हुजूर कहते हैं कि- "हुसैन मुझसे हैं और मैं हुसैन से हूं।" वे फरमाते हैं- 'मेरे घराने वाले आमान हैं इस उम्मत के लिए।" उनका कौल है- "कुरआन पर बाअमल रहना और अहले बैत एकराम से मुहब्बत रखना।"

-मगर हैरत तो यह है कि नाहक-तबलीग वाले सुन्नते रसूल तो मानते हे, लेकिन रसूलल्लाह हैं, इस सच्चाई को जानकर भी नज़रअन्दाज़ करने-कराने में लगे रहते है। ऐसे लोग जो अपने नबी की ही अहानत करें और गुम्बदे खिजरां को गिराने की ख्वाहिशें रखें। वे हजरत अली या हजरत इमाम हुसैन और अहले बैत एकराम की मुहब्बत क्या जानें? यजीद का मजहब भी यही था। वह रसूले-खुदा की शरीयत को मानता था, मगर रसूलल्लाह और आले-रसूल की इज्जत उसके दिल-दिमाग में नहीं थी। तो क्या मौजूदा तबलीग और दीन की खिदमत को यजीदी खिदमत और यजीदी अकायद की तबलीग कुबूल किया जाए? यह फैसला आलमे-इस्लाम के सच्चे अकीदतमन्दों के हवाले करता हूं। इनसे पूछो कि हजरत मुहम्मद सल्ले अला व आलेही व सल्लम के बाद इन्होंने अपना रसूल किन्हें

तसलीम किया है?" महफिल में नारए-तकबीर अल्लाहो अकबर ! नारए-रेसालत या रसूलल्लाह गूंज उठी। हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने कुछ पल ठहर कर मजलिस को खिताब करना शुरु किया- "अल्लाह तआला का फरमान है कि 'ऐ ईमानवालों, इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हो जाओ और शैतान के पीछे न चलो, वह तुम्हारा सरीह दुश्मन है।' हमें बताओ, क्या हम इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हैं? वह शैतान कौन है, जिसके पीछे न चलने का हुक्म पाक परवरदिगार हमें दे रहा है? वह सरीह दुश्मन शैबान कैसा है, जिससे हमें दूर रहना चाहिए? इस्लाम में पूरा-पूरा दाखिल होना क्या है? हममें इस्लाम मुकम्मल कब होगा? जब हम इस्लाम लाने वाले के नक्शे-कदम पर चलते हुए अल्लाह तबारक तआला को पा जाएं। अल्लाह तआला को इस्लाम में सबसे पहले पाया किसने? बोलो, खामोश क्यों हो? शबे-मेराज क्या है? पाक अल्लाह और उसके पाक महबूब की मुलाकात। रसूले अरबी ने लिबासे-बशरी में अल्लाह तआला को पाया। इसके पीछे राज क्या है? जरा मुहब्बत की नज़र से देखो। उस पाक रब ने सच्चे इस्लामी लोगों को यह इशारा कर दिया कि मेरे महबूब की मुहब्बत जिसमें रच-बस जाए, वह भी दीदारे-इलाही पा सकता है ! यानी इस्लाम में पूरा-पूरा दाखिल वह होगा, जिसे रसूले पाक की कुर्बत हासिल हो? क्योंकि रसूले-पाक की कुर्बत से ही अल्लाह पाक की कुर्बत हमें हासिल होगी? अल्लाह तआला और रसूले-पाक की कुर्बत हासिल करने का दूसरा नाम है इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल होना। अब देखो पूरे-पूरे इस्लाम में दाखिल कौन-कौन हैं? खुल्फाए राशेदीन, अहले सुफ्फा, अहले बैत, ताबईन और तब्बे ताईन। तब्बे-ताबईन की जमात का दूसरा नाम वली अल्लाह है।

बगदाद शरीफ में देखो शहजादए-रसूल सैय्यदना पीराने-पीर दस्तगीर को। लाहौर में देखो आले-रसूले पाक सैय्यदना दातागंज बक्श को। अजमेर में रसूलल्लाह के शहजादे और नायबे-रसूल फिल-हिन्द हजरत सैय्यद ख्वाजा मुईनुद्दीन हसन संजरी चिश्ती नज़र आ रहे हैं। दिल्ली में रोज हम देखते हैं कि शहजादए रसूल हजरत सैय्यद निजामुद्दीन औलिया से मिलने खिलकत का हुजूम जुटा रहता है। देवा (बाराबंकी) में हाजी सैय्यद वारिस अली शाह को देखो। पूछने पर कहते हैं- "मैं पंजतनी हूं।" नागपुर में जब सैय्यद ताजुद्दीन औलिया से पूछा गया तो बोले- "मैं हजरत इमाम असकरी का पोतरा हूं रे।" मैं हैरान हूं इन तमामी शहजादए रसूल की कायम-दायम जिन्दगी देखकर।

शहजादा-ए-रसूल जिन्दा हैं। वे मुर्दा दुनियां को राहत, सुकून पल-पल एनायत कर रहे हैं। बताओ इनकी जिन्दगी अल्लाह तआला से कायम है या नहीं? जो रब्बे कदीर अहले-बैत एकराम, खुल्फाए राशेदीन, अहले सुफ्फा, ताबईन, तब्बे-ताबईन को लाफानी हयात अता कर सकता है, वह जाते पाक अपने महबूब नबी को कायम-दायम जिन्दगी नहीं दे सकता? अरे ! इस्लाम में पूरे-पूरे जो भी दाखिल हो गए, अल्लाह तआला ने उन्हें दुनियांवी मौत से पाक कर दिया। अब जो भी मनमानी

इस्लाम में जी रहे हैं, वह अपनी खैर मनावें। इस्लाम, खुदा का दीने पाक है। खुदा के दीन में मनमानी करने या अपने अकीदे की तर्जुमानी करने का मतलब है, शैतान के पीछे चलना। पाक परवरदिगार हमें बता रहा है कि शैतान तुम्हारा सरीह दुश्मन है। मगर हम तो शैतान की रहबरी में पाक इस्लाम की पैरवी कर रहे हैं, फिर पूरा-पूरा इस्लाम हम में कैसे दाखिल होगा? अब हम किससे पूछें शैतान से हिफाजत का अमल? हमें कौन बताएगा इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल होने का तरीका? एक तरकीब जेहन में आ रही है। औलिया अल्लाह तो इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल हैं, वरना रजाए-इलाही में वह जीते कैसे? अजमेर या दिल्ली चलें। वहां शहजादए रसूल से पूछें कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल आप कैसे हुए? हमें आले-रसूले पाक से यह भी समझना है कि शैतान कहां है या कौन हैं? उन शैतानों से उम्मते-रसूलल्लाह अपना पीछा कैसे छुड़ाएं?

जब हमने अजमेर में पूछा तो ख्वाजा सैय्यद मुईनुद्दीन हसन चिश्ती बोले- "मुहब्बत में दूरी नहीं होती। अच्छी तरह जान लो जिसने अल्लाह तआला को पहचान लिया है, वह कोई आरजू, ख्वाहिश नहीं रखता। जिसने नहीं पहचाना, वह मेरी बात को नहीं समझ सकता.....।"

हमने जब सवाल किया कि हिन्दल वली और नायबे रसूल फिल हिन्द की सनद आपको बारगाहे रेसालत से क्योंकर मिली? आपने फरमाया- "हमने तो अपने कामिल पीर हजरत ऊषमान हारुनी के तालीम और हुक्म पर अमल किया। अल्लाह तआला और रसूले-पाक राजी हो गए, यह मैं जानता हूं।"

दिल्ली में हुजूर सैय्यद निजामुद्दीन औलिया ने पूछने पर बताया- "मेरे कामिल पीरो-मुर्शिद बाबा फरीदगंज शकर की एनायत है। कामिल पीर के बताए अमली इस्लाम में यह कुव्वत है कि वह पाकजात और पाक रसूलल्लाह से मिलवा दे और उन्हें राजी भी करा दे।"

वली-अल्लाह के रहबरे-हक कामिल पीर हैं। दुनियां में अब तक जितने वली-औलिया मौजूद हैं, उनके अमीरे-जमात कामिल पीर ही हैं। क्या आपके अमीरे जमात में यह कुव्वत है कि उनकी तालीम से वली-औलिया पैदा हो सकें? अगर नहीं, फिर ऐसे तालीम लेने-देने के कारोबार में क्यों उलझे हुए हैं? हुक्मे इलाही के मुताबिक हमें वह तबलीगे-हक चाहिए जो इस्लामी शक्लो-सूरत में ही तब्दील न करे, बल्कि हमें दीदारे-हक, दीदारे-मुस्तफा कराकर पूरी तरह इस्लाम में दाखिल करा दे?

यहां हजरत हाफिज, सूफी, कारी दीदार शाह चिश्ती मौजूद हैं। इनसे पूछो यह दीदार के बादशाह कैसे हो गए? आंखें बन्द किए चुपचाप किसको देखते रहते हैं? फरेबी शैतानों को इन्होंने किस ईल्म से शिकस्त दिया? फरमाने-इलाही से साफ जाहिर है कि शैतान को शिकस्त दिए बगैर रहमान से मिलना नामुमकिन है। जान लो पहले शैतान है कौन? हजरत ख्वाजा गरीब नवाज की प्यारी बोली में आरजू, ख्वाहिश, गम, फिक्र, रन्ज सभी से किनाराकशी करने वाला शख्स ही आरिफबिल्लाह (ईश-पहचानकर्ता) हो सकता है। मगर शर्त है कि उसकी नफ्सकुशी (इन्द्रिय निग्रह) का जायजा

कामिल पीर लें। सचमुच नफ्स मुर्दा हुआ या नहीं, ये जांच-परख कामिल पीर ही कर सकते है। नफ्स का ही दूसरा नाम शैतान है। वहदहू ला शरीक के फरमान पर गौर करें। ऐ ईमान वालों, शैतान के पीछे न चलो, वह तुम्हारा सरीह दुश्मन है। क्या कोई शैतान के पीछे चलता है? इस जमात में कोई ऐसा है, जो हमें बताए की वह शैतान के पीछे चलता है? आपने शैतान को देखा है कहीं? शैतान दरअसल हमारे नफ्स की ख्वाहिशें हैं। ख्वाहिशात, तकब्बुर, हिर्स, लालच, ग़म, फिक्र और दुनियांवी मालोजर की शदीद हाजतें, इस्लामी सूफिया एकराम की नज़र में शैतान हैं। उनका अमल है 'ला' की धारदार तलवार से इन नफ्सीयाती शैतानों को शिकस्त देना। इनकी तहकीक में 'एलाहअ' इन्हीं का नाम है। इसलिए 'ला' करना सूफिया एकराम का अमले-खास है। इन्हें बखूबी पता है कि दुनियांवी शय, जेहन और दिल में बैठ कर हक़ तआला की मार्फत से दूर रखते हैं। इसलिए खालिके-कायनात की निस्बत के लिए हमें अपने नफ्सीयाती 'एलाह' को 'ला' (नहीं) किए बगैर ईल्लल्लाह और मुहम्मदुर्रसूलल्लाह की हकीकत तक पहुंचना टेढ़ी खीर है।

हक़ तो दरअसल यही है। हुजूर सैय्यदना सिद्दीके अकबर ने जब अपना सब कुछ कदमे रसूलल्लाह पर कुर्बान किया, तो यह अमल इस्लाम में 'ला' एलाहअ की सच्ची पहचान बन गई। प्यारे रसूले पाक, सारे प्यारे सहाबा, अहले सुफ्फा एकराम, अहले बैत एकराम, ताबईन एकराम और तब्बे-ताबईन की जमात ने इसी तरीके पे 'लाईलाहअ' को अमल में दाखिल रखा। पढ़ने और अपने अमल में दाखिल करने में फर्क है। हम पढ़ते हैं, पढ़ने को ही अमल करना तसव्वुर कर लेते हैं, इसलिए हमारे अन्दर छिपे ख्वाहिशों का 'एलाहअ'- 'ला' नहीं हो पाता। पढ़ना सिर्फ ईल्म रखने की अलामत है। अमल करना, उस ईल्म को खुद में दाखिल करने की हकीकत का नाम है।

हम हर ईल्म को अमल में लाने की बात करते हैं। मगर खुद में यह गौर नहीं करते कि ईल्म ने अमली सूरत हममें कायम की या नहीं? इस्लाम हकीकत में हक्की अमल की तस्वीर है। जब पढ़ने से हम में अमली रंगत न निखरे, फिर हमें उस बाअमल ओलमाए-हक़ की शदीद जरुरत है, जो इस्लामी अमल के सांचे में हमें ढाल दे। सच्चे अमल की उसी जमात का नाम कामिल पीर है। जिन्होंने अपने इस्लामी अमल से दुनियां को यह पैगाम दिया की वह जाते-पाक कितना सखी, कितना साबिर और कितना ग़नी है? औलिया-अल्लाह के दर से फैजे आलम का सरचश्मा जो निरन्तर जारी है। उसके पीछे अल्लाह तआला की सखावत, रहमत, बरकत और एनायत के सिवा क्या है?

कामिल पीरों की अमली तालीम से अल्लाह का एक बन्दा जब 'एलाहअ' से पाक हो जाता है, तो बशरी सिफात उसमें से गायब हो जाते हैं। वह बज़ाहिर बशर तो हमें दिखता है, मगर बबातिन वह दुनियांवी हर ख्यालात से पाक होता है। पाक दिल, पाक जुबान, पाक नजर और पाक जेहन होने की वजह से वह पाकज़ात उनके सामने जल्वागर होता है। पाक की कुर्बत इन्हें इतना पाक बना देती है,

की हर पल इनकी सांसें उस पाक के जिक्र में मशगूल रहतीं। इनकी पाक निगाहें, पाक परवरदिगार की जियारत में कायम हो जातीं। यही वो कैफियत है, जो एक बशरी बन्दे को अल्लाह का वली बनाकर खिलकत को उनका खादिम बना देती है। यह अमली तालीम हमें नबीए पाक से हासिल हुई। इसी तालीम की बुनियाद ने कामिल पीर की जमात को कायम रखा, ताकि बन्दा अपने माबूदे हकीकी को पहचान सके। उम्मती अपने नबीअल्लाह को देख सकें। इस्लाम वास्तव में इल्मे-अमल है। यह ईल्मे-खुदावन्दी का मजहर है, जिसमें बशर के लिए पाक रब ने बेबहा नेएमतें (असीमित ईश उपहार) और बेशुमार इनामात (नगण्य ईश पुरस्कार) महफूज रखा है। रब्बे करीम (ईश्वर) इसी वजह से हमें शैतान के पीछे चलने से खबरदार कर रहे हैं। क्योंकि अपने अन्दरुनी ख्वाहिशात के रहते हम शैतान की हिमायत (अनुसरण) में हैं। ख्वाहिशात, तकब्बुर, हिर्स व हवा के शैतान, जब तालीमें-हक के अमल से गायब हो जाते हैं, तभी बन्दा पूरी तरह से पाक बनता है। पाक बन्दा जब हुआ, तब उसे जाते पाक (ईश्वर) की कुर्बत (सानिध्य) इनाम-एकराम से नवाजने लगती है। इस्लामी पाक बन्दे की हकीकत यही है। यही वो सच्ची राह है, जिसमें नबीए पाक की कुर्बत भी है और पाक रब्बे-कायनात की हकीकत का नूर भी।

फरमाने इलाही है कि अल्लाह तआला जमीन-आसमान का नूर है। नूरे-हक को पाने के लिए अगर कोई बन्दा कुर्बानिए-नफ्स पेश करे, तो देखो यह सौदा अभी कितना सस्ता है। नफ्से-खुदी (स्व-इन्द्रिय) को तर्क (त्याग) करके अगर रब्बुल आलमीन की निस्बत हमें मिलती है, फिर यह ईनाम कितना ऊंचा है। पाकजात अपने अदना बन्दे को अपना दोस्त बना ले, यह क्या छोटा ईनाम है? दोस्त बनाकर उसे अपनी वेलायत का लिबास पहना दे, ये क्या छोटी एनायत है? वली को अपनी दौलत से मालामाल कर दे, ये क्या फैजे-हक (ईश-कृपा) की बख्शिश नहीं है? वह अपनी वेलायत को ताकंयामत कायम-दायम रखे, यह क्या ईनामे खास नहीं है? उस पाकजात के बेशुमार एनायतों का करम तो देखिए की वलीअल्लाह फैजाने-इलाहिया (ईश-कृपा) के समन्दर बनकर बांटते रहते हैं, लेने वाले थक जाएं, मगर देने वाला नहीं थकता? वली की वेलायत का ईनाम पाक रब ने तब अता की, जब वह हर दुनियांवी शय से पाक हो कर, अल्लाह तआला का नेकबन्दा बन गया। नेकबन्दे के लिए अपने 'एलाह' से 'ला' हो जाना पहली शर्त हुई। 'एलाहअ' को 'ला' जिसने नहीं किया वह बन्दा ता है, मगर सच्ची बन्दगी के काबिल ऐसे बन्दे कैसे होंगे? 'एलाहअ' की मौजूदगी, अल्लाह तआला की इबादत में अगर मौजूद है, तो इसी का नाम 'शिर्क' है। शिर्क इसी का नाम है, जो खुदा की इबादत में अपने 'एलाहअ' के साथ शरीक हो। इस्लामी अमल और कानून के मुताबिक 'एलाहअ' का बशर या बन्दे में कायम रहना, शिर्क की कायमी है। जिसमें शिर्क कायम हो, उसे ही मुशरिक कहते हैं।

अब क्या हमें जरुरी नहीं कि अपने-अपने 'शिर्क' को तालीमे-हक से 'ला' करें। 'लाईलाहअ'

का ईल्म अता करके पाकजात ने अपनी सच्ची बन्दगी का सलीका एनायत की। आलमे-इन्सान को रब्बुल ईज्ज़त का शुकराना अदा करते रहना चाहिए। पाक रब ने हमें अपना बन्दा बनाया, तो सच्ची बन्दगी की राह भी बतायी। अगर बताने से इन्सान न समझ सके, तो रब्बे-पाक ने अपने नबीए-पाक को सिखलाने के लिए भी भेजा। हम सुन्नतें तो जानते हैं, मगर अमली सुन्नत का तरीका ओलमाए-हक़ से लेना क्यों नहीं जानते? सुन्नत क्या है? अल्लाह तआला के महबूब नबीए पाक का पाकीजा अमल? महबूबे-खुदा की सीरत नबूवत है और उनका पाक किरदारे-अमल सुन्नत है। अब जरा गौर करें कि हम में सिर्फ 'सुन्नत' दाखिल है या पाक अमली सुन्नत? पाक अमली सुन्नत की अदाएगी क्या नापाक दिलों से मुमकिन है?

सुन्नते रसूल, पाक है, क्योंकि नबीअल्लाह पाक हैं। इसलिए सुन्नते-पाक को पाक अमल से ही अदा करनी होगी। जाहिर और बातिन की पाकीजगी हमें 'लाईलाहअ' के जेहाद से हासिल होगी। अगर ये जेहादे अकबर हमने अपने कामिल रहनुमा की नुमाईन्दगी में नहीं की, फिर तो पाक सुन्नत की अमली अदायगी हमसे मुमकिन कहां है? हम जिस्म से पाक हैं; मगर 'इलाहअ' से पाक नहीं, इसलिए हमारा बातिन पाक कहां है? रसूले-पाक की अमली सुन्नत की पैरवी तो हम तभी कर सकते हैं, जब जाहिर-बातिन दोनों पाक हो। नबूवत पाक है। अल्लाह के नबी भी पाक हैं। इसलिए पाकजात ने अपनी पाक रेसालत और नबूवत अपने पाक नबी को ही अता की है। नबी अपने पाक रब के साथ हैं। उन्हें पाक परवरदिगार ने दुनियां के हर बशरी कानून से पाक रखा है। खुदा जब बशर नहीं, फिर खुदा के नबी बशरी सूरत में आम बशर कैसे होंगे? हर लिबासे-बशर (मानव आवरण) में नबूवत की सिफत (गुण) नहीं होती। नबूवत हक्की (ईश सत्य) है। नबी हक्की हैं। फिर लिबासे बशर में हक्की नबूवत और हक्की नबी, आम बशरी सिफात के साथ नहीं हो सकते। यही वजह है कि अजान और कल्मे में 'मुहम्मद रसूलल्लाह' अल्फाज से हमें बताया गया की हजरत मुहम्मद, जिन्हें तुम कह रहे हो, वह रसूलल्लाह हैं। वह अल्लाह के रसूल हैं। अल्लाह की रेसालत उनके पास है। अल्लाह का कलाम उनके साथ है। अल्लाह का कानून उनके पास है। अल्लाह के नबी मिस्ले बशर जरुर नजर आ रहे हैं, मगर वह आम बशर नहीं। बशरी सूरत लिए अल्लाह के महबूब आए हैं। इन्हें बशर न कहना। इन्हें पुकारते हो तो बाअदब ताजीम से या रसूलल्लाह कहो। या नबीअल्लाह कहो। इनसे दिली मुहब्बत रखते हो तो या हबीबुल्लाह कहो। यह खातमुन्नबीन हैं। इनके बाद नबूवत किसी को हासिल नहीं, इसलिए अहले दुनियां के लिए ताकयामत यह नबी अल्लाह हैं। नबूवत की हकीकत यह जाहिर करती है कि लिबासे-बशरी में आने के बावजूद भी नबी जिन्दा हैं, क्योंकि नबूवते-खुदा मुर्दा नहीं होती। इसलिए अल्लाह के नबी की शरीयत, तरीकत, मार्फत, हकीकत जिन्दा है। उनसे हासिल कलामुल्लाह जिन्दा है। उनकी नमाज, रोजा, हज, ज़कात, तौहीद, हदीस और सुन्नत जिन्दा है। नबीअल्लाह का

दिया इस्लाम जिन्दा है। उनकी निजामत जिन्दा है। उनका दरुदो-सलाम जिन्दा है।

--- फिर कौन इन्कार करेगा कि जिन्दा इस्लाम के मालिक-व्-मुख्तार जिन्दा नहीं हैं? हम उनके नाम का कल्मा पढ़ते हैं, तो हम उनके उम्मती तो बन गए। क्या किसी उम्मती को तड़प है कि मैं अपने रसूलल्लाह की जियारत कर लूं। अगर सबमें तड़प है फिर इसमें देरी किस बात की। अपना अपना कामिल पीर तलाश करें। उनकी तालीम पर बाअमल हो जाएं। जिस दिन आपके अन्दर बैठे 'इलाहअ' 'ला' हो गए, दीदार की दौलत का दरवाजा खुल जाएगा। यकीन मानिए, नबीअल्लाह की जियारत एक दिन हो जाएगी। हम सुन्नते-रसूले पाक में हर पल मशगूल हैं। मगर जिनकी सुन्नत हम निभाते हैं, उनके दीदार के मुश्ताक (ईच्छुक) हम क्यों नहीं बनते? दीदारे-मुस्तफा (ईशदूत दर्शन) अगर हमें नसीब हो गई, फिर तो सुन्नते रसूल और उम्मते-रसूल दोनों का मकसद पूरा हो गया। अमली सुन्नते-रसूल को अपनाने के लिए अल्लाह तआला ने कामिल पीरों की तालीम को हर दौरे-जमाना में कायम रखा है। इनकी कायमी मिनजानिब अल्लाह है। ये अल्लाह के पसन्दीदा नेकबन्दे हैं, जिनकी तालीम ने सैय्यदना पीराने पीर दस्तगीर, सैय्यदना दातागंज बक्श लाहौरी, सैय्यदना ताजुद्दीन औलिया, सैय्यदना हाजी वारिस अली शाह और हजरत अलाऊद्दीन साबिर कलियरी जैसे बेशुमार वली-औलिया को पैदा कर दिया। जिन कामिल पीरों की तबलीग से अल्लाह के वली पैदा हों, उनकी तालीम से इन्सान क्या दीदारे-इलाही और दीदारे मुस्तफा नहीं कर सकता?

सच्चाई ये है कि इस्लाम के रहबरे-हक यही हैं। अमली सुन्नत इनके अमल में है। कलामे-खुदा के हुक्म पर यह बाअमल हैं। इन्हें दीदार की दौलत हासिल है, इसलिए यह कलामे-खुदा और कलामे-रसूल से बखूबी वाकिफ हैं। यह जानते हैं कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल होने का रास्ता क्या है? इन्हें पता है कि कायमी नमाज क्या है? इन्हें मालूम है वह नमाज, जिसकी अदायगी से मेराजे-हक होती है। इन्हें यह ईल्म भी है कि हज बैतुल्लाह में दीदारे-खुदा कैसे नसीब होती है। यह बखूबी जानते हैं कि तौहीद की हकीकत क्या है? इनको रोजा, जकात की सच्ची अदाएगी मालूम है। यह अकीदे और यकीन का ईस्लाम नहीं जानते। यह ईल्मी इस्लाम की तबलीग नहीं करते। यह अल्लाह के रसूल को जानते-पहचानते हैं, इसलिए उनकी पाक-शान में गुस्ताखियां नहीं करते। इन्हें वली-अल्लाह का कुर्ब (सानिध्य) हासिल है, इसलिए उनकी कद्रो-मनजलत करते हैं। ये शिर्क से पाक न होते, तो दीदारे-इलाही में जीते कैसे? यह बिदअत से अगर पाक न होते तो इन्हें दीदारे-मुस्तफा कैसे हासिल होतीं? नकली पीर ख्वाबो-ख्याल में जीते हैं। उन्हें नफ्सीयाती शैतान का एलहाम होता रहता है। वह अपने इबादत पर इस तरह नाजां रहते हैं कि उन्हें अल्लाह तआला की बशारत भी मिलती रहती है। उन्हें दुनियां अल्लाह वाला और मुत्तकी समझ ले, इस प्रचार में भी वह कोई कोर-कसर नहीं छोड़ते। ऐसे नफ्सपरस्त अवाम में अपनी बुजुर्गी का सिक्का जमाने के लिए

शिर्क भी करते हैं और बिदअत भी। हक़ को बातिल करार देना, इनकी फ़ितरत है। मुसलमानों को अपने जाती अकीदे की इबादत सिखाना, इनका पेशा है। यह अल्लाह तआला और रसूले-पाक की सुन्नत के आड़ में अपने अकीदे की सुन्नत बताते हैं। इस्लामी शरीयत में मसनवी कौल-फेएल जोड़ना-घटाना इनका काम है। इसलिए ओलमाए-हक़, इन्हें 'ओलमाए नाहक़' या 'ओलमाए सू' के नाम से पुकारते हैं।

दीने इस्लाम के नबीए बरहक को जो कौम या जमात अपना रहबरे हक़ तसलीम न करे, वह नाकिस नहीं तो और क्या है? अल्लाह के नबी और अल्लाह के वली की बेहुरमती करने का जो शख्स या जमात ठेका चलाए, उसे इस्लामी कहेंगे या गैर-इस्लामी? ऐसे फ़िल्ने और फ़िरके के पीछे एक समझी-बूझी साजिश काम कर रही है। उनका मिशन है, हक्की इस्लाम को बातिल इस्लाम बनाना। जो मिशन, रसूलल्लाह को मुर्दा और गैरुल्लाह समझे, वह मिशन रसूलल्लाह की सच्ची शरीयत या सुन्नत पर बाअमल कैसे रहेगी? अगर ये मसनवी अमल भी करें तो वह इनके ही अकीदे से गैरुल्लाह की सुन्नत हो जाती है। इनकी शरीयत दिखावे के लिए रसूलल्लाह की तो हो सकती है, लेकिन उनके अकीदे में तो दरअसल यह गैरुल्लाह की शरीयत है। जो 'ला' मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' और 'ला वली अल्लाह' और 'ला-ईल्लल्लाह' का वजीफा पढ़ते और पढ़ाते हों, वह क्या उम्मते रसूलल्लाह के हो सकते हैं?

पाक रब ने इसीलिए कामिल पीरों की जमात को अपने महबूब नबीए-पाक के दीने-पाक की रहनुमाई के लिए कायम फरमाया। इनके रहने की जगह का नाम खानकाह है। यह इसी मकाम पर दीने-हक़ की तबलीग देते हैं। एक सवाल यह पैदा हो सकता है कि कामिल ही तबलीगे-हक़ के मुकर्ररशुदा अफराद (व्यक्ति) कैसे हैं? इस हकीकत को समझना मुश्किल नहीं है। जरा गौर तो करें सैय्यदना सरकारे गौसे पाक पर। वह कादरिया सिलसिले के ऐसे बेमिसाल पीर हैं, जिन्हें पाकज़ात ने मुर्दे को जिन्दा करने की कुव्वत अता की। अमली शरीयत में उन जैसा बाअमल पीर कोई नहीं। उनके मुरीद व खुल्फा का सिलसिला आज भी दुनियां में कायम है। इनके सिलसिले में न जाने कितने वली-अल्लाह हुए और ताकयामत होते रहेंगे। कादरिया, चिश्तिया, सोहरवर्दिया, नक्शबन्दिया, वारसिया, कलन्दरिया, मदारिया वगैरह पीरों के सिलसिले से ही अल्लाह के वली आते रहते हैं। इन सिलसिलों के कामिल पीर क्या अल्लाह तआला की रजा के बगैर वली बना सकते हैं? रजाए-इलाही के बिना वेलायत नामुमकिन है। और अगर वेलायत नहीं, तो वली कोई कैसे हो सकता है?

इस छोटे से मिसाल से यह राज खुला की खानकाही पीरों की तालीम हक तआला की रजा पर कायम है। नाकिस पीरों की तालीम पर खुदा का गजब है। तबलीगे-हक़ के रहनुमा कामिल पीर ही मुकर्रर हैं। इसमें शको-शुबहा की गुंजाईश कहां है? इन्सान अपने दिलों में यह गौर तो करे-

नबी की शाने-नबूवत ने जिन्दगी पा ली।
नबी को पा के बशरीयत ने ताजगी पा ली।।

नबी-नबी हैं, बशरीयत है उनकी सौदाई।
खुदाई-ईश्क से आदम ने हर खुशी पा ली।।

बशर को ढाला जो खालिक ने अपने सांचे में।
बना के नक्शा जो देखा, तो आशिकी पा ली।।

बशर के रंग में महबूबे खुदा जब निकले।
कहा असहाबे पयम्बर ने जिन्दगी पा ली।।

जमाले हुस्न पे शैदा है क्यों खुदाई भी।
मेरे महबूबे-खुदा, कैसी मुहब्बत पा ली।।

मिली है आपको लाफानी जिन्दगी शाहा।
जो शम्मां, नूरे रेसालत की रौशनी पा ली।

फरिश्ते आए, वली आते, सर के बल चलके।
कैसे 'महमूद', फकीरों ने दोस्ती पा ली?

अजब ये राजे मुहब्बत है क्या बयान करुं।
नबी की प्यारी अदाओं ने बन्दगी पा ली।।

[भावार्थ : फकीर हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह के इस अश्आर में ईश्के-खुदावन्दी की गमकती खुश्बू इन्सानी रुह को पुरबहार ताजगी एनायत कर रही है। आप फरमाते हैं कि हमारे नबी हजरत मुहम्मद मुस्तफा सल्ले अला व आलेही व सल्लम की शाने-नबूवत ऐसी वाहिद शाने-रेसालत हैं, जिसकी जिन्दगी हक् के साथ कायम है। हक् कायम है। हक् मौत से पाक है। जब हक् के साथ नबीअल्लाह कायम हैं, तो उनकी जिन्दगी हक्की जिन्दगी है। शाने-नबूवत, वक्ती या जिस्मानी जिन्दगी नहीं रखती। नबीअल्लाह की शान, हक्की कायम जिन्दगी है।

फकीर सैय्यद शाह महमूद रजा अली शाह कहते हैं कि ऐ मेरे बशरी लिबास में हक्की जिन्दगी रखने वाले नबीए-पाक, आप से शाने-नबूवत को सदाबहार लाफानी जिन्दगी मिली है। आप हक तआला के साथ हैं। इसलिए लिबासे-बशरियत रहे या न रहे, इससे आपकी शाने-नबूवत की जिन्दगी मुर्दा नहीं होती। मुर्दा न हक है और न हक की नबूवत। फिर लिबासे-बशरी नबी को मुर्दा कैसे कर सकती है? अरे, आपके बशरी सूरत में तशरीफ लाने से हक् ताअला की शाने नबूवत हक्की और बशरी दोनों सूरत में लाफानी जिन्दगी पा गई। यही जिन्दगी तो बशरियत के लिबास में आज भी दुनियां को तरोताजगी अता कर रही है। यह ताजगी कैसी है? जब बशर नबीए-पाक के गुम्बदे-खिजरां

को देखता है, तो उसकी रुह सुकून पाती है। उसके कल्ब में चैनो-करार की बहारें छा जाती हैं। वही बशर जब किसी कामिल पीर की तालीम से रसूले-पाक की जियारत करने लगता है, तो उसके जिस्मो-जान में नयी जिन्दगी की ताजगी दाखिल हो जाती है। इसी सच्चाई को बयान करते हुए सैय्यदना महमूद रजा अली शाह कहते हैं कि 'नबी को पा के बशरीयत ने ताजगी पा ली।'

अपने अगले शेएर में उनका यह कहना कि 'नबी, नबी हैं, बशरियत है उनकी सौदाई, खुदाई ईश्क से आदम ने हर खुशी पा ली।''. यह शेएर खुदा के गहरे राज को बयान कर रही है। ये प्यारे महबूब, ऐसे नबी हैं कि मौजूद आज और बाद में आने वाली हर इन्सानी नस्लें, उनकी चाहत में बेचैन रहेंगी। हर इन्सान की पीढ़ी दर पीढ़ी तो आप ही की उम्मती होगी। सभी तो आपकी बतायी सुन्नत और शरीयत पर ही कायम होंगे। सभी आपके लाए हक्की-फरमान यानी कुरआन को ही पढ़ेंगे। ऐ नबीए-पाक, पाकजात की हर-हर रहमत के आप ही मुख्तार हैं। इसलिए बन्दगाने-खुदा आपही का तालिब है और हमेशा रहेगी। क्योंकि ऐ महबूबे पाक आपसे मेरा पाक रब पाक लाफानी मुहब्बत करता है। आपके मुहिब ने आपकी मुहब्बत में सारी कायनात बनायी है। यहां तक की हजरत आदम अलै0 को बनाने और दुनियां में लाने का राज, आप ही के ईश्क का एजाज (चमत्कार) है। आप ही के वजह से बशर की जिन्दगी को हर खुशियां खालिके-कायनात ने अता की हैं। इसलिए मैं कहता हूं कि दुनियां में मौजूद सारे इन्सानों की हर-हर खुशियां आपकी वजह से कायम हैं। कयामत तक हर आने वाला इन्सान आपसे ही अपनी हर खुशियां पाता रहेगा। क्योंकि अल्लाह की नूरे-नबूवत आपके पास है।

सैय्यद महमूद रजा अली शाह आगे फरमाते हैं कि 'बशर को ढ़ाला, जो खालिक ने अपने सांचे में, बना के नक्शा जो देखा, तो आशिकी पा ली।' यह शेएर उस शुरुआती दौर की याद दिला रही है, जब हजरत आदम अलै0 को पाक परवरदिगार अपने रुप-रंग में बना-संवार रहा था। सूरते आदम के नक्शे में जब पाकजात ने अपने नूरे-पाक को देखा, तो ईश्के-खुदी में आशिक हो गया। हजरत सैय्यद शाह कहते हैं कि 'बशर के रंग में महबूबे-खुदा जब निकले, कहा असहाबे पयम्बर ने जिन्दगी पा ली।' हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के नूरे-पाक को देख-देख कर सारे असहाबे-पयम्बर ईश्क के रंग में डूबे हुए हैं। उन्हें महबूबे-खुदा का नूरे-हक हर पल एक नयी जिन्दगी अता कर रही है।

हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह कहते हैं कि "जमाले हुस्न पे शैदा है क्यों खुदाई भी? मेरे महबूबे खुदा, कैसी मुहब्बत पा ली।" ऐ, रब्बे-पाक के पाक नबीअल्लाह आपके जमाले हुस्न में उस पाक रब्बे करीम का नूर रौशन है। तभी तो खुदा की खुदाई आप पर निसार है। सैय्यद महमूद रजा शाह इस ईश्के-खुदाई को देख-देख कर मसरुर हो रहे हैं। वह कहते हैं कि ऐ महबूबे पाक आपने उस पाक खुदा की ये कैसी बेमिसाल मुहब्बत पायी है कि खुदा की खुदाई आपके ईश्क में मचल रही है। वह फरमाते हैं कि ऐ शाहे-आलम, आपको खालिके-कायनात ने लाफानी (अनश्वर) जिन्दगी अता

की है। आप खुदा के भेजे वो शम्मां हैं, जो अपने नूरे-रेसालत से कयामत तक दीने-हक की रौशनी फैलाती रहेगी। आपके पाक दरबार में फरिश्ते तो रोजाना दरुदो-सलाम पेश करते हैं। आपके पाक दर पे सारे आलम के वली-औलिया सर के बल सलामी पेश करते हैं। सैय्यद महमूद रजा अली शाह कहते हैं कि ऐ महबूबे-किबरिया, आप इतने प्यारे और मासूम हैं कि हर फकीरे-हक आपकी मुहब्बत में बेकरार रहता है।

'अजब ये राजे मुहब्बत है क्या बयान करुं?' सैय्यद महमूद रजा अली शाह आलमे-हैरत में फरमाते हैं कि ऐ मेरे महबूब नबीए-पाक मैं उस रब्बे-पाक की मुहब्बत का राज किस तरह बयान करुं। आपको लिबासे-नूरी में दीदारे-हक मिली है। आपको लिबासे-बशरी में भी दीदारे-हक हासिल हुई। ऐ मेरे महबूबे-इलाही, उस पाकजात ने तो दीदार की ऐसी दौलत आपको एनायत फ़रमा दी की नबूवत तो रौशन थीं हीं, आपका जिस्मे-अतहर भी पाक दीदार ने रौशन कर दीं। ऐ मेरे पाक महबूबे-रब, आलमे-दुनियां के लिए यह राजे-खुदावन्दी तो जाहिर हो गई कि बन्दगी जो पाक रब के लिए खास है, वह तो आपकी अदाए-पाक है। आपके कलामे-खुदा और आपके कयाम, रुकू, सजदा और हज, रोजा, जकात सभी पाक किरदार को रब ने अपनी बन्दगी करार कर दी। हमारी बन्दगी आपकी अमली अदा के सिवा है क्या? इसलिए सैय्यद महमूद रजा अली शाह फरमाते हैं कि 'नबी की प्यारी अदाओं ने बन्दगी पा ली।']

महफिल से एक नौजवान ने बाआवाज बुलन्द यह कलाम पढ़ी। हजरत आसी गाजीपुरी के इस कलाम को आप भी पढ़ें।

दिले आशिक में कलक हद से सिवा होता है।
जिक्रे-महबूब भी अन्दोह फेजां होता है।।
बुते-पिन्दार, जो इसमें से जुदा होता है।
यही दिल रुतबे में काबे से सिवा होता है।।
इन्हीं कानों से अनल हक के सुने हैं दावे।
आदमी ईश्क में क्या जानिए क्या होता है।।
हुस्न की चारहगरी का है बड़ा शोर मगर।
दर्दे-उलफत कहीं मुहताजे-दवा होता है।।
गैर को गैर जो कहिए तो गलत साबित हो।
और कहिए की वही है तो खफा होता है।।

जिसमें दीदार हो वह भी है कयामत कोई।
ये कयामत है कि वह मुझसे जुदा होता है।।

सूए मन्सूर अनल-हक् की गलत निस्बत थी।
कोई कह दे कहीं बन्दा भी खुदा होता है।।

दिल जो था खास घर उसका न बनाया अफसोस।
मसजिदो-दैर बनाया करो क्या होता है ?

हिम्मते-शैख की शैकल की बदौलत 'आसी'।
यही दिल आईना-ए-रुए खुदा होता है।।

[24-B] ईमान में फित्ना

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने मजलिस को कुछ वक्त बाद इस तरह खेताब किया- "वह पाक रहमान कलामे-रब्बानी में हमें हुक्म दे रहा है कि इस्लाम में पूरे-पूरे दाखिल होने के लिए शैतान मर्दूद को अपने दिल-देमाग और ख्याल से पहले भगाना जरुरी है।

जाहिल ओलमा समझते हैं कि शैतान, भूत-प्रेत, आसेब, खब्बीस, जिन्न या देव, परी या चुड़ैल हैं। गलें में तावीज बांध लो शैतान नहीं बहकाएगा। मेरे पाक रब ने शैतानं को सरीह दुश्मन क्यों कहा? नफ्सीयाती शैतान जब दिलों में महफूज हो जाते हैं, तो इब्लीस इन्हीं के जरिए नया दीन, नया इस्लाम, नए-नए फिरके और नए-नए फितने शुरु करा देता है। तबलीगे-नाहक जो आप सुनते-देखते हैं, ये शैतान की आड़ में इब्लीस का फरेब है। सरीह दुश्मन को हमने अपने आप में से खत्म नहीं किया, तो जान लें इब्लीस हमारा रहबर बन कर अल्लाह तआला के दीन इस्लाम में तरह-तरह के फित्ने पैदा करेगा? फिरकाबन्दी, शिर्क-बिदअत, हक्-नाहक्, हराम-हलाल, जायज-नाजायज की वह उल्टी समझ देकर आपस में लड़ाएगा। वह कुरआन और हदीस के मायनी व मतलब अक्ल को गलत सुझाएगा। हमारी नमाजों में ख्यालात को इधर-उधर भटकाएगा। अज़ान कानों में पड़ेगी, तो दुनियांदारी के कामों में उलझाएगा। शैतानीयत और इब्लीस में भाईचारगी है।

इसलिए खालिके बरहक ने अपने बन्दों को आगाह किया कीं शैतान के पीछे मत चलो, वह तुम्हारा सरीह दुश्मन है। शैतान को शिकस्त देने का सलीका पहले आप कामिल पीर से सीखें। यही पीर तो बरहक् हैं। क्योंकि यह रब्बे पाक और रसूले पाक की नज़रे एनायत से कामिल पीर हैं। इनका हर अमल सुन्नते-रसूल और कलामे-इलाही के मोआफिक (अनुसार) है। हक् तआला की मार्फत

इनके पास है। रसूले खुदा की इनायत इनके साथ हैं। यही वो हक़ ताअला की सच्ची जमात है, जो जाहिर-बातिन दोनों हाल में शैतानों से दूर हैं। इसलिए इब्लीस मर्दूद इनसे मजबूर है। इन्हीं शैतानों के जरिए इब्लीस इन्सानी दिल-दिमाग में यह फरेब डालता है कि नबीए-पाक का ख्याल शिर्क है। वलीअल्लाह के मजारों पर जाना शिर्क व बिदअत है। ऊर्स, मिलादुन्नवबी, ग्यारहवीं शरीफ, ख्वाजा गरीब नवाज की छठी शरीफ वगैरह मनाना नाजायज है। कभी सोचा है आपने ऐसी बातें इब्लीसी कयादत में शैतान क्यों फैलाता है? इब्लीस को नबीए पाक और अल्लाह तआला के वली-औलिया से रन्जिश क्या है? वह अल्लाह के बन्दों को पाक परवरदिगार से गुमराह करेगा। वह इबादते-इलाही में शक पैदा करके बन्दे को सच्ची इबादत से महरुम करेगा, यही इब्लीस का खास काम है।

आईए- बगौर देखें नबीए-पाक की अज़मत और बुलन्दी को। इब्लीस हमारे नफ्स के जरिए हमें बताता है कि अम्बिया अपनी उम्मत से अगर मुम्ताज होते हैं, तो ऊलूम ही में मुम्ताज होते हैं। बाकी रहा अमल उसमें बसा औकात बजाहिर उम्मती मसावी हो जाते हैं बल्कि बढ़ जाते हैं।" इब्लीसी फित्ने के रंग कुछ ईल्मदानों पे ऐसे चढ़े कि उन्होंने अपने खब्बीसी ईल्म की किताबें भी लिखीं और कह दिया कि यह किताब 'फितनतुल ईमान' है, इसका रखना और पढ़ना ऐन इस्लाम है। यानी जो किताब है उसे ईमान का फित्ना न समझें। यहीं तो सच्ची इस्लामी किताब है।

अपने पंजवक्ता नमाज, तिलावते कुरआन और पाबन्दीए-शरीयत पर फख्र करना, यह भी शैतानी वसवसा है। हमें आज इस्लाम में खुद को मुत्तकी, परहेजगार, दीनदार, सूफी-सिफत और पाबन्दे-शरीयत कहलाने वाले काफी नज़र आते हैं। मगर जब हम उनकी नफ्स पर तवज्जह करें, तो पाएंगे कि इनमें कल्मा 'लाईलाहअ ईल्लल्लाह मुहम्मदुर्रसूलल्लाह' तो दाखिल ही नहीं है। ऐसे लोगों में से जब कोई दीनी दर्स लेकर आलिम या मौलवी वगैरह की सनद पाते हैं, तो तबलीगे-नाहक उनके जरिए अवाम में फैलने लगती है। वह तबलीग करें या दीनी किताबें लिखें, उनके कौल-फेएल में नाहक-दीन की परछायीं जरुर नज़र आएगी। उनका ताकतवर नफ्स जो शैतान है, वह ऐसी बातें पेश जरुर करेगा, जिनसे खुदा के पाक दीन में नापाक अकीदें फैलें। ऐसे लोगों के कौल या तसनीफ (किताबी-लेखन) में शैतानियत का ईल्म आना हैरत कहां है? हम जब शैतान की सोहबत में हैं, तो हमसे शैतानियत की जगह रहमानियत की खुश्बू कैसे आएगी? जो 'फितनतुल ईमान' किताब का जिक्र हमने किया, ऐसी तमाम किताबें ईमान में फित्ना डालने के लिए काफी बाअसर हैं। भला फित्ने और ज़ाती अकायद से जुड़ी किताबें "ऐन इस्लाम" या इस्लामे हक़ कैसे हो सकती हैं? ईमान की निस्बत रहमान और हबीबुर्रहमान से है। रहमान से निस्बत हबीबुर्रहमान की है। उम्मती की निस्बत जब हबीबुर्रहमान से होगी; तभी रहमानी निस्बत उसे हासिल हो सकती है। नबीअल्लाह और उम्मती में यही तो फर्क है। उम्मते-रसूल को सच्चा बन्दगाने-खुदा बनाने का काम नबीअल्लाह का है।

नबीअल्लाह के मार्फत के बिना बन्दे को पाक अल्लाह की रसाई नहीं मिलती। हक़ तआला और बन्दे को मिलाने वाली कुव्वत का नाम नबीअल्लाह है। अमल और इबादत से नबी कायम नहीं हैं। अल्लाह की नबूवत-रेसालत अल्लाह के नबी-रसूल के पास। नबी बशरीयत के लिबास में हो या नबूवत के लिबास में, उनकी नबूवत कायम है। नबी जिस्म और जान के मुहताज नहीं। वह दुनियांवी ईल्म और अमल के मुहताज नहीं। बशरी आलम में उन्हें बन्दगी तो इसलिए करनी पड़ती है ताकि बन्दए-खुदा को हक़तआला की सच्ची बन्दगी का सलीका आ जाए। वह बशरी सूरत में खाते-पीते हैं ताकि बन्दे खाने-पीने की तमीज सीख सकें। बशरी सूरत में नबीअल्लाह शादी-ब्याह भी करते हैं, ताकि बन्दगाने-खुदा अपनी अजदवाजी जिन्दगी (वैवाहिक जीवन) को गुजारने का सही तरीका जान सकें। मखलूके खुदा के लिए नबीअल्लाह की जिन्दगी एक कामिल इन्सानी जिन्दगी की मिसाल होती है। इसीलिए अम्बिया एकराम की सीरत और अमल को 'सुन्नत' कह कर बन्दगाने-खुदा उस पर बाअमल होने में लगी रहती हैं।

मैं परेशान हूं ओलमाए-नाहक की शैतानी समझ पर। बताओ क्या अम्बिया एकराम अपनी उम्मत से सिर्फ उलूम में मुमताज होते हैं? हमें ऐसे रहनुमा बताएं कि ऊलूम को हासिल करने के लिए हजरत आदम अलै0, हजरत शीश अलै0, हजरत इब्राहीम अलै0, हजरत मूसा अलै0, हजरत ईसा अलै0 और पैगम्बरे आजम हजरत नबीए अकरम नूरे मुजस्सम सल्ले अला व आलेही व सल्लम ने ऊलूम किस अदारे या मदरसे या दारुलऊलूम में हासिल किया? बन्दे की तालीम अदारे से ही हो सकती है, नबी या अम्बिया एकराम की तालीम तो मिनजानिब अल्लाह है। फिर नबी के उलूम से बन्दे या उम्मती के उलूम का मुकाबला कौन करेगा? ओलमाए-नाकिस के इस इजहारे ख्याल पर हमें हंसी आती है। वह कहते हैं कि अमल में नबी के उम्मती, नबी से भी आगे बढ़ जाते हैं?

पहले हमें उम्मती का अमल बताओ कि वह मिनजानिब अल्लाह है या मिनजानिब नबी अल्लाह है? अमल जब नबी अल्लाह से उम्मती पाते हैं, फिर अमल बताने वाले से वे अमल में कैसे बढ़ सकते हैं? उम्मती का अमल क्या है? लाशरीक खुदा की बन्दगी में मुस्तगरक इस तरह होना की खुदा मिल जाए? क्या ऐसे अमल वाले उम्मती अपने अमल में इतने बढ़ गए हैं कि उन्हें दीदारे इलाही हासिल हो? अगर नहीं, तो ओलमाए सू क्या नुमाईशी अमल को सच्चा इस्लामी अमल समझते हैं? अमल उस बन्दगी का नाम है, जो हकताअला से बन्दे को रु-ब-रु करा दे। हक़ से गुफ्तगू करा दे। इसी का नाम मेराज़े-बन्दगी है। इस्लामी सच्चे अमल का बढ़ना, उसी को कहते हैं, जो पाक रब्बे कायनात से मिलवा दे। यही उम्मती या बन्दे की आखिरी मन्जिल या अमली जिन्दगी है। नबीअल्लाह, अल्लाह से हैं, उनकी हर पल की जिन्दगी पाक रब की कुर्बत में है। उम्मती कुर्बे-खुदा का तलबगार है और नबी राजे-इलाही का दिलदार है। अमल उम्मती का किरदार। नबूवत, नबी की सदाबहार। बताओ- वह

उम्मती कौन है जो नबी की बराबरी कर सके? नबी तो अल्लाह की नबूवत में कायम है। उम्मती, नबी के बताए अमल का मुहताज है। फिर अमल की जरुरत उम्मती को है, नबीअल्लाह को नहीं?

नफ्सी शैतान की आड़ में यह इब्लीसी नजरिया उम्मती को तकब्बुर और कुफ्र तक ले जाने के लिए काफी है। इब्लीस नासमझ क्या समझे कि ऊलूम, अमल, उम्मती और नबी में फर्क क्या है? जिस तरह बशरी सूरत में नबीअल्लाह को देख कर कुछ बेईमान मुसलमान उन्हें बशर के सिवा कुछ नहीं समझते, उसी तरह इब्लीस ने भी अपने फरेबी ईल्म से अमल और ईल्म का फित्ना डाला?

[24-C] बैय्यत क्या है?

फकीर सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने मजलिस से खिताब शुरु किया- "कामिल पीर की निस्बत हम कैसे पा सकते हैं, जरा इस अहम पहलू पर भी हम गौर कर लें। 'बैय्यत' शब्द कामिल पीर की निस्बत के लिए प्रयोग में लाया जाता है। 'बैय्यत' का हुक्म कलामे-इलाही में रसूले-पाक के लिए मौजूद है। सारे आलम के महबूबे-खुदा ने अपने सहाबा एकराम से 'बैय्यत' हुक्मे इलाही की वजह से ली है। 'बैय्यत' वास्तव में 'अल्लाह' और बन्दे के बीच एक संकल्प या वचनबद्धता का नाम है। बन्दा जब खुदा के इनाम वाले सीधे रास्ते पर चलने के लिए मजबूत इरादा बना ले यही 'बैय्यत' है। यह सुदृण संकल्प सद्गुरु या कामिल पीर के हाथों पर लिया जाता है। इसी का नाम 'मुरीद' या शिष्य बनना है। हुजूर नबीए पाक ने अपने सहाबा एकराम से बैय्यत ली। जब वह 'बैय्यत' हो गए, तब उन्हें खुदा की इबादत का हक्की तरीका बताया। इससे यह जाहिर हुआ कि बैय्यत लेने वाले में खुदाई जियारत की तड़प है। वह खुदा के महबूब नबी के हाथ में हाथ रखकर यह संकल्प ले चुका है कि खुदा की राह में मुझे अन्तिम सांसों तक चलना है। यह 'बैय्यत' बता रही है कि तबलीगे-हक़ पाने का हकदार वही है, जिसने किसी हक़परस्त के हाथ पर हाथ रखकर बैय्यत कुबूल की हो। और ईल्मे-पीर के जरिए उसे दीदारे हक़ व दीदारे-नबी हासिल हो।

प्यारे रसूलल्लाह की यह सुन्नत खोल्फाए-राशेदीन, असहाबे-सुफ्फा और अहले-बैत एकराम ने जिन्दा रखी। इनके बाद यही बैय्यत ताबईन एकराम से तब्बे-ताबईन एकराम में आयी। यही अमली-बैय्यत खानकाहों तक पहुंची, जिन्हें कामिल पीरों ने अब भी कायम रखा है। अब जो बैय्यत से इन्कार करे, उसने रसूले-पाक की इस अहम सुन्नत से इन्कार किया। अहम सुन्नत यह इस वजह से है कि बैय्यत लेने वाले ने अल्लाह तआला के इनामी सीधे रास्ते पर चलने का अहद किया है। वह नमाज में रोजाना सूरह फातेहा पढ़कर यह कहता रहा कि ऐ मेरे पाक रब, चला हमें अपने सीधे रास्ते पर, जिस पर तूने ईनाम फरमाया है। न चला उस रास्ते पर जिस पर तेरा गजब है और गुमराही है।

सूरह फातेहा में कलामे-इलाही- 'एहदिनसस्सेरातल मुस्तकीम। सेरातल लजीनअ अनअमता अलैहिम गैरिल मग़ज़ुबे अलैहिम वलद्वालीन।' का इशारा और मकसद, अल्लाह तआला की सीधी राह पाने के लिए है। जिसे हम रोजाना नमाज़ में पढ़ते हैं। पाक रब के सीधे और ईमान वाले रास्ते के ज़ानकार का नाम कामिल पीर है। हम उन्हें अपना कामिल रहनुमा तसलीम क्यों नहीं करते हैं? सूरह फातेहा में अल्लाह तआला ने अपना यह फैसला दे दिया है कि सीधा इनामी रास्ता, उनका है और बाकी सारे रास्ते पर चलना-चलाना गुमराही और गजब की राह है। इसी वजह से कामिल पीरों की जमात 'ओलमाए हक़' की है। बैय्यत लेने वाला शख्स हक़ के इनामी राह पर चलने का अहद ले लिया है। बाकी लोगों ने राहे-हक़ पर चलने का अहद नहीं किया है। यही अहद जब सैय्यद ख्वाजा गरीब नवाज ने अपने पीरो-मुर्शिद हजरत उषमान हारुनी के हाथ पर की, तो ईल्मे हक़ पा कर अल्लाह वाले हो गए। वह गैरुल्लाह से अल्लाहवाले बने। 'बैय्यत' अल्लाह के गैर को अल्लाहवाला बना देने की तासीर (प्रभाव) रखती है। अल्लाह जिसे अपना बना ले, वहीं तो अल्लाह वाला होगा। अल्लाह ने जिस-जिस को अपना बनाया, वह गैरुल्लाह से अल्लाह के खास बन गए। मुत्तकी और परहेजगार अल्लाह की नज़र में अल्लाह वाले हैं। बाकी जिन्हें अल्लाह तआला ने अपना नहीं बनाया, वह अभी अल्लाह की नज़र में गैर हैं या वही हैं गैरुल्लाह। राहे-हक़ में तकवा यह है कि हक़ ताअला की मार्फत के सिवा किसी गैर के ख्याल से भी ताल्लुक न हो। इस नफी (त्याग) के बाद जिसने हक़ ताअला की जियारत पायी, वही है- 'मुत्तकी'। तकवा सिर्फ पाबन्दे शरीयत और सुन्नत पर चलते रहने का नाम नहीं है। नफ्स से पाक दिल और कल्ब व रुह का जिक्रे-इलाही में मसरुर रहना, तकवा है। इस तकवे से जिसने पाक रब को पा लिया, वही मुत्तकी है। परहेजगारी, अपनी हस्ती से बेजारी का नाम है। परहेजगार वो जो खुदा के सिवा हर दुनियावी शय से परहेज करे। जुमला "परहेजगारी" छोटा जरुर है। मगर इस जुमले में 'लाईलाहअ' की हकीकत पोशीदा है। दिल, नज़र, जुबान, हाथ, पांव और जिस्म के अजू-अजू में परहेजगारी रौशन हो, वही 'परहेजगार' कहलाने का सच्चा हकदार है। हम मुत्तकी हैं या परहेजगार यह शक्लो-सूरत इस आईने में देख लें। हकीकत तो यह है कि सिफाते-बशरियत के तर्क के बिना हम न मुत्तकी हैं और न परहेज़गार ! तकवा और परहेजगारी वाकई तालिबे-हक़ की सिफात है। जो इन सिफात में तबदील होकर दीदारे-हक़ में कायम हुआ, वही मुत्तकी है, वही है परहेजगार।

कामिल पीर के ईल्म में बाअमल होना, मुत्तकी और परहेजगार बनने की राह है। बैय्यत हमने अगर ली है, तो राहे-हक़ पर पीर के दर्स व तदरीस के मुताबिक चलना होगा। पीर से बैय्यत होना और तालिबे हक़ न होना, यह तो बैय्यत की नाशुकरी है। 'बैय्यत' होना, सुन्नते रसूल निभाना है, अगर तलबे-हक़ बैय्यत लेने वाले मुरीद में नहीं, तो ऐसी बैय्यत वसूले-बैय्यत की खिलाफवर्जी है।

देना, पीर पर फर्ज है, अगर बैय्यते-हक़ में उसने किसी अफराद को दाखिल किया है। बैय्यत कर लेना और बैय्यत लेना, यह दोनों बातें अगर तालीमे-हक़ और तलबे-हक़ से खाली है, तो 'बैय्यत' का मकसद कुछ नहीं। बैय्यत के तरीके भी इन दिनों काफी बदल गए। लोग साफ़ा या इमामा पकड़ कर बैय्यत होते हैं। लोग रुपए-पैसे, मिठाई, तोहफा, नजराना देकर 'बैय्यत' करते हैं। कहीं-कहीं तो हर माह मुरीद को रुपए-पैसे अदा करना, बैय्यत की शर्त बनी हुई है। तमामी हजरात तोहफ़ा, नज़राना और राशन देते रहने का नाम बैय्यत कायम रहना समझते हैं। 'बैय्यत' लेने वाले भी तरह-तरह से बैय्यत करते हैं। पीर के लिए अपने कामिल पीर या किसी भी कामिल पीर से 'खेलाफतनामा' पाना जरुरी होता है। मगर देखने में यह आता है कि कुछ अक्लमन्द और चालाक लोग 'खेलाफतनामा' को किसी भी कीमत पर हासिल कर लेते हैं। पीर की अहलियत या कामिलीयत उनमें हो या न हो, मगर वह पीर बनकर 'बैय्यत' जैसे पाक वसूल को अपने नफ्सीयाती ख्वाहिशात के लिए इस्तेमाल करते हैं। उन्हें यह भी पता नहीं रहता कि कामिल पीर नफ्स से पाक होता है। वह यह भी नहीं जानते कि बैय्यत अल्लाह तआला की मार्फत का जरिया है। उन्हें मालूम नहीं की मुरीद को राहे-हक़ पर चलाने का नाम बैय्यत है। जिस राह की आखरी मन्जिल दीदारे-हक़ होती है।

बैय्यते-हक़ हमारे रसूले-पाक से जिसने ली, वह महबूबे-हक़ बन गया। उनके महबूब सहाबा जो भी हैं, कोई हक ताअला के दीदार से खाली नहीं। हुजूर बैय्यत ले रहे हैं। सहाबा के हाथ पर रसूलल्लाह का हाथ है। आज बन्दा खुदा का, रसूले खुदा के जाहिर हाथ पर बिकने जा रहा है। पाक रब ने उस घड़ी फरमाया- "ऐ मेरे महबूब, यह अल्लाह तआला से ही बैय्यत ले रहे हैं। आपका हाथ खुदा का हाथ है।"

यह फरमाने-खुदावन्दी यह बता रही है कि बैय्यत लेने के लिए पीर में 'फनाफिल्लाह' होने की सिफत लाजिम हैं। बन्दा, अल्लाह का है। वह 'बैय्यत' के नाम पर अल्लाह तआला के लिए बिक जाता है। इसलिए कामिल पीर अल्लाह तआला में फना हो कर ही 'बैय्यत' लेते हैं। पीर फनाफिल्लाह अगर नहीं है, फिर बज़ाहिर उसका हाथ, बबातिन अल्लाह का हाथ कैसे होगा? इसलिए कामिल पीर में फनाफिल शैख, फनाफिर्रसूल और फनाफिल्लाह की सिफात दाखिल होना, उसके पीर होने की खासुलखास सिफात करार दी गई। इसीलिए सिर्फ कागजी खेलाफत-नामा से कामिल पीर बन जाने की गुंजाईश नहीं है। अपने पीर और रसूले-पाक और हक़ ताअला की मोसलसल मार्फत से जो खाली है, वह अभी कामिल मुरीद ही नहीं है, उसे कामिल पीर कहना तो गुनाहे-अजीम है।

25 - असत्य गुरु की सत्यता

तालिबे दुनियां (इच्छाओं के दास) आज मुरीद होते हैं और तालिबे-नफ्स (स्वार्थ साधक) आज पीर बने हुए है। यह कैफियतं बैय्यत के कानून में नहीं होती। नफ्सपरस्ती (ईच्छा पूजा) कभी हकपरस्ती (ईश पूजा) नहीं हो सकती। उसी तरह तलबे-दुनियां, मुरीदी का नाम नहीं हो सकता। तालिबे हक् को मुरीद कहते हैं। तालीमे हक् देने वाले का नाम पीर है। अगर इस कसौटी पर पीर-मुरीद दोनों नहीं, तो इसी का नाम है- नाकिस बैय्यत। नाकिस बैय्यत, अल्लाह तआला के पाक बैय्यत में शैतानियत है। सूफिया एकराम कहते हैं कि जिसका पीर नहीं, उसका पीर शैतान होता है। मुरीद के नफ्सीयाती शैतान को पीर ही खत्म कराते हैं। उन्हें वह जिक्रे-रहमानी में जब मशगूल कराते हैं, तो शैतान है कहां, जो उन्हें राहे-हक् से बहका सके। अब रहमान ही रहमान है। और एक दिन सच्चे पीर का मुरीद रहमान का शाहिद बन जाता है। नाकिस पीर, जब शैतानी-नफ्स के साथ है, तो उसकी तालीम या तबलीग् से रहमान का पता कैसे चलेगा?

आज पीरी-मुरीदी की आड़ में मतलबपरस्ती ने तरह-तरह के फित्ने अन्जाम दे डाले हैं। महबूब रसूले खुदा की सुन्नत और पाक परवरदिगार की बैय्यत एक मसनवी रस्मो-रिवाज बन गई है। यही दशा दुनियां के हर एक गुरु-परम्परा में प्रवेश कर चुकी है। सद्गुरु पाने का उद्देश्य मात्र अपनी गरज को साकार करने की एक घिनौनी रीत बन गई है। हमें यह याद ही नहीं की सद्गुरु के प्रति शिष्य का आत्म-समर्पण ईश्वर या अल्लाह को पाने के सिवा दूसरा कुछ नहीं होता। ईश्वर के प्रति ससम्मान अपना अर्पण ही ईश-समर्पण है। यह समर्पण हमें शुभफल प्रदान कराती है। अपनी खुदी के लिए हम धन, अगरबत्ती, फल-फूल आदि तो समर्पित कर देते हैं। मगर ईश्वर, अल्लाह के लिए आत्म-समर्पण करना नहीं चाहते। हमारे रस्मी पीर या सद्गुरु भी शिष्य का समर्पण अपने लिए चाहते हैं। वह ईश्वर, अल्लाह का समर्पण-ज्ञान रखते ही नहीं। फलस्वरुप ये समर्पण की पवित्र कार्य-पद्धति समाज में गुरु-परम्परा के प्रति नफरत और कुशंका का कारण बनती जा रही है। ईश-अज्ञानता में डूबा गुरु या पीर आज शिष्य के भौतिक समर्पण का अनुयायी है। स्त्री समाज के प्रति इनके घिनौने कुकृत्य जब प्रकाश में आते हैं, तो सामान्य मानव यह सन्देश पाता है कि यह कुकर्मी, व्यभिचारी पथ के गुरु हैं। ईश-वचन के विपरीत इनके आचरण के पीछे ईश-अनुपालन की खामियां रहती हैं। इन्हें ईश-साधना का ज्ञान तो रहता नहीं, फिर ईश-दर्शन इन्हें प्राप्त कैसे होगी? सद्गुरु या पीर की जीवन-लीला पढ़कर यह सद्गुरु या पीर की भूमिकाएं आरम्भ कर देते हैं। इन्हें शिष्य का धन-समर्पण चाहिए। शिष्या का देह-समर्पण चाहिए। ऐसे लोग यह झांसा भी देते रहते हैं कि गुरु आदेश पालन शिष्य धम है। शिष्या का शरीर समर्पण यदि गुरु के लिए नहीं, तो वह शिष्या बनकर बैकुण्ठ लाभ नहीं पा

सकती? ऐसे भौतिकवादी और कुकर्मी गुरुओं की श्रृंखला आज समाज को रसातल में ले जा रही है। लोगों के मन में इनकी करतूतों ने यह गांठ बना दी है कि शिष्य-गुरु परम्परा एक श्रद्धा-शोषण व्यापार है। यह शोषण, व्यभिचार और लूटने का कारोबार है। मुक्तभोगी सचमुच यह कैसे स्वीकार करेंगे कि सद्गुरु या पीर की बदौलत ईश-दर्शन या ईश-दया का पाना सम्भव है? दूध का जला छाछ को भी फूंक-फूंक कर पीता है। गुरु-परम्परा का प्रदूषण समाज में धू-धू करके जल रही है। आज कोई कैसे विश्वास करे कि सद्गुरु या कामिल पीर की जमात धन-लोलुप्ता, अय्याशी और धन-शोषण से पवित्र होती है। रस्मी और नकलची गुरुओं ने आज समाज को ईश्वर की सत्यता से दूर कर दिया है। ये ईश-विधान के अपराधी हैं। ईश्वर जब इन्हें बेपर्दा करता है तो दुनिया जान जाती है। ईश-धर्म में इन्द्रिय-पाप को स्थान नहीं है। पाप, अपराध, कुकर्म की जननी इन्द्रिय रुपी राक्षस हैं। इन्हें ही नफ्सीयाती शैतान कहा जाता है। ईश्वर ने इसी कारण इन्द्रियहीन पूजा, नमाज, प्रार्थना पर जोर दिया है। महाराष्ट्र के ठाणे जिला में कौसा मुम्ब्रा है। यहां कुरआन की दर्स लेनी वाली एक लड़की को उसके उस्ताद ने कत्ल करके जिस्म को टुकड़े-टुकड़े कर डाला। मौलाना बना हाफिजे-कुरआन, जिसके सीने में कलामे-इलाही हो, वह ऐसी जलालत पर कैसे उतारु हो गया? कुरआन पढ़ाने में उसके नफ्स में अय्याशी के शैतान कहां से पैदा हुए? ये गौरो-फिक्र का गम्भीर मसला है? उस हाफिज ने कुरआन हिफ्ज (कण्ठस्थ) किस तरह किया था कि खौफे-खुदावन्दी उसके कुलूब में नहीं थी? क्या कुरआन को उसने सिर्फ अरबी की इबारत समझा? कलामुल्लाह क्या अरबी के सिर्फ अलफाज़ हैं? सूरह हश्र की उस आयते-रब्बानी को भी वह कैसे भूल गया, जिसमें पाक रब ने यह साफ फरमाया है कि अगर मैं इस कुरआन को पहाड़ी पर नाजिल करता, तो वह टुकड़े-टुकड़े हो जाती? हाफिज का दिल कलामे-रब्बानी से क्यों नहीं पसीजा? क्या उसका दिल पहाड़ों से भी ज्यादा सख्त था? हाफिज की सनद के बावजूद शैतानी अमल उसमें बाकी कैसे रह गई?

यही हाल आज दीनी-तालीम के क्षेत्र में काफी तकलीफ की सूरत एख्तियार करती जा रही है। हम हर साल हाफिज, मौलवी, आलिम की दस्तारबन्दी में मसरुफ हैं। क्या यह भी जायजा लेने की हमें फूर्सत है कि वह वाकई राहे-हक् के अमल पर बाअमल कितने हैं? कुरआने-पाक को याद रखना, हदीसे-पाक की जानकारी कर लेने का मतलब, हम इस्लामी हाफिज, मौलवी और आलिम होना, कैसे तसव्वुर कर लेते हैं? क्या यह देखना जरुरी नहीं की उनमें अमली इस्लाम कहां तक दाखिल है?

कुरआन, पाक रब का कलाम है। हदीस, पाक अल्लाह के पाक रसूल की बोली है। इन्हें देने से कब्ल लेने वाले का कल्ब तो पाक करना चाहिए? यह पाकीजगी जाहिर-बातिन दोनों में जब तक नज़र न आए, हम पाक रब और पाक रसूल के ईल्मे-पाक को कैसे देते रहते हैं? जाहिर जिस्म की पाकीजगी हम गुसल, वजू से हासिल करते हैं। मगर बातिन जिस्म की पाकी के लिए हमें 'लाईलाहअ'

के अमल पर बाअमल होना चाहिए। कल्ब, जेहन और ख्यालात को पाक रखने का इसके सिवा कोई ज़रिया नहीं है? अगर मुम्ब्रा के मौलाना और हाफिज 'ला ईलाहअ' की अमली तालीम में पास हो गया होता, तो उसके अन्दर अय्याशी के शैतान सिर न उठाते। वह दीनी अदारा भी चलाता था। क्या ऐसा शख्स जो अल्लाह के पाक दीन से अमली तौर पर निस्बत न रखे, वह दीनी अदारा किस इस्लामी फरोग के लिए चलाता है? दीन और दीनी अदारा क्या बेअमल और नापाक ख्यालातों के साथ दुनियां में दीने-हक की शमां रौशन कर सकती है? अल्लाह ताअला के पाक दीन और रसूलल्लाह के पाक इस्लाम के साथ यह वफादारी है या गद्दारी?

धर्म-ज्ञान, दीनी दर्स-तदरीस और पीरी-मुरीदी (गुरु-शिष्य) परम्परा के नाम पर फैली गन्दगी के लिए जिम्मेदार है कौन? हम कैसे यह जान सकें कि सही धर्म गुरु या सच्चा हाफिज या सच्चे आलिम हजरात कौन हैं? धर्म और मजहब का ईल्म रखना, खुद में धर्म या दीन दाखिल है, यह साबित तो नहीं करता? हम धर्म या दीन की सेवा करते हैं? क्या हमारा यह ख्याल दुरुस्त है? हम हदिया, वजीफा, जकात-फितरा या किसी सरकारी मदद के बिना अदारा क्या चलाते हैं? हमारी तालीम क्या ऐन सुन्नते रसूले-पाक पर कायम है? नबीअल्लाह ने कुरआन और दीन सीखने का हुक्म तो दिया है। कुरआन, अल्लाह तआला की गुफ्तगू है। क्या इसे सिखाने के लिए हममें कुर्बे-इलाही नहीं चाहिए? दीने-पाक को सिखाने के लिए हममें निस्बते-रसूलल्लाह जरुरी है या नहीं? यही वजह है कि जिस ईल्म की निस्बत सीधे अल्लाह और रसूलल्लाह से है, उस ईल्म की अमली सोहबत बिना कामिल पीर के हासिल कैसे होगी? हमारे आलिम और शैखुल हदीस या शोअबाए-शरीययत के सद्र वगैरह जो भी दीनी रहबर हैं, उनमें अमली इस्लाम के साथ हक्की इस्लाम भी मौजूद रहनी चाहिए। हम फरमाने-इलाही और फरमाने-रसूलल्लाह को सिर्फ किताबी-ईल्म की तरह पढ़कर अल्लामा बन सकते हैं, अगर हमारी रसाई नबीअल्लाह और अल्लाह तक हो गई, तो हम ओलमाए-हक़ में शुमार कर लिए जाएंगे। कामिल पीर की तालीम दीन की दुरुस्ती के लिए हमें चाहिए। दीने-हक़ उनके पास है। क्योंकि दीन जिसका है और जिससे दुनियां में कायम हुआ, उन दोनों पाक हस्तियों से उनकी कुर्बत है। ब्रम्हज्ञानी गुरु नहीं, फिर धर्मज्ञानी गुरु से शिष्य बनकर हम क्या पाएंगे? गुरु या कामिल पीर के पास ईश-धर्म या दीने-हक़ होती है। इसलिए धर्मवाद या मजहबी-फिरकापरस्ती से वह पाक है। सत्य गुरु अपनी सांसारिक ईच्छाओं का दमन कर चुका होता है, इसलिए लालच, स्त्री-प्रसंग, धन-संचय, कार, फ्लैट या भौतिक ऐश्वर्य की परछायीं उसे नहीं छूती। वह हृदय और आत्मिक जाप में तल्लीन रहकर पल-पल हरिदर्शन में आनन्दित है, इसलिए सांसारिक सुख-समृद्धि उसे आनन्द नहीं देती? वह शिष्य के दक्षिणा या नज़राना के भरोसे नहीं जीता, क्योंकि जग-स्वामी की दया-कृपा उसे प्राप्त है। गुरु-परम्परा न उद्योग है और ना व्यापार है।

यह है ईश-जीवन का आधार। ईश-जीवन तो हमें प्राप्त हैं, मगर हमारे सम्पर्क में क्या ईश्वर है? हम ईश नाम-जप, नमाज़, हज, तीर्थ, जियारत सभी नेक काम तो करते हैं, पर इन सद्कर्मों से क्या हमें ईश्वर, अल्लाह की प्राप्ति हुई है? क्या हर मनुष्य के लिए यह आवश्यक नहीं की अपने जीवन दाता को प्राप्त कर ले। यह ईश-प्राप्ति का विधान ही ईश-जीवन आधार है। और यह आधार सद्गुरु ज्ञान से ही सम्भव है। सद्गुरु-ज्ञान प्रवचन, तबलीग या तकरीर का नाम नहीं है। यह ईश-प्राप्ति का ज्ञान पूरी तरह व्यावहारिक है। इसे ही अमली ईल्म कहते हैं। सद्गुरु या कामिल पीर की प्राप्ति के लिए ईश्वर, अल्लाह से ही प्रार्थना करनी चाहिए। सुने-सुनाए पीर के सम्पर्क से कामिल पीर मिलेगा या खोटा पीर यह गारन्टी क्या है?"

26 - शैतान-इब्लीस निर्मूलन दस्ता

हजरत सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने फरमाया- "पीर-औलिया खुदा नहीं, लेकिन खुदा से जुदा नहीं। जब वह खुदा से जुदा नहीं हैं, फिर उनसे मुहब्बत रखना, उन्हें मानना यह कुफ्र, शिर्क कहां से होता है? कुफ्र और शिर्क का रिश्ता, खुदा के ग़ैर से है। जो खुदा से जुदा नहीं, जो खुदा के ईनाम से दुनियां में चमक रहा है, उसे याद करना, उसे श्रद्धा-सुमन पेश करना, शिर्क-कुफ्र की परिभाषा में नहीं आता। उर्स मनाना, अकीदत से अल्लाह वाले के लिए न्याज-फातेहा पेश करना, क्या यह अल्लाह की इबादत है? अल्लाह में वली-औलिया या पीर फना हैं, वह शरीक नहीं है। इसलिए कोई बन्दा, किसी पीर या वली की पूजा नहीं करता। इनकी रसाई (पहुंच) खुदा और रसूल तक है, क्योंकि यह दोनों में फना हैं। यही तो अल्लाह के शाने-करीमी के मजहर (प्रदर्शित करने वाले) हैं। इनके पास अल्लाह पाक की 'वेलायत' (ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा) है। इनसे जो प्यार करे, वही अल्लाह का प्यारा, इनसे जो बुग्ज रखे, वह अल्लाह का बागी। इनकी रहबरी में जो रहे, वही शैतान व इब्लीस से महफूज है। इनसे जो दूरी रखे, उसका रहबर (मार्गदर्शक) इब्लीस है। जो खुदा और रसूल के दीदार और मिलन में है, क्या इब्लीस ऐसे नेकबन्दे के करीब ठहर पाएगा। जो खुदा और रसूल को पहचानते हैं, उन्हें इब्लीस को पहचानने या भगाने में एक पल की देरी नहीं लगती। जिसने न अल्लाह को देखा, और न रसूले पाक को, उसकी रहबरी अगर इब्लीस करे, तो क्या वह पहचान पाएगा?

--इसलिए जिसे मार्फते हक और मार्फते रसूल नहीं, वही शैतान और इब्लीस के जाल में है। वही अपने नफ्स के शैतानों के साथ इब्लीसी रहनुमाई में मुब्तला है। ऐसे लोगों के रस्मी इबादतों से बच कर खुदा के सीधे और सच्चे रास्ते पर चलना ही हकपरस्ती (सत्य ईशपूजा) है। यही ईमानवालों का रास्ता है। बाकी रास्ते बेईमानवालों के हैं।

नेकबन्दे औलिया हैं। अल्लाह के नेक बन्दे की सच्चाई भी जान लें। वरना हमें नेकबन्दे के नाम पर भी धोखा खाने की सम्भावना है। प्रमुख रुप से नेकबन्दा या पुण्यकर्मी हम जिन्हें जानते समझते हैं, वह वास्तव में वह नहीं हैं। हम बन्दे तो हैं, सारे जग के जीव एवं मानव और ज़िन-जिन्नात उसके बन्दे में ही शामिल हैं। अब इन बन्दों में नेकबन्दा कौन है, यही हमें देखना है। हमने कहा था कि कामिल पीर (ब्रह्मज्ञानी सद्गुरु) तथा वली-औलिया, ईश्वर के नेकबन्दे हैं। नेकी क्या है? ऐसा कर्म जो निःस्वार्थ हो तथा जो करे उसे नेकी का कोई बदला या अपने नाम-सम्मान की चाहत न हो। वह नेकी गुप्त रुप से करे। वह ऐसी नेकी करे, जिसकी चर्चा या नाम की भूख, उस नेकी करने वाले को न हो। मगर यहां तो ख़ुदा के 'नेकबन्दे' का मामला है। बन्दा तो कोई ईश्वर के सिवा किसी का नहीं होता। इसका मतलब फिर यह हुआ कि वह बन्दा, जो ईश्वर की नज़र में नेक हो। ईश्वर की नज़र में सारी दुनियां के लोग उसके बन्दे हैं, मगर उसकी नज़र में जो नेक हो, वही उसका नेकबन्दा है। यह स्पष्ट हुआ कि हम जो भी नेकियां या पुण्यकर्म करते हैं, तो हम नेकी करने वाले या पुण्यकर्मी तो हो सकते हैं। मगर खुदा ने हमें अपना नेक बन्दा माना है या नहीं, यह जानकारी न होने से, हम ईश्वर के नेकबन्दे की सूची में शामिल नहीं हो सकते। अब नेकबन्दे का भेद यह खुला कि ऐसे नेक काम, जो खुदा पसन्द करे और जिससे खुश होकर वह हमें नेकबन्दा मान ले। सीधी सी बात है कि ऐसी पूजा, नमाज, रोजा, व्रत, इबादत हम करें, जिसे खुदा पसन्द करता है। इसी नेक काम को अपने घर या मकान में या खानकाह में किसी भी कामिल पीर के मुरीद (शिष्य) करते रहते हैं। जब खुदा उनसे खुश हो जाता है, तो उन्हें अपना दीदार कराता है। जब ईशदूत प्रसन्न हो जाते हैं, तो अपना दर्शन देते हैं। ईश्वर और ईशदूत के दर्शन की पहचान भी है। जिसे कामिल पीर भलीभांति जानते हैं। अब यह नेक पूजा हमें जब दर्शन, मिलन और साक्षात्कार तक पहुंचा देती है, तो खुदा फरमाता है- ऐ नेकबन्दे हमसे तू हमीं को पाना चाहता है। जा, हमने तुम्हें अपना वली बनाया। हमने तुम्हें अपनी वेलायत दी।

यही खुदा की वेलायत, जो ईश्वर की चिरस्थाई यशकृपा का नाम है, नेकबन्दे की पहचान बन जाती है। वरना वह पाकजात अपनी पाक नमाज में यह कहता कि सलामती हो नमाजियों और हाजियों पर। या सलामती हो दुनियां के सारे नेक काम करने वालों पर। ठीक से इस बात को समझें। वह पाकजात, जिस बन्दे को अपना दीदार देकर पाक किया। उसे अपनी वेलायत देकर हमेशा के लिए जिन्दा कर दिया, उसी के लिए कहता है कि ऐ बन्दों उन मेरे वली-औलिया या कामिल पीरों के लिए सलामती मांगों, जिन्हें हमने स्थाई सलामती दी है। नमाज में पढ़ी जाने वाली अतहियात की दोआ में यह कहा जाता है कि सलामती हो हम पर और अल्लाह के नेक बन्दों पर। यानी ऐ अल्लाह पाक तू हमें भी सलामती दे, जिस तरह अपने नेक बन्दों पर सलामती दी है। अब हर बन्दे और सारे नमाजी, आलिम, मुफ्ती या हाफिज, मौलवी या अमीरे जमात जो भी हों, वह हर नमाज में एक बार जरुर कहते

है कि सलामती हो हम पर और अल्लाह के नेकबन्दों पर। सारी दुनियां के मुसलमान, नमाज में यही कहते रहते हैं। फिर वह कौन सा नमाजी मुसलमान हैं, जो अल्लाह के नेकबन्दों की अल्लाह की नमाज में सलामती चाहे और नमाज के बाद नेकबन्दों के खिलाफ मलामती नजरिया जाहिर करे।''

सैय्यद महमूद रजा अली शाह ने एक खुलासा करते हुए फरमाया ''नेकबन्दा बनाया अल्लाह ने। वेलायत अपनी दी अल्लाह ने। वलीअल्लाह उन्हें घोषित किया अल्लाह ने। फिर हम साधारण बन्दे क्या अल्लाह से बड़े हो गए, जो वली-औलिया जैसे अल्लाह के नेकबन्दों को मुर्दा कहें। उन की ताजीम करने वालों को कब्र पूजक कहें। मजारों के बुजुर्गों की तौहीन करें। इसे ईमानवाला बन्दा कैसे पसन्द करेगा? मक्का मुकर्रमा का एक उस्ताद हजरत इमाम जाफर सादिक, सरकारे गौसे पाक, ख्वाजा गरीब नवाज और हजरत दातागंज बक्श और सारे वली-औलिया तथा पीरों का खुल्लम खुल्ला तौहीन करता है। वह जिस मस्जिदुलहराम का उस्ताद है, क्या बताएगा कि हजरत इमाम जाफर सादिक व सैय्यदना शैख अब्दुल क़ादिर जिलानी और सैय्यद ख्वाजा मुईनुद्दीन हसन चिश्ती और हजरत दातागंज बक्श कौन हैं? यह उस्ताद कहीं न कहीं इब्लीस की तरह अपने नफ्स के तकब्बुर में गिरफ्तार है। वह मस्जिदुल हराम में है, इब्लीस जन्नत में था। यह भी उस्ताद है, वह भी उस्ताद था। बस थोड़ा आपस में बड़े-छोटे भाई का फर्क है। इब्लीस नूरानी फरिश्तों का उस्ताद था। यह जमीन के हरम में मुसलमानों का उस्ताद है। इस उस्ताद को क्या यह ईल्म है कि हरम को पाक किसने किया? वह बताए की उसके बाप-दादाओं ने हरम को पाक किया? या नबीए पाक और अलीए पाक ने हरम को पाक किया। इस उस्ताद ने नमाजें किससे पायीं? अपने मां-बाप से या रसूले पाक से। यह कुरआन किसकी पढ़ता है? क्या उसके बाप-दादाओं पर कुरआन नाजिल हुआ था या रसूले पाक पर? **यह उस्ताद किस काबे को पाक मानता है, जिस काबे में हजरत अली की पैदाईश होने पर भी अल्लाह पाक ने उसे पाक करार दिया। क्या किसी इन्सान के जच्चेखाने की जगह पाक मानी जाती है? उस्तादजी, जरा बन्दे के दायरे में रहकर देखो। अल्लाह ने उस जगह को इसलिए पाक माना, क्योंकि अल्लाह का शेर, हैदरे कर्रार आया है। वह अल्लाह का शेर है, इसलिए पाक है। उसी पाक शेर ने नबीए पाक के साथ वहां मौजूद हर कबीले के खुदाओं को हटा कर जगह पाक कर दी। क्या उस्ताद को और उसके सारे जिन्दा-मुर्दा खानदान को पाकी का यह सर्फ हासिल है?** जो नबीए पाक के आले-पाक की अजमत और बुलन्दी का एहतराम न करे, वह काबा में हो या मसजिदे नबूवी में, वह नापाक है। वह यजीद की तरह मरदूद और लानती भी है।

उस्ताद जी, यह जानते हुए भी कि नबीए अकरम नूरे मुजस्सम सललललाहो अलैहे व सल्लम के आले-पाक हजरत इमाम जाफर सादिक हैं। हजरत पीराने पीर दस्तगीर हैं। हजरत दातागंज बक्श हैं

और हजरत ख्वाजा गरीब नवाज हैं, फिर तुमने किस इस्लामी ईल्म और किस कुरआन की रौशनी में उनकी शान में गुस्ताखी की? लगता है यह मस्जिदुल हराम का उस्ताद, यजीदी इस्लाम का रहनुमा है। वह अपना नाकिस ईल्म उन पाक शहजादए रसूल के लिए इस्तमाल करने लगा, जिनके बाप-दादाओं ने इस्लाम की बुनियाद रखी है। वह भी इस्लाम की वजह से तो मुसलमान और उस्ताद कहलाता है? मियां तुम्हें तो मालूम है कि इन पाकीजा आले-पाक के घर की ही ईल्मे शरीयत, तरीकत, हकीकत, मार्फत है। अल्लाह का कुरान इनके नाना जान को मिला। इन्हीं के नाना जान ने अल्लाह की सच्ची नमाजें बतायीं। मस्जिदुल हराम में रहकर भी तुम में इब्लीसी तकब्बुर कहां से आ गयी? पाक काबा के मकाम पर रहने के बावजूद तुम में नापाक नफ्सीयाती शैतान कैसे दाखिल हो गए? हैरत है? क्या हुबल, लात, मनात जैसे बुतों के साथ ही तुम्हारी इबादत आज भी कायम है? मियां उस्ताद जी, नबीए पाक और उनके आले-पाक ने अगर वह जगह पाक न की होती तो तुम आज सैकड़ों खुदाओं के बुतखाने के उस्ताद कहलाते। तुम तो मक्का में हो, अरबी नहीं जानते, यह कैसे हो सकता है? क्या तुम अपनी नमाज में दरुद शरीफ को छोड़कर नमाजें पढ़ते रहे हो? अगर नहीं, तो जिस नबीए पाक और उनकी आले-पाक पर हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनकी आल की तरह रहमत-बरकत मांगते हो, क्या इसीलिए की तुम उनकी तौहीन करो। नमाज का दरुद लगता है, सिर्फ जुबानी पढ़ते हो और अपने नफ्स के माबूदों से यह मांगते हो कि रसूले पाक की आले-पाक को दुनियां में नीचा दिखाने के लिए हमें रहमत और बरकत दोनों अता किया जाए? तुम्हें पता है अल्लाह की रहमत क्या है? फिर से सुन लो अल्लाह की आवाज- 'ऐ मेरे नबीए पाक, हमने आपको सारे आलम के लिए रहमत बनाकर भेजा है।' नबीए-पाक अल्लाह की जुबान में 'रहमतललिलआलमीन' हैं। अल्लाह की बरकत किसमें चाहिए, रहमत में ही न। फिर रहमत तो नबीए-पाक हैं। और बरकत उनकी आले-पाक हैं। गौर करो अल्लाह पाक की रहमत और बरकत आज 1429 हिजरी के सालों तक किस तरह कायम है। तेरे यजीद लानती ने तो गुलशने-रहमतललिलआलमीन को करबला में अपनी पूरी कुव्वत से उजाड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। मगर नबीए पाक के एक आले पाक हजरत इमाम जैनुल आब्दीन हुजूर में अल्लाह ने वह बरकत दी की आज दुनियां में हर तरफ नबीए पाक के आले-पाक ही आले-पाक नजर आ रहे हैं। यह करामत उस पाक शहजादए-रसूल हजरत इमाम हुसैन की है, जिन्होंने ईल्लल्लाह के लिए अपना ही नहीं अपने 72 साथियों की कुर्बानी खुशी से अल्लाह की राह में पेश कर दी। अल्लाह पाक ने अपने नबीए पाक को रहमत दी और उनके आले-पाक में खूब बरकत भी दी है। अल्लाह पाक इसलिए नमाज में अपने हर बन्दे को बता रहा है कि नबीए पाक और उनके आले-पाक में मेरी रहमत और बरकत दोनों है। अरे उस्ताद, तुम तो इब्लीस से भी ज्यादा खतरनाक उस्ताद निकले। तेरे रोजे, नमाज, हज और तिलावते कुरान का क्या

होगा? अल्लाह तआला की बारगाह में फौरन तौबा करो। फिर नबीए पाक और उनके आले-पाक से माफी मांगो। फिर नये सिरे से किसी कामिल पीर से कल्मा पढ़ो। तेरी सारी इबादत यजीदी है। तूने हलक के उपर से नबीए पाक और आले-पाक के लिए नमाज की दरुद पढ़ी है। न तेरी नमाज दुरुस्त हुई और ना ही तेरी तरावीह और ना ही हज और रोजा। तेरा तौहीद पढ़ना भी हलक से उपर का है। अब बताओ तुम मुसलमान हो या मुनाफिक। तुम यजीदी हो या हुसैनी?

तेरी तहरीर में शिर्क, बिदअत, कुफ्र, काफिर की सारी मिसालें, यह गवाही दे रही हैं कि तुम रसूले-खुदा का सिर्फ नाम जानते हो, उनकी निस्बत से तुम्हारा वास्ता नहीं है। फिर तुम कुरआन का मतलब क्या समझोगे? कुरआन तो अल्लाह और नबीए पाक के बीच की बातचीत है। अल्लाह ने जो कहा, नबीए पाक ने समझा। नबीए पाक के पास जब-जब कुरआन का पैगाम आया, क्या तुम मौजूद थे? अगर नहीं, तो फिर तुमने खुदाई फरमान का मतलब किस खुदा या नबी से जाना? तुम लफ्जी अल्लाह और लफ्जी रसूले-पाक को जानते हो। फिर कुरआने पाक की हकीकत तुम जैसे लाखों उस्ताद भी नहीं समझ सकते। तुम मसजिदुल हराम के उस्ताद किस ईल्म से मुकर्रर किए गए? क्या वह ईल्म भी आले-पाक के घराने का नहीं है? जिस ईल्म से तुम उस्ताद बने हो, वह ईल्म भी तुम्हारे घर का नहीं। जिस उस्तादी की तुम तन्ख्वाह पाकर अपना और अपने परिवार का पेट पाल रहे हो, वह नौकरी भी आले-पाक के नाना जान के दिए ईल्म से है? मियां, जिनके टुकड़ों पर पल रहे हो, उनका शुकराना अदा न करके उनके ही आले-पाक पर गुर्राते क्यों हो? ऐसी बेवफाई तो ग़ैर-कुत्ते भी नहीं करते। अपने यजीदी ईमान से ही बोलो, क्या कुरआन का नजूल तुम पर हुआ? क्या हदीसे पाक तुम्हारे घर की है। फिर इन्हीं ईल्मों की बदौलत तो तुम उस्ताद बने हो। दोनों अमानतें तो रसूले-पाक की है। फिर तुम रसूलल्लाह के खानदान वालों की तौहीन करके अपनी उस्तादी किसे दिखा रहे हो? क्या रसूलल्लाह के ईल्म से ज्यादा रुपया, तुम्हें कोई यजीदी मिशन दे रहा है? सच बोलो। खौफ न करो। आज के यजीदपरस्तों को तुम्हारे हुसैन विरोधी नाकिस ईल्म की जरुरत है, उन्हें तुम्हारा खून नहीं चाहिए। वह तुम्हारे नफ्स के माबूदों को पहचानते हैं। तुम्हें यजीदी फरमान सुनाने की मजदूरी जरुर देते हैं। वरना तुम नेकों और सच्चों के साथ होते।

क्यों उस्ताद, नबीए पाक छूटें या उनके आले-पाक, इससे तुम जैसों का क्या लेना-देना? तुम्हारा नफ्सी खुदा बस सलामत रहे। उनकी पैरवी में ही तेरे लिए रहमत और बरकत सब कुछ है। तुम्हें उस्ताद होने से यह ईल्म तो होगा कि काबा के पाक होने के बाद भी मक्का में काफिर और मुशरिक दोनों की नस्लें बची हुई थीं। जरा अपने आपको भी अपने आईने में देख लो।

तुम्हें नमाज की दरुद शरीफ को अपने दिल-दिमाग में जब दाखिल करने की तमीज नहीं, फिर तुम्हारा सजदा अल्लाह के नाम पर किसके लिए होता होगा? वह सजदा अपने नफ्सी शैतानों के लिए

करते हो या इब्लीस के लिए? यह तो तुम्हारा दिल बताएगा। यजीदी मिशन को छोड़ो। हुसैनी मिशन के फरमाबरदार बनो। तुम मसजिदुल हराम के उस्ताद हो या किसी भी दीनी अदारे या जमात के रहबर, पहले उस पाकजात की पाक निस्बतों की ताजीम करना सीखो। तुमने उस पाक रब को पहचाना नहीं। तुमने यह भेद भी आज तक नहीं जाना। उस पाकजात की नज़र में कौन-कौन पाक है? जरा अपने दिल-दिमाग के शैतानों को 'लाईलाहअ' करके गौर तो करो। नमाज उस एक पाक रब और वहदहू ला शरीक की सबसे प्यारी इबादत है। वह पाक और महान अल्लाह, हमेशा अपनी ही पूजा करने का हुक्म देता है। मगर नमाज के अत्तहियात और दरुद शरीफ में जरा गौर तो करो। वह किन-किन पाक लोगों की शिरकत को भी पसन्द फरमा रहा है। नमाज में अल्लाह के हर बन्दे हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम को सलाम कर रहे हैं। वह नबीए पाक और उनके आले-पाक के लिए अल्लाह की रहमत व बरकत भी मांग रहे हैं। नमाज में हर बन्दे अल्लाह के नेकबन्दों की सलामती भी चाह रहे हैं। नमाज में हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनकी आले पाक (पवित्र सन्तानें) भी हैं। हजरत नबीए पाक और उनकी आले-पाक भी शामिल हैं। हैरत है, जो पाकजात सचमुच एक है और ला शरीक है, उसे इतने लोगों की शिरकत अपनी पूजा नमाज में क्यों कर पसन्द आयी?

इस नमाज जैसी पाक और खासुलखास इबादत में आए नाम वाले, उस पाकजात के कौन हैं? जिनके शामिल रहने के बावजूद भी खुदा उनको अपनी इबादत में शरीक नहीं मानता? खुदा का इसमें आखिर भेद क्या है? बजाहिर दो नबीए-पाक एवं उन दोनों की आले-पाक और खुदा के नेकबन्दों को भी नमाज में हम शामिल रखते हैं। मगर वह सर्वमहान और सर्वप्रशंसनीय तथा सर्वमहापवित्र प्रभु इनको अपने में शरीक करना नहीं मानता। बात साफ है कि नबीए-पाक, वह हैं, जो उस पाक के साथ हैं। नबी के आले-पाक भी वह हैं, जो उस पाकजात के साथ हैं। खुदा के नेकबन्दे, वह हैं, जो उस पाक के ही साथ साथ हैं। अब बताए कोई की ला शरीक ने शरीक किसे किया? जो उस पाक रब के साथ हैं, वह उस पाक के न गैर हैं और ना ही वह शरीक हैं। वह अल्लाह पाक इन्हें इतना लाइन्तहा प्यार करता है कि वह चाहता है कि जहां मेरी पूजा-इबादत हो, वहां मेरे साथियों का भी नाम, मेरे बन्दे ताजीम और प्यार से लेते रहें। अगर खुदा पर गौर करें, तो लगता है, जैसे वह फरमा रहा हो- ''मैं हर जगह हाजिर-नाजिर हूं। मेरे पाक साथी भी हर जगह हाजिर-नाजिर हैं। मुझे तुम या अल्लाह कहके पुकारते हो। वह मेरे साथी हैं, वह भी या कहके पुकारने पर सुनते हैं। ऐ मेरे बन्दों, ईल्म गैब मेरा है और मुझसे है। फिर यह तुम कैसे समझ गए कि मेरे साथियों को ईल्म-गैब नहीं। जरा सोचो, जो मेरा है, मेरे साथ है वह मेरे ईल्म-गैब से नावाकिफ कैसे रहेगा? तुम कहते हो मेरे अम्बिया (ईशदूत) किसी की शफाअत (सिफारिश) नहीं कर सकते? क्या वह अम्बिया तेरे हैं, जो शफाअत से मजबूर हैं? अम्बिया मेरे, फोकरा मेरे, औलिया मेरे, वह क्या-क्या कर सकते हैं, यह जानकारी मुझे

है या तुझे? जो मेरी पाक नमाज में मेरे साथ हैं, वह मेरी नजर से वह भी कर सकते हैं, जो मैं करता हूं। उन्हें अख्तियार देने वाला मैं हूं या तुम हो? मैं तुम्हारे, मेरे-तेरे के मसले से पाक हूं। मेरे सारे यार भी पाक हैं। फिर तेरी नापाक अक्ल में मेरे पाक दोस्त कैसे आएंगे? अपने जेहन और दिल की नापाकी को मेरे दोस्तों की सच्ची मुहब्बत से पहले पाक कर लो, पाक खुदा कौन है, समझ जाओगे। तुम मेरी पाक नमाज में उनके पाक नाम भी लेते हो, तो समझो कि उनका जश्न मनाना मुझे पसन्द क्यों नहीं आएगा? जब तुम मेरे महबूब और मकबूल साथियों की तारीफें करोगे, तो मैंने पहले ही कहा है कि सारी तारीफें मेरी हैं। ऐ मेरे बन्दों तुमने गौर यह नहीं किया कि मैं और मेरे फ़रिश्ते अपने नबीए पाक और उनके आले-पाक पर दरुदो सलाम भेजते हैं। यह मेरे खास और मेरे साथ न होते तो मैं तुम्हें हुक्म क्यों देता कि उन पर दरुदो-सलाम तुम भी भेजो। --फिर अपने महबूबों की ताजीम जब मैं करता हूं, तो तुम नहीं करोगे? अगर तुमने गुस्ताखी की तो तुम्हारे नमाज, रोजा, हज, इबादत को मैं कुबूल ही करुंगा, यह कैसे तुमने ख्याल कर लिया? तुमने देखा है कि इब्लीस की सारी इबादतें, सिर्फ एक नाफरमानी से हमने खाक में मिला डालीं, फिर तेरी इबादतों का हश्र क्या होगा? अरे वह तो मेरे सारे प्यारे पाक महबूब हैं। मेरे पाक महबूबों के लिए तुम बन्दे जो कुछ करोगे, मैं उसे उसी तरह कुबूल करुंगा, जिस तरह इन महबूबों के नाम के साथ तुम मेरी नमाजें अदा करते हो।''

उस्ताद जी जैसे विद्वान आज जरुरत से ज्यादा पैदा हो गए हैं। इसके पीछे इस मिशन को जारी रखने वाले यजीदी-इस्लाम के सहयोगी हैं। यह उनकी मान-प्रतिष्ठा और छवि धूमिल करने के प्रयत्न में रहते हैं, जिनसे हुसैनी-इस्लाम जिन्दा है। यह अल्लाह पाक के नाम पर दुनियां को डरा कर गुमराह करते हैं। इनके पास न नमाज की खुदाई मार्फत है और न अल्लाह के नबीए पाक और उनके आले-पाक की मुहब्बत है। यह अल्लाह के नेकबन्दों को भी नहीं पहचानते। बस इस्लामी नियम-कानून को यह जुबानी रटते-रटाते रहते हैं। यह उस नमाज, रोजा, हज और तौहीद के प्रचारक हैं, जो नफ्स के शैतानों के साथ अदा की जाती है। यह इस्लाम पे उसी तरह अमल करते हैं, जिस तरह यजीद मर्दूद करता था। यह अवाम को दिखाते हैं कि हम अल्लाह व उसके रसूल के बताए रास्ते पर बाअमल हैं। मगर इनके अमल में अल्लाह व रसूल का सिर्फ नाम रहता है, वह अमल इनके दिलों में दाखिल नहीं रहती। अल्लाह पाक की सच्ची इबादत को दीनी-फरोग के नाम पर यह जगह-जगह नुमाईशी खेल-तमाशे बनाते हैं। यह अवाम में यह कभी भी नहीं कहते कि ऐ मुसलमानों, नमाज जब तक पूरी नहीं हो सकती, जब तक तुम नबीए पाक को सलाम न करो। नमाज तब तक अधूरी है, जब तक अल्लाह के नेकबन्दों की सलामती दिल से न चाहो। नमाज तब तक कामिल नहीं होगी, जब तक नबीए-पाक और उनके आले-पाक के लिए रहमत व बरकत न मांगों। **यह अरबी जुबान की नमाज पढ़ने-पढ़ाने पर जोर बहुत देते हैं, मगर गैर-अरबी लोगों को यह नहीं बताते कि नमाज**

में जो कुछ पढ़ा जाता है, उसे अपने दिल-दिमाग में कैसे कायम रखा जाए।

जिस दिन यह अवाम में नमाज की लफ्जी हकीकत जाहिर कर देंगे, उसी दिन अवाम उनसे पूछेगी कि जो नबीए पाक एवं उनके आले-पाक और अल्लाह के नेकबन्दे हैं, उन्हें मुर्दा क्यों कहते हो? नबीए-पाक अगर मुर्दा होते तो अल्लाह पाक की नमाज में हम आज उन्हें सलाम क्यों करते हैं? लोग उनसे पूछेंगे कि नबीए-पाक के आले-पाक तो सैय्यदना इमाम हुसैन, सैय्यदना इमाम जाफर सादिक, सैय्यदना पीराने-पीर दस्तगीर, सैय्यदना हजरत ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती, सैय्यदना हजरत दातागंज बक्श, सैय्यदना हाजी अली, सैय्यदना हाजी अब्दुर्रहमान उर्फ बाबा हाजी मलंग, सैय्यदना हाजी वारिस अली शाह, सैय्यदना ताजुद्दीन औलिया, सैय्यदना जलालुद्दीन मीर सुर्ख, सैय्यदना ईरशाद हुसैन जाफरी, सैय्यद जमाल शाह मजलूम, सैय्यद मखदूम शाह माहीमी, सैय्यद शमसुद्दीन शाह और सैय्यदना हजरत निजामुद्दीन औलिया आदि बेशुमार हैं, जब इन पर रहमत व बरकत हम हर नमाज में मांगते हैं, तो फिर इनसे दूरी बनाए रखने की तालीम हमें किस मुंह से देते हो?

जिन्हें अल्लाह पाक की नमाज में शिरकत हासिल है, उनके मानने वालों को मुशरिक और बिदअती किस इस्लामी कानून से कहते हो? वह तो रसूलल्लाह के आले-पाक भी हैं और अल्लाह के कामिल औलिया अल्लाह भी हैं। अगर अल्लाह के वली-औलिया नेकबन्दे में शुमार हैं, फिर तो उनकी कुर्बत में ईमान की ताजगी के लिए हम सभी को जाना चाहिए। अल्लाह की पाक नमाज में जो दाखिल हैं, उनकी मजारों पर दाखिला लेना, किस शिर्क-बिदअत की पहचान है। अगर यही कुफ्र, शिर्क और बिदअत तुम्हारे जेहन में है, तब तो हर नमाजी, हर हाजी और हर इबादतगुजार सबसे बड़ा कुफ्र करने वाला तथा मुशरिक और बिदअती कहलाएगा।

क्या वली-औलिया नमाजें नहीं पढ़ते हैं? क्या बिना नमाज, रोजा, तौहीद, जकात और हज की हकीकत को जाने, उन्हें अल्लाह ने अपनी वेलायत दे दी और अपने नेकबन्दों में उन्हें शामिल कर लिया? अल्लाह के नेकबन्दे की पहचान अल्लाह की वेलायत है, वरना उस पाकजात की पाकीजा नमाज में नेकबन्दे शामिल नहीं होते। जिनकी सचमुच निस्बत उस पाकजात से है, वही तो उसकी पाक नमाज में शामिल है। जो उस पाक खुदा की नमाज में है, वही तो सारे पाक हैं। वरना वह पाकजात अपने पाक नमाज में नापाक को शामिल नहीं कर सकता। जो पाक हुआ, उसमें उस पाकजात की पाक सिफतें दाखिल हो गयीं।

अल्लाह पाक है। जो उसके साथ हो, वह भी पाक है। पाक रब में जो फना हुआ, वह पाक है। इसलिए उसके सारे नबी, रसूल, पैगम्बर, ईशदूत भी पाक हैं। नबीए-अकरम नूरे मुजस्सम सललललाहो अलैहे व आलेही व सल्लम के सारे आले-पाक, हमेशा के लिए पाक हैं। अल्लाह के सारे फोकरा पाक हैं। अल्लाह के सारे वली-औलिया, दरवेश, मलंग, कलन्दर पाक हैं। अब बताए कोई की इन सारे

पाक से कोई बन्दा पाक मुहब्बत रखे तो वह भी पाक हो सकता है या नहीं? अब यह बन्दे की मर्जी है, वह नापाक रहे या पाक होने के लिए कदम बढ़ाए। वह सारे आलम का रब हम सभी को अपने पाक रास्ते पर चलने की तौफीक दे। आमीन।।" ●●●

✡ 27 - सत्य की खोज ✡

प्रश्न - 1: खानकाह किसे कहते है? कामिल पीर कौन है?

अनजाना चिश्ती : किसी पूर्ण योगी (कामिल वली) या सद्‌गुरु (कामिल पीर) के रहने की जगह को खानकाह या आश्रम या मठ या कुटी कहते है। जहां सत्य ईश-पूजा, नमाज की निःशुल्क शिक्षा देकर शिष्यों को ईश-साक्षात्कार के मार्ग पर चलाया जाता है। खानकाह या सत्य आश्रम, उन्हीं की हो सकती हैं, जो शिष्य (मुरीद) अपने पूर्ण सद्‌गुरु के सम्पर्क में रह कर ईश्वरीय योग-मार्ग (राहे-सुलूक) की मन्जिले पूर्ण कर चुका हो तथा उसे अपने योगी सद्‌गुरु द्वारा जांच-परख उपरान्त 'सद्‌गुरु' योग्य मान्यता दी गई हो। किसी भी सद्‌गुरु के पीछे उसकी सद्‌गुरु परम्परा होती हैं। "सद्‌गुरु" - अपने किसी पूर्ण सद्‌गुरु से पूर्ण दीक्षित होता है तथा इस मार्ग में सफल होने पर ही उसे सद्‌गुरु पद प्रदान की जाती है। इसलिए सद्‌गुरु-वंशावली के बिना यदि कोई सद्‌गुरु है, तो यह स्थिति सन्देहास्पद है। ईश्वर या किसी अवतार, पैगम्बर एवं वली-औलिया आदि के सन्दर्भ में उन पर प्रवचन (तकरीर) मौलवी-आलिम या धार्मिक विद्वान देते हैं। स्टेज, मंच या जलसा-जुलूस एकत्र करके समाज को ईश्वर, अवतार, पैगम्बर आदि के बारे में हृदयस्पर्शी शैली में समझाना- बताना उनका काम है। वे धार्मिक-जगत के 'धर्म गुरु' या 'धार्मिक सद्‌गुरु' कहला सकते हैं, उनका कोई धार्मिक आश्रम भी हो सकता है। हर विद्या के जिस तरह 'गुरु' होते हैं, उसी प्रकार हर धर्म शास्त्र के व्याख्याता या विद्वान भी अपने-अपने विषय के 'गुरु' होते है। इन्हें हम 'आध्यात्मिक सद्‌गुरु' (कामिल पीर) नहीं कह सकते। आध्यात्मिक सद्‌गुरु- योगी-परम्परा का सद्‌गुरु होता है। उसमें ईशकृपा का आध्यात्मिक बल होता है। वह अन्तर्दृष्टि वाला होता है, जिसे सूफी मत में 'साहबे-कश्फ' कहते हैं। ऐसा सच्चा आध्यात्मिक सद्‌गुरु, जहां होता है, उस स्थान को 'आध्यात्मिक आश्रम' या खानकाह कहा जाता हैं।

सत्यगुरु से सत्य खानकाह है। सत्यगुरु की प्राप्ति हेतु आप यह विधि अपनाएं। आप सर्वप्रथम शारीरिक रुप से पवित्र हो कर साफ-सुथरा वस्त्र धारण करें। रात्री बेला में घर या फ्लैट के किसी एकान्त स्थान में दिल और जुबान से यह नीयत तीन बार करें- " ऐ सारे संसार के मालिक मैं अमुक सद्‌गुरु से या किसी भी सत्य आध्यात्मिक गुरु या कामिल पीर से आध्यात्मिक शिष्य

(मुरीद) बनना चाहता हूं। मेरे हिस्से का सद्‌गुरु (कामिल पीर) जो भी हो, उनका स्वप्न में दर्शन करा दें या उनसे साक्षात भेंट करा दें।" अथवा यूं कहें- "ऐ पाकजात, मैं तेरी बारगाह में तेरे महबूब हजरत मुहम्मद सल्ले अला व सल्लम के वसीले से अपनी हर गुनाहों से तौबा करता हूं। मैं तेरी सच्ची इबादत के लिए तुझसे एक कामिल पीर की फरियाद करता हूं। मुझे कामिल पीर अता फरमा।" उसके बाद तीन बार या 11 बार गायत्री मन्त्र या दरुद शरीफ (सललललाहो अलैहे व आलेहीं व सल्लम) पढ़ें। फिर 1100 बार "हरिओम्" या "हक अल्लाह" पढ़ें। उसके बाद सो जाएं। अकेले और एकान्त में सोएं। एक रात से चालीस रात के अन्दर जो भी आपका सच्चा 'सद्‌गुरु' (कामिल पीर) होगा, उसकी सूरत स्वप्न में दिखेगी। अगर अपरिचित सूरत दिखती है, तो शान्त रहें। आपको वही स्वप्न में दिखने वाला सद्‌गुरु कमसे कम 40 दिन अथवा अधिकतम तीन वर्ष के भीतर मिल जाएगा। कभी-कभी तीन माह के भीतर ही सद्‌गुरु से भेंट हो जाती है। इस प्रयोग से समाज़ के लोग झूठे या ढ़ोंगी सद्‌गुरु या गुरु या पीर से बच सकते हैं। इसलिए आध्यात्मिक शिष्य बनने के लिए देखा-देखी या किसी के कहने पर किसी भी गुरु से मुरीद या शिष्य नहीं बनना चाहिए।

हम कैसे पहचानेंगे कि सद्‌गुरु या पीर की वेशभूषा में सुसज्जित व्यक्ति असली है या नकली। मेरे सद्‌गुरु सूफ़ी दीदार शाह बाबा ने हमें बताया कि कामिल पीर या कामिल मुरीद (पूर्ण शिष्य) के पास ईश-ध्यान से प्राप्त गुप्त नेत्र या अन्तर्दृष्टि होती है। वे जब इस नेत्र से देखते हैं तो असली पीर के हृदय में ईश्वर या ईशदूत का वास दिखाई देता है। यदि नकली गुरु या पीर है तो उसके दिल में सांसारिक कामनाएं साकार रुप में दिखती हैं। लेकिन साधारण आदमी यह जांच-परख नहीं कर सकता। उसे चाहिए कि इस ढ़ंग से परीक्षण करें। मान लिया की आपके समक्ष कोई विपत्ति या समस्या अथवा कठिनाई तत्काल उत्पन्न हुई। आप गुरु या पीर के रुप में जिसे जानते हैं, आंखें बन्द करके उस पीर या गुरु की सूरत को देखने का प्रयत्न करें। अपने इस कल्पना ध्यान में उसे तीन बार देखें। यदि आपकी समस्या/कठिनाई में सुधार होता है, तो जान लें कि वह गुरु या पीर कुछ हद तक ईश-प्राप्ति के मार्ग पर है। यदि समाधान तत्काल मिल रहा है, तो वह पूर्ण सद्‌गुरु या कामिल पीर है। यह परीक्षण कार्य आप अपने घर में एकान्त स्थान पर करें। पुनः दूसरी बार किसी नए मामले में इसी प्रकार आजमाएं। फिर तीसरी बार पुनः किसी मामले में परीक्षण लें। अगर तीनों परीक्षण में उक्त पीर या सद्‌गुरु खरा उतरा तो वह कामिल पीर (आध्यात्मिक सद्‌गुरु) है। ध्यान करते समय आपको अपनी समस्या कहने की आवश्यकता नहीं है। पीर प्रत्यक्ष में शरीर वाला है। लेकिन अप्रत्यक्ष में वह ईश्वर में विलय (फना) होता है। वह अपने ईशदूत (पैगम्बर) में भी विलय होता है। उस पीर या गुरु का जो भी सद्‌गुरु है, वह उसमें भी विलय होता है। जब वह तीनों में विलय है, फिर उस पीर रुपी व्यक्ति में इन तीनों की ईश-ज्योतियां कायम

होती हैं। अर्थात- सद्गुरु में मौजूद ईश-ज्योति तथा ईश-दूत की ईश-ज्योति और ईश्वर की ज्योति। यह सारी ज्योतियां तो ईश-ज्योति (नूरे खुदा) ही हैं। इसी कारण सत्य गुरु के ध्यान करने पर इन तीनों की उनमें छिपी ईश-ज्योति उनकी सूरत में प्रकट होकर समस्या या कठिनाई को दूर कर देती हैं। साधारण मानव के लिए यह चमत्कार या करामत है, मगर पीर के लिए यह सामान्य क्रियाएं हैं। जिसे ईश साधना से ईश-ज्योति (नूरे-खुदा) की प्राप्ति है, वही सच्चा पीर है। इसी कारण उसके ध्यान करने में साधारण व्यक्ति को अपनी व्यथा या दुःख बताने की जरुरत नहीं है। वह अपने प्राप्त नूरे-खुदा (ईश-ज्योति) से फौरन जान जाता है कि अमुक व्यक्ति ने किस कारण मेरा ध्यान किया है। ईश-ज्योति प्राप्ति वास्तव में ईश-दर्शन तथा ईशदूत दर्शन एवं उसके सद्गुरु के ध्यान अवस्था में प्राप्त दर्शन से मिलती है। बाह्य रुप में दिखने वाला गुरु जब तक ध्यान अवस्था में नहीं दिखता, शिष्य को गुरु की प्राप्ति नहीं हुई। वह ध्यान में दिखता भी है तथा बातचीत भी साकार अवस्था की भांति करता है। इसी स्थिति को अपने सद्गुरु में शिष्य का विलय होना कहते हैं। सूफी समूह इसी अवस्था को 'फनाफिल शैख' कहते हैं। इसी तरह ईशदूत एवं ईश्वर में विलय (फना) होने की स्थितियां होती हैं। यही दर्शन-मिलन और वार्ता जब निरन्तर गति से शिष्य को प्राप्त होती है, तो वही शिष्य एक दिन पूर्ण सद्गुरु के रुप में पदासीन हो जाता है। यह कठिन साधनाएं हैं। किन्तु कामिल पीर के निर्देशन में सम्भव हो जाती हैं। बिना गुरु के इस दिशा में सफलता सम्भव नहीं है।

नकली पीर या फर्जी गुरु में इस ईश-ज्योति की शक्ति नहीं होती। इसलिए उसका ध्यान करने से किसी विपत्ति या समस्या का तत्काल समाधान नहीं होता। पीर की जरुरत क्यों है? ताकि हम ईश-पूजा, इबादत का ढ़ंग सही सीख लें। सोचिए जो ईश और ईशदूत (पैगम्बर) से मिलन न रखे, वह किसी अन्य को ईश या ईशदूत मिलन कैसे कराएगा? इसलिए गुरु-शिष्य परम्परा (पीरी-मुरीदी कार्य) आज नकली पीरों के कारण समाज में अविश्वास का कारण बनती जा रही है। सामान्य मनुष्य किसी के धार्मिक ज्ञान और सूरत-शक्ल पर फिदा हो कर उसे अपना गुरु बना लेता है। जबकि पीरी-मुरीदी ईश्वर से मिलन और साक्षात्कार का सत्यमार्ग है। जिस पीर या गुरु में ईश दर्शन एवं ईशदूत (पैगम्बर) दर्शन तथा उनसे वार्तालाप करने की गुण-शक्ति नहीं है, ऐसा सद्गुरु या पीर तो ईश-मार्ग का लुटेरा है। यदि गहराई से देखेंगे तो उसमें लालच, धनसंचय तथा स्वनाम मद एवं अनेकों स्वार्थपूर्ति के गुण होंगे। वह पथ-प्रदर्शक के रुप में ईश-नाम का व्यापारी होगा।

सद्गुरु या पीर ईश्वर द्वारा अधिकृत होते हैं। यह वह समुदाय है जो ईश्वर को बताते भी हैं और उससे शिष्य (मुरीद) को मिलाते भी हैं। जरा ध्यान से विचार करिए कि उन मजारों, दरगाहों में कौन हैं?उनमें वही पूर्ण शिष्य हैं, जो अपने सद्गुरु शिक्षा से ईश्वर को प्राप्त कर लिए हैं। इनकी ईश-प्राप्ति सत्य है। अन्यथा वे संसार को खुशियां निरन्तर कैसे बांटते? कामिल पीर

वह पारस पत्थर है, जो सामान्य मानव को ईश-मिलन कराकर खरा सोना बनाता है तथा उसे लोक-परलोक में चमका देता है। आप देखिए- हजरत ख्वाजा गरीब नवाज, सैय्यद निजामुद्दीन औलिया, हाजी अली, हाजी मलंग और बाबा ताजुद्दीन औलिया आदि को। इन्हें इनके पीरों ने ऐसा चमकाया कि प्रलय तक के लिए यह विश्वमानवजाति की ईश-सेवा में संलग्न हैं। इन पीरों ने भी अपने शिष्यों को चमकाया। इसी परम्परा को सद्गुरु-वंशावली (पीरे तरीकत का शेजरा) कहते हैं। ईश्वर की ओर से आज के समय काल में ईश-पथ प्रदर्शक (कामिल खुदाई रहनुमा) यही कामिल पीर हैं। समाज को ईश्वर की सच्ची पूजा-नमाज सीखाने के लिए यही समूह ईश-सरकार [Govt. of GOD] द्वारा प्राधिकृत [Authorised] है। हम सरकारी प्रतिनिधि [Govt.Representative] से ही शिक्षा-दीक्षा ग्रहण करें। गैर-सरकारी प्रतिनिधियों [Unauthorised Govt.Representatives] से सावधान रहें। ईश-ज्ञान, ईश-ग्रन्थ ज्ञान, ईशदूत (पैगम्बर) ज्ञान में विद्वान होने का अर्थ यह नहीं होता कि अमुक-अमुक विद्वान ईश-कृपा प्राप्त हैं अथवा ईश्वर द्वारा प्राधिकृत हैं। धर्म-ज्ञान (मजहबी ईल्म) से कोई व्यक्ति धर्मगुरु या मजहबी उस्ताद तो बन सकते हैं, मगर ईश व ईशदूत (पैगम्बर) दर्शन-साक्षात्कार के बिना सद्गुरु (कामिल पीर) नहीं बना जा सकता। समाज में कुछ ऐसे भी सद्गुरु (पीर) आज दिखते हैं, जो दोवा-तावीज व झाड़-फूंक करने का नाम पीरी-मुरीदी करना समझते हैं। जिसे ईश-साक्षात्कार होगा, उसके जुबानी कथन से कष्ट दूर हो जाते हैं। इस्लामी कामिल पीरों में इन दिनों शिष्य बनाने का अनुमति पत्र या खेलाफतनामा भी तमाम लोगों ने जुगत भिंड़ाकर प्राप्त कर लिया है। वे इस कागजी सनद को कामिल पीर होने का प्रमाण पत्र समझते हैं। जबकि उनमें ईश्वर और ईशदूत के साक्षात्कार का गुण-धर्म नहीं है। यही नकली पीर हैं। ईश-अधिकृत कामिल पीर (सद्गुरु) का प्रथम कार्य समाज को ईश्वर की सत्य पूजा, नमाज, प्रार्थना सिखाना है। वह पूजा पद्धति से यह प्रमाणित भी कर देते है कि सत्य पूजा या असत्य पूजा में अन्तर क्या है? सचमुच सत्य पूजा जब हम करने लगेंगे तो कष्ट हमारे स्वतः भाग जाते हैं। आज सत्य ईश-पूजा का ज्ञान न लेने से मानव समाज में नाना-नाना प्रकार की समस्याएं, कष्ट, बाधा, असफलता आदि की उलझनें खड़ी हैं। हम बुद्धि-विवेक के घोड़े दौड़ाते रहते हैं। मगर अपने जीवन से यह नहीं पूछते की तू किसकी अमानत है? ईश्वरीय धरोहर (शरीर जीवन) के उपलक्ष्य में सत्य ईश-पूजा का न करना, यह ईश्वर के प्रति बेईमानी और छल भी है। हम जब ईश्वर से छल करेंगे तो कष्ट में जीवन का होना दुखकर क्यों लगता है? अनाधिकृत ईश-पूजा को त्याग कर अधिकृत ईशपूजा करने में कठिनाई क्या है? क्या सदासुखी जीवन हम जीना नहीं चाहते?

सद्गुरु या सच्चा पीर उन्हें ही कहा जाता है, जिनमें ईश्वरीय कृपा शक्ति हो या वे ईश एवं ईशदूत दर्शन प्राप्त हों। सत्य योगी या कामिल पीर के आश्रम या खानकाह से ही इसी कारण

शिक्षण-प्रशिक्षण के बाद वली या योगी पैदा होते हैं। यह निर्विवाद सत्य है कि खानकाह या सत्य आध्यात्मिक आश्रम में सत्य ईश पूजा विधान तथा ईश्वर, ईशदूत, नबी, सन्त, योगी, वली आदि को पहचानने तथा उन्हें देखने की शिक्षा-दीक्षा दी जाती है। ऐसा ईश-सम्पन्न ज्ञानी सद्गुरु जहां मौजूद है, वहीं स्थान सत्य आश्रम या खानकाह है। आध्यात्मिक गुरुओं की शिक्षा-दीक्षा, अपने शिष्यों के मध्य होती हैं, जिसे सत्संग कहा जाता हैं। आज तो प्रवचन का नाम ही बदल कर 'सत्संग' हो गया है। सत्संग अर्थात- सत्य के साथ। हम सत्संग के शाब्दिक अर्थ को समझने का प्रयास नहीं करते। सत्संग का वास्तविक अर्थ हैं- ईश्वर के सच्चे प्रतिनिधी के संग या कामिल पीर के संग या औलिया-अल्लाह के संग।

प्रश्न - 2 : यदि योगी-वली के स्थान पर कोई न जा सके तो उनसे कैसे अपनी परेशानी दूर करने को कहा जाए? क्या हम वार्षिक उत्सव या उर्स अपने घरों में नहीं मना सकते हैं?

अनजाना चिश्ती : किसी योगी (वली) का उर्स या सन्दल या पुण्य तिथि/जन्म दिन वार्षिक या मासिक हम अपने घरों में भी मना सकते हैं। इसके लिए जरूरी है कि हम पहले अपने घर के पूजाघर में या किसी भी स्थान की साफ-सफाई करें। सफाई करते समय मन ही मन गायत्री मन्त्र या दरुद शरीफ पढ़ते रहें। फिर उस स्थान पर कोई साफ-सुथरी दरी और चादर या मुसल्ला बिछा दें। अब उस चादर के सामने एक गिलास या पांच गिलास पानी रख दें तथा प्रसाद (शिरनी) भी साथ में रखें। (1) अब पांच अगरबत्ती (उदबत्ती) लेकर यूं कहें- "ऐ सारे जग के मालिक मैं अमुक (वली का नाम लें) के वार्षिक या मासिक उर्स या सन्दल पर्व पर (या पुण्यतिथी/जन्म दिन पर) सामने रखा पानी और प्रसाद (शिरनी) तथा यह अगरबत्ती पेश कर रहा हूं। सबसे पहले आप इसे स्वीकार करें तथा आपकी कृपा से यह हमारा छोटा सा उपहार अमुक बाबा या वली, पीर के दरबार में पहुंच कर स्वीकार हो।" इस तरह कम से कम तीन या पांच बार कह कर अगरबत्ती जला कर वहीं रख दें। अब आप मन ही मन 7 या 11 बार गायत्री मन्त्र या दरुद शरीफ पढ़ें- फिर प्रार्थना करें- "ऐ अमुक बाबा सारे संसार के मालिक के वास्ते आप हमारी इस तुच्छ भेंट को स्वीकार करें। आपसे विनती है कि मेरी (यह परेशानी) दूर कर दें। हम आपके ऋणी रहेंगे।" यह प्रार्थना मन ही मन तीन बार कर लें। अब पानी को अपने परिवार में सभी को पिला दें तथा प्रसाद को भी सभी थोड़ा थोड़ा ग्रहण करें। शेष प्रसाद गरीबों में बांट दें। (2) यदि उर्स करने की यह पद्धति अपनाएं तो सर्वोत्तम है। निवास-स्थान की साफ-सफाई करें। एक साफ-सुथरे दरी या चादर पर कम से कम पांच बर्तनों में मिठाई या फल या खीर या मीठा चावल रखें। पांच गिलास पानी रख दें। अब पांच या ग्यारह या 21 अगरबत्ती (1) क्रमांक अनुसार जलाएं। परिवार के सभी सदस्य पाक-साफ होकर वहां बैठें। आप अब इस प्रकार

दरुद शरीफ (अस्सलातो अस्सलामन अलैका या रसूलल्लाह) या गायत्री मन्त्र 21 बार पढ़ें। फिर कहें कि- "ऐ ईश्वर तू एक है, तू पाक है, तू ही धन्यवाद और प्रशंसा के योग्य है। तेरे सिवा कोई पूज्यनीय नहीं। हम तेरी ही पूजा करते हैं तथा तेरी ही शरण चाहते हैं। तू हमारे और हमारे परिवार के सारे गुनाहों को क्षमा कर दे। तेरा कोटि-कोटि धन्यवाद है। मुझे शैतान और हर बुराईयों से बचा। मुझे अपनी शरण में ले ले। मुझे अपने उस सच्चे रास्ते पर चला, जिस पर तू पुरस्कार देता है।" इसके बाद किसी भी ईश-मन्त्र या धर्मग्रन्थ का कुछ पाठ करें। फिर दरुद शरीफ या गायत्री मन्त्र 11 बार पढ़ें। अब इस तरह प्रार्थना करें :-

"ऐ सर्वमहान ईश्वर, हमने जो कुछ पढ़ा और उपस्थित लोगों ने सुना इसे तू अपने परमप्रिय ईशदूतों, सन्तों और वली-औलिया के सदके में स्वीकार कर ले। (अमुक वली या पीर) के आज वार्षिक या मासिक उर्स या जन्मदिन के अवसर पर हमने जो अगरबत्ती, मिठाई, जल (जो सामग्री है, उसका नाम लें।) प्रस्तुत किया है, उसे स्वीकार कर लें। यह सारी वस्तुएं तेरे माध्यम से समस्त ईशदूतों, पैगम्बर, नबी को पहुंचते हुए तेरे सारे पीर-फकीर और वली-औलिया को पहुंचे। विशेष रुप से अमुक (जिनका उर्स है उनका नाम लें) बाबा के दरबार में यह स्वीकार हो।"

यह तरीका जिन्हें अभी तक सद्गुरु प्राप्त नहीं है, उन्हें प्रयोग करते रहना चाहिए। इस प्रकार करने से हमें और हमारे परिवार को क्या-क्या लाभ मिलेगा, यह करने वाले को स्वयं अनुभव होगा। यदि हमारे करने में दोष होगा, तभी लाभ की अनुभूति नहीं होगी। (ऐसे व्यक्ति जवाबी पत्र भेजकर पूछताछ कर सकते हैं।) कुछ लोग मछलियों को आटा खिलाते हैं। कुछ पशु-पक्षियों को अन्नदान करते हैं। तमाम ऐसे हैं जो भूखे, निर्धनों में पका-पकाया भोजन अथवा अन्न बांटते रहते हैं। हमने तमाम घरों में यह पाया है कि भोजन बन जाने के बाद वह एक पात्र में भोजन रखते हैं और कहते हैं कि भगवान को भोग लगा रहा हूं। कई लोग उक्त भोजन पात्र को अपने पूजा-स्थली पर रख देते हैं। यही कार्य यदि इस प्रकार किया जाए तो और सुन्दर हो जाए। (3) घर में बना भोजन आप किसी पात्र में लेकर निकाल लें। (सम्भव हो तो इस कार्य हेतु बर्तन/पात्र अलग रखें। उसे अपने प्रयोग में न लाएं।) उसे स्वच्छ स्थान पर रखें। फिर एक गिलास में पानी रख दें। उसके बाद दो या पांच अगरबत्ती हाथ में लेकर यूं कहें- "ऐ परमदयालु, परम कृपालु मेरे परमेश्वर। यह भोजन आपने हमें प्रदान किया, इसे आपकी सेवा में समर्पित करता हूं। आपका कोटि-कोटि धन्यवाद और कृपा है। आप इसे स्वीकार करें।" अब अगरबत्ती जला कर वहीं रख दें। लगभग पांच मिनट बाद इस भोजन का सेवन करें और कराएं। सम्भव हो तो घर के भोजन में मिला दें। फिर सभी इस भोजन का सेवन करें। आप एक माह में एक बार अवश्य पांच गरीबों को भोजन कराने की नीयत से खाना पकाएं। पके भोजन को रख कर यह कहें- "ऐ मेरे ईश्वर! तू इस भोजन को स्वीकार कर ले। मैं इसे गरीबों में तेरे नाम पर

बाटूंगा।" यह कहकर अगरबत्ती जला दें। वहां दरुद शरीफ या गायत्री मन्त्र 21 बार पढ़ें। उसके बाद वह भोजन गरीबों को दे दें।

इसी विधि से नए-पुराने वस्त्र, रुपए-पैसे या अन्न आदि ईश्वर को समर्पित कर सकते हैं। फिर उन्हें जरुरतमन्दों में बांट सकते हैं। जब भी कोई नया वस्त्र आदि खरीदें, तो इसके पूर्व अपना एक पुराना वस्त्र इसी विधि से जरुर दान करें। दुनियां की सरकारें टैक्स लेती हैं। क्या हम ईश-सरकार को टैक्स नहीं देंगे? ईश-कर क्यों दें? ईश्वर ने हमें अनमोल जीवन दिया। हमारे असाधारण शरीर की संरचना की। मांस-हड्डी के ऐसे यान्त्रिक अंगों की कीमत हमें तब समझ में आती है, जब वह बेकार हो जाएं या उनमें खराबी आ जाए। संसार की हर वस्तुओं का 'स्पेअर पार्ट' तो उपलब्ध है। मगर हमारे शरीर का 'स्पेयर पार्ट' दुनियां की कोई कम्पनी नहीं बनाती। इन शारीरिक अंगों को स्वस्थ रखने के लिए ईश-कर अदा करते रहना अनिवार्य है। शरीर का ईश-कर अन्नदान, कमाई में से पांच प्रतिशत नकद दान तथा शरीर के लिए प्रयुक्त होने वाली हर सामग्री का दान आवश्यक है। यह दान प्रतिदिन या प्रतिसप्ताह अथवा प्रतिमाह चुकता करते रहना चाहिए। अब प्रश्न है कि ईश-कर की मात्रा क्या हो? प्रतिदिन मजदूरी पाने वाला व्यक्ति यदि एक सौ रु0 प्राप्त करता है तो उसमें से पांच रुपया न्यूनतम निकाल कर उसी दिन किसी अन्धे, लूले, लंगड़े को दान कर दे। मासिक वेतन में से भी इसी अनुसार निकाल कर दान करें। यह हुआ शारीरिक अंगों का ईश-कर। इसे उपरी विधि से करके बांट दें। कामिल पीर सूफी दीदार शाह चिश्ती ने इस कलाम से सत्य पूजा बतायी है।

अव्वल सिद्क नीयत से ऐ मुत्तकी। एबादत तू कर अपने माबूद की।।
माअनी को लफ्जों से पहचान कर, फिर एखलास से दिल में तूं ध्यान कर।।
अदा तू करे उसके अरकान को, बढ़ा देगा खालिक तेरी शान को।
और अब्रेकरम से करे सब्जतर, तेरी नखले उम्मीद का बर्गोबर।।
गरज़ दीन व दुनियां हो हासिल तुझे, दो जग में तेरा बोलबाला रहे।
नसीहत ये की मैंने सुन कान से, बंधा रखियो ये हिर्ज तू जान से।
दोआ से न भूल इस गुनहगार को, कभी दिल में तेरे जो याद आए वो।।

[अथात (संक्षेप में): सर्वप्रथम सच्ची नीयत से ऐ परहेजगार तू उस पाकजात की इबादत कर। सच्ची नीयत क्या है? इबादत के वक्त उस पाकजात (ईश्वर) के सिवा और कोई दुनियावी शय दिल-दिमाग में न हो। अगर इबादत में दिल-दिमाग इधर-उधर भटक रहा है। तरह-तरह के ख्याल आ रहे हैं तो यह ईश्वर के पूजा की सच्ची नीयत नहीं होती हैं? सच्ची नीयत उस पाकजात के इबादत की यही है कि इबादत के वक्त उसके सिवा कुछ भी याद न रहे। जब ऐसी इबादत होगी, तो सच्ची इबादत होगी। जहां सच्ची इबादत हुई, वहां गम-फिक्र, उलझन के ठहरने की जगह नहीं होती?

पता यह चला कि हम सच्ची इबादत की जगह कच्ची इबादत में रहते हैं, इसलिए परेशानियां हम घर रहती हैं। इबादत में जो भी पढ़ा जाए, उसके भावार्थ को बखूबी समझ कर पढ़ा जाए। उसके बाद मुहब्बत के साथ अपने दिल की कैफियत (दशा) पर नज़र डाली जाए। अगर दिल उस पाकजात (ईश्वर) के ईश्क में डूबा है; तब तो वह पाकजात तेरी अजमत (प्रतिष्ठा) को लोक- परलोक में दोबाला (काफी ऊंचा) कर देगा। वह तुझे दीन व दुनियां दोनो में कामयाब कर देगा। एक पूर्ण एवं अनुभव प्राप्त सद्गुरु सूफी दीदार शाह बाबा के अनुसार सिद्क नीयत या सच्ची इबादत की नीयत से ही की गई प्रार्थना-नमाज़ से पूर्ण लाभ पाया जा सकेगा। सच्ची नीयत वही है कि जब भी हम नमाज, तिलावते-कुरआन पाक या जिक्र-फिक्र में लगें, उस वक्त तक हमें उस पाकजात के सिवा कुछ भी याद न आए। अगर खुदा का कोई बन्दा ऐसा कर सके तो इबादत की मस्ती में परमानन्द पाएगा। नमाज की जुबानी नीयत करना तथा नमाज़े अदा कर लेना, जाहिर में बड़ा आसान काम दिखता हैं। पर हकीकत कुछ और है।] ●●●

हजरत सैय्यद ख्वाजा मुईनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी सरकार ने अपनी कलम से हजरत इमाम हुसैन हुजूर की शान में बेमिसाल मनकबत फरमाई हैं :-

शाहस्त हुसैन व बादशाहस्त हुसैन। दीन अस्त हुसैन व दीं पनाहस्त हुसैन।।
सरदाद--नदाद दस्त दर दस्ते यज़ीद। हक्का कि बुनाए ला-इलाह अस्त हुसैन।।

[अर्थात : हजरत ख्वाजा गरीब नवाज अजमेरी फरमाते हैं कि हज़रत इमाम हुसैन शाहों के शाह और बादशाहों के बादशाह हैं। हजरत इमाम हुसैन ईश्वर के सच्चे दीन (धर्म) हैं तथा ईश्वर के सत्यधर्म को उनसे पनाह मिली। हजरत इमाम हुसैन ने ईश्वर के सत्यधर्म की रक्षा में अपना सिर दे दिया, किन्तु यजीद लईन की बैय्यत स्वीकार नहीं की। अरे, सच तो यह है कि हज़रत इमाम हुसैन, ईश्वर के सिवा कोई पूज्यनीय नहीं, इस हकीकत की बुनियाद हैं।]

आईए- ऐसे शहजादए-रसूल को हम सब अपना सलामे आजिजाना पेश करें।
अस्सलामो अलैका या आबा अब्दुल्लाह। अस्सलामो अलैका या इब्ने रसूलल्लाह।
अस्सलामो अलैकुम रहमतुल्लाहे व बरकातहू।

जंगजुई माअए सब्रो-रजा होती नहीं, हर जमीं बनने से मकतल कर्बला होती नहीं।
दर्द का क्या जिक्र जो घटता भी है बढ़ता भी है, देखना ये है कि बेचैनी सिवा होती नहीं।
उफरे पासे नाजे बर्दारी गला कटना कुबूल, दूर हो सर से मुसीबत ये दोवा होती नहीं।
जेरे खंजर बनती है नीयत अदाये फर्ज की, ये नमाजे आशिकी है, जो कजा होती नहीं।
उससे सुख पायेगी दुनियां बेगरज जो दुःख सहे, खाके हसरत आरजू खाके शफा होती नहीं।

गुरु विरजानन्द ... सन्दर्भ पुस्तकालय